ऋग्वेद खण्ड २

श्रीराम शर्मा आचार्य सम्पा

ऋग्वेद

(द्वितीय खण्ड)

(सायण भाषावलम्बी सरल भावार्थ सहित)

सम्पादक :

वेदमूर्ति तपोनिष्ठ

पं० श्रीराम शर्मा आचार्य

चारों वेद, १०८ उपनिषद्, षट् दर्शन, २० स्मृतियाँ
योग वसिष्ठ, १८ पुराणों के प्रसिद्ध भाष्यकार
और लगभग १५० हिन्दी-ग्रन्थों के रचयिता

प्रकाशक :

संस्कृति संस्थान

ख्वाजा कुतुब, (वेदनगर), बरेली—२४३००३ (उ०प्र०)
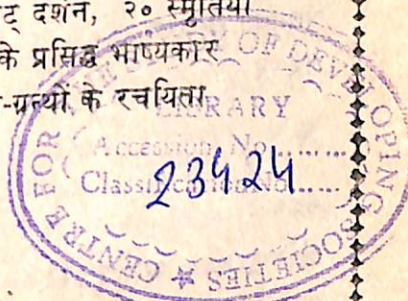
फोन : ४२४७

प्रकाशक :

डॉ० चमनलाल गौतम

संस्कृति संस्थान

ख्वाजा कुतुब (वेद नगर)

बरेली २४३००३ (उ० प्र०)

फोन : ४२४२

सम्पादक :

पं० श्रीराम शर्मा आचार्य

★

संशोधित संस्करण :
१९८२

★

मुद्रक :

शैलेन्द्र बी० माहेश्वरी

नवज्योति प्रेस,

सेठ भीकचन्द मार्ग, मथुरा

मूल्य :

ग्यारह रुपये मात्र

सूक्त २०

(ऋषि-कौशिको गाथी। देवता-अग्निः, विश्वेदेवाः। छन्द-त्रिष्टुप्)

अग्निमुषसमश्विना दधिक्रां व्युष्टिषु हवते वह्निरुक्थैः।
सुज्योतिषो नः शृण्वन्तु देवाः सजोषसो अध्वरं वावशानाः ॥१
अग्ने त्री ते वाजिना त्री षधस्था तिस्रस्ते जिह्वा
　　　　　　　　　　　　　　　　　ऋतजात पूर्वीः।
तिस्र उ ते तन्वो देववातास्ताभिर्नः पाहि गिरो अप्रयुच्छन् ॥२
अग्ने भूरीणि तव जातवेदो देव स्वधावोऽमृतस्य नाम।
याश्च माया मायिनां विश्वमिन्व त्वे पूर्वीः संदधुः पृष्टबन्धो ॥३
अग्निर्नेता भग इव क्षितीनां दैवीनां देव ऋतुपा ऋतावा।
स वृत्रहा सनयो विश्ववेदाः पर्षद् विश्वाति दुरिता गृणन्तम् ॥४
दधिक्रामग्निमुषसं च देवीं बृहस्पतिं सवितारं च देवम्।
अश्विना मित्रावरुणा भगं च वसून् रुद्राँ आदित्याँ इह हुवे॥५॥२०

व हविवाहक अग्निदेव उषाकाल में अन्धकार को दूर करते हुए उषा अश्विद्वय और दधिका नामक देवोंको ऋचाओंसे आहूत करते हैं। देवगण हमारे यज्ञमें आने की कामना करते हुए उन ऋचाओं को श्रवण करें।१। अग्ने ! तुम्हारा तीन प्रकार का अन्न तथा तीन प्रकार का ही वास-स्थान है तुम यज्ञ का सम्पादन करने वाले हो। देवताओं को तृप्त करने वाली तीन जिह्वाओं से युक्त हो। तुम्हारे शरीर के तीन रूप हैं, जिनकी देवता कामना किया करते हैं। तुम आलस्यसे रहित हुए अपने तीनों रूपोंसे हमारे स्तोत्र के रक्षक बनो।२। हे अग्ने ! तुम प्रकट होते ही ज्ञानी, प्रकाशवान्, अमर और अन्न युतहो। देवताओं ने तुमको तेज प्रदान किया है तुम विश्व को तृप्त करने वाले अभीष्ट फल देने वाले हो। देवताओं ने तुमको जिन शक्तियों से युक्त किया है,वे शक्तियाँ सदा तुममें विद्यमान रहती हैं।३। ऋतुओं को प्रकट करने वाले आदित्य के समान विश्वके नियन्ता सत्य कर्मों में प्रवृत्त वृत्र-संहारक, पुरातन सर्व ज्ञाता और प्रकाशवान् अग्निदेव, स्तुति करने वाले को सब पापोंसे पार

करें ।४। दधिका, अग्नि उषा, बृहस्पति, तेजस्वी, सूर्य, दोनों अश्विनी कुमार, भव,वसु रुद्र और सभी आदित्यों का इस यज्ञानुष्ठान में आह्वान करता हूँ ।५। (२०)

सूक्त २१

(ऋषि—कौशिको गाथी । देवता—अग्निः । छन्द-अनुष्टुप् आदिनी)

इमं नो यज्ञममृतेषु धेहीमा हव्या जातवेदो जुषस्व ।
स्तोकानामग्ने मेदसो घृतस्य होतः प्राशान प्रथमो निषद्य ॥१
घृतवन्तः पावक ते स्तोकाः श्चोतन्ति मेदसः ।
स्वधर्मन् देववीतये श्रेष्ठ नो धेहि वार्यम् ।२
तुभ्यं स्तोका घृतश्चुतोऽग्ने विप्राय सन्त्य ।
ऋषिः श्रेष्ठः समिध्यसे यज्ञस्य प्राविता भव ॥३
तुभ्यं श्चोतन्त्यध्रिगो शचीवः स्तोकासो अग्ने मेदसो घृतस्य ।
कविशस्तो वृहता भानुनागा हव्या जुषस्य मेधिर ॥४
ओजिष्ठं ते मध्यतो मेद उद्भृतं प्र ते वयं ददामहे ।
श्चोतन्ति ते यसो स्तोका अधि त्वचि प्रति तान् देवशो विहि । ५:२१

हे अग्नि ! हमारे इस यज्ञ को देवों के प्रति पहुँचाओ । हमारी हवियों का भक्षण करो । तुम होता रूप हो । तुम हमारे यज्ञ में बैठ कर प्राणवान् घृत का भक्षण करो ।१। हे अग्ने ! तुम पवित्र हो । इस यज्ञ में तुम्हारे तथा देवताओं के पान निमित्त घृत की बूँदे टपक रही हैं । तुम हमको वरण करने योग्य उत्तम धन प्रदान करो ।२। हे अग्ने ! तुम मेधावी और यजन योग्यहो । घृतकी टपकती हुई सभी बूँदे तुम्हारे लिए हैं । तुम ऋषियों में श्रेष्ठ हो तुम स्वयं प्रदीप्त होते हो । हमारे यज्ञ की रक्षा करो ।३। हे अग्निदेव ! तुम सदा गतिमान् रहने वाले सर्वशक्ति सम्पन्न हो। स्नेह रूप हविकी बूँदे तुमको सींचती हैं । मेधावीजन तुम्हारा स्तवन करते हैं । तुम महान् तेजस्वी एवं प्रज्ञावान् हो । हमारी हवियोंको ग्रहण करो ।४। हे अग्ने ! हम अत्यन्त सार रूप स्नेह

तुम्हें प्रदान करेंगे । निवासदाता हे अग्निदेव ! हविकी जो बूँदे तुम्हारे लिए गिरती हैं उनमें से बाँटकर देवताओं को पहुँचाओ ।५।   (२१)

सूक्त २२

(ऋषि–कौशिको गाथी । देवता—पुरीष्याः, अग्नयः । छन्द–त्रिष्टुप्, अनुष्टुप् ।

अयं सो अग्निर्यस्मिन्त्सोममिन्द्रः सुतं दधे जठरे वावशानः ।
सहस्रिणं वाजमत्यं न सप्तिं ससवान्त्सन्त्स्तूयसे जातवेदः ।।१
अग्ने यत् ते दिवि वर्च. पृथिव्यां यदोषधीष्वप्स्वा यजत्र ।
येनान्तरिक्षमुर्वाततन्थ त्वेषः स भानुरर्णवो नृचक्षाः ।।२
अग्ने दिवो अर्णमच्छा जिगास्यच्छा देवां ऊचिषे धिष्ण्या ये ।
या रोचने परस्तात् सूर्यस्य याश्चावस्तादुपतिष्ठन्त आपः ।।३
पुरीष्यासो अग्नयः प्रावणेभिः सजोषसः ।
जुषन्तां यज्ञमद्रुहो ऽनमीवा इषो महीः ।।४
इलामग्ने पुरुदंसं सनिं गोः शश्वत्तमं हवमानाय साध ।
स्यान्नः सूनुस्तनयो विजावा ऽग्ने सा ते सुमतिर्भूत्वस्मे ।५।२२

सोम की कामना करने वाले इन्द्र ने निचोड़े हुए सोम को जिस अग्नि रूप उदर में रखा था, वह यह अग्नि ही हैं । हे अग्निदेव ! तुम सर्वज्ञ हो । तुम उस अश्व के समान वेगवती हवि का सेवन करो । विश्व के सब प्राणी तुम्हारा स्तवन करते हैं ।१। हे अग्ने ! तुम यजन योग्य हो । तुम्हारा जो प्रकाश, पृथिवी, ओषधि और जल में व्याप्त है तथा तुम्हारे जिस तेज के द्वारा अन्तरिक्ष भी व्याप्त हुआ है, वह तेज समुद्र के समान गम्भीर सूर्य के समान प्रकाशित एवं मनुष्यों के लिए अद्भुत है ।२। हे अग्ने ! तुम आकाशीय जलके समान प्रवाहमान हो । प्राण-भूत देवगण को संगठित करने वाले हो । सूर्य के ऊपर के लोक में अथवा अन्तरिक्ष में जो जल है, उसे प्रेरित करने वाले हो ।३। अग्ने ! युद्ध क्षेत्र में हथियारों की सङ्गति करते

हुए रणस्थल को प्राप्त होओ ! तुम ऐसा अन्न हमें दो जिसके बल हम शत्रुओं को दबाने वाले बनें तथा नीरोग रह सकें ।४। हे अग्ने स्तुति करने वालों को कर्मों की प्रेरक और गवादि धनसे युक्त भूमि तुम देते हो । हमारे वंश को बढ़ाने वाला, सन्तानोत्पादन में समर्थ पुत्र हमको दो, यह अनुग्रह हमारे प्रति होना चाहिए ।५। (२२)

सूक्त २३

(ऋषि देवश्रवा देवताश्च भारतौ । देवता—अग्निः । छन्द—त्रिष्टुप् सतोबृहती)

निमथितः सुधित आ सधस्थे युवा कविरध्वरस्य प्रणेता ।
जूर्यत्स्वग्निरजरो वनेष्वत्रा दधे अमृतं जातवेदाः ॥१
अमन्थिष्टां भारता रेवदग्निं देवश्रवा देववातः सुदक्षम् ।
अग्ने वि पश्य बृहताभि रायेषां नो नेता भवतादनु द्यून् ॥२
दश क्षिपः पूर्व्यं सीमजीजनन् त्सुजातं मातृषु प्रियम् ।
अग्निं स्तुहि दैववातं दैवश्रवो यो जनानामसद् वशी ॥३
नि त्वा दधे वर आ पृथिव्या इलायास्पदे सुदिनत्वे अह्नाम् ।
दृषद्वत्यां मानुष आपयायां सरस्वत्यां रेवदग्ने दिदीहि ॥४
इलामग्ने पुरुदंस सनिं गोः शश्वत्तमं हवमानाय साध ।
स्यान्नः सूनुस्तनयो विजावाऽग्ने सा ते सुमतिर्भूत्वस्मे ।५।२३

घर्षण से उत्पन्न, यजमान के गृह में स्थापित सर्वज्ञाता, यज्ञ कर्म के सम्पन्नकर्त्ता, स्वयं प्रज्ञावान्, घोर वन का विनाश करने वाले अग्नि देव जराहित हैं। वे यज्ञ में अमृत धारण करने वाले हैं ।१। भारत के पुत्रों ने इन धन-सम्पन्न अग्निदेव को अरणि-मन्थन द्वारा प्रकट किया। हे अग्ने ! बहुत से धन-सहित तुम हमारी ओर देखो और हमको नित्य प्रति अन्न प्राप्त कराओ ।२। यह प्राचीन, रमणीय अग्निदेव दशों अंगुलियों द्वारा उत्पन्न होते हैं। हे देवश्रवा ! अरणि से उत्पन्न, दिव्य, वायुसे प्रकट हुए अग्निदेवका स्तवन करो। वे अग्नि स्तुति करने वालों

के ही वशीभूत होते हैं ।३। हे अग्ने ! श्रेष्ठ दिन की प्राप्ति के निमित्त हम इस पृथिवी के पवित्र स्थानमें तुम्हें प्रतिष्ठित करते हैं। तुम दृषद्-वती,आपया और सारस्वती इन तीनों नदियोंके निकट वास करने वालों के घर में धन सहित प्रदीप्त होओ ।४। हे अग्ने ! तुम स्तुति करने वालों को कर्मयुक्त तथा गवादिकयुक्त पृथिवी दो। हमारे वंश को बढ़ाने वाला, सन्तानोत्पादनमें समर्थ पुत्र हमको दो यह अनुग्रह हमपर अवश्य करो ।५। (२३)

सूक्त २४

(ऋषि-विश्वामित्रः। देवता—अग्निः। छन्द—अनुष्टुप् गायत्री)

अग्ने सहस्व पृतना अभिमातीरपास्य ।
दुष्टरस्तरन्नरातीर्वर्चो धा यज्ञवाहसे ॥१
अग्न इला समिध्यसे वीतिहोत्रो अमर्त्यः जुषस्व सू नो अध्वरम्।२
अग्ने द्युम्नेन जागृवे सहसः सूनवाहुत । एदं वर्हिः सदो मम ॥३
अग्ने विश्वेभिरग्निभिर्देवेभिर्महया गिरः। यज्ञेषु य उ चायवः।४
अग्ने दा दाशुषे रयिं वीरवन्तं परीणसम् ।
शिशीहि नः सूनुमतः ।५।२४

हे अग्निदेव ! इस शत्रु नेता को हराओ। विघ्न करने वालों को भगा दो। तुम्हें कोई पराजित नहीं कर सकता। तुम शत्रुओं को हराकर अपने यजमान को अन्न प्रदान करो ।१। हे अग्ने ! तुम यज्ञमें प्रीति रखते हो। तुम मरण रहित हो। तुम उत्तम वेदी पर प्रज्वजित होते हो। तुम हमारे यज्ञ को भले प्रकार से सम्पादन करो ।२। हे अग्ने ! तुम अपने तेज में चैतन्य हो। तुम बल के पुत्र का मैं आह्वान करता हूँ। मेरे कुश पर विराजमान होओ ।३। हे अग्ने ! तुम अपनी पूजा करने वालों के यज्ञ में सभी प्रदीप्त अग्नियों के सहित स्तुतियों की मर्यादा को सुरक्षित करो। । हे अग्ने ! तुम हवि देने वाले को पौरुष

हुए रणस्थल को प्राप्त होओ ! तुम ऐसा अन्न हमें दो जिसके बल से हम शत्रुओं को दबाने वाले बनें तथा नीरोग रह सकें ।४। हे अग्ने ! स्तुति करने वालों को कर्मों की प्रेरक और गवादि धनसे युक्त भूमि तुम देते हो । हमारे वंश को बढ़ाने वाला, सन्तानोत्पादन में समर्थ पुत्र हम को दो, यह अनुग्रह हमारे प्रति होना चाहिए ।५। (२२)

सूक्त २३

(ऋषि देवश्रवा देववाश्च भारतौ । देवता—अग्निः । छन्द—त्रिष्टुप् सतोबृहती)

निमथितः सुधित आ सधस्थे युवा कविरध्वरस्य प्रणेता ।
जूर्यत्स्वग्निरजरो वनेष्वत्रा दधे अमृतं जातवेदाः ॥१
अमन्थिष्टां भारता रेवदग्निं देवश्रवा देववातः सुदक्षम् ।
अग्ने वि पश्य बृहताभि रायेषां नो नेता भवतादनु द्यून् ॥२
दश क्षिपः पूर्व्यं सीमजीजनन्त्सुजातं मातृषु प्रियम् ।
अग्निं स्तुहि दैववातं दैवश्रवो यो जनानामसद् वशी ॥३
नि त्वा दधे वर आ पृथिव्या इलायास्पदे सुदिनत्वे अह्नाम् ।
दृषद्वत्यां मानुष आपयायां सरस्वत्यां रेवदग्ने दिदीहि ॥४
इलामग्ने पुरुदंसं सनिं गोः शश्वत्तमं हवमानाय साध ।
स्यान्नः सूनुस्तनयो विजावाऽग्ने सा ते सुमतिर्भूत्वस्मे ।५।२३

घर्षण से उत्पन्न, यजमान के गृह में स्थापित सर्वज्ञाता, यज्ञ कर्म के सम्पन्नकर्त्ता, स्वयं प्रज्ञावान्, घोर वन का विनाश करने वाले अग्नि देव जरारहित हैं । वे यज्ञ में अमृत धारण करने वाले हैं ।१। भारत के पुत्रों ने इन धन-सम्पन्न अग्निदेव को अरणि-मन्थन द्वारा प्रकट किया । हे अग्ने ! बहुत से धन-सहित तुम हमारी ओर देखो और हमको नित्य प्रति अन्न प्राप्त कराओ ।२। यह प्राचीन, रमणीय अग्निदेव दशों अंगुलियों द्वारा उत्पन्न होते हैं । हे देवश्रवा ! अरणि से उत्पन्न, दिव्य, वायुसे प्रकट हुए अग्निदेवका स्तवन करो । वे अग्नि स्तुति करने वालों

के ही वशीभूत होते हैं ।३। हे अग्ने ! श्रेष्ठ दिन की प्राप्ति के निमित्त हम इस पृथिवी के पवित्र स्थानमें तुम्हें प्रतिष्ठित करते हैं। तुम दृषद्वती,आपया और सारस्वती इन तीनों नदियोंके निकट वास करने वालों के घर में धन सहित प्रदीप्त होओ ।४। हे अग्ने ! तुम स्तुति करने वालों को कर्मयुक्त तथा गवादिकयुक्त पृथिवी दो। हमारे वंश का बढ़ाने वाला, सन्तानोत्पादनमें समर्थ पुत्र हमको दो यह अनुग्रह हमपर अवश्य करो ।५। (२३)

सूक्त २४

(ऋषि-विश्वामित्रः । देवता—अग्निः । छन्द—अनुष्टुप् गायत्री)

अग्ने सहस्व पृतना अभिमातीरपास्य ।
दुष्टरस्तरन्नरातीर्वर्चो धा यज्ञवाहसे ॥१
अग्न इला समिध्यसे वीतिहोत्रो अमर्त्यः जुषस्व सू नो अध्वरम्।२
अग्ने द्युम्नेन जागृवे सहसः सूनवाहुत। एदं वर्हिः सदो मम ॥३
अग्ने विश्वेभिरग्निभिर्देवेभिर्महया गिरः। यज्ञेषु य उ चायवः।४
अग्ने दा दाशुषे रयिं वीरवन्तं परीणसम् ।
शिशीहि नः सूनुमतः ।५।२४

हे अग्निदेव ! इस शत्रु नेता को हराओ। विघ्न करने वालों को भगा दो। तुम्हें कोई पराजित नहीं कर सकता। तुम शत्रुओं को हराकर अपने यजमान को अन्न प्रदान करो ।१। हे अग्ने ! तुम यज्ञमें प्रीति रखते हो। तुम मरण रहित हो। तुम उत्तम वेदी पर प्रज्वलित होते हो। तुम हमारे यज्ञ को भले प्रकार से सम्पादन करो ।२। हे अग्ने ! तुम अपने तेज में चैतन्य हो। तुम बल के पुत्र का मैं आह्वान करता हूँ। मेरे कुश पर विराजमान होओ ।३। हे अग्ने ! तुम अपनी पूजा करने वालों के यज्ञ में सभी प्रदीप्त अग्नियों के सहित स्तुतियों की मर्यादा को सुरक्षित करो। । हे अग्ने ! तुम हवि देने वाले को पौरुष

युक्त धन प्रदान करो । हम सन्तान युक्त हों, हमारी वृद्धि करो ।५।
(२४)

सूक्त २५

(ऋषि—विश्वामित्रः । देवता—अग्निः, इन्द्राग्नी । छन्द—विराट्

अग्ने दिवः सूनुरसि प्रचेतास्तना पृथिव्या उत विश्ववेदाः ।
ऋधग्देवाँ इह यजा चिकित्वः ॥१
अग्निः सनोति वीर्याणि विद्वान्त्सनोति वाजममृताय भूषन् ।
स नो देवाँ एह वहा पुरुक्षो ॥२
अग्निर्द्यावापृथिवी विश्वजन्ये आ भाति देवी अमृते अमूरः ।
क्षयन् वाजैः पुरुश्चन्द्रो नमोभिः ॥३
अग्न इन्द्रश्च दाशुषो दुरोणे सुतावतो यज्ञमिहोप यातम् ।
अमर्धन्ता सोमपेयाय देवा ॥४
अग्ने अपां समिध्यसे दुरोणे नित्यः सूनो सहसो जातवेदः ।
सधस्थानि महयमान ऊती ।५।२५

हे अग्ने ! तुम अद्भुत, सर्वज्ञाता, आकाश-पृथिवी के पुत्र तथा चैतन्य युक्त हों । तुम इस देव-यज्ञ में पृथक्-पृथक् यजन-कर्म करो ।१। अग्नि मेधावी हैं, सामर्थ्यदाता है और स्वयं सुसज्जित होकर देवताओं को हवि पहुँचाते हैं । उनका अन्न विविध प्रकार का है । अग्ने ! देव-गणको हमारे यज्ञमें ले आओ।२। सर्वज्ञानी संसारके स्वामी प्रदीप्तिमान शक्ति और अन्न से सम्पन्न अग्निदेव, विश्व माता तेजस्विनी मरण-रहित आकाश पृथिवी को प्रकाशवान् बनाते हैं ।३। हे अग्ने ! तुम इन्द्र सहित यज्ञ की रक्षा करते हुए सोम छानकर अर्पण करने वाले के इस घर में सोम पीने के निमित्त पधारो ।४। हे जलोत्पन्न अग्निदेव ! तुम सर्वज्ञानी और नित्य हो । तुम अपने आश्रय में प्राणियों को सुशोभित करते हुए जल के आश्रय-स्थान अन्तरिक्ष में प्रतिष्ठित हो ।५। (२५)

सूक्त २६

(ऋषि–विश्वामित्र: आत्मा। देवता—वैश्वानर, मरुत आदि। छन्द–जगती, त्रिष्टुप्)

वैश्वानरं मनसाग्निं निचाय्या हविष्मन्तो अनुषत्यं स्वर्विदम्।
सुदानुं देवं रथिरं वसूयवो गीर्भी रण्वं कुशिकासो हवामहे ॥१
तं शुभ्रमग्निमवसे हवामहे वैश्वानरं मातरिश्वानमुक्थ्यम्।
बृहस्पतिं मनुषो देवातये विप्रं श्रोतारमतिथिं रघुष्यदम् ॥२
अश्वो न क्रन्दञ्जनिभि: समिध्यते वैश्वानर: कुशिकेभिर्युगेयुगे।
स नो अग्नि: सुवीर्यं स्वश्व्यं दधातु रत्नममृतेषु जागृवि: ॥३
प्र यन्तु वाजास्तविषीभिरग्नय: शुभे समिश्ला: पृषतीरयुक्षत।
बृहदुक्षो मरुतो विश्ववेदस: प्र वेपयन्ति पर्वताँ अदाभ्या: ॥४
अग्निश्रियो मरुतो विश्वकृष्टय आ त्वेषमुग्रमव ईमहे वयम्।
ते स्वानिनो रुद्रिया वर्षनिर्णिज: सिंहा न हेषक्रतव:सुदानव:।५।२६

हम कौशिक जन धन की इच्छा से हवि एकत्रित करते हुए वैश्वानर अग्नि का आह्वान करते हैं। वे सत्यपथगामी, स्वर्ग के सम्बन्ध में जानने वाले हैं। यज्ञका फल देने वाले हैं। वे अपने रथसे यज्ञ स्थान को प्राप्त होते हैं।१। उन उज्जवल वर्ण वर्ण वाले वैश्वानर, विद्युतरूप यज्ञ के स्वामी प्रज्ञावान् अतिथि, शीघ्र कार्यकारी अग्निदेव को यजमान यज्ञ में आश्रय प्राप्त करने के निमित्त आहूत करते हैं।२। उच्च शब्द करने वाले घोड़े का बच्चा जैसे अपनी माता के आश्रय में वृद्धि प्राप्त करता है, वैसे ही कौशिकों के द्वारा वैश्वानर अग्नि की वृद्धि की जाती है। हें अग्ने ! तुम देवताओं में चैतन्य हों। हमको श्रेष्ठ अश्व, पौरुष और महान् धन दो।३। अग्नि रूप अश्व, विद्वान् मरुद्गण से संयुक्त हुए पृषती वाहनों को मिलावें। सर्वज्ञाता, किसी के द्वारा भी हिंसित न होने वाले मरुद्गण जलराशि युक्त तथा पर्वत के समान मेघ को कम्पायमान करते हैं।४। अग्नि के आश्रित मरुत सागर को आकर्षित करते हैं। हम उन्हीं मरुतों के उत्कृष्ट आश्रय की याचना करते

हैं । वे वर्षा रूप वाले, सिंह के समान गर्जनशील मरुद्गण जलदाता के रूप में प्रसिद्ध हैं ।५।   (२६)

व्रातंव्रातं गणंगणं सुशस्तिभिरग्नेर्भामं मरुतामोज ईमहे ।
पृषदश्वासो अनवभ्रराधसो गन्तारो यज्ञं विदथेषु धीराः ॥६
अग्निरस्मि जन्मना जातवेदा घृतं मे चक्षुरमृतं म आसन् ।
अर्कस्त्रिधातू रजसो विमानो ऽजस्रो धर्मो हविरस्मि नाम ॥७
त्रिभिः पवित्रैरपुपोद्ध्यर्कं हृदा मतिं ज्योतिरनु प्रजानन् ।
वर्षिष्ठं रत्नमकृत स्वधाभिरादिद् द्यावापृथिवी पर्यपश्यत् ॥८
शतधारमुत्समक्षीयमाणं विपश्चितं पितरं वक्त्वानाम् ।
मेलिं मदन्तं पित्रोरुपस्थे तं रोदसी पिपृतं सत्यवाचम् ।९।२७

बहुत से स्तोत्रों द्वारा हम अग्नि के तेज और मरुद्गण के बल की कामना करते हैं । वे बिन्दु चिन्ह वाले अश्व युक्त मरुद्गण नष्ट न होने वाले धन के सहित हवि के निमित्त यज्ञ को प्राप्त होते हैं ।६। मैं अग्नि जन्म से ही मेधावी हूँ । अपने रूप को स्वयं प्रकट करता हूँ । प्रकाश मेरा नेत्र है । जिह्वा में अमृत हैं । मैं विविध प्राण युक्त एवं अन्तरिक्ष का मापक हूँ । मेरे ताप का भी क्षय नहीं होता । मैं ही साक्षात् हवि हूँ ।७। सुन्दर ज्योति का हृदय से जानने वाले अग्निदेव ने अग्नि, वायु और सूर्य रूप धारण कर अपने ओ समर्थ बनाया । अग्नि ने इन रूपों से प्रकट होकर आकाश पृथिवी के दर्शन किये थे ।८। हे आकाश-पृथिवी ! सौ धार वाले मेघ की तरह अक्षुण्ण, प्रवाहयुक्त, मेधावी पालनकर्त्ता, वाक्यों को मिलाकर बताने वाले माता-पिता की गोद में प्रसन्न, सत्य स्वरूप अग्नि को पूर्ण करो ।९।   (२७)

सूक्त २७

(ऋषि–विश्वामित्रः । देवता–ऋतवो, अग्निः । छन्द–गायत्री)

प्र वो वाजा अभिद्यवो हविष्मन्तो घृताच्या ।
देवाञ्जिगाति सुम्नयुः ॥१
ईले अग्निं विपश्चितं गिरा यज्ञस्य साधनम् ।
श्रुष्टीवानं धितावानम् ॥२

अग्ने शकेम ते वयं यमं देवस्य वाजिनः । अति द्वेषांसि तरेम॥३
समिध्यमानो अध्वरे ऽग्निः पावक ईड्यः । शोचिष्केशस्तमीमहे।४
पृथुपाजा अमर्त्यो घृतनिर्णिक् स्वाहुतः ।
अग्निर्यज्ञस्य हव्यवाट् ।५।२८

ऋत्विजो ! स्रुक् युक्त, हवि वाले देवता, मास, अर्द्धमास आदि यजमान के निमित्त सुखी करनेके इच्छुक हैं । वह यजमान देवताओं की कृपा प्राप्त करता है ।१। यज्ञ सम्पन्न कर्ता प्रज्ञावान्, ऐश्वर्यवान् वेग शाली अग्निदेवको मैं स्तोत्रों सहित पूजता हूँ ।२। हे अग्ने ! तुम प्रकाशवान् हो । हव्य तैयारी कर हम तुम्हारी सेवा करेंगे और पाप से बच सकेंगे ।३। यज्ञ-काल से प्रकट होने वाले ज्वालायुक्त केश वालें, पवित्रकर्त्ता, पूज्य, अग्निदेव के समीप उपस्थित होकर इच्छित फल माँगते हैं ।४। उत्पन्न तेज से युक्त अमर, घृत के शुद्ध करने वाले मानस रूप से पूजा किये गये अग्निदेव यज्ञ के हवि को वहन करे ।५। (२८)

तं सबाधो यतस्रुच इत्था धिया यज्ञवन्तः। आ चक्रुरग्निमूतये॥६
होता देवो अमर्त्यः पुरस्तदिति मायया ।विदथानि प्रचोदयन् ॥७
वाजी वाजेषु धीयते ऽध्वरेषु प्र णीयते । विप्रो यज्ञस्य साधनः॥८
धिया चक्रे वरेण्यो भूतानां गर्भमा दधे । दक्षस्य पितरं तना॥९

यज्ञ में उपस्थित विघ्नों को नष्ट करने वाले, हवियुक्त ऋत्विजों ने स्रुकको उठाकर आश्रयके निमित्त स्तोत्रों द्वारा अग्निदेवको पूजा करते हुए बढ़ाया ।६। यज्ञ-सम्पादक, मरण-रहित, प्रकाशयुक्त अग्निदेव यज्ञानुष्ठान में सबको प्रेरणा देते हुए,सहयोग पूर्वक यज्ञमें अग्रणी बनते हैं ।७। अग्नि शक्तिशाली हैं । वे युद्ध में सबसे आगे स्थान ग्रहण करते हैं । यज्ञ के समय अपने स्थान पर प्रतिष्ठित होते हैं । वे यज्ञ कार्यों के सम्पादन कर्ता और प्रज्ञाबान् है ।८। कर्मों के द्वारा वरण करने योग्य, भूतों के कारण रूप, पिता तुल्य अग्निदेव को दक्ष–पुत्री (पृथिवी) धारण करती है ।९। हे बलोत्पन्न अग्निदेव ! तुम श्रेष्ठप्रकाश वाले,हवियों की कामना वाले और वरण करने योग्य हो । तुम्हें दक्ष-पुत्री इला धारण करती है ।१०। (२९)

नि त्वा दधे वरेण्यं दक्षस्येला सहस्कृत । अग्ने सुदीतिमुशिजम् ।
१०।२६।

अग्निं यन्तुरमप्तुरमृतस्य योगे वनुषः। विप्रा वाजैः समिन्धते।।११
ऊर्जो नपातमध्वरे दीदिवांसमुप द्यवि। अग्निमीले कविक्रतुम्।१२
ईलेन्यो नमस्यस्तिरस्तमांसि दर्शतः । समग्निरिध्यते वृषा ।।१३
वृषो अग्निः समिध्यते ऽश्वो न देववाहनः। तं हविष्मन्त ईलते।१४
वृषणं त्वा वयं पृषन् पृषणः समिधीमहि ।

अग्ने दीद्यतं बृहत् ।१५।३०

विश्व के नियामक और जल को प्रेरित करने वाले अग्नि को यज्ञ कार्य सम्पन्न करने के दिमित्त ज्ञानी जन हवि द्वारा भले प्रकार प्रदीप्त करते हैं ।११। मनुष्य को अन्न से विहीन न होने देने वाले अन्तरिक्ष के निकट प्रकाशवान् अग्निदेव का मैं स्तवन करता हूँ ।१२। वे अग्नि नमस्कार करने योग्य, पूज्य, दर्शनीय तथा कामनाओं की वर्षा करने वाले हैं । वे प्रज्वलित होते ही अँधेरे को नष्ट करते हैं ।१३। घोड़े के समान हवि वहन करने वाले, कामनाओं के वर्षक अग्निदेव प्रज्वलित होते हैं । मैं उन अग्नि का पूजन करता हूँ ।१४। हे अग्ने ! तुम कामनाओं की वर्षा करने वाले हो । हम घृतादि सीचते हैं,तुम जल सींचते हो । हम तुम्हें प्रदीप्त करते हैं । तुम प्रकाशवान् और महान हो ।१५।　(३०)

सूक्त २८

(ऋषि–विश्वामित्रः । देवता—अग्निः । छन्द–त्रिष्टुप्
उष्णिक्, जगती, गायत्री)

अग्ने जुषस्व नो हविः पुरोलाशं जातवेदः ।

प्रातःसावे धियावसो ।।१

पुरोला अग्ने पचतस्तुभ्यं वा घा परिष्कृतः। तं जुषस्व यविष्ठ्य।२
अग्ने वीहि पुरोलाशमाहुतं तिरोअह्नचम् । सहसः सूनुरस्यध्वरे
हितः ।।३

माध्यंदिने सवने जातवेदः पुरोलाशमिह कवे जुषस्व ।
अग्ने यह्वस्य तव भागधेयं न प्र मिनन्ति विदथेषु धीराः ॥४
अग्ने तृतीये सवने हि कानिषः पुरोलाशं सहसः सूनवाहुतम् ।
अथा देवेष्वध्वरं विपन्यया धा रत्नवन्तममृतेषु जागृविम् ॥५
अग्ने वृधान आहुतिं पुरोलाशं जातवेदः । जुषस्व
तिरोअह्न्यम् ।६।३१

हे अग्ने ! तुम जन्म से ही दीप्तियुक्त हो तुम्हारे स्तोत्र से बल मिलता है । तुम हमारे पुरोडाश और हव्य का प्रातः समय में सेवन करो ।१। हे अग्ने ! तुम अत्यन्त युवा हो । तुम्हारे निमित्त ही पुरोडाश पक्व किया और सिद्ध किया गया है । उसका सेवन करो ।२। हे अग्ने उत्तम प्रकार से दिन के अन्त में दिये गये पुरोडाश का सेवन करो । तुम बल के पुत्र हो । यज्ञ कार्यमें लगो ।३। हे अग्ने ! तुम विज्ञानी हो। मध्य सवन में पुरोडाश ग्रहण करो । अध्वर्युगण तुम्हारे यज्ञ भाग को नष्ट नहीं करते ।४। हे बलोत्पन्न अग्निदेव ! तुम तीसरे सवन में दिये जाने वाले पुरोडाशकी कामना करो । फिर इस ऐश्वर्यवान् चैतन्य सोम को देवगण के निकट स्तुति पूर्वक प्रतिष्ठित करो ।५। हे विज्ञानी अग्नि-देव ! तुम पुरोडाश रूप आहूति को दिवस के अन्त में ग्रहण करो ।६। (३१)

सूक्त २९

(ऋषि–विश्वामित्रः । देवता—अग्निः । छन्द–अनुष्टुप्, त्रिष्टुप्, जगती)

अस्तीदमधिमन्थनमस्ति प्रजननं कृतम् ।
एतां विश्पत्नीमा भराग्निं मन्थाम पूर्वथा ॥१
अरण्योर्निहितो जातवेदा गर्भ इव सुधितो गर्भिणीषु ।
दिवेदिव ईड्यो जागृवद्भिर्हविष्मद्भिर्मनुष्येभिरग्निः ॥२

उत्तानायामव भरा चिकित्वान् त्सद्यः प्रवीता वृषणं जजान ।
अरुषस्तूपो रुशदस्य पाज इलायास्पुत्रो वयुनेऽजनिष्ट ॥३
इलायास्त्वा पदे वयं नाभा पृथिव्या अधि ।
जातवेदो नि धीमह्यग्ने हव्याय वोलहवे । ४
मन्थता नरः कविमद्वयन्तं प्रचेतसममृतं सुप्रतीकम् ।
यज्ञस्य केतुं प्रथमं पुरस्तादग्निं नरो जनयता सुशेवम् ।५।३२

अरणि संसार की रक्षा में समर्थ है, उसे लाओ । इसी के मन्थन द्वारा अग्नि की उत्पत्ति होती है । पूर्वकालके समान हम अग्निकी मंथन द्वारा प्रकट करेंगे ।१। अरणियों में अग्निदेव गर्भवती स्त्री के गर्भ के समान स्थापित हैं । वे अपने कर्ममें सदा तत्पर रहते हैं । उन हवियुक्त अग्नि को मनुष्य नित्य-प्रति पूजते हैं ।२। हे ज्ञानवान् अध्वर्युओं ! ऊर्ध्व मुख वाली अरणिपर नीचे मुख वाली अरणि रखो । तत्काल गर्भ होने वाली अरणिने कामनाओं की वर्षा करने वाले अग्नि को प्रकट किया । उस अग्निमें दायक गुण था । उत्तम प्रकाश वाले इला-पुत्र अग्नि अरणि द्वारा उत्पन्न हुए ।३। विज्ञानी अग्नि देव ! हम तुम्हें पृथिवी की नाभि रूप उत्तर वेदी में हवि-वहन करने के निमित्त प्रतिष्ठित करते हैं ।४। हे अध्वर्युओ! श्रेष्ठ ज्ञानी, अविनाशी कवि, प्रदीप्तियुक्त देह वाली अग्नि को अरणि मंथन से प्रकट करो । तुम यज्ञ कर्म में मनुष्य का नेतृत्व करने वाले हो जो अग्नि यज्ञ सूचक, सुख देने वाले, प्रथम पूज्य हैं, उन्हें प्रारम्भ में प्रकट करो ।५।　　　　　　(३२)

यदी मन्थन्ति बाहुभिर्वि रोचतेऽश्वो न वाज्यरुषो वनेष्वा ।
चित्रो न यामन्नश्विनोरनिवृतः वरि वृणक्त्यश्मनस्तृणा दहन् ॥६
जातो अग्नी रोचते चेकितानो वाजी विप्रः कविशस्तः सुदानुः ।
यं देवास ईड्यं विश्वविदं हव्यवाहमदधुरध्वरेषु ॥७
सीदहोतः स्व उ लोके चिकित्वान् त्सादया यज्ञं सुकृतस्य योनौ ।
देवावीर्देवान् हविषा यजास्यग्ने बृहद् यजमाने वयो धाः ॥८

कृणोत धूमं वृषण सखायो ऽस्रे धन्त इतन वाजमच्छ।
अयमग्निः पृतनाषाट् सुवीरो येन देवासो असहन्त दस्यून् ॥९
अयं ते योनिर्ऋत्वियो यतो जातो अरोचथाः।
तं जानन्नग्न आ सीदाथा नो वर्धया गिरः।१०।३३

हाथों द्वारा अरणि-मन्थन करने पर काष्ठ-द्वय से उत्पन्न वह अग्नि अश्व के समान शोभायमान तथा अश्वनींकुमारों के रथ के समान द्रुत-गामी होकर सुशोभित होते हैं। उनके मार्गको रोकनेकी सामर्थ्य किसी में नही है।६। अग्नि उत्पन्न होते ही अपने कर्म में विज्ञ होते हैं। वे सर्व कर्मोंके ज्ञाता तथा तेजस्वी हैं। अतः ज्ञानीजन उनका स्तवन करते हैं। वह कर्मोंका फल देते हुए सुशोभित होते हैं। उन पूज्य और सर्वज्ञ अग्निदेव को देवताओं ने यज्ञ कर्म में हवि वहन करने वाला नियुक्त किया।७। हे अग्ने! तुम यज्ञ सम्पादक हो। अपने स्थान पर विराज-मान होओ। तुम सबको जानने वाले हो। यजमानको दिव्य लोक प्राप्त कराओ। तुम देवताओं की रक्षा करने वाले हो। हवि द्वारा देवताओं की पूजाकरो और मुझ यज्ञकर्त्ता को इच्छित अन्नदो।८। हे अध्वर्युओं! तुम कामनाओं की वर्षा करने वाले धूमको उत्पन्न करो। उससे बल-वान होकर युद्ध में पहुँचो। अग्निदेव वीरोंमें श्रेष्ठ हैं। वे शत्रु सेना के विजेता हैं। देवताओं ने उन्हीं की सहायता से दैत्यों पर विजय प्राप्त की थी।९। हे अग्ने! यह काष्ठ वाली अरणि तुम्हारा प्राकट्य स्थान है! तुम इससे प्रकटहोकर सुशोभित होओ। उसे जानते हुए विराजमान होओ और हमारी स्तुतिको बढ़ाओं।१०। (३३)

तनूनपादुच्यते गर्भ आसुरो नराशंसो भवति यद् विजायते।
मातरिश्वा यदमिमीत मातरि वातस्य सर्गो अभवत् सरीमणि।११
सुनिर्मथा निर्मथितः सुनिधा निहितः कविः।
अग्ने स्वध्वरा कृणु देवान् देवयते यज ॥१२
अजीजनन्नमृतं मर्त्यासो ऽस्रेमाणं तरणिं वीलुजम्भम्।

दश स्वसारो अग्रुवः समीचीः पुमांसं जातमभि सं रभन्ते ॥१३
प्र सप्तहोता सनकादरोचत मातुरुपस्थे यदशोचदूधनि ।
न नि मिषति सुरणो दिवेदिवे यदसुरस्य जठरादजायत ॥१४
समित्रायुधो मरुतामिव प्रयाः प्रथमजा ब्रह्मणो विश्वमिद् विदुः।
द्युम्नवद् ब्रह्म कुशिकास एरिर एकएको दमेअग्नि समीधिरे।१५
यदद्य त्वा प्रयति यज्ञे अस्मिन् होतश्चिकित्वोऽवृणीमहीह ।
ध्रुवमया ध्रुवमुताशमिष्ठाःप्रजानन्विद्वाँ उपनयाहिसोमम्।१६।३४

जिस अग्नि का व्यापक रूप कभी नष्ट नहीं होता, उसे तनूनपात् कहते हैं। जब वह साक्षात् होते हैं तब आसुर और नराशंस कहलातेहैं और अन्तरिक्ष में अपने तेज को फैलाते हैं तब मातरिश्वा होते हैं। जब वह प्रकट होते हैं तब वायु के समान होते हैं।११। हे अग्ने ! तुम ज्ञानी तथा मन्थन से उत्पन्न हो। तुम श्रेष्ठस्थान में प्रतिष्ठित हो। हमारे यज्ञ को निर्विघ्न पूर्ण करो। हम, देवताओंकी कामना करने वाले के निमित्त देवताओं का पूजन करो।१२। मरणधर्मा ऋत्विज्ञों ने अक्षय अविनाशी दृढ़ दाँतों वाले और पाप से उद्धार करने वाले अग्नि को प्रकट किया। सन्तान के समान उत्पन्न हुए उन अग्नि के प्रति, भगिनी रूपिणी दसों अंगुलियाँ हर्ष सूचक ध्वनि करती हैं।१३। अग्नि प्राचीन हैं। सप्त होताओं द्वारा किये जाने वाले यज्ञमें अत्यन्त सुशोभित होतेहैं जब वे वनों में क्रीड़ा करते हैं तब अत्यन्त कांतियुक्त लगते हैं। वे सदा चैतन्य रहते हैं। वे असुर के मध्य से उत्पन्न हुए हैं।१४। शत्रुओं से मरुद्गण के समान युद्ध करने वाले ब्रह्मा द्वारा प्रथम उत्पन्न कौशिक ऋषियों ने सम्पूर्ण विश्व को जाना। वे अपने ग्रह में अग्नि को प्रदीप्त करते और उनके प्रति हवि देते हुए स्तुतियां करते हैं।१५। यज्ञ-कार्य सम्पन्न करने वाले, मेधावी, सर्वज्ञाता अग्निको हम इस यज्ञमें स्थापित करते हैं। हे अग्ने ! इस यज्ञ में देवताओं को हवि दो। उनकी नित्य प्रति स्तुति करो। सोम को सिद्ध हुआ जानकर उसको प्राप्त होओ।१६।

(३४)

सूक्त ३० [तृतीय अनुवाक]

(ऋषि–विश्वामित्रः । देवता–इन्द्रः । छन्द–त्रिष्टुप्)

इच्छन्ति त्वा सोम्यासः सखायः सुन्वन्ति सोमं दधति प्रयांसि ।
तितिक्षन्ते अभिशस्तिं जनानामिन्द्र त्वदा कश्चन हि प्रकेतः ॥१
न ते दूरे परमा चिद् रजांस्या तु प्र याहि हरिवो हभ्याम् ।
स्थिराय वृष्णे सवना कृतेमा युक्ता ग्रावाणः समिधाने अग्नौ ॥२
इन्द्रः सुशिप्रो मघवा तरुत्रो महाव्रातस्तुविकूर्मिऋघावान् ।
यदुग्रो धा बाधितो मर्त्येषु क्व त्या ते वृषभ वीर्याणि ॥३
त्वं हि ष्मा च्यावयन्नच्युतान्येको वृत्रा चरसि जिघ्नमानः ।
तव द्यावापृथिवी पर्वतासोऽनु व्रताय निमितेव तस्थुः ॥४
उताभये थुरुहूत श्रवोभिरेको दृलहमवदो वृत्रहा सन् ।
इमे चिदिन्द्र रोदसी अपारे यत् संगृभ्णा मघवन् काशिरित्ते॥५॥१

हे इन्द्र ! सोम वाले ऋत्विग्गण तुम्हारी स्तुति कामना करते हैं । मित्रगण तुम्हारे निमित्त सोम छानते हैं । उनमें से शत्रुओं के विघ्नों को सहन करते हुए हवि धारण करते हैं । तुम्हारे सिवाय विश्व में अधिक ख्याति-प्राप्त अन्य कौन है ? ।१। हे हरित वर्ण वाले अश्व-युक्त इन्द्र ! सुदूर स्थान भी तुम्हारे लिये दूर नहींहै । तुम अपने अश्व सहित शीघ्र पधारो । तुम दृढ़ विचार वाले तथा कामनाओं की वर्षा करने वाले हो । यह हवन तुम्हारे निमित्त ही किया गया है । अग्निके दीप्त होने पर सोम कूटने के लिए पाषाण कार्य में लिए जाते हैं ।२। हे कामनाओं की वृष्टि करने वाले इन्द्र ! तुम महान् ऐश्वर्य-वान हो । तुम्हारा शिरस्त्राण देखने योग्य है । विजयशील धन युक्त मरुतों से युक्त विविध कर्म वाले, शत्रुओं का संहार करने वाले तथा विकराल हो । तुमने मनुष्यों के लिए जो कर्म युद्धों में किये, वह परा-क्रम युक्त कर्म कहाँ है ! ।३। हे इन्द्र ! तुमने अकेले ही अत्यन्त दृढ़ असुरों को धराशायी किया । वृत्रादि का संहार किया, आकाश पृथिवी और पर्वत तुम्हारे कर्म से ही अचल हुए हैं ।४। हे इन्द्र ! तुम बहुतों द्वारा आहूत किये गये हो । तुम अत्यन्त पराक्रमी हो । तुमने अकेले ही वृत्र का संहार कर देवताओं को निर्भय बनाया । तुम्हीं

आकाश-पृथिवी को कर्मों में लगाते हो। हे भगवान् ! तुम्हारी यह महिमा प्रसिद्ध हैं।५।
(१)

प्र सू त इन्द्र प्रवता हरिभ्यां प्र ते वज्रः प्रमृणन्नेतु शत्रून्।
जहि प्रतीचो अनूचः पराचो विश्वं सत्यं कृणुहि विष्टमस्तु ॥६
यस्मै धायुरदधा मर्त्यायाभक्तं चिद् भजते गेह्यं सः।
भद्रा त इन्द्र सुमतिर्घृताची सहस्रदाना पुरुहूत गतिः ॥७
सहदानुं पुरुहूत क्षियन्तमहस्तमिन्द्र सं पिणक् कुणारुम्।
अभि वृत्रं वर्धमानं पियारुमपादमिन्द्र तवसा जघन्थ ॥८
नि सामनामिषिरामिन्द्र भूमिं महीमपारां सदने ससत्थ।
अस्तम्नाद् द्यां वृषभो अन्तरिक्षमर्षन्त्वापस्त्वयेह प्रसूताः ॥९
अलातृणो वल इन्द्र व्रजो गोः पुरा हन्तोर्भयमानो व्यार।
सुगान् पथो अकृणोन्निरजे गाः प्रावन् वाणीः पुरुहूतं धमन्तीः।
१०।२

हे इन्द्र ! तुम्हारा अश्वयुक्त रथ शत्रु के विरुद्ध शीघ्र आवे। शत्रु को मारने वाला तुम्हारा वज्र कार्य करे। अपने सम्मुख आये शत्रुओं का संहार करो। भागने वाले शत्रुओं को मारो। संसार को यज्ञ कर्म करने वाला बनाओ। तुममें ही ऐसी सामर्थ्य हैं।६। हे इन्द्र! तुम सदा ऐश्वर्यवान रहते हो। तुम जिसे देते हो, वह उसे पहले कभी प्राप्त नहीं था। वह गृहोपयोगी पशु सुवर्ण आदि को पाता है। तुम बहुतों द्वारा स्तुत तथा घृतयुक्त हवियोंसे युक्त हो। तुम्हारे अनुग्रहमें ही मंगल हैं। अन्नदान करने की तुम में असीम सामर्थ्य है।७। हे इन्द्र ! तुम अनेकों द्वारा स्तुति किये हो। तुम दान से युक्त हो। तुम बाधा देने वाले गर्जनकारी वृत्रको हस्तविहीन तथा छिन्न-भिन्न करते हो। उस बढ़े हुए वृत्र को पंगु बनाकर अपनी शक्तिसे तुमने नष्ट कर दिया।८। हे इन्द्र ! तुमने अनन्त, विशाल और गतिमान पृथ्वीको स्थापित किया था। तुम ने आकाश और अन्तरिक्ष को ऐसे धारण किया, जिससे वह गिर न सके। हे इन्द्र! तुम्हारी प्रेरणा से जल पृथिवीको प्राप्तहो।९। हे इन्द्र ! जलोंका कोष्ठभूत मेघ वज्र प्रहार से पूर्व ही खण्ड-खण्ड हो गया। जल रूप गौ को निकलने का मार्ग तुमने सरल किया। शब्द करता हुआ

रमणीय जल अनेकों द्वारा पूजित होकर इन्द्र के समक्ष उपस्थित हुआ (२) ।१०।

एको द्वे वसुमती समीची इन्द्र आ पप्रौ पृथिवीमुत द्याम् ।
उतान्तरिक्षादभि नः समीक इषो रथीः सयुजः शूर वाजान्॥११
दिशः सूर्यो न मिनाति प्रदिष्टा दिवेदिवे हर्यश्वप्रसूताः ।
सं यदानलध्वन आदिदश्वैर्विमोचनं कृणुते तत् त्वस्य ॥१२
दिदृक्षन्त उषसो यामन्नक्तोर्विवस्वत्या महि चित्रमनीकम् ।
विश्वे जानन्ति महिना यदागादिन्द्रस्य कर्म सुकृता पुरूणि ॥१३
महि ज्योतिर्निहितं वक्षणास्वामा पक्वं चरति बिभ्रती गौः ।
विश्वं स्वाद्म संभृतमुस्रियायां यत् सीमिन्द्रो अदधाद् भोजनाय ।
॥१४

इन्द्र दृह्य यामकोशा अभूवन् यज्ञाय शिक्ष गृणते सखिभ्यः ।
दुर्मायवो दुरेवा मर्त्यासो निषङ्गिणो रिपवो हन्त्वासः ।१५।३

इन्द्र ने अपने कर्म द्वारा आकाश-पृथिवी को असंगत कर अन्न-धन से पूर्ण किया । हे वीर इन्द्र ! तुम रथी हो । हमारा साथ करने की इच्छा से रथ में जुते अश्वों को हमारे सामने करो ।११। इन्द्र से ही सूर्य प्रेरणा पाते हैं । वे प्रकाशवान् दिशाओं में नित्य-प्रति गमन करते हैं । जब वे अपने अश्व सहित अपना मार्ग पूर्ण कर लेते हैं, तब हम से अलग होते हैं, यह सब भी इन्द्र की प्रेरणा से हो होता है ।१२। गतिमान रात्रि के पश्चात् उषा के चले जाने पर उन अद्भुत, महान् और तेजस्वी सूर्य के दर्शन करने को सभी उत्सुक होते हैं । जब उषाकाल समाप्त हो जाता है,तब मनुष्य यज्ञादि कर्म में लग जाते हैं । इस प्रकार अनेक उत्तम कार्य इन्द्र के ही हैं ।१३। इन्द्र ने महान गुण वाले जल को नदियों में प्रयुक्त किया, इन्द्रने अत्यन्त स्वादिष्ट दही, घृत. खीर आदि भोजन को जल रूप से गौ में धारण किया । वह नव प्रसूता गौ दुग्धवती हुई घूमती है । ।१४। हे इन्द्र ! तुम दृढ़ होओ शत्रुओं ने विघ्न उपस्थित किया है । तुम यज्ञकर्त्ता स्तोता तथा मित्रों

को उनका अभीष्ट फलदो । शत्रुगण मन्द-गतिसे चलते हुए शस्त्र चलाते हैं । वे धनुष-बाण से युक्त हिंसक हैं,उनका संहार करना उचित है ।१५।

(३)

सं घोषः शृण्वेऽवमैरमित्रैर्जही न्येष्वशनिं तपिष्ठाम् ।
वृश्चेमधस्ताद् वि रुजा सहस्व जहि रक्षो मघवन् रन्धयस्व॥१६
उद् वृह रक्षः सहमूलमिन्द्र वृश्चा मध्य प्रत्यग्रं शृणीहि ।
आ कीवतः सललूकं चकर्थ ब्रह्मद्विषे तपुषिं हेतिमस्य ॥१७
स्वस्तये वाजिभिश्च प्रणेतः सं यन्महीरिष आसत्सि पूर्वीः ।
रायो वन्तारो बृहतः स्यामाऽस्मे अस्तु भग इन्द्र प्रजावान् ॥१८
आ नो भर भगमिन्द्र द्युमन्तं नि ते देष्णस्य धीमहि प्ररेके ।
ऊर्व इव पप्रथे कामो अस्मे तमा पृण वसुपते वसूनाम् ॥१९
इमं कामं मन्दया गोभिरश्वैश्चन्द्रवता राधसा पप्रथश्च ।
स्वर्यवो मतिभिस्तुभ्यं विप्रा इन्द्राय वाहः कुशिकासो अक्रन्॥२०
आ नो गोत्रा दर्दृहि गोपते गाः समस्मभ्यं सनयो यन्तु वाजाः ।
दिवक्षा असि वृषभ सत्यशुष्मो ऽस्मभ्यं सु मघवन्बोधि गोदाः॥२१
शुनं हुवेम मघवानमिन्द्रमस्मिन् भरे नृतमं वाजसातौ ।
शृण्वन्तमुग्रमूतये समत्सु घ्नन्तं वृत्राणि संजितं धनानाम् ।२२।४

हे इन्द्र ! शत्रुओं द्वारा फेंके गये वज्रका शब्द हमको सुनाई पड़ता है । घोर दुःख देने वाली आप्तिनियें (तोप आदि) को शत्रुओं के सामने नष्ट कर डालो । शत्रुओं के कार्य में बाधा देते हुए उन्हें छेद डालो। हे इन्द्र ! राक्षसों का संहार करके यज्ञ कर्म में लगो ।१६। हे इन्द्र ! दैत्यों के वंश को जड़ से नष्ट करो । उनके मध्य भागमें प्रहार करो । अगले भाग को नष्ट करते हुए उन्हें दूर कर दो । यज्ञ से द्वेष करने वाले पर दुःखदायक हथियार चलाओ ।१७। हे इन्द्र ! तुम विश्व के पोषक हो हमको अश्व युक्त बनाओ । हमको अमरत्व प्रदान करो । तुम्हारी निकटता प्राप्त कर हम महान अन्न धन के उपभोग द्वारा वृद्धिको प्राप्त होंगे । हमको पुत्रपौत्रादि सहित धन प्राप्त कराओ

।१८। हे इन्द्र ! हमारे निमित्त उज्ज्वल धन लेकर आओ। तुम दान करने वाले हो। हम तुम्हारे दान को पाने योग्य हैं। हमारी कामना अत्यन्त बढ़ी हुई हैं, तुम धन के स्वामी हो। हमारी कामना की पूर्ति करो।१९। हे इन्द्र ! हमारी गौ,अश्व तथा रमणीय फल वाली कामना को अपने दान द्वारा पूर्णकरो। उससे हमको ख्याति प्राप्त हो। स्वर्गकी कामना वाले तथा सुख प्राप्ति की इच्छा वाले कर्मवान् कौशिकोंने श्रेष्ठ मन्त्रों से तुम्हारी स्तुति की है।२०। हे स्वर्ग के स्वामी इन्द्र ! मेघ को छिन्न-भिन्न कर हमको जल प्रदान करो। उपभोग्य अन्न हमको प्राप्त हो। तुम अभीष्टके वर्षक हो। आकाश को व्याप्त करते हुए रहते हो। तुम सत्य के बल से युक्त हो। हमको गौ प्रदान करो ।२१। हे इन्द्र ! तुम अन्नवान् हो। युद्ध में उत्साह-पूर्वक बढ़े हुए तुम अत्यन्त धन वाले, ऐश्वर्यशाली, नायकोंमे श्रेष्ठ, स्तुतियों को सुनने वाले, विकराल शत्रुओं का संहार करने वाले और धनोंको जीतने वालेहो। हम तुम्हारे आश्रय के निमित्त तुम्हारा आह्वान करते हैं।२२। (४)

सूक्त ३१

(ऋषि-कुशिकः, विश्वामित्रः। देवता-इन्द्रः। छन्द-त्रिष्टुप)

शासद् वह्निर्दुहितुर्नप्त्यं गाद् विद्वाँ ऋतस्य दीधितिं सपर्यन्।
पिता यत्र दुहितुः सेकमृञ्जन् त्सं शग्म्येन मनसा दधन्वे ॥१
न जामये तान्वो रिक्थमारैक् चकार गर्भं सनितुर्निधानम्।
यदी मातरो जनयन्त वह्निमन्यः कर्ता सुकृतोरन्य ऋन्धन्॥२
अग्निर्जज्ञे जुह्वा रेजमानो महस्पुत्राँ अरुषस्य प्रयक्षे।
महान् गर्भो मह्या जातमेषां मही प्रवृद्धर्यश्वस्य यज्ञैः ॥३
अभि जैत्रीरसचन्त स्पृधानं महि ज्योतिस्तमसो निरजानन्।
तं जानतीः प्रत्युदायन्नुषासः पतिर्गवामभवदेक इन्द्रः ॥४
वीलौ सतीरभि धीरा अतृन्दन् प्राचाहिन्वन् मनसा सप्त विप्राः।
विश्वामविन्दन् पथ्यामृतस्य प्रजानन्नित्ता नमसा विवेश ।५।५

जिससे पुत्र न हो, ऐसा व्यक्ति अपनी पुत्री का योग्य पुरुष से विवाह करता हुआ दौहित्रको प्राप्त करता है। वह पुत्रहीन व्यक्ति पुत्री

के गर्भ-धारण विश्वास पर जीवित रहता है ।१। और पुत्र से पुत्री को धन नहीं मिलता। वह पुत्री को उसके पति के सेचन कार्य द्वारा माता बनाता है। यदि माता-पिता के पुत्र और पुत्री दोनों ही उत्पन्न हों तो उनमें से पुत्र क्रिया-कर्म करनेका अधिकारी है,तथा पुत्री सम्मान की अधिकारिणी है ।२। हे इन्द्र ! तुम तेजस्वी हो तुमने हमारे यज्ञ के निमित्त कम्पित अग्नि के बल रूप किरणों को प्रकट किया है। इन किरणोंका गर्भ जल-रूप हैं। इनका महान जन्म औषधि-रूप है। हे हरे अश्व वाले इन्द्र ! सोम द्वारा प्रेरित तुम्हारी इन किरणोंके गर्भ महत्ता-वान होते हैं ।३। वृत्र से संग्राम-रत इन्द्र के साथ मरुद्गण मिले थे। सूर्य रूप महान तेज अन्धकार-रूप वृत्र के आवरणमें भी मार्ग दर्शक है, इसे मरुद्गण जान गये। उषाओं ने इन्द्र को सूर्य समझा, और उनके समक्ष पहुँची। तब एकमात्र इन्द्र ही समस्त किरणों के स्वामी हुए ।४। प्रज्ञावान् सप्त अङ्गिराओं ने सुदृढ़ पर्वतपर रोकी हुई गौओं को ढूँढा। 'पर्वत पर गौऐं हैं। यह विश्वास कर वे जिस मार्ग से वहाँ गये, उसी से लौटे। उन्होंने यज्ञमार्ग द्वारा सभी गौओंको प्राप्तकिया। अङ्गिराओं को नमस्कार युक्त पूजा से प्रभावित इन्द्र इस बात को जानकर पर्वत पर पहुँचे ।५।

(५)

विदद् यदी सरमा रुग्णमद्रेर्महि पाथः पूर्व्यं सध्र्यक्कः ।
अग्रं नयत् सुपद्यक्षराणामच्छा रवं प्रथमा जानती गात् ॥६
अगच्छदु विप्रतमः सखीयन्नसूदयत् सुकृते गर्भमद्रिः ।
ससान मर्यो युवभिर्मखस्यन्नथाभवदङ्गिराः सद्यो अर्चन् ॥७
सतःसतः प्रतिमानं पुरोभूर्विश्वा वेद जनिमा हन्ति शुष्णम् ।
प्र णो दिवः पदवीर्गव्युरर्चन् त्सखा सखीरमुञ्चन्निरवद्यात् ॥८
नि गव्यता मनसा सेदुरर्कैः कृण्वानासो अमृतत्वाय गातुम् ।
इदं चिन्नु सदनं भूर्येषां येन मासां असिषासन्नृतेन ॥९
संपश्यमाना अमदन्नभि स्वं पयः प्रत्नस्य रेतसो दुघानाः ।
वि रोदसी अतपद् घोष एषां जाते निःष्ठामदधुर्गोषु वीरान्।१०।६

पर्वत के टूटे हुए द्वार पर जब सरमा गई,तब इन्द्र ने अपनेवचनानुसार उसे उसका चाहा हुआ प्रचुर अन्न तथा धन प्रदान किया। वह उत्तम पाँव वाली सरमा गौओं के शब्द को पहचानती हुए उनके समीप प्राप्त हुई।६। अत्यन्त प्रज्ञा सम्पन्न इन्द्र अङ्गिराओंके प्रति मैत्री-पूर्ण इच्छा से वहाँ पहुँचे। पर्वत ने अपने छिपे हुए धनको उन महान योद्धा के निमित्त प्रकट किया। शत्रु का संहार करने वाले इन्द्र ने युवा मरुतों की सहायता से उन्हें पाया। तब अङ्गिराओं ने उनका पूजन किया।७। जो समस्त ऐश्वर्यवानों में अग्रगण्य हैं, जो रणक्षेत्र में सबसे आगे चलते हैं, जो सभी सम्पन्न पदार्थों के ज्ञाता हैं, जिन्होंने शुष्ण को मारा था, वे इन्द्र गोधन की इच्छा वाले तथा अत्यन्त दूर-दर्शी हैं वे हमको आदर प्रदान करते हुए पाप से रक्षा करते हैं।८। मेधावी-जन अन्तःकारण में गोधन-प्राप्ति की इच्छासे स्तोत्र द्वारा अमरत्व प्राप्तिका यत्न करते हुए यज्ञ कर्म में लगे। उनका यज्ञ ही महान आश्रय रूप है। इन्होंने इस सत्य के कारण भूतयज्ञ के बल से महीनों को विभक्त किया।९। अङ्गिरावंशियों ने प्रथम उत्पन्न पुत्रों की रक्षा के निमित्त गो-धन प्राप्त कर उनका दोहन किया और शरीर को पुष्ट बनाया। उनकी हर्ष ध्वनि आकाश-पृथिवीमें व्याप्त हो गई। वे पूर्वकालके समान ही संसार में रहे और गौओं की रक्षा के लिए उन्होंने वीरों को नियुक्त किया।१०।   (६)

स जातेभिर्वृत्रहा सेदु हव्यैरुदुस्रिया असृजदिन्द्रो अर्कैः।
उरूच्यस्मै घृतवद् भरन्ती मधु स्वाद्म दुदुहे जेन्या गौः ॥११
पित्रे चिच्चक्रुः सदनं समस्मै महि त्विषीमत् सुकृतो वि हि ख्यन्।
विष्कभ्नन्तः स्कम्भनेना जनित्री असीना ऊर्ध्वं रभसं वि मिन्वन् १२
मही यदि धिषणा शिश्नथे धात् सद्योवृधं विभ्वं रोदस्योः।
गिरो यस्मिन्ननवद्याः समीचीर्विश्वा इन्द्राय तविषीरनुत्ताः ॥१३
मह्या ते सख्यं वश्मि शक्तीरा वृत्रघ्ने नियुतो यन्ति पूर्वीः।

महि स्तोत्रमव आगन्म सूरेरस्माकं सुमघवन् बोधि गोपाः ॥१४
महि क्षेत्रं पुरु श्चन्द्रं विविद्वानादित् सखिभ्यश्चरथं समैरत् ।
इन्द्रो नृभिरजनद् दीद्यानः साकं सूर्यमुषसं गातुमग्निम् ।१५।७

इन्द्र ने मरुद्गण को साथ लेकर वृत्रका संहार किया। वे ही पूज्य हैं तथा यजन करने योग्य है। उन्होंने मरुद्गण के साथ यज्ञ के निमित्त गौओं का दान किया। घृतयुक्त हवि वाली तथा उत्तम हवि देने वाली गौ ने इनके निमित्त सुस्वादु क्षीर प्रदान किया।११। उन पालन-कर्त्ता इन्द्र के लिए अङ्गिराओं ने अत्यन्त स्वच्छ एवं उज्ज्वल श्रेष्ठ स्थान का संस्कार किया। उत्तम कर्म वाले अङ्गिराओं ने इन्द्रके योग्य इस सुन्दर स्थान को दिखाया। उन्होंने यज्ञ में बैठकर आकाश पृथिवी के मध्य अन्तरिक्ष रूप स्तम्भ का आरोपण कर इन्द्रको स्वर्ग में प्रतिष्ठित किया था।१२। आकाश-पृथिवी के विश्लेषण में प्रयुक्त वाणी, उनके वर्णन में समर्थ न हो तो भी इन्द्र की स्तुति द्वारा वद्धि को प्राप्त होती हुई सुसंगत होती है। इन इन्द्र की सभी शक्तियाँ सामर्थ्य वाली हैं।१३। हे इन्द्र ! मैं तुम्हारे महान मित्र-भाव की याचना करता हूँ। तुम्हारी शक्ति के निमित्त याचना करता हूँ। तुम वृत्र का संहार करने वाले हो। तुम्हारे पास अनेक अश्व हैं। तुम अत्यन्त मेधावी हो। हम तुम्हें अपना हार्दिक मित्र-भाव, स्तोत्र और हवियाँ अर्पित करेंगे। हे इन्द्र ! तुम हमारे रक्षक हो, हमको बुद्धिमान बनाओ।१४। इन्द्र ने भले प्रकार विचार कर मित्रों को भूमि और सुवर्ण रूप धन प्रदान किया। फिर उन्होंने गवादि धन भी दिया। वे अत्यन्त तेजस्वी हैं उन्होंने ही मरुद्गण सूर्य, उषा, पृथिवी और अग्नि को प्रकट किया।१५।

(७)

अपश्चिदेष विभ्वो दमूनाः प्र सध्रीचीरसृजद् विश्वश्चन्द्राः ।
मध्वः पुनानाः कविभिः पवित्रैर्द्युभिर्हिन्वन्त्यक्तुभिर्धनुत्रीः ॥१६
अनु कृष्णे वसुधिती जिहाते उभे सूर्यस्य मंहना यजत्रे ।
परि यत् ते महिमानं वृजध्यै सखाय इन्द्र काम्या ऋजिप्याः ॥१७

पतिर्भव वृत्रहन्त्सनृतानां गिरां विश्वायुर्वृषभो वयोधाः ।
आ नो गहि सख्येभिः शिवेभिर्महान् मह्रीभिरूतिभिः सरण्यन्।१८
तमङ्गिरस्वन्नमसा सपर्यन् नव्यं कृणोमि सन्यसे पुरजाम् ।
द्रुहो वि याहि बहुला अदेवीः स्वश्च नो मघवन्त्सातये धाः ॥१९
मिह. पावकाः प्रतता अभूवन्त्स्वस्ति नः पिपृहि पारमासाम् ।
इन्द्र त्वं रथिरः पाहि नो रिषो मक्षूमक्षू कृणुहि गोजितो न.।२०
अदेदिष्ट वृत्रहा गोपतिर्गा अन्तः कृष्णां अरुषैर्धामभिर्गात ।
प्र सूनृता दिशमान ऋतेन दुरश्च विश्वा अवृणोदप स्वाः ।।२१
शुनं हुवेम मघवानमिन्द्रमस्मिन् भरे नृतमं वाजसातौ ।
शृण्वन्तमुग्रमूतये समत्सु घ्नन्तं वृत्राणि संजितं धनानाम् ।२२।८

वे इन्द्र शांत स्वभाव से युक्त हैं । ऐसे अत्यन्त वेग वाले सुसंगत और विश्वको परम आनन्द देने वाले जलको उन्होंने प्रकट किया । वह मधुर सोमों को पवित्र करते तथा अग्नि, सूर्य और वायु के द्वारा शुद्ध करते हैं । वे ही सम्पूर्ण जगत् को आनन्द प्रदान करते हुए इस विश्व को दिन और रात्रि में भी अपने कर्मों में लगाते हैं ।१६। सूर्य की महिमा से समस्त पदार्थों के धारण करने वाले तथा यश निर्वाहक दिन रात्रि क्रम-पूर्वक भ्रमण करते हैं । ऋजु रूप मित्र भाव वाले मरुद्गण शत्रु पर विजय प्राप्त करने के लिए तुम्हारी शक्ति का आश्रय प्राप्त करते हैं ।१७। हे इन्द्र ! तुम वृत्र संहारक हो । तुम कामनाओं की वर्षा करने वाले, अमर तथा अन्न प्रदान करने वाले हो । तुम हमारी प्रिय स्तुतियों के अधिपति होओ । तुम यज्ञ में जाने की इच्छा वाले एवं महान् हो । तुम अपनी कल्याण वहन करने वाली मित्रता सहित तथा महान् आश्रय से युक्त हुए हमको प्राप्त होओ ।१८। हे इन्द्र ! तुम प्राचीन हो । अङ्गिराओं के समान मैं तुम्हारा पूजन करता हूँ । मैं तुम्हारे स्तवन निमित्त नवीन स्तुतियाँ प्रस्तुत करता हूँ । तुम देवताओं के वैरियों का संहार करने वाले हो । हे इन्द्र ! हमारे लिये उपयोग करने

योग्य धनप्रदान करो ।१६। हे इन्द्र ! अग्निका तेज सब ओर फैल गया हमारे इस श्रेष्ठ तट को जल पूर्ण करो । तुम रथ युक्त हो शत्रुओं से हमारी रक्षा करो हमको गौओं को जीतने योग्य बल दो ।२०। वृत्र का संहार करने वाले गौओंके स्वामी इन्द्र हमको गौएँ दें । यज्ञमें विघ्न करने वाले राक्षसोंको अपने प्रकाशवान् तेजसे मार डालें । उन्होंने सत्य के द्वारा अंगिराओं को रमणीय गौएं दान की और असत्यके सभी नामों को रोक दिया ।२१। हे इन्द्र ! तुम अन्न का लाभ कराने वाले, युद्ध में उत्साह द्वारा वृद्धि को प्राप्त हुए धन से युक्त, ऐश्वर्य वालों में श्रेष्ठ, स्तुतियों के सुनने वाले, विकराल, रणस्थल में शत्रुओंका संहार करने वाले तथा धनों के जीतने वाले हो । मैं आश्रय प्राप्त करने के लिये तुम्हारा आह्वान करता हूँ ।२२।

(८)

सूक्त २२

(ऋषि—विश्वामित्रः । देवता—इन्द्रः । छन्द त्रिष्टुप्)

इन्द्र सोमं सोमपते पिबेमं माध्यंदिनं सवनं चारु यत् ते ।
प्रुथ्या शिप्रे मघवन्नृजीषिन् विमुच्या हरी इह मादयस्व ।।१
गवाशिरं मन्थिनामिन्द्र शुक्रं पिबा सोमं ररिमा ते मदाय ।
ब्रह्मकृता मारुतेना गणेन सजोषा रुद्रैस्तृपदा वृषस्व ।।२
ये ते शुष्मं ये तविषीमवर्धन्नर्चन्त इन्द्र मरुतस्त ओजः ।
माध्यंदिने सवने वज्रहस्त पिबा रुद्रेभिः सगणः सुशिप्र ।।३
त इन्न्वस्य मधुमद् विविप्र इन्द्रस्य शर्धो मरुतो य आसन् ।
येभिर्वृत्रस्येषितो विवेदामर्मणो मन्यमानस्य मर्म ।।४
नुष्वदिन्द्र सवनं जुषाणः पिबा सोमं शश्वते वीर्याय ।
आ ववृत्स्व हर्यश्व यज्ञैः सरण्युभिरपो अर्णा सिसर्षि ।।५।।६

हे इन्द्र ! तुम सोम के स्वामी हो । इस मध्य सवन में सोम पान करो । यह सोम तुमको अत्यन्त प्रिय है । तुम धन से युक्त सोम से युक्त हो । अपने अश्वों को रथसे पृथक् कर उनके मुखको श्रेष्ठ तृणादि पूर्ण करते हुए उन्हें इस यज्ञ में आनन्दित करो ।१। हे इन्द्र दुग्धादि

से युक्त संस्कारित नवीन सोम को पीओ। तुम्हारी प्रसन्नताके निमित्त हम उसे भेंट करते है। तुम मरुद्गण और रुद्रों के साथ तृप्त होने तक सोम पान करो।२। हे इन्द्र ! जो मरुद्गण शत्रुओं सुखाने वाले तुम्हारे तेज की वृद्धि करते हैं, वे मरुद्गण ही तुम्हारे बल को बढ़ाने वाले भी हैं। ये मरुत् ही स्तुति से तुम्हारे युद्ध सामर्थ्य को बढ़ाते हैं। तुम वज्र धारण कर, सुशोभित शिरस्त्राण युक्त हुए मध्य सवनमें रुद्रों सहित सोमपान करो।३। वृत्र को विश्वास था कि मेरा भेद कोई नहीं जानता। परन्तु मरुतों की सहायता और प्रेरणा द्वारा इन्द्र ने वृत्र का भेद जान लिया लिया। उन्हीं मरुद्गणों ने उत्साह वर्द्धक वाणीसे तुम्हें उत्साहित किया था।४। हे इन्द्र ! मनु यज्ञ के समान तुम मेरे यज्ञ को ग्रहण करते हुए स्थायी बल के निमित्त सोम पीओ,। तुम हरे अश्व वाले हो। यज्ञ के पात्र मरुद्गण के सहित आओ, और अन्तरिक्ष मे जल को छोड़ो।५। (६)

त्वमपो यद्ध वृत्रं जघन्वाँ अत्याँ इव प्रासृजः सर्तवाजौ ।
शयानमिन्द्र चरता वधेन वव्रिवांसं परि देवीरदेवम् ॥६
यजाम इन्नमसा वृद्धमिन्द्रं बृहन्तमृष्वमजरं युवानम् ।
यस्य प्रिये ममतुर्यज्ञियस्य न रोदसी महिमानं ममाते ॥७
इन्द्रस्य कर्म सुकृता पुरूणि व्रतानि देवा न मिनन्ति विश्वे ।
दाधार यः पृथिवीं द्यामृतेमां जजान सूर्यमुषसं सुदंसाः ॥८
अद्रोघ सत्य तव तन्महित्वं सद्यो यज्जातो अपिबो ह सोमम् ।
न द्याव इन्द्र तवसस्त ओजो नाहा न मासाः शरदो वरन्त ॥९
त्वं सद्यो अपिबो जात इन्द्र मदाय सोमं परमे व्योमन् ।
यद्ध द्यावापृथिवी आविवेशीरथाभवः पूर्व्यः कारुधायाः ।१०।१०

हे इन्द्र तुम उज्ज्वल जल को ढकते हो। तुमने उस सोते हुए वृक्ष को युद्ध में गिराँया है। तुमने युद्धमें अश्वके समान जल को छोड़ दिया।६। हवि द्वारा वृद्धि को प्राप्त, अविनाशी, महान्, सतत युवा, स्तुति के पात्र इन्द्र का हम पूजन करते हैं। महती आकाश और पृथिवी

भी इन्द्र की महिमा को सीमित करने में समर्थ नहीं हैं ।७। इन्द्र के उत्तम कर्म, यज्ञादि पराक्रम में सभी देव मिलकर भी बाधा नहीं डाल सकते । वे आकाश पृथिवी और अन्तरिक्षके धारण-कर्त्ता हैं । उनकेकर्म श्रेष्ठ हैं । उन्हीं ने सूर्य और उषा को प्रकट किया है ।८। हे इन्द्र ! तुम्हारी कामना श्रेष्ठ है । तुम्हारी महिमा ही प्रमुख है । तुम प्रकट होकर ही सोम पीते हो । शक्तिशाली हो । तुम्हारे तेज को स्वर्गादि लोक, दिन, मास और वर्ष कोई भी नहीं रोक सकता ।९। हे इन्द्र ! तुमने उत्पन्न होते ही सबसे ऊँचे लोक (स्वर्ग) में विराजमान होकर प्रसन्नता के लिए सोम पान किया । जब तुम आकाश-पृथिवी में व्याप्त हुए तभी सम्पूर्ण सृष्टि के विधाता बन गये ।१०।

(१०)

अहन्नहिं परिशयानमर्ण ओजायमान तुविजात तव्यान् ।
न ते महित्वमनु भूदध द्यौर्यदन्यया स्फिग्या क्षामवस्थाः ॥११
यज्ञो हि त इन्द्र वर्धनो भूदुत प्रियः सुतसोमो मियेधः ।
यज्ञेन यज्ञमव यज्ञियः सन् यज्ञस्ते वज्रमहिहत्य आवत् ॥१२
यज्ञेनेन्द्रमवसा चक्रे अर्वागैनं सुम्नाय नव्यसे ववृत्याम् ।
यः स्तोमेभिर्वावृधे पूर्व्येभिर्यो मध्यमेभिरुत नूतनेभिः ॥१३
विवेष यन्मा धिषणा जजान स्तवै पुरा पार्यादिन्द्रमह्नः ।
अंहसो यत्र पीपरद् यथा नो नावेव यान्तमुभये हवन्ते ॥१४
आपूर्णो अस्य कलशः स्वाहा सेक्तेव कोशं सिसिचे पिबध्यै ।
समु प्रिया आववृत्रन् मदाय प्रदक्षिणिदभि सोमास इन्द्रम् ॥१५
न त्वा गभीरः पुरुहूत सिन्धुर्नाद्रयः परि षन्तो वरन्त ।
इत्था सखिभ्य इषितो यदिन्द्राऽऽदृलहं चिदरुजो गव्यमूर्वम् ॥१६
शुनं हुवेम मघवानमिन्द्रमस्मिन् भरे नृतमं वाजसातौ ।
शृण्वन्तमुग्रमूतये समत्सु घ्नन्तं वृत्राणि संजितं धनानाम् ।१७।११

हे इन्द्र ! तुमने अनेकों को उत्पन्न किया, जल को रोकने वाले अहङ्कारी अहिको तुमने नष्ट कर दिया । जब तुम पृथिवी को कटि में छिपा कर चलते हो तब स्वर्ग भी तुम्हारी महिमा की समता करने में

समर्थ नहीं होता ।११। हे इन्द्र ! हमारा यज्ञ तुमको बढ़ाता है। जिस कार्य में सोमका संस्कार किया जाता है,वह कार्य तुमको प्रिय है । तुम यज्ञ के योग्य हो । अपने यजमान की यज्ञ-कार्य के निमित्त रक्षा करो । अहि का संहार करने के निमित्त यह यज्ञ तुम्हारे वज्र को बलशाली बनावे ।१२। पुरातन, मध्यकालीन तथा नवीन स्तोत्रसे जो इन्द्र बढ़तेहैं, उन्हीं इन्द्रको यजमान अपने रक्षक यज्ञ द्वारा सामने बुलाता है । नवीन धन के लिए वह उनका आह्वान करता है ।१३। इन्द्र की स्तुति करने की जब मैं इच्छा करता हूँ, तभी स्तुति करने लगता हूँ । मैं उस अशुभ दूरवर्ती दिन की अशङ्का से, पहले ही इन्द्र का स्तवन करता हूँ । वे इन्द्र हमें दुःख से पार करें । नदी के दोनों तटों के लोग जैसे नाव वाले को बुलाते हैं वैसेही हमारे मातृ-कुल के व्यक्ति इन्द्र को बुलाते हैं ।१४। इन्द्र का कथन पूर्ण हो गया । पान के निमित्त स्वाहाकार की ध्वनि हुई । जैसे जल सींचने वाला पात्र से जल सींचता है. वैसे ही मैं सोम को सींचता हूँ । सुन्दर स्वाद वाला सोम, इन्द्र को आनन्दित करने के लिए उनके सम्मुख जाता है ।१५। हे इन्द्र ! तुम बहुतों द्वारा आह्वान किये गये हो । गम्भीर समुद्र भी तुम्हें रोक नहीं सकता । समुद्र के चारों ओर का उप-समुद्र भी तुम्हें निवारण करने में समर्थ नहीं हैं । क्योंकि मित्रों की प्रार्थना पर तुमने महाबली वृत्र का निवारण कर दिया है ।१६। हे इन्द्र ! तुम अन्न का लाभ करने वाले उत्साह से बढ़े हुए, धन और ऐश्वर्य से सम्पन्न, नायकों में श्रेष्ठ, स्तुति सुनने वाले, विकराल युद्ध में शत्रु का नाश करने वाले तथा धनों को जीतने वाले हो । आश्रय प्राप्त करने के लिए मैं तुम्हारा आह्वान करता हूँ ।१७। (११)

सूक्त ३३

(ऋषि–विश्वामित्रः । देवता–नद्यः इन्द्रः । छन्द–त्रिष्टुप्, अनुष्टुप्)

प्र पर्वतानामुशती उपस्थादश्वे इव विषिते हासमाने ।
गावेव शुभ्रे मातरा रिहाणे विपाट्छुतुद्री पयसा जवेते ॥१

इन्द्रेषिते प्रसवं भिक्षमाणे अच्छा समुद्रं रथ्येव याथः ।
समाराणे ऊर्मिभिः पिन्वमाने अन्या वामन्यामप्येति शुभ्रे ॥२
अच्छा सिन्धुं मातृतमामयासं विपाशमुर्वीं सुभगामगन्म ।
वत्समिव मातरा संरिहाणे समानं योनिमनु संचरन्ती ॥३
एना वयं पयसा पिन्वमाना अनु योनिं देवकृतं चरन्तीः ।
न वर्तवे प्रसवः सर्गतक्तः किंयुर्विप्रो नद्यो जोहवीति ॥४
रमध्वं मे वचसे सोम्याय ऋतावरीरुप मुहूर्तमेवैः ।
प्र सिन्धुमच्छा बृहती मनीषा ऽवस्युरह्वे कुशिकस्य सूनुः॥५॥१२

जलयुक्त प्रवाह वाली विपाशा और शुतुद्री नदियाँ पूर्व के अङ्क से निकल कर समुद्र से मिलने की कामना वाली होकर, अश्वशिला से विमुक्त अश्व के समान स्पर्द्धावान होती हुई, दो गौओं के समान सुशोभित हुई वेग से समुद्र की ओर चलती हैं।१। हे दोनों नदियों ! इन्द्र तुम्हें प्रेरणा देते हैं। तुम परस्पर प्रार्थना-सी करती हुई दो रथियों के समान समुद्र को प्राप्त होती हो। प्रवाहमान हुई तरंगों द्वारा बढ़ कर परस्पर मिलने की चेष्टा करती हुई सी चलती हो और शोभा पाती हो ।२। माता के समान सिन्धु नदी और श्रेष्ठ सौभाग्य वाली विपाशा नदी को प्राप्त होता हूँ। यह दोनों वत्साभिलाषिणी गौओं के समान आश्रय स्थान की ओर जाती हैं।३। यह नदियाँ जलसे पूर्ण हुई भूमि प्रदेशों को सींचती हुई ईश्वर के रचे स्थान पर चलती हैं। इनकी गति कभी रुकती नहीं हम उन नदियोंके अनुकूल होते हुए प्राप्त होते हैं।४। हे जल से पूर्ण नदियों ! मेरे सोम'सम्पन्नता के कार्य की बात सुनने के लिए एक क्षण के लिए चलने से रुको। मैं कुशिक पुत्र विश्वामित्र बृहती स्तुति से प्रसन्नता प्राप्ति और अपनी अभीष्ट पूर्ति के निमित्त इन नदियों का आवाहन करता हूँ।५। (१२)

इन्द्रो अस्माँ अरदद् वज्रबाहुरपाहन् वृत्रं परिधिं नदीनाम् ।
देवोऽनयत् सविता सुपाणिस्तस्य वयं प्रसवे याम उर्वीः ॥६

प्रवाच्यं शश्वधा वीर्यं तदिन्द्रस्य कर्म यदहिं विवृश्चत् ।
वि वज्रेण परिषदो जघानऽऽयन्नापोऽयनमिच्छमानाः ॥७
एतद् वचो जरितर्मापि मृष्ठा आ यत् ते घोषानत्तरा युगानि ।
उक्थेषु कारो प्रति नो जुषस्व मा नो नि कः पुरुषत्रा नमस्ते ॥८
ओ षु स्वसारः कारवे शृणोत ययौ वो दूरादनसा रथेन ।
नि षू नमध्वं भवता सुपारा अधोअक्षाः सिन्धवः स्रोत्याभिः॥९
आ ते कारो शृणवामा वचांसि ययाथ दूरादनसा रथेन ।
नि ते नंसै पीप्यानेव योषा मर्यायेव कन्या शश्वचै ते ।१०।१३

नदियों को रोकने वाले वृत्र का संहार कर वज्रधारी इन्द्र ने हम दोनों नदियों का मार्ग खोल दिया । उत्तम बाहु वाले, तेजस्वी तथा संसार को प्रेरणा देने वाले इन्द्र ने हमें प्रेरणा दी है । हम आज्ञा के निदेश से गमन करती हैं ।६। इन्द्र द्वारा वृत्र-वध के पराक्रम-पूर्ण कार्य का सदा गान करना चाहिये । इन्द्र ने सब दिशाओं से बाधा देने वालों को खोज कर वज्रसे मार डाला । तब गमन-शील जल आने लगा ।७। हे स्तुति करने वाले तुम अपनी प्रतिज्ञा को न भूलना । आने वाले यज्ञ के दिनों में स्तोत्र रचकर तुम हमारी पूजा करना । हम नदियाँ तुम्हे नमस्कार करती हैं । हमारा पुरुषों के मध्य निरादर न करना ।८। हे परस्पर बहन रूप दोनों नदियों ! मैं कौशिक स्तवन करता हूँ । मैं सुदूर से रथ में अश्व जोत कर आया हूँ । तुम नीचीहो जाओ, जिससे मैं तुम्हें पार कर सकूँ । स्तोत्र के नल के समान रथ चक्रके आधे भाग तक ऊँची रहकर ही प्रवाहित होओ ९। हे स्तुति करने वाले ! हम नदियों ने तुम्हारी बात सुन ली है । तुम दूर से आये हो अतः शकट और रथ के साथ जाओ । जिस प्रकार माता पुत्र को स्तन पान करानें को तथा पत्नी पतिसे मिलने को झुकती है उसी प्रकार हम भी तुम्हारे निमित्त झुकती हैं ।१०। (१३)

यदङ्ग त्वा भरताः संतरेयुर्गव्यन् ग्राम इषित इन्द्रजूथः ।
अर्षादह प्रसवः सर्गतक्त आ वो वृणे सुमतिं यज्ञियानाम् ॥११

अतारिषुर्भरता गव्यवः समभक्त विप्रः सुमतिं नदीनाम् ।
प्र पिन्वध्वमिषयन्तीः सुराधा आ वक्षणाः पृणध्वं यात शीमम्।१२
उद् व ऊर्मिः शम्या हन्त्वापो योक्त्राणि मुञ्चत ।
मादुष्कृतौ व्येनसा ऽघ्न्यौ शूनमारताम् ।१३।१४

दोनों नदियों ! भरत-वंश वाले, तुम्हें पार करने की इच्छा वाले भारतीय, इन्द्र द्वारा प्रेरित तुम्हारे द्वारा पार किये जायेंगे। उस पार जाने का यत्न करने वालों को तुम अनुमति प्रदानकर चुकी हो इसलिये मैं विश्वामित्र तुम्हारी सर्वत्र प्रशंसा करूँगा। तुम यजन करने योग्यहो।११। गोधन की कामना करने वाले भारतीय पार हो गये। विद्वानों ने नदियों का भली प्रकार स्तवन किया। तुम अन्न की कारणभूत तथा धन से सम्पन्न होकर लघु नदियों को भी जल से पूर्ण करती हुई द्रुत वेग से चलती रहो।१२। दोनों नदियों ! तुम इस प्रकार से प्रवाहित होओ कि दोनों कीलें ऊपर रहें। तुम रज्जुको स्पर्श नहीं करना। पाप से रहित कल्याण करने वाली अनिंद्य विपाशा और शुतुद्री, तुम्हारी तरंग इस समय अधिक ऊँची न उठे।१३।

(१४)

सूक्त ३४

(ऋषि–विश्वामित्रः। देवता–इन्द्रः। छन्द–त्रिष्टुप्)

इन्द्रः पूर्भिदातिरद् दासमर्कैर्विदद् वसुर्दयमानो वि शत्रून्।
ब्रह्मजूतस्तन्वा वावृधानो भूरिदात्र आपृणद् रोदसी उभे ॥१
मखस्य ते तविषस्य प्र जूतिमियर्मि वाचममृताय भूषन्।
इन्द्र क्षितीनामसि मानुषीणां विशां दैवीनामुत पूर्वयावा ॥२
इन्द्रो वृत्रमवृणोच्छर्धनीतिः प्र मायिनाममिनाद् वर्पणीतिः।
अहन् व्यंसमुशधग्वनेष्वाविर्धेना अकृणोद् राम्याणाम् ॥३
इन्द्रः स्वर्षा जनयन्नहानि जिगायोशिग्भिः पृतना अभिष्टिः ।
प्रारोचयन्मनवे केतुमह्नामविन्दज्ज्योतिर्बृहते रणाय ॥४
इन्द्रस्तुजो बर्हणा आ विवेश नृवद् दधानो नर्या पुरूणि ।
अचेतयद् धिय इमा जरित्रे प्रेमं वर्णमतिरच्छुक्रमासाम् ।५।१५

पुरों को तोड़ने वाले, महिमावान्, धनवान् इन्द्र ने तेज से दस्युओंका संहार कर उन्हें जीत लिया। उस मन्त्र द्वारा आकर्षित हुए और बढ़े हुए शरीर और बहुत से शास्त्रों से युक्त इन्द्र ने आकाश और पृथिवी को पूर्ण किया ।१। हे इन्द्र ! तुम पूज्य तथा शक्तिशाली हो। अन्न के लिए मैं तुम्हें सजाकर, तुम्हारी प्रेरणा से ही स्तोत्र उच्चारण करता हूँ। तुम देवता और मनुष्य दोनों में अग्रगण्य हो ।२। हे इन्द्र ! तुम विख्यातकर्मा हो, तुमने वृत्र को निवारण किया था। शत्रुओं के आक्रमण को रोकने वाले इन्द्र ने उन माया करने वालों को संहार कर डाला। शत्रु को मारने की इच्छा वाले इन्द्रने जङ्गल में छिपे हुए कंधा विहीन शत्रु को मार दिया। उन्होंने रमणीय गौओं को प्रकट किया ।३। वे इन्द्र स्वर्ग प्राप्त करने वाले हैं। उन्होंने दिन को प्रकट कर संग्राम की इच्छा वाले अंगिराओं का गाथ देकर उनके विरोधियों की सेना को हराया।' जिस के ध्वजरूप सूर्य को मनुष्यों के निमित्त प्रकाशित किया। इस प्रकार भीषण युद्धके निमित्त अत्यन्त तेज प्राप्त किया ।४। बाधा देने वालों तथा बल में बढ़ी हुई शत्रु सेना के मध्य धन को ग्रहण कर इन्द्र जा घुसे। स्तुति करने वालों के लिए उन्होंने उषा को चैतन्य देकर उसके श्वेत वर्ण को बढ़ाया ।५। (१५)

महो महानि पनयन्त्यस्येन्द्रस्य कर्म सुकृता पुरूणि ।
वृजनेन वृजिनान् त्स पिपेष मायाभिर्दस्यूरभिभूत्योजाः ॥६
युधेन्द्रो मह्नावरिवश्चकार देवेभ्यः सत्पतिश्चर्षणिप्राः ।
विवस्वतः सदने अस्य तानि विप्रा उक्थेभिः कवयो गृणन्ति ॥७
सत्रासाहं वरेण्यं सहोदां ससवांसं स्वरपश्च देवीः ।
ससान यः पृथिवीं द्यामुतेमामिन्द्रं मदन्त्यनु धीरणासः ॥८
ससानात्यां उत सूर्यं ससानेन्द्रः ससान पुरुभोजसं गाम् ।
हिरण्ययमुत भोगं ससान हत्वी दस्यून् प्रार्यं वर्णमावत् ॥९
इन्द्र ओषधीरसनोदहानि वनस्पतीरसनोदन्तरिक्षम् ।
बिभेद वलं नुनुदे विवाचो ऽथाभवद् दमिताभिक्रतूनाम् ॥१०
शुनं हुवेम मघवानमिन्द्रमस्मिन् भरे नृतमं वाजसातौ ।

शृण्वन्तमुग्रमूतये समत्सु घ्नन्तं वृत्राणि संजितं धनानाम्।११।१६

उन महान इन्द्र द्वारा किये गये श्रेष्ठ कार्यों का साधकगण कीर्तन करते हैं। वे इन्द्र अपने बल से बड़े-बड़े बलवानों को पीस डालते हैं उन जिजेता इन्द्र ने दस्युओं को अपनी भेद नीति द्वारा पीस डाला।६। देवताओं के स्वामी और मनुष्यों को वर देने वाले इन्द्रने बृहद् संग्राममें धन प्राप्त कर स्तुति करने वालों को प्रदान किया। विद्वान् स्तुतिकर्त्ता जन यजमानके गृहमें मन्त्रों द्वारा इन्द्रका यश कीर्तन करते हैं।७। सर्व-विजयी,वरण करने योग्य-स्वर्ग के स्वामी, दिव्य जलोंके प्रतिनिधि इन्द्र के आनन्दित होने पर स्तोतागण प्रसन्नता प्राप्त करते हैं। वह इन्द्र पृथिवी आकाश और अन्तरिक्ष को धारण करने वाले हैं।८। अश्व, सूर्य, गोधन रत्न और सुवर्ण आदि,यह सब इन्द्रके दानरूप हैं। उन्होंने पापियों का संहार कर आर्यों की सदा रक्षा की है।९। इन्द्र ने ही दान रूप दिन बनाया। उन्होंने ही औषधियां दी तथा अन्तरिक्ष और वनस्-पतियाँ प्रदान की। उन्होंने मेघ को विदीर्ण कर शत्रुओंको नष्ट किया। इन्द्र के सामने जो भी विरोधी उपस्थित हुआ उसी को उन्होंने मार डाला।१०। हे इन्द्र ! तुम अन्न प्राप्त करनेमें समर्थ हो। युद्धमें उत्साह द्वारा बढ़ते हो। तुम धनसे हुए अपने वैभव से ही ऐश्वर्यवान् हो। तुम नायकों में श्रेष्ठ तथा स्तुतियों को सुनने वाले हो। तुम अपने उग्र कर्मों द्वारा युद्ध में शत्रु नाश करते हुए धन जीतते हो। हम आश्रय प्राप्ति के निमित्त तुम्हारा आह्वान करते हैं।११। (१६)

सूक्त ३५

(ऋषि—विश्वामित्रः। देवता—इन्द्रः। छन्द—त्रिष्टुप्)

तिष्ठा हरी रथ आ युज्यमाना याहि वायुर्न नियुतो नो अच्छ।
पिबास्यन्धो अभिसृष्टो अस्मे इन्द्र स्वाहा ररिमा ते मदाय ॥१
उपाजिरा पुरुहूताय सप्ती हरी रथस्य धूर्ष्वा युनज्मि।
द्रवद् यथा संभृतं विश्वतश्चिदुपेमं यज्ञमा वहात इन्द्रम् ॥२
उपो नयस्व वृषणा तपुष्पोतेमव त्वं वृषभ स्वधावः।

ग्रसेतामश्वा वि मुचेह शोणा दिवेदिवे सदृशीरद्धि धानाः ॥३
ब्रह्मणा ते ब्रह्मयुजा युनज्मि हरी सखाया सधमाद आशू ।
स्थिरं रथं सुखमिन्द्राधितिष्ठन् प्रजानन् विद्वाँ उप याहि सोमम् ॥४
मा ते हरी वृषणा वीतपृष्ठा नि रीरमन् यजमानासो अन्ये ।
अत्यायाहि शश्वतो वयं ते ऽरं सुतेभिः कृणवाम सोमैः ।५।१७

हे इन्द्र ! तुम्हारे हरित अश्व रथ में जोड़े जाते हैं । वायु अपने अश्वों की प्रतीक्षा करते हैं । वैसे ही तुमभी कुछ क्षण अपने अश्वों की प्रतीक्षा कर उनके सहित यहाँ आओ और हमारे सोमका पान करो हम स्वाहाकार द्वारा तुम्हारी प्रसन्नता के लिए सोम अर्पित करते हैं । ।१। अनेकों द्वारा बुलाये गये इन्द्र के शीघ्र आगमन के निमित्त रथ के आगे दोनों घोड़ों को हम जोड़ते हैं । विधिपूर्वक किये जाते इस यज्ञा-नुष्ठानमें इन्द्र के दोनों घोड़े उन्हें यहाँ ले आवें ।२। इन्द्र! तुम कामनाओं की वर्षा करने वाले तथा अन्नों के स्वामी हो । शत्रु के भय से मुक्त कराने वाले अपने दोनों पराक्रमी घोड़ों को यहाँ ले आओ और इस यजमान के रक्षक बनो । तुम अपने दोनों घोड़ों को यहीं खोल दो । वे यहाँ भोज करे, तुम भी समान रूपवाले उपभोग्य धान्यका सेवन करते ।३। हे इन्द्र तुम्हारे घोड़े मन्त्रों द्वारा जुड़ते हैं । तुम्हारे जो अश्व युद्ध में ख्याति प्राप्ति कर चुके हैं, उन्हीं को हम मन्त्रों द्वारा जोड़ते हैं । हे इन्द्र ! तुम मेधावी हो । अपनी बुद्धि से सुखदायक रथ पर बैठ कर सोम के निकट पधारो ।४। हे इन्द्र ! यजमान तुम्हारे पराक्रमी सुन्दर पीठ वाले दोनों घोड़ों को आनन्द दें । हम तुमको उत्तम प्रकार से सिद्ध किये गये सोम के द्वारा तृप्त करेंगे । तुम बहुत से यजमानों को लाँघ-कर यहाँ शीघ्रता पूर्वक आओ ।५। (१७)

तवायं सोमस्त्वमेह्यर्वाङ् शश्वत्तमं सुमना अस्य पाहि ।
अस्मिन् यज्ञे बर्हिष्या निषद्या दधिष्वेमं जठर इन्दुमिन्द्र ॥६
स्तीर्णं ते बर्हिः सुत इन्द्र सोमः कृता धाना अत्तवे ते हरिभ्याम् ।
तदोकसे पुरुशाकाय वृष्णे मरुत्वते तुभ्यं राता हवींषि ॥७
इमं नरः पर्वतास्तुभ्यमापः समिन्द्र गोभिर्मधुमन्तमक्रन् ।

तस्यागत्वा सुमना ऋष्व पाहि प्रजानन् विद्वान् पथ्या अनु स्वाः ॥८

याँ आभजो मरुत इन्द्र सोमे ये त्वामवर्धन्नभवन् गणस्ते ।
तेभिरेतं सजोषा वावशानो ऽग्नेः पिब जिह्वया सोममिन्द्र ॥९

इन्द्र पिब स्वधया चित् सुतस्याऽग्नेर्वा पाहि जिह्वया यजत्र ।
अध्वर्योर्वा प्रयतं शक्र हस्ताद्धोतुर्वा यज्ञं हविषो जुषस्व ॥१०

शुनं हुवेम मघवानमिन्द्रमस्मिन् भरे नृतमं वाजसातौ ।
शृण्वन्तमुग्रमूतये समत्सु घ्नन्तं वृत्राणि संजितं धनानाम् ।११।१८

हे इन्द ! यह सोम तुम्हारे लिए है, इसके समक्ष पधारो । प्रसन्न मुख द्वारा उस सिद्ध सोमका पान करो । इस यज्ञ में कुश पर प्रतिष्ठित होकर इस सोमको उदरस्थ करो ।६। हे इन्द्र ! यह कुश तुम्हारे निमित्त बिछाये गये हैं और सोम का संस्कार किया गया है। तुम्हारे दोनों घोड़ों के लिए धान्य प्रस्तुत है ! कुश तुम्हारा आसन है । बहुत से विद्वान् तुम्हारा स्तवन करते हैं तुम कामनाओं की वर्षा करने वाले हो तुम्हारे पास मरुद्‌गण रूप सेना है । तुम्हारे लिए विस्तृत हवियाँ प्रस्तुत हैं ।७। हे इन्द्र ! अध्वर्यु पाषाण और जल ने इस दूध मिश्रित सोम को तुम्हारे लिए मधुरता से पूर्ण किया है । तुम मेधावी एवं दर्शनीय हो । हमारी इन स्तुतियों को अपने हितमें जानते हुए प्रसन्न मुख से सोम पान करो ।८। हे इन्द्र ! जिन मरुद्‌गण को सोम-पान करते समय आदर युक्त करते हो उन मरुद्‌गण के साथ सोम-पीने की इच्छा करते हुए, अग्निरूप जिह्वा द्वारा सोम रस पीओ ।९। हे इन्द्र ! तुम यजन-योग्य हो, अग्निरूप जिह्वा द्वारा इस संस्कारित सोम को पीओ । अध्वर्यु द्वारा अर्पित सोम और होता द्वारा आहुति—योग्य हवि को ग्रहण करो ।१०। हे इन्द्र ! तुम अन्न लाभ वाले युद्ध में उत्साह से बढ़ते हो । तुम धन और ऐश्वर्य से युक्त नायकों की श्रेष्ठ स्तुति के सुनने वाले विकराल, युद्ध में शत्रु संहारक और धन जीतने वाले हो । हम आश्रय प्राप्त करने के निमित्त तुम्हारा आह्वान करते हैं ।११।

सूक्त ३६

(ऋषि-विश्वामित्रः, घोर आंगिरसः । देवता-इन्द्रः । छन्द-त्रिष्टुप्)

इमामू षु प्रभृतिं सातये धाः शश्वच्छश्वदूतिभिर्यादमानः ।
सुतेसुते वावृधे वर्धनेभिर्यः कर्मभिर्महद्भिः सुश्रुतो भूत् ॥१
इन्द्राय सोमाः प्रदिवो विदाना ऋभुर्येभिर्वृषपर्वा विहायाः ।
प्रयम्यमानान् प्रति षू गृभायेन्द्र पिब वृषधूतस्य वृष्णः ॥२
पिबा वर्धस्व तव घा सुतास इन्द्र सोमासः प्रथमा उतेमे ।
यथापिबः पूर्व्याँ इन्द्र सोमाँ एवा पाहि पन्यो अद्या नवीयान् ॥३
महाँ अमत्रो वृजने विरप्श्युग्रं शवः पत्यते धृष्ण्वोजः ।
नाह विव्याच पृथिवी चनैनं यत् सोमासो हर्यश्वममन्दन् ॥४
महाँ उग्रो वावृधे वीर्याय समाचक्रे वृषभः काव्येन ।
इन्द्रो भगो वाजदा अस्य गावः प्र जायन्ते दक्षिणा अस्य पूर्वीः ।५।१९

हे इन्द्र ! धन देने के लिए मरुद्गण के सहित यहाँ आकर विशेष प्रकार से सिद्ध किये गये इस सोम को ग्रहण करो। इन्द्र अपने महान् कर्मों के द्वारा विख्यात हैं तथा सोम सिद्ध किये जाने वाले कर्म में हर बार पुष्टिदायक हवियों द्वारा बढ़ते हैं ।१। प्राचीन काल में इन्द्र के लिए सोम अर्पण किया गया था, जिससे वे नियम-पालक, प्रकाशवान् और महान् बनें। हे इन्द्र ! इस अर्पित सोम को स्वीकार करो। यह पत्थर द्वारा कूटा हुआ सोम दिव्य फल देने वाला हैं इसका तुम पालन करो ।२। हे इन्द्र ! तुम्हारे निमित्त प्राचीन काल से प्रसिद्ध सोम अभिनव रूप में संस्कारित किया गया है, इसे पीकर पुष्ट होओ। तुम स्तुति के योग्य हो। जैसे तुमने प्राचीन काल में सोम-पान किया था, वैसे ही इस समय सोम-पान करो ।३। जो इन्द्र महाबली तथा शत्रुओं को जीतने वाले हैं, जो इन्द्र शत्रुओं को युद्ध में ललकारते हैं, उन इन्द्र का बल जीतने योग्य है। उनका तेज सर्वत्र व्याप्त हैं । जब अश्व युक्त इन्द्र को सोम पुष्ट करता है, तब पृथिवी और स्वर्ग भी उनको धारण करने की सामर्थ्य नहीं रखते ।४। बलवान्, पराक्रमी, कामनाओं

की वर्षा करने वाले, दानशील इन्द्र वीरतापूर्वक यज्ञ के निमित्त वृ
को प्राप्त हुए स्तोत्र से संगति करते हैं। इन्द्र की सब गौएँ दू
देने वाली होकर प्रकटीं हैं। इन्द्र अत्यन्त दान करने वाले हैं।५

(१६)

य यन् सिन्धवः प्रसवं यथायन्नापः समुद्रं रथ्येव जग्मुः ।
अतश्चिदिन्द्रः सदसो वरीयान् यदीं सोमः पृणति दुग्धो अंशुः ॥६
समुद्रेण सिन्धवो यादमाना इन्द्राय सोमं सुषुतं भरन्तः ।
अंशुं दुहन्ति हस्तिनो भरित्रैर्मध्वः पुनन्ति धारया पवित्रैः ॥७
ह्रदा इव कुक्षयः सोमधानाः समी विव्याच सवना पुरूणि ।
अन्ना यदिन्द्रः प्रथमा व्याश वृत्रं जघन्वाँ अवृणीत सोमम् ।८
आ तू भर माकिरेतत् परि ष्ठाद् विद्मा हि त्वा वसुपतिं वसूनाम्।
इन्द्र यत् ते माहिनं दत्रमस्त्यस्मभ्यं तद्धर्यश्व प्र यन्धि ॥९
अस्मे प्र यन्धि मघवन्नृजीषिन्निन्द्र रायो विश्ववारस्य भूरेः ।
अस्मे शतं शरदो जीवसे धा अस्मे वीराञ्छश्वत इन्द्र शिप्रिन्।१०
शुनं हुवेम मघवानमिन्द्रमस्मिन् भरे नृतमं वाजसातौ ।
शृण्वन्तमुग्रमूतये समत्सु घ्नन्तं वृत्राणि सञ्जितं धनानाम् ।

११।२०

नदियाँ जब स्रोत के समान दूरस्थ सागर की ओर बहती हैं, तब रथ के समान जल दौड़ता है। उसी प्रकार वरण करने योग्य इन्द्र अन्तरिक्ष से लतारूप सुसिद्ध सोम की ओर जाते हैं।६। समुद्र से मिलने की इच्छा करने वाली नदियाँ जैसे समुद्र को भरती हैं; वैसे ही इन्द्र के निमित्त अध्वर्युगण छाने गये सोम को संस्कारित करते हुए हाथों से सोम लता को दुहाते हैं, और पाषाण द्वारा सोम-रस को शुद्ध करते हुए मधुरतायुक्त बनाते हैं।७। सरोवर के समान इन्द्र का उदर सोम का आश्रय-स्थान है वे एक साथ ही अनेक यज्ञों को पूर्ण करते हैं। इन्द्र ने भक्षण के योग्य सोम का सेवन किया है। फिर वृत्र को निवारण कर देवताओं को भाग दिया।८। हे इन्द्र ! शीघ्र ही धन प्रदान करो।

तुम्हारे दान कों रोकने में कोई भी समर्थ नहीं है । तुम धन के स्वामी हो, यह हम जानते हैं । तुम्हारा धन श्रेष्ठ और पूजा के योग्य हैं, उसे हमको प्रदान करो ।९। हे सरल प्रवृत्ति वाले मघवन् ! तुम सबके वरण करने योग्य हो । हमको उत्तम धन प्रदान करो । हमको सौ वर्षों तक जीने की सामर्थ्य दो । हमको चिरायुष्य और वीर पुत्र प्रदान करो।१०। हे इन्द्र ! तुम अन्नलाभ वाले युद्ध में उत्साहपूर्वक वृद्धि को प्राप्त होते हो । तुम धन और ऐश्वर्य से युक्त, नायकोंमें श्रेष्ठ, स्तुतिके श्रवण करने वाले विकराल, रणक्षेत्र में शत्रु का नाश करने वाले और धनको जीतने में समर्थ हो । आश्रय-प्राप्त करने के निमित्त हम तुम्हारा आह्वान करते हैं ।११। (२०)

सूक्त ३७

(ऋषि—विश्वामित्रः । देवता—इन्द्रः । छन्द—गायत्री, अनुष्टुप्)

वार्त्रहत्याय शवसे पृतनाषाह्याय च । इन्द्र त्वा वर्तयामसि ॥१
अर्वाचीन सु ते मन उत चक्षुः शतक्रतो । इन्द्र कृण्वन्तु वाघतः।२
नामानि ते शतक्रतो विश्वाभिर्गीर्भिरीमहे। इन्द्राभिमातिषाह्ये।३
पुरुष्टुतस्य धामभिः शतेन महयामसि । इन्द्रस्य चर्षणीधृतः ॥४
इन्द्र वृत्राय हन्तवे पुरुहूतमुप ब्रुवे । भरेषु वाजसातये ।५।२१

हे इन्द्र ! वृत्रको नाश करने वाले बलको प्राप्त करने और शत्रुकी सेना को हराने के लिए हम तुम्हें प्रेरित करते हैं ।१। हे शतकर्मा इन्द्र! तुम्हारे मन और नेत्र को हर्ष प्रदान करते हुए स्तुति करने वाले तुम्हें हमारे सामने बुलावें ।२। हे इन्द्र ! तुम शतकर्म वाले हो । अहङ्कारी शत्रुओं को परास्त करने वाले रणक्षेत्र में हम तुम्हारा स्तवन करते हुए यश गान करेंगे ।३। हे इन्द्र ! तुम सब प्राणियों द्वारा स्तुतिकरने योग्य योग्य हो । तुम्हारे तेज की कोई सीमा नहीं है । तुम मनुष्यों के स्वामी हो । हम तुम्हारी स्तुति करते है ।४। हे इन्द्र ! तुम्हारा बहुतों ने आह्वान किया है । वृत्र-समान शत्रुओं का नाश करने और धन प्राप्त करने के निमित्त हम भी तुम्हारा आह्वान करते हैं ।५। (२१)

वाजेषु सासहिभव त्वामीमहे शतक्रतो । इन्द्र वृत्राय हन्तवे ॥६
द्युम्नेषु पृतनाज्ये पुत्सुतूर्षु श्रवःसु च । इन्द्र साक्ष्वाभिमातिषु॥७
शुष्मिन्तमं न ऊतये द्युम्निनं पाहि जागृविम् ।
इन्द्र सोमं शतक्रतो ॥८
इन्द्रियाणि शतक्रतो या ते जनेषु पञ्चसु ।
इन्द्र तानि त आ वृणे ॥९
अगन्निन्द्र श्रवो बृहद् द्युम्नं दधिष्व दुष्टरम् ।
उत् ते शुष्मं तिरामसि ॥१०
अर्वावतो न आ गह्यथो शक्र परावतः ।
उ लोको यस्ते अद्रिव इन्द्रेह तत आ गहि ।११।२२

हे सैकड़ों कर्मों में समर्थ इन्द्र ! तुम रणक्षेत्र में शत्रुओं को हराने में समर्थ हो । वृत्र के संहार करने के लिए हम तुम्हारा स्तवन करते हैं ।६। हे तन्द्र ! जो शत्रु युद्ध के अहङ्कार करने वाले, धन में प्रतिस्पर्धा वाले तथा वीर सैनिकों और पराक्रम में हमको चुनौती देने वाले हैं तुम उनको हराओ ।७। हे शतकर्मा इन्द्र ! हमको आश्रय देने के निमित्त अत्यन्त शक्तिशाली, तेज सम्पन्न और दुःस्वप्नों का निवारण करने वाले सोम का पान करो ।८। हे शतकर्म युक्त इन्द्र ! जो पञ्च इन्द्रियाँ हैं उन सबको हम तुम्हारे द्वारा प्रेरित की जाने वाली मानते हैं ।९। हे इन्द्र प्रदत्त हवि तुम्हें प्राप्त हो । शत्रुओं को कठिनता से प्राप्त अन्न हमको दो । हम तुम्हारे श्रेष्ठ बल को बढ़ावेंगे ।१०। हे इन्द्र ! पास हो या दूर जहाँ कहीं हो वही से हमारे पास आओ । तुम वज्र धारण करने वाले हो । तुम अपने दिव्य स्थान से हमारे इस यज्ञ को प्राप्त होओ ।११।

सूक्त २८ (२२)

(ऋषि–प्रजापतिः विश्वामित्रः । देवता–इन्द्रः । छन्द–त्रिष्टुप्)

अभि तष्टेव दीध्रया मनीषामत्यो न वाजी सुधुरो जिहानः ।
अभि प्रियाणि मर्मृशत् पराणि कवीरिच्छामि संदृशे सुमेधाः ॥१

इनोत पृच्छ जनिमा कवीनां मनोधृतः सुकृतस्तक्षत द्याम् ।
इमा उ ते प्रण्यो वर्धमाना मनोवाता अध नु धर्मणि ग्मन् ॥२
नि षीमिदत्र गुह्या दधाना उत क्षत्राय रोदसी समञ्जन् ।
सं मात्राभिर्ममिरे येमुरुर्वी अन्तर्मही समृते धायसे धुः ॥३
आतिष्ठन्तं परि विश्वे अभूषञ्छ्रियो वसानश्चरति स्वरोचिः ।
महत् तद् वृष्णो असुरस्य नामाऽऽ विश्वरूपो अमृतानि तस्थौ॥४
असूत पूर्वो वृषभो ज्यायानिमा अस्य शुरुधः सन्ति पूर्वीः ।
दिवो नपाता विदथस्य धीभिः क्षत्रं राजाना प्रदिवो दधाथे।५।२३

रे स्तुति करने वालो ! त्वष्टा के समान इन्द्र के स्तोत्रों को चैतन्य करो। श्रेष्ठ, भार वहन करने वाले, वेगवान अश्व के समान कर्म में लगा हुआ तथा इन्द्र के कर्मों का चिन्तन करता हुआ मैं अपनी बुद्धिकी वृद्धि करता हुआ स्वर्ग में गये हुए विद्वानों के दर्शन की कामना करता हूँ ।१। हे इन्द्र ! उन विद्वानों के जन्म के सम्बन्ध में उनके गुरुओं से पूछो जिन्होंने मनोनिग्रह तथा पवित्र कार्यों के द्वारा अपने को स्वर्ग-भागी बनाया। इस यज्ञ में तुम्हारे निमित्त रची गई स्तुतियाँ वृद्धि को प्राप्त होती हुई, मन के समान वेगसे गमन करती हैं ।२। विद्वज्जनों ने पृथिवी पर उत्तम कर्म करते हुए पृथिवी और आकाशको जल प्राप्ति के लिए सजाया। उन्होंने गूढ़ तत्वों द्वारा भूमि और स्वर्ग को स्थिर किया। उन्होंने विशाल एवं विस्तृत पृथिवी और आकाश को सुसंगत किया तथा आकाश और पृथिवी के मध्य अन्तरिक्ष का स्थापन किया ।३। समस्त मेधावीजनों ने रथ में विराजमान इन्द्र को सजाया। अपने स्वभाव से ही तेजवान इन्द्र प्रकाशित हुए संस्थित हैं। कामनाओं की वर्षा करने वाले उग्रकर्मा इन्द्र विचित्र कीर्ति वाले हैं। वे विश्वरूप को धारण करते तथा अमृतत्व में व्याप्त हैं ।४। कामनाओं की वर्षा करने वाले, प्राचीन तथा सर्वोत्कृष्ट इन्द्र ने जलों को उत्पन्न किया। उत्पन्न हुए जल ने उनकी पिपासा का निवारण किया। स्वर्ग के पौत्र रूप, सुशोभित इन्द्र और वरुण दोनों तेजस्वी स्तोता के स्तवन से हमारे निमित्त सुखकारी अन्न धारण करते हैं ।५। (२३)

त्रीणि राजाना विदथे पुरूणि परि विश्वानि भूषथः सदांसि ।
अपश्यमत्र मनसा जगन्वान् व्रते गन्धर्वाँ अपि वायुकेशान् ॥६
तदिन्न्वस्य वृषभस्य धेनोरा नामभिर्ममिरे सक्म्यं गोः ।
अन्यदन्यदसुर्यं वसाना नि मायिनो ममिरे रूपमस्मिन् ॥७
तादिन्न्वस्य सवितुर्नकिर्मे हिरण्ययीममतिं यामशिश्रेत् ।
आ सुष्टुती रोदसी विश्वमिन्वे अपीव योषा जनिमानि वव्रे ॥८
युवं प्रत्नस्य साधथो महो यद् देवी स्वस्तिः परि णः स्यातम् ।
गोपाजिह्वस्य तस्थुषो विरूपा विश्वे पश्यन्ति मायिनः कृतानि ॥९
शुनं हुवेम मघवानमिन्द्रमस्मिन् भरे नृतमं वाजसातौ ।
शृण्वन्तमुग्रमूतये समत्सु घ्नन्तं वृत्राणि संजितं धनानाम् ॥१०।२४

हे इन्द्र ! और वरुण व्यापक और सम्पूर्ण तीनों सवनों को इस यज्ञ में सुशोभित करो । हे इन्द्र! तुम जिसे यज्ञ में पधारे थे । वहाँ मैंने वायु के समान विशिष्ट केश वाले गन्धर्वों के दर्शन किये थे ।६। कामनाओंकी वर्षा करन वाले इन्द्रके निमित्त जो यजमान हवि-योग्य रसको गौओं से दोहन करते हैं तथा जिन यजमानों के अनेक नाम हैं वे नवीन पराक्रम धारणकर अपने-अपने कार्योंको इन्द्रके निमित्त समर्पित करते हैं ।७। सूर्य का स्वर्णमय प्रकाश असीमित है जो इस आकाश के आश्रयभूत हैं, वे सूर्य श्रेष्ठ स्तुतियों द्वारा प्रशंसित होते हुए, माता द्वारा सन्तान का आलिगन करने के समान सर्वव्याप्त आकाश पृथिवी का आलिगन करते हैं ।८। हे इन्द्र और वरुण ! पुरातन स्तोत्र उच्चारण करने वाले का कल्याण करो । हमारी सब ओर से रक्षा करो । इन्द्र की जिह्वा रूप वाणी सबको निर्भय बनाती है इन्द्र स्थित-चित्त है । उनके विविध कार्यों को सभी मेधावीजन देखते हैं ।९। हे इन्द्र ! तुम अन्न लाभ वाले युद्ध में उत्साह-पूर्वक वृद्धि को प्राप्त होते हो । तुम धन और ऐश्वर्य से युक्त, नेताओं में श्रेष्ठ स्तुति सुनने वाले, उग्र, रणक्षेत्र में शत्रुओं का संहार करने वाले और धनको जीतने वाले हो । आश्रय प्राप्ति के निमित्त हम तुम्हारा आह्वान करते हैं ।१०।

(२४)

सूक्त ३९ (चौथा अनुवाक)

(ऋषि—विश्वामित्रः । देवता—इन्द्रः । छन्द—त्रिष्टुप् पंक्ति)

इन्द्रं मतिर्हृद आ वच्यमानाऽच्छा पतिं स्तोमतष्टा जिगाति ।
या जागृविर्विदथे शस्यमानेन्द्र यत् ते जायते विद्धि तस्य ॥१
दिवश्चिदा पूर्व्या जायमाना वि जागृविर्विदथे शस्यमाना ।
भद्रा वस्त्राण्यर्जुना वसाना सेयमस्मे सनजा पित्र्या धीः ॥२
यमा चिदत्र यमसूरसूत जिह्वया अग्रं पतदा ह्यस्थात् ।
वपूंषि जाता मिथुना सचेते तमोहना तपुषो बुध्न एता ॥३
नकिरेषां निन्दिता मर्त्येषु ये अस्माकं पितरो गोषु योधाः ।
इन्द्र एषां दृंहिता माहिनावानुद् गोत्राणि ससृजे दंसनावान् ॥४
सखा ह यत्र सखिभिर्नवग्वैरभिज्ञ्वा सत्वभिर्गा अनुग्मन् ।
सत्यं तदिन्द्रो दशभिर्दशग्वैः सूर्यं विवेद तमसि क्षियन्तम् ।५।२५

हे इन्द्र ! तुम संसारके स्वामी हो । हृदयसे निकले हुए तथा स्तुति करने वालों के द्वारा सम्पादन किये हुए स्तोत्र तुम्हारे सम्मुख उपस्थित होते हैं । जो स्तुति मेरे द्वारा उत्पन्न हैं और तुम्हें चैतन्य कर यश में उच्चारणकी जाती है. उसे स्वीकार करो ।१। हे इन्द्र ! जो स्तुति सूर्य्योदय से भी पूर्व उत्पन्न होकर यज्ञमें उच्चारणकी जाती हुई तुम्हें चैतन्य करती है, वह कल्याण करने वाली उज्ज्वल स्तुति हमारे पूर्वजोंसे प्राप्त होने वाली सनातन है ।२। अश्विद्वयकी माताने उन्हें जन्म दिया,उनकी स्तुति के निमित्त मेरी जिह्वा का अग्रभाग चञ्चल हो उठा है । अन्धकार का नाश करने वाले दिन के प्रारम्भ में आते हुए दोनों स्तुतियोसे सुसङ्गति करती हैं ।३। हे इन्द्र ! गोधन-प्राप्ति के निमित्त संग्राम करने वाले हमारे पितरों की पृथिवी पर कोई निन्दा नहीं करता । अङ्गिराओं को उस महिमावान्, यशस्वी इन्द्रने समृद्ध गोधन प्रदान किया। । अंगिराओंके मित्र इन्द्र जब घुटने के बल गोधन की खोज में पर्वत पर चढेगे तब उन अंगिराओं से अन्धेरे में छिपे सूर्य का दर्शन किया ।५। (२५)

इन्द्रो मधु संभृतमुस्त्रियायां पद्वद् विवेद शफवन्नमे गोः ।
गुहा हितं गुह्यं गूलहमप्सु हस्ते दधे दक्षिणे दक्षिणावान् ॥६

ज्योतिर्वृणीत तमसो विजानन्नारे स्याम दुरितादभीके ।
इमा गिरः सोमपाः सोमवृद्ध जुषस्वेन्द्र पुरुतमस्य कारोः ॥७
ज्योतिर्यज्ञाय रोदसी अनु ष्यादारे स्याम दुरितस्य भूरेः ।
भूरि चिद्धि तुजतो मर्त्यस्य सुपारासो वसवो बर्हणावत् ।।८
शुनं हुवेम मघवानमिन्द्रमस्मिन् भरे नृतमं वाजसातौ ।
शृण्वन्तमुग्रमूतये समत्सु घ्नन्तं वृत्राणि सजितं धनानाम् ।९।२६

इन्द्र ने प्रथम दूध देने वाली गौओंपर मधुर रस सींचा फिर चरण और खुर से युक्त उस गोधन को ले आये । गुफा में स्थिर, अन्तरिक्ष में छिपे हुए मायामय असुर को इन्द्र ने दक्षिण हस्त द्वारा पकड़ लिया ।६। इन्द्र ने रात्रि के गर्भ से उत्पन्न होकर प्रकाश धारण किया । हम पाप-रहित तथा निर्भय स्थान में रहने की इच्छा करते हैं । हे सोमपायी इन्द्र ! तुम स्तोता की इस स्तुति को स्वीकार करो ।७। यज्ञ के लिए आकाश और पृथिवी को सूर्य प्रकाशित करे । हम पाप से दूर रहने की इच्छा करते हैं । हे वसु-देवताओं ! तुम स्तुति के द्वारा अनुकूल होते हो । इस धन को उदार दानी मनुष्य के लिये दो ।८। हे इन्द्र ! तुम अन्नलाभ वाले युद्ध में उत्साह-पूर्वक बढ़ते हो, तुम धन और ऐश्वर्य से युक्त, नेताओं, में श्रेष्ठ, स्तुति सुनने वाले, उग्र, रणक्षेत्र में शत्रुओं को मारने वाले तथा धन को जीतने वाले हो । आश्रय प्राप्ति के लिए हम तुम्हारा आह्वान करते हैं ।९। (२६)

॥ द्वितीयोऽध्यायः समाप्तः ॥

सूक्त ४०

(ऋषि—विश्वामित्रः । देवता—इन्द्रः । छन्द—गायत्री)

इन्द्र त्वा वृषभं वयं सुते सोमे हवामहे। स पाहि मध्वो अन्धसः।१
इन्द्र क्रतुविदं सुतं हर्यं पुरुष्टुत । पिबा वृषस्व तातृपिम् ॥२
इन्द्र प्र णो धितावानं यज्ञं विश्वेभिर्देवेभिः ।
तिर स्तवान विश्पते ॥३
इन्द्र सोमाः सुता इमे तव प्र यन्ति सत्पते ।
क्षयं चन्द्रास इन्दवः ॥४

दधिष्वा जठरे सुतं सोममिन्द्र वरेण्यम्। तव द्युक्षास इन्दवः।५।१

हे इन्द्र ! तुम कामनाएँ पूर्ण करने वाले हो । इस संस्कारित सोम के निमित्त हम तुम्हारा आह्वान करते हैं आनन्ददायक अन्न मिश्रित मधुर सोमका पान करो ।१। हे इन्द्र ! तुम बहुतों द्वारा स्तुति किये गए हो । यह छाना हुआ सोम बुद्धि को बढ़ाने वाला है । इसे पीने की इच्छा प्रकट करते हुए इस तृप्त करने वाले सोम से अपने उदर को सींचो ।२। हे मरुतों के स्वामी इन्द्र ! समस्त यजन योग्य देवताओं के सहित हमारे इस हव्य-युक्त यज्ञ को भले प्रकार बढ़ाओ ।३। हे सत्य के स्वामी इन्द्र ! हमारे द्वारा दिया हुआ प्रसन्न-मुख तेज युक्त निष्पन्न सोम तुम्हारे उदर में प्रविष्ट हो रहा है इसे धारण करो ।४। हे इन्द्र ! यह निष्पन्न सोम सबके लिए वरण करने योग्य है । इसे अपने उदर में रखो । यह अत्यन्त उज्ज्वल सोम रस तुम्हारे साथ स्वर्ग में निवास करता है ।५। (१)

गिर्वणः पाहि नः सुतं मधोर्धाराभिरज्यसे ।
इन्द्र त्वादातमिद् यशः ॥६

अभि द्युम्नानि वनिन इन्द्रं सचन्ते अक्षिता ।
पीत्वी सोमस्य वावृधे ॥७

अर्वावतो न आ गहि परावतश्च वृत्रहन्। इमाजुषस्व नो गिरः॥८

यदन्तरा परावतमर्वावतं च हूयसे । इन्द्रेह तत आ गहि ॥९।२

हे इन्द्र ! तुम स्तुति के योग्य हो । तुम आह्लादक सोम की धारा से हर्षित होते हो। हमारे इस सुसिद्ध सोमका पान करो । तुम्हारे द्वारा वृद्धि को प्राप्त हुआ अन्न हमको मिलता है ।६। देवताओंका यज्ञ करने वालो को उज्ज्वल, अक्षुण्ण, सोम युक्त हवियाँ इन्द्र के समक्ष उपस्थित होती हैं । इन्द्रदेव सोम पीकर बढ़ते हैं ।७। हे इन्द्र ! तुमने वृत्र का हनन किया था । तुम पास या दूर कहीं हो, वहीं से हमारी ओर आते हुए हमारी स्तुति को स्वीकार करो ।८। हे इन्द्र ! तुम दूर, पास और मध्य प्रदेश में बुलाये जाते हो। इस यज्ञ में सोम पीने के निमित्त आओ ।९। (२)

ज्योतिर्वृणीत तमसो विजानन्नारे स्याम दुरितादभीके ।
इमा गिरः सोमपाः सोमवृद्ध जुषस्वेन्द्र पुरुतमस्य कारोः ॥७
ज्योतिर्यज्ञाय रोदसी अनु ष्यादारे स्याम दुरितस्य भूरेः ।
भूरि चिद्धि तुजतो मर्त्यस्य सुपारासो वसवो बर्हणावत् ।८
शुनं हुवेम मघवानमिन्द्रमस्मिन् भरे नृतमं वाजसातौ ।
शृण्वन्तमुग्रमूतये समत्सु घ्नन्तं वृत्राणि सजितं धनानाम् ।९।२६

इन्द्र ने प्रथम दूध देने वाली गौओंपर मधुर रस सींचा फिर चरण और खुर से युक्त उस गोधन को ले आये । गुफा में स्थिर, अन्तरिक्ष में छिपे हुए मायामय असुर को इन्द्र ने दक्षिण हस्त द्वारा पकड़ लिया ।६। इन्द्र ने रात्रि के गर्भ से उत्पन्न होकर प्रकाश धारण किया । हम पाप-रहित तथा निर्भय स्थान में रहने की इच्छा करते हैं । हे सोमपायी इन्द्र ! तुम स्तोता की इस स्तुति को स्वीकार करो ।७। यज्ञ के लिए आकाश और पृथिवी को सूर्य प्रकाशित करे । हम पाप से दूर रहने की इच्छा करते हैं । हे वसु-देवताओं ! तुम स्तुति के द्वारा अनुकूल होते हो । इस धन को उदार दानी मनुष्य के लिये दो ।८। हे इन्द्र ! तुम अन्नलाभ वाले युद्ध में उत्साह-पूर्वक बढ़ते हो, तुम धन और ऐश्वर्य से युक्त, नेताओं, में श्रेष्ठ, स्तुति सुनने वाले, उग्र, रणक्षेत्र में शत्रुओं को मारने वाले तथा धन को जीतने वाले हो । आश्रय प्राप्ति के लिए हम तुम्हारा आह्वान करते हैं ।९। (२६)

॥ द्वितीयोऽध्यायः समाप्तः ॥

सूक्त ४०

(ऋषि—विश्वामित्रः । देवता—इन्द्रः । छन्द—गायत्री)

इन्द्र त्वा वृषभं वयं सुते सोमे हवामहे। स पाहि मध्वो अन्धसः।१
इन्द्र क्रतुविदं सुतं हर्यं पुरुष्टुत । पिबा वृषस्व तातृपिम् ॥२
इन्द्र प्र णो धितावानं यज्ञं विश्वेभिर्देवेभिः ।
तिर स्तवान विश्पते ॥३
इन्द्र सोमाः सुता इमे तव प्र यन्ति सत्पते ।
क्षयं चन्द्रास इन्दवः ॥४

दधिष्वा जठरे सुतं सोममिन्द्र वरेण्यम्। तव द्युक्षास इन्दवः।५।१

हे इन्द्र ! तुम कामनाएँ पूर्ण करने वाले हो । इस संस्कारित सोम के निमित्त हम तुम्हारा आह्वान करते हैं आनन्ददायक अन्न मिश्रित मधुर सोमका पान करो ।१। हे इन्द्र ! तुम बहुतों द्वारा स्तुति किये गए हो । यह छाना हुआ सोम बुद्धि को बढ़ाने वाला है । इसे पीने की इच्छा प्रकट करते हुए इस तृप्त करने वाले सोम से अपने उदर को सींचो ।२। हे मरुतों के स्वामी इन्द्र ! समस्त यजन योग्य देवताओं के सहित हमारे इस हव्य-युक्त यज्ञ को भले प्रकार बढ़ाओ ।३। हे सत्य के स्वामी इन्द्र ! हमारे द्वारा दिया हुआ प्रसन्न-मुख तेज युक्त निष्पन्न सोम तुम्हारे उदर में प्रविष्ट हो रहा है इसे धारण करो ।४। हे इन्द्र ! यह निष्पन्न सोम सबके लिए वरण करने योग्य है । इसे अपने उदर में रखो । यह अत्यन्त उज्ज्वल सोम रस तुम्हारे साथ स्वर्ग में निवास करता है ।५। (१)

गिर्वणः पाहि नः सुतं मधोर्धाराभिरज्यसे ।
इन्द्र त्वादातमिद् यशः ॥६

अभि द्युम्नानि वनिन इन्द्रं सचन्ते अक्षिता ।
पीत्वी सोमस्य वावृधे ॥७

अर्वावतो न आ गहि परावतश्च वृत्रहन्। इमाजुषस्व नो गिरः॥८

यदन्तरा परावतमर्वावतं च हूयसे । इन्द्रेह तत आ गहि ॥९।२

हे इन्द्र ! तुम स्तुति के योग्य हो । तुम आह्लादक सोम की धारा से हर्षित होते हो। हमारे इस सुसिद्ध सोमका पान करो । तुम्हारे द्वारा वृद्धि को प्राप्त हुआ अन्न हमको मिलता है ।६। देवताओंका यज्ञ करने वालो को उज्ज्वल, अक्षुण्ण, सोम युक्त हवियां इन्द्र के समक्ष उपस्थित होती हैं । इन्द्रदेव सोम पीकर बढ़ते हैं ।७। हे इन्द्र ! तुमने वृत्र का हनन किया था । तुम पास या दूर कहीं हो, वहीं से हमारी ओर आते हुए हमारी स्तुति को स्वीकार करो ।८। हे इन्द्र ! तुम दूर, पास और मध्य प्रदेश में बुलाये जाते हो। इस यज्ञ में सोम पीने के निमित्त आओ ।९। (२)

सूक्त ४१

(ऋषि–विश्वामित्रः । इन्द्रः । छन्द–गायत्री)

आ तू न इन्द्र मद्र्यग्घुवानः सोमपीतये । हरिभ्यां याह्यद्रिवः ॥१
सत्तो होता न ऋत्वियस्तिस्तिरे बर्हिरानुषक् ।
अयुज्रन् प्रातरद्रयः ॥२
इमा ब्रह्म ब्रह्मवाहः क्रियन्त आ बर्हिः सीद ।
वीहि शूर पुरोडाशम् ॥३
रारन्धि सवनेषु ण एषु स्तोमेषु वृत्रहन् । उक्थेष्विन्द्र गिर्वणः॥४
मतय सोमपामुरुं रिहन्ति शवसस्पतिम्। इन्द्रवत्सं न मातरः॥५।३

हे वज्रिन् ! होताओं द्वारा बुलाये जाने पर हमारे इस यज्ञ में अपने अश्वों के सहित सोम पान के निमित्त आओ ।१। हे इन्द्र ! ऋत्विक् होता तुम्हारे आह्वान के निमित्त हमारे यज्ञमें बैठे हैं परस्पर मिलाकर कुल बिछाये गये हैं । प्रातः हवन में सोम सिद्धि के लिए पाषाण भी प्रस्तुत हैं । इसलिए सोम पीनेको यहाँ आओ ।२। हे इन्द्र ! तुम स्तुति द्वारा प्राप्त होओ । तुम वीर हो, हमारे द्वारा दिये गये पुरो-डाश का सेवन करो ।३। हे इन्द्र ! तुम वृत्र को मारने वाले और स्तुति के योग्य हो । हमारे यज्ञ में सवन-त्रय में उच्चारित स्तुतियों में व्याप्त होओ ।४। सोम पीने वाले बल के स्वामी, महान् इन्द्र को गौओं द्वारा बछड़ों कों चाटने के समान स्तुतियाँ चाटती है ।५। (३)

स मन्दस्वा ह्यन्धसो राधसे तन्वा महे। न स्तोतारं निदे करः।६
वयमिन्द्र त्वायवो हविष्मन्तो जरामहे । उत त्वमस्मयुर्वसो ॥७
मारे अस्मद् वि मुमुचो हरिप्रियार्वाङ् याहि ।
इन्द्र स्वधावो मत्स्वेह ॥८
अर्वाञ्चं त्वा सुखे रथे वहतामिन्द्र केशिना । घृतस्नू बर्हिरासदे ।९।४

हे इन्द्र ! धन देने के निमित्त इस सोम द्वारा अपने शरीर को पुष्ट करो । मुझसे स्तुति करने वाले की कभी निन्दा न हो ।६। हे इन्द्र ! हम तुम्हारी कामना करते हुए हवियुक्त स्तुति करते हैं । तुम हवि ग्रहण करने के निमित्त हमारी रक्षा करो ।७। हे इन्द्र ! तुम अपने अश्वों से प्रेम करते हो । घोड़ों को हमसे दूर न खोलो । हमारे पास

आओ । इस यज्ञ में सोम से हर्ष प्राप्त करो ।८। हे इन्द्र ! श्रम के स्वेद से युक्त तुम्हारे बड़े केश वाले अश्व, तुम्हारे बैठने योग्य इस कुश के आसन के सामने, सुख देने वाले रथ से तुम्हें ले आवें ।९। (४)

सूक्त ४२

(ऋषि–विश्वामित्रः । देवता–इन्द्रः । छन्द–गायत्री)

उप नः सुतमा गहि सोममिन्द्र गवाशिरम् ।

हरिभ्यां यस्ते अस्मयु ॥१

तमिन्द्र मदमा गहि बर्हिःष्ठां ग्रावभिः सुतम्। कुविन्न्वस्य तृप्णवः।२

इन्द्रमित्था गिरो ममाच्छागुरिषिता इतः । आवृते सोमपीतये॥३

इन्द्रं सोमस्य पीतये स्तोमैरिह हवामहे। उक्थेभिः कुविदागमत्।४

इन्द्र सोमाः सुता इमे तान् दधिष्व शतक्रतो ।

जठरे वाजिनीवसो ।५।५

हे इन्द्र ! हमारा सोम दूध मिलाया हुआ सुप्रसिद्ध है। उसके समीप पधारो । तुम्हारा रथ घोड़े सहित हमसे मिलाने की इच्छा करता है ।१। हे इन्द्र ! पाषाणों से कूटकर छाना गया यह सोम कुश पर रखा है । तुम इसका सामीप्य प्राप्त करो । तुम इसे यथेष्ट मात्रा में पीकर तृप्ति को प्राप्त करो ।२। हमारी स्तुति रूप वाणी इन्द्र के निमित्त उच्चारित होती हुई सोम-पान के लिए इन्द्र का आह्वान करती हुई, यज्ञ स्थान से चलकर इन्द्र का सामीप्य प्राप्त करे । ३ । स्तोत्रों तथा प्रशंसनीय स्तुतियों द्वारा यज्ञमें सोम पान के निमित्त हम इन्द्रका आह्वान करते हैं । वे बहुत बार आह्वान कियेगये इन्द्र हमारे यज्ञमें पधारें ।४। हे इन्द्र ! तुम सैकड़ों कर्मोंसे युक्त हो । तुम्हारे निमित्त यह संस्कारित सोम प्रस्तुत है । इसे अपने उदर में धारण करो और हमारे लिए अन्न तथा धन प्रदान करो ।५। (५)

विद्मा हि त्वा धनंजयं वाजेषु दधृषं कवे । अधा ते सुम्नमीमहे।६

इममिन्द्र गवाशिरं यवाशिरं च नः पिब ।

आगत्या वृषभिः सुतम् ॥७

तुभ्येदिन्द्र स्व ओक्ये सोमं चोदामि पीतये ।
एष रारन्तु ते हृदि ॥८

त्वां सुतस्य पीतये प्रत्नमिन्द्र हवामहे। कुशिकासो अवस्यवः।९ ६

हे विद्वान ! हे इन्द्र ! संग्राम भूमि में तुम शत्रुओंको हराने वाले तथा उनके धनों को जीतने वाले हो। ऐसा जानते हुए हम तुमसे धन माँगते हैं।६। हे इन्द्र ! हमारे यज्ञ में आकर यह दुग्धादि मिश्रित किये निष्पन्न सोम रस को पीओ।७। हे इन्द्र ! इस सुसंस्कारित सोमरसको तुम्हारे पान करने के निमित्त ही हम तुम्हारे उदर में प्रविष्ट कराते हैं। इससे तुम्हारा मन तृप्त होता हुआ पुष्टिको प्राप्त करेगा।८। हे इन्द्र ! तुम प्राचीन हो। हम को कौशिकवंशीव ऋषिगण तुम्हारे द्वारा रक्षासाधन प्राप्त करनेकी कामना करते हुए इस सुसंस्कारित सोमको पान करनेके निमित्त सुन्दर स्तुति रूप वाणी से तुम्हारा आह्वान करते हैं।९। (६)

सूक्त ४३

(ऋषि–विश्वामित्रः। देवता-इन्द्रः। छन्द-त्रिष्टुप्)

आयाह्यर्वाङ् ढप वन्धुरेष्ठास्तवेदनु प्रदिवः सोमपेयम् ।
प्रिया सखाया वि मुचोप बर्हिस्त्वामिमे हव्यवाहो हवन्ते ॥१
आ याहि पूर्वीरति चर्षणीराँ अर्य आशिष उप नो हरिभ्याम् ।
इमा हि त्वा मतयः स्तोमतष्टा इन्द्र हवन्ते सख्यं जषाणाः ।
आ नो यज्ञं नमोवृधं सजोषा इन्द्र देव हरिभिर्याहि तूयम् ।
अहं हि त्वा मतिभिर्जोहवीमि घृतप्रयाः सधमादे मधूनाम् ॥३
आ च त्वामेता वृवणा वहातो हरी सखाया सुधुरा स्वङ्गा ।
धानावदिन्द्रः सवनं जुषाणः सखा सख्युः शृणवद् वन्दनानि ॥४
कुविन्मा गोपां करसे जनस्य कुविद् राजानं मघवन्नृजीषिन् ।
कुविन्म ऋषिं पपिवांसं सुतस्य कुविन्मे वस्वो अमृतस्य शिक्षाः।५
आ त्वा बृहन्तो हरयो युजाना अर्वागिन्द्र सधमादो वहन्तु ।
प्र ये द्विता दिव ऋञ्जन्त्याताः सुसंमृष्टासो वृषभस्य मूराः ॥६
इन्द्र पिब बृषधूतस्य वृष्ण आ यं ते श्येन उशते जभार ।

यस्य मदे च्यावयसि प्र कृष्टीर्यसि मदे अप गोत्रा ववर्थ ।।७
शुनं हुवेम मघवानमिन्द्रमस्मिन् भरे नृतमं वाजसातौ।
शृण्वन्तमुग्रमूतये समत्सु घ्नन्तं वृत्राणि सजितं धनानाम् ।८।७

हे इन्द्र! अपने जुए युक्त रथद्वारा हमको प्राप्तहोओ। यह पुरातन कालीन सोम तुम्हारे निमित्त ही तैयार हुआ है। तुम अपने प्रिय मित्र-रूप अश्व को कुओं के समीप खोलो। यह ऋत्विक्गण सोम पान के निमित्त तुम्हारा आह्वान कर रहे है।१। हे इन्द्र! हे प्रभो! तुम सभी प्राचीन मनुष्योंको लाँधकर यहाँ आओ। अपने अश्वके सहित यहाँ आकर सोम पान करो। हमारी इस प्रार्थना पर ध्यान दो। यह मित्रता की कामना वाली स्तुतियां स्तोताओं के मुख से उच्चारण की जाती हुई तुम्हें बुलाती हैं।२। हे इन्द्र! तुम प्रकाशवान् हो। हमारे अन्न को बढ़ाने वाले इस यज्ञ में अपने अश्वके सहित शीघ्र पधारो। घृत अन्नसे युक्त हवि सहित सोम पीनेके निमित्त स्तुतियों द्वारा तुम्हें बुलाते हैं।३। हे इन्द्र! तुम्हारे सेचन कर्म में समर्थ सुन्दर धरा-युक्त दोनों मित्र रूप रमणीय अश्व तुम्हें यज्ञ-स्थान को प्राप्त कराते हैं। भुने हुए धान्य-युक्त सोम का सेवन करते हुए तुम मित्र भाव से हुई स्तुति करने वालों की स्तुति सुनो।४। हे इन्द्र! मुझे मनुष्योंकी रक्षा करने की सामर्थ्य प्रदान करो। तुम सोम से युक्त रहते हो, मुझे सबका आधिपत्य प्रदान करो। मुझे ऋषि बनाओ, और सोम पीने के योग्य बनाते हुए कभी भी क्षय न होने वाला धन दो।५। हे इन्द्र! रथ में जुते हुए महान् अश्व तुम्हें हमारे सामने लावें। तुम अभीष्ट वर्षक हो। तुम्हारे अश्व, शत्रुओं का नाश करने वाले हैं। इन्द्र के हाथों से चलते हुए वे अश्व दिशाओं की परिधि में चलते हुए आकाश मार्ग द्वारा सम्मुख आते हैं।६। हे इन्द्र! तुम सोम की कामना करते हो। तुम इच्छित फल देने वाले और पोषण द्वारा सिद्ध किये सोम को पीने वाले हो। श्येन तुम्हारे निमित्त सोम लाता हैं, सोम से उत्पन्न हर्ष द्वारा तुम शत्रुता करने वाले व्यक्तियों को धराशायी करते हो।७। हे इन्द्र! तुम अन्न लाभ वाले

युद्ध में उत्साह से बढ़ते हो। धन और ऐश्वर्य से युक्त, नायकों में श्रेष्ठ तथा स्तुतियों के सुनने वाले हो। भीषण युद्ध में शत्रु का विनाश कर धन जीतते हो। आश्रय प्राप्त करने के निमित्त हम तुम्हारा आह्वान करते हैं ।८।　　(७)

सूक्त ४४

(ऋषि—विश्वामित्रः । देवता—इन्द्रः । छन्द-बृहती)

अयं ते अस्तु हर्यतः सोम आ हरिभिः सुतः ।
जुषाण इन्द्र हरिभिर्न आ गह्या तिष्ठ हरितं रथम् ॥१
हर्यन्नुषसमर्चयः सूर्यं हर्यन्नरोचयः ।
विद्वांश्चिकित्वान् हर्यश्व वर्धस इन्द्र विश्वा अभि श्रियः ॥२
द्यामिन्द्रो हरिधायसं पृथिवीं हरिवर्पसम् ।
अधारयद्धरितोर्भूरि भोजनं ययोरन्तर्हरिश्चरत् ॥३
जज्ञानो हरितो वृषा विश्वमा भाति रोचनम् ।
हर्यश्वो हरितं धत्त आयुधमा वज्रं बाह्वोर्हरिम् ॥४
इन्द्रो हर्यन्तमर्जुनं वज्रं शुक्रैरभीवृतम् ।
अपावृणोद्धरिभिरद्रिभिः सुतमुद् गा हरिभिराजत ।५ ८

हे इन्द्र ! यह सोम पाषाणों से कूट कर सिद्ध किया है। यह रीति को बढ़ाने वाला तथा रमणीय सोम तुम्हारे निमित्त हैं। तुम अपने अश्वों से युक्त रथ पर चढ़ कर हमारे सामने आओ ।१। हे इन्द्र ! तुम सोम की इच्छा वाले होकर सूर्य को प्रकाशवान् बनाते हो। हे अश्व-संयुक्त इन्द्र ! तुम मेधावी तथा हमारी कामनाओं के जानने वाले हो। तुम इच्छित प्रदान कर हमारे धन की वृद्धि करते हो ।२। हरे रङ्ग वाली किरणों से युक्त सूर्य लोक और हरे रङ्ग वाली औषधियों से हरी हुई पृथिवीको इन्द्र धारण करते हैं। हरित-वर्ण आकाश-पृथिवी के मध्य इन्द्र अपने अश्व के लिए भोजन लेते हैं तथा इसी आकाश-पृथिवी के मध्य घूमते हैं ।३। अभीष्टों का फल प्रदान करने वाले इन्द्र उत्पन्न होते ही सब लोकों को प्रकाशित करते हैं। हरे अश्वों वाले इन्द्र अपने हाथों

में हरे शस्त्र धारण करते हुए शत्रुओं को नष्ट करने वाला। वज्र उठाते हैं।४। इन्द्रने उज्ज्वल दुग्धादि द्वारा मिश्रित तथा पाषाणों द्वारा निष्पन्न सोम को प्रकट किया। उन्होंने अश्वों को साथ लेकर पणियों द्वारा चुराई हुई गौओं को बाहर निकाला था।५। (८)

सूक्त ४५

(ऋषि—विश्वामित्रः। देवता—इन्द्रः। छन्द—बृहती)

आ मन्द्रैरिन्द्र हरिभिर्याहि मयूररोमभिः।
मा त्वा के चिन्नि यमन्विं न पाशिनोऽति धन्वेव ताँ इहि ॥१
वृत्रखादो वलरुजः पुरां दर्मो अपामजः।
स्थाता रथस्य हर्योरभिस्वर इन्द्रो दृलहा चिदारुजः ॥२
गम्भीराँ उदधींरिव क्रतुं पुष्यसि गा इव।
प्र सुगोपा यवसं धेनवो यथा ह्रदं कुल्या इवाशत ॥३
आ नस्तुजं रयिं भरांशं न प्रतिजानते।
वृक्षं पक्वं फलमङ्कीव धूनुहीन्द्र सपारण वसु ॥४
स्वयुरिन्द्र स्वरालसि स्मद्दिष्टिः स्वयशस्तरः।
स वावृधान ओजसा पुरुष्टुत भवा नः सुश्रवस्तमः ।५।९

हे इन्द्र ! मोर पंखों के समान रोम वाले अश्वों के समान इस यज्ञ स्थान को प्राप्त होओ। जैसे शिकारी उड़ते पक्षियों को फाँस लेते हैं, वैसे ही तुम्हारे मार्ग में बाधक हुआ कोई तुम्हें न फाँस ले। जैसे मार्ग चलने वाले व्यक्ति मरुभूमि को लाँघते हैं, वैसे ही तुम भी सब उपस्थित बाधाओं को लाँघकर हमारे यज्ञ में शीघ्र पधारो।१। इन्द्र ने वृत्र का संहार किया, यह मेघो को चीर कर जल को गिराते हैं। उन्होंने शत्रु के नगरों का विध्वंस किया है। इन्द्र घोड़ी को चलाने के निमित्त हमारे सामने ही रथारूढ़ हुए हैं। इन्हीं इन्द्र ने शक्तिशाली बैरियों का संहार किया है।२। हे इन्द्र ! जैसे साधु और ग्वाले अपनी गौओं को जौ आदि खाद्य पदार्थों द्वारा पालते हैं, तथा तुम जैसे जल द्वारा गम्भीर-तम समुद्र को पूर्ण करते हो, वैसे ही यज्ञ कर्मानुष्ठान

में इस यजमानको भी उसका इच्छित फल देकर पुष्ट करो । जैसे गौएं घास आदि को प्राप्त करती हैं, तथा छोटी नदियाँ बड़े जलाशयों को प्राप्त करती हैं, वैसे ही यज्ञ में संस्कारित सोम तुमको प्राप्त करता है ।३। हे इन्द्र ! पिता अपने व्यवहार कुशल पुत्र को धन प्रदान करता हैं, वैसे ही शत्रुओं को जीतने में समर्थ प्राप्ति योग्य धन तुम हमको प्रदान करो । जैसे पके फलों को अंकुशाकर टेढ़ा बाँस झाड़कर गिरा देता है, वैसे ही हमारी इच्छा पुर्ण करने वाला फल प्रदान करो ।४। हे इन्द्र ! तुम धन से युक्त हो । दिव्यलोक के स्वामी, उत्तम वचन वाले तथा सुन्दर यश वाले हो । बहुतोंने तुम्हारा स्तवन किया है । तुम अपने बल से बड़े हुए हो । हमको अत्यन्त सुशोभित अन्न देने वाले बनो ।५। (९)

सूक्त ४६

(ऋषि–विश्वामित्रः । देवता–इन्द्रः । छन्द–त्रिष्टुप्)

युध्मस्य ते वृषभस्य स्वराज उग्रस्य यूनः स्थविरस्य धृष्वेः ।
अजूर्यतो वज्रिणो वीर्याणीन्द्र श्रुतस्य महतो महानि ।।१
महाँ असि महिष वृष्ण्येभिर्धनस्पृदुग्र सहमानो अन्यान् ।
एको विश्वस्य भुवनस्य राजा स योधयाँच जनान् ।।२
प्र मात्राभी रिरिचे रोचमानः प्र देवेभिर्विश्वतो अप्रतीतः ।
प्र मज्मना दिव इन्द्रः पृथिव्याः प्रोरोर्महो अन्तरिक्षादृजीषी ।।३
उरुं गभीरं जनुषाभ्युग्रं विश्वव्यचसमवतं मतीनाम् ।
इन्द्रं सोमासः प्रदिवि सुतासः समुद्रं न स्रवत आ विशन्ति ।।४
यं सोममिन्द्र पृथिवीद्यावा गर्भं न माता बिभृतस्त्वाया ।
तं ते हिन्वन्ति तमु ते मृजन्त्यध्वर्यवो वृषभ पातवा उ ।५।१०

हे इन्द्र ! तुम धनों के स्वामी, अभीष्ट फल देने वाले, युद्ध में बढ़ने वाले, सामर्थ्य से युक्त अजर, शत्रुओं को हराने वाले, अत्यन्त युवा, वज्र धारण करने वाले, शाश्वत और लोक-त्रय में प्रसिद्धि-प्राप्त हो । तुम महान् पराक्रम वाले हो ।१। हे इन्द्र ! तुम उग्र कर्मवाले तथा

पूजनीय हो। तुम अपने धन को सेवन करने वाले हो। अपने बल से शत्रुओं को आतङ्कित करते हो। तुम सम्पूर्ण विश्व के एक-मात्र स्वामी हो।२। यह इन्द्र सोमयुक्त हैं, सब प्रकार से असीमित तथा पर्वतोंसे भी अधिक दृढ़ हैं। यह प्रकाशयुक्त देवताओं से भी अधिक बलशाली है। यह आकाश और पृथिवीसे भी विशाल है तथा विस्तृत और महान् अन्तरिक्षसे भी उत्कृष्ट है।३। हे इन्द्र ! तुम अत्यन्त गम्भीर एवं महान हो। तुम अपने स्वभाव से ही शत्रुओं के प्रति विकराल हो जाते हो। तुम सर्व-व्यापक एवं स्तुति करने वालों की रक्षा करने वाले हो। जैसे नदियाँ समुद्र की ओर जाती हैं, वैसे ही यह प्राचीन काल से व्यहृत सोम सुसिद्ध होकर इन्द्र की ओर जाने वाला हो।४। हे इन्द्र ! गर्भ धारण करने वाली जननी के समान, तुम्हारी कामना करने वाली आकाश-पृथिवी सोमको धारण करती हैं। तुम कामनाओं के पूर्ण करने वाले हो। अध्वर्यु गण उसी सोम का पान करते हैं।५। (१०)

सूक्त ४७

(ऋषि–विश्वामित्रः। देवता–इन्द्रः। छन्द· त्रिष्टुप्)

मरुत्वाँ इन्द्र वृषभो रणाय पिबा सोममनुष्वधं मदाय।
आ सिञ्चस्व जठरे मध्व ऊर्मिं त्वं राजासि प्रदिवः सुतानाम्॥१
सजोषा इन्द्र सगणो मरुद्भिः सोमं पिब वृत्रहा शूर विद्वान्।
जहि शत्रूँरप मृधो नुदस्वाऽथाभयं कृणुहि विश्वतो नः॥२
उत ऋतुभिर्ऋतुपाः पाहि सोममिन्द्र देवेभिः सखिभिः सुतं नः
याँ आभजो मरुतो ये त्वा ऽन्वहन् वृत्रमदधुस्तुभ्यमोजः॥३
ये त्वाहिहत्ये मघवन्नवर्धन् ये शाम्बरे हरिवो ये गविष्टौ।
ये त्वा नूनमनुमदन्ति विप्राः पिबेन्द्र सोमं सगणो मरुद्भिः॥४
मरुत्वन्तं वृषभं वावृधानमकवारिं दिव्यं शासमिन्द्रम्।
विश्वासाहमवसे नूतनायाग्रं सहोदामिह तं हुवेम।५।११

हे इन्द्र ! तुम मरुद्गण के साथी तथा फल की वर्षा करने वाले हो, तुम हवि–रूप अन्न से युक्त सोम को युद्धादि के निमित्त तथा

आनन्द-बर्द्धन के लिए पान करो । तुम उस सोम को उदर में सींचो । तुम प्राचीन काल से ही सोमों के अधीश्वर हो ।१। हे इन्द्र तुम वीर हो । तुम देवताओं के साथी तथा मरुतों की सहायता को प्राप्त करने वाले हो । तुम वृत्र को मारने वाले तथा सभी कर्मों को जानते हो, तुम सोमपान करते हुए हमारे शत्रुओं का संहार करो हिंसक जीवों को नष्ट कर डालो तथा हमको सब ओर से निर्भय कर दो ।२। हे इन्द्र ! तुम अपने मित्र रूप देवताओं और मरुद्गणोंको साथ लाकर हमारे संस्कारित सोम को पीओ । युद्ध में सहायता के लिए तुमने जिन मरुतों को साथ लिया था, और जिन मरुतों ने तुम्हें अपना प्रभु स्वीकार किया था, उन्हीं मरुतों ने युद्ध में तुम्हारा बल बढ़ाया था । फिर तुमने शत्रु का संहार किया था ।३। हे मघवन् ! तुम अश्वों से युक्त हो । जिन मरुद्गणों ने तुम्हें असुर को मारने वाले कार्य में बढ़ाया था, जिन्होंने तुमको शम्बर को मारने के कार्य में शक्तिशाली बनाया तथा उन्होंने गौओं के निमित्त प्राणियों के साथ हुए संग्राम में तुम्हें प्रवृत्त किया था, वे मरुद्गण प्रज्ञावान् हैं । वे अब भी तुमको प्रसन्न करने मे लगे रहते हैं । तुम उन्हीं मरुतों के साथ आकर सोम पीओ ।४। हे इन्द्र ! तुम मरुतों से युक्त हो । तुम जल वर्षा करते हो । विश्व के नियन्ता तथा शासक हो । तुम विकराल कर्म वाले अत्यन्त शक्तिशाली हो । दिव्य यथा अद्भुत हो । हम तुम्हारा अभिनव आश्रय प्राप्त करने के निमित्त प्रेमपूर्वक आह्वान करते हैं ।५। (११)

सूक्त ४८

(ऋषि—विश्वामित्रः । देवता—इन्द्रः । छन्द—त्रिष्टुप्)

सद्यो ह जातो वृषभः कनीनः प्रभर्तुमावदन्धसः सुतस्य ।
साधोः पिब प्रतिकामं यथा ते रसाशिरः प्रथमं सोम्यस्य ॥१
यज्जायथास्तदहरस्य कामेऽशोः पीयूषमपिबो गिरिष्ठाम् ।
तं ते माता परि योषा जनित्री महः पितुर्दम आसिञ्चदग्रे ॥२

उपस्थाय मातरमन्नमैट्ट तिग्ममपश्यदभि सोममूधः ।
प्रयावयन्नचरद् गृत्सो अन्यान् महानि चक्रे पुरुधप्रतीकः ॥३
उग्रस्तुराषालभिभूत्योजा यथावशं तन्वं चक्र एषः ।
त्वष्टारमिन्द्रो जनुषाभिभूयाऽऽमुष्या सोममपिबच्चमूषु ॥४
शुनं हुवेम मघवानमिन्द्रमस्मिन् भरे नृतमं वाजसातौ ।
शृण्वन्तमुग्रमूतये समत्सु घ्नन्तं वृत्राणि संजितं धनानाम् ।५।१२

वे जल वर्षा करने वाले, सद्यः जात इन्द, हवियुक्त सोम के संग्रह करने वाले के रक्षक हों । सोम-पान की इच्छा करते हुए तुम दुग्धादि से युक्त सोम को देवताओं से पहले ही पीओ ।१। हे इन्द ! तुमने उत्पन्न होते ही,प्यास लगने पर पर्वत पर स्थित सोमलताका रस पिया था । तुम्हारी माता अदितिने तुम्हारे पिता कश्यपके घरमें स्तन पिलाने से पूर्व सोम रस ही तुम्हारे मुख में डाला था ।२। इन्द्र ने माता से अंन माँगा तब उन्होंने सबके स्तन में दुग्ध रूप उज्ज्वल सोम का दर्शन किया । शत्रुओं को मारने के लिए देवताओं द्वारा कामना किये गये इन्द्र, शत्रुओं को अपने स्थानसे हटाते हुए घूमने लगे। उनके अङ्ग-भङ्ग करते हुए, इन्द ने वृत्र का संहार और बहुत से पराक्रम युक्त महान कर्म किये ।३। वे इन्द्र शत्रुओं के लिए भयङ्कर है । वे अपने पराक्रम से शत्रुओं को शीघ्र हराते हैं । वे अपना रूप विभिन्न प्रकार का बनाने में समर्थ है । उन्होंने अपने सामर्थ्य से त्वष्टा को वशमें कर चमस में स्थित सोमका पान किया था ।४। हे इन्द्र ! हे मघवन् ! तुम अन्न प्राप्त करने वाले युद्ध में उत्साह द्वारा वृद्धि को प्राप्त होते हो । तुम धन और ऐश्वर्य युक्त, श्रेष्ठ नेतृत्व वाले तथा स्तुतियों को सुनने वाले हो । तुम विकराल रूप वाले, भीषण युद्ध में शत्रुओं का नाश करते तथा धनों को जीतते हो । आश्रय प्राप्त करने के निमित्त हम तुम्हारा आह्वान करते हैं ।५। (१२)

सूक्त ४९

(ऋषि–विश्वामित्रः । देवता–इन्द्रः । छन्द–त्रिष्टुप्)

शंसा महामिन्द्र यस्मिन् विश्वा आ कृष्टयः सोमपाः काममव्यन्।
यं सुक्रतुं धिषणे विभ्वतष्टं घनं वृत्राणां जनयन्त देवाः ॥१
यं नु नकिः पृतनासु स्वराजं द्विता तरति नृतमं हरिष्ठाम् ।
इनतमः सत्वभिर्यो ह शूषैः पृथुज्रया अमिनादायुर्दस्योः ॥२
सहावा पृत्सु तरणिर्नार्वा व्यानशी रोदसी मेहनावान् ।
भगो न कारे हव्यो मतीनां पितेव चारुः सुहवो वयोधाः ॥३
धर्ता दिवो रजसस्पृष्ट ऊर्ध्वो रथो न वायुर्वसुभिर्नियुत्वान् ।
क्षपां वस्ता जनिता सूर्यस्य विभक्ता भागं धिषणेव वाजम् ॥४
शुनं हुवेम मघवानमिन्द्रमस्मिन् भरे नृतमं वाजसातौ ।
शृण्वन्तमुग्रमूतये समत्सु घ्नन्तं वृत्राणि संजितं धनानाम् ।५।१३

हे स्तुति करने वाले ! यह इन्द्र महान् हैं, इनकी स्तुति करो। इन्द्र द्वारा रक्षित हुए सब मनुष्य यज्ञ में सोम पीते हुए इच्छित प्राप्त करते हैं। देवगण तथा आकाश और पृथिवी ने ब्रह्मा द्वारा विश्व के स्वामी बनाये गये उत्तम कर्म वाले पाप-विनाशक इन्द्र को प्रकट किया ।१। युद्ध में अपने तेज से सुशोभित, अश्व जुते हुए रथ पर बैठे हुए बलवानों के युद्ध में नायक रूप, लड़ती हुई सेनाओं को दो ओर विभक्त करने वाले जिन इन्द्र पर आक्रमण करने में कोई समर्थ नहीं है वे इन्द्र उन सेनाओं के अधिपति हैं। संग्राम में शत्रुओं के बलको क्षीण करने वाले मरुद्गण के सहित वे इन्द्र अत्यन्त वज्र वाले होकर शत्रुओं के जीवन को समाप्त करने में समर्थ हैं ।२। जैसे शक्तिशाली अश्व शत्रुओं के सामने वेग से जाता है, वैसे ही वे सामर्थ्यवान इन्द्र स्पर्द्धा-युक्त संग्राम में अधिक वेगवान होते हैं। वे इन्द्र आकाश-पृथिवी को श्रेष्ठ धनों से सम्पन्न करते हैं। यज्ञ में की जाने वाली स्तुतियों के वे पिता तुल्य हैं। वे बुलाये जाने पर अन्न प्रदान करते हैं ।३। वे इन्द्र ही आकाश और अन्तरिक्ष के धारण करने वाले होते हैं वे ऊपर की ओर चढ़ने वाले रथके समान उन्नत हैं। वे मरुद्गणों की सहायता प्राप्तकर चुके हैं। वे रात्रि में अन्धकार करते तथा सूर्य को उदय करते हैं। वे कर्म के फल-रूप अन्नका वैसेही विभाजन करते हैं जैसे धनवान

पुरुष अपनी वाणी द्वारा धन का विभाजन करता है ।४। हे भगवन् ! तुम अन्न प्राप्त करने वाले युद्धमें उत्साह के द्वारा वृद्धि को प्राप्त होते हो तुम धन और ऐश्वर्य से युक्त नेतृत्व से युक्त तथा स्तुतियों के श्रवण कर्त्ता हो । तुम उग्र कर्म वाले हो । संग्राम में शत्रुओं का विनाश करने में समर्थ हो । तुम धनों के विजेता हो । हम आश्रय प्राप्ति के निमित्त तुम्हारा आह्वान करते हैं ।५। (१३)

सूक्त ५०

(ऋषि—विश्वामित्रः । देवता—इन्द्रः । छन्द—त्रिष्टुप्)

इन्द्रः स्वाहा पिबतु यस्य सोमं आगत्या तुम्रो वृषभो मरुत्वान् ।
ओरुव्यचाः पृणतामेभिरन्नैरास्य हविस्तन्वः काममृध्याः ॥१
आ ते सपर्यू जवसे युनज्मि ययोरनु प्रदिवः श्रुष्टिमावः ।
इह त्वा धेयुर्हरयः सुशिप्र पिबा त्वस्य सुषुतस्य चारोः ॥२
गोर्भिर्मिमिक्षुं दधिरे सुपारमिन्द्रं ज्यैष्ठ्याय धायसे गृणानाः ।
मन्दानः सोमं पपिवाँ ऋजीषिन् त्समस्मभ्यं पुरुधा गा इषण्य ॥३
इमं कामं मन्दया गोभिरश्वैश्चन्द्रवता राधसा पप्रथश्च ।
स्वर्यवो मतिभिस्तुभ्यं विप्रा इन्द्राय वाहः कुशिकासो अक्रन् ॥४
शुनं हुवेम मघवानमिन्द्रमस्मिन् भरे नृतमं वाजसातौ ।
शृण्वन्तमुग्रमूतये समत्सु घ्नन्तं वृत्राणि संजितं धनानाम् ।५।१४

हे इन्द्र ! हमारे यज्ञ में आकर इस सोम को पीओ । यह सोम जिन इन्द्र के निमित्त है, वे विघ्न करने वालों की हिंसा करनेमें समर्थ हैं । वे मरुतों से युक्त इन्द्र यज्ञ कर्त्ताओं को फूल की वर्षा करते हैं । वे अत्यन्त व्यापक हैं । हमारे द्वारा अर्पित अन्नसे वे तृप्त हों । हवि उनको सन्तुष्ट करे ।१। हे इन्द्र ! तुम्हें यज्ञ में बुलाने के निमित्त हम रथ में अश्व जोड़ते हैं । वे तुम प्राचीन काल से अश्वों का अनुगमन करने वाले को इस यज्ञ में लावें । तुम इस उत्तम प्रकार से सिद्ध किये गये सोम रस को यहाँ आकर पीओ ।२। स्तुति किये जाने वाले, अभीष्टों

की वर्षा करने वाले तथा स्तुतियों से प्रसन्न होने वाले इन्द्र के स्तोता ऋत्विक् श्रेष्ठ तत्व की प्राप्ति के लिये दुग्ध युक्त सोम धारण करते हैं। हे इन्द्र ! तुम सोम-युक्त हो। प्रसन्नता पूर्वक सोम को पीओ और स्तुति करने वालों को यज्ञ सिद्धि के निमित्त गौएँ प्रदान करो ।३। हमारी कामना को गौ घोड़े और श्रेष्ठ धन से पूरी करो । धन द्वारा हमको प्रसिद्धि प्राप्त हो। हे इन्द्र ! स्वर्ग सुख की कामना करने वाले कर्म-वान् कौशिकों ने मन्त्रों द्वारा तुम्हारा स्तवन किया है ।४। हे इन्द्र ! तुम अन्न प्राप्त करते हो । युद्धमें उत्साह द्वारा बढ़ते हुए धन और ऐश्वर्य के स्वामी बनते हो। तुम श्रेष्ठ नेतृत्व शक्ति से युक्त हो, तथा स्तुतियों के सुनने वाले हो। तुम उग्र कर्म वाले हो। संग्राम में शत्रुओं का विनाश कर धन जीतते हो। हम आश्रय-प्राप्ति के निमित्त तुम्हारा आह्वान करते हैं ।५।

(१४)

सूक्त ५१

(ऋषि—विश्वामित्रः । देवता—इन्द्रः । छन्द—त्रिष्टुप्, जगती, गायत्री)

चर्षणीधृतं मघवानमुक्थ्यमिन्द्रं गिरो बृहतीरभ्यनूषत ।
वावृधानं पुरुहूतं सुवृक्तिभिरमर्त्यं जरमाणं दिवेदिवे ॥१
शतक्रतुमर्णवं शाकिनं नरं गिरो म इन्द्रमुप यन्ति विश्वतः ।
वाजसनिं पूर्भिदं तूर्णिमप्तुरं धामसाचमभिषाचं स्वर्विदम् ॥२
आकरे वसोर्जरिता पनस्यतेऽनेहसः स्तुभ इन्द्रो दुवस्यति ।
विवस्वतः सदन आ हि पिप्रिये सत्रासाहमभिमातिहनं स्तुहि॥३
नृणामु त्वा नृतमं गीर्भिरुक्थैरभि प्र वीरमर्चता सबाधः ।
सं सहसे पुरुमायो जिहीते नमो अस्य प्रदिव एक इशे ॥४
पूर्वीरस्य निष्षिधो मर्त्येषु पुरू वसूनि पृथिवी बिभर्ति ।
इन्द्राय द्याव ओषधीरुतापो रयिं रक्षन्ति जीरयो वनानि ।५।१५

अभीष्ट प्रदान करके मनुष्यों के पालक-कर्ता, प्रशंशनीय धन, वस्त्र और ऐश्वर्य से निरन्तर बढ़ते हुए, स्तुति करने वालों द्वारा बहुत बार बुलाये गये, अत्यन्त शोभायमान, रूप-त्राणों से सुशोभित इन्द्र के स्तोत्र

का उच्चारण करें ।१। इन्द्र सैकड़ों कर्म करने वाले, मरुत्वान, जलवान्; सागर के अग्रणी, अन्नदाता, शत्रु के नगरों को ध्वंस करने वाले, युद्धके निमित्त शीघ्र गमन करने वाले, मेघ को विदीर्ण कर जल गिराने वाले, धन-दाभ करने वाले शत्रुओं को हराने वाले तथा स्वर्ग-लाभ करने वाले हैं । उन इन्द्र को हमारी स्तुति रूप वाणी प्राप्त हो ।२। इन्द्रकी रणक्षेत्र में सभी स्तुति करते हैं । वे शत्रुओं के बल को नष्ट करते हैं । वे हृदय-पूर्वक कही स्तुतियों का आदर करते हैं । वे यज्ञ कर्ता यजमान घर में सोम पीकर परमानन्द प्राप्त करते हैं । हे विश्वामित्र ! मरुद्गण को साथ लेकर शत्रुओं का विनाश करने वाले इन्द्र का स्तवन करो ।३। हे इन्द्र ! तुम पराक्रमी तथा मनुष्य के नायक हो । दैत्यों द्वारा सन्तापित हुए ऋत्विक् तुम्हारी स्तुति मन्त्रों से भले प्रकार करते हैं । तुम वृत्र-संहार के कार्य में बलके सहित जाते हो । प्राचीन इन्द्र ही इस अन्न के स्वामी हैं । इसीलिए मैं उन इन्द्र को ही प्रणाम करता हूँ ।४। इन्द्र का अनुशासन मनुष्योंमें व्यापक हैं । उनके निमित ही पृथिवी महान ऐश्वर्य धारण करती है । इन्द्र की आज्ञा से सूर्य औषधियों, मनुष्यों और बृक्षों के उपभोग हेतु अन्न की रक्षा करते हैं ।५। (१५)

तुभ्यं ब्रह्माणि गिर इन्द्र तुभ्यं सत्रा दधिरे हरिवो जुषस्व ।
बोध्यापिरवसो नूतनस्य सखे वसो जरितृभ्यो वयो धाः ॥६
इन्द्र मरुत्व इह पाहि सोमं यथा शार्यति अपिबः सुतस्य ।
तव प्रणीती तव शूर शर्मन्ना विवासन्ति कवयः सुयज्ञाः ॥७
स वावशान इह पाहि सोमं मरुद्भिरिन्द्र सखिभिः सुतं नः ।
जातं यत् त्वा परि देवा अभूषन् महे भराय पुरुहूत विश्वे ॥८
अप्तूर्ये मरुत आपिरेषी ऽमन्दन्निन्द्रमनु दातिवाराः ।
तेभि साकं पिवतु वृत्रखादः सुतं सोमं दाशुषः स्वे सधस्थे ॥९
इदं ह्यन्वोजसा सुतं राधानां पते । पिबा त्वस्य गिर्वणः ॥१०
यस्ते अनु स्वधामसत् सुते नि यच्छ तन्वम् । स त्वा ममत्तु सोम्यम् ॥११

प्र ते अश्नोतु कुक्ष्योः प्रेन्द्र ब्रह्मणा शिरः । प्र बाहू शूर राधसे ।
१२।१६।

हे इन्द्र ! तुम अश्ववान् हो, ऋत्विग्गण तुम्हारे निमित स्तोत्रों की धारण करते हैं, तुम उन्हें ग्रहण करो। तुम सबको निवास देने वाले मित्र स्वरूप हो। इस नवीन हवि को स्वीकार कर स्तुति करने वालों को अन्न प्रदान करो।६। हे भरतवान इन्द्र ! जिस प्रकार तुमने शर्यात के यज्ञ में सोम-पान किया था, उसी प्रकार इस यज्ञ में भी करो। तुम वीर हो। तुम्हारे ठहरने के स्थान में मेधावी यज्ञकर्ता हवि द्वारा तुम्हारी सेवा करते हैं।७। हे इन्द्र ! सोम की इच्छा से अपने मित्र मरुतों को साथ लेकर हमारे इस यज्ञ में सुसंस्कारित सोम का पान करो। तुमको पुरुवंशियों ने बुलाया था। तुम्हारे उत्पन्न होते ही सब देवताओं ने महासमर के निमित्त तुम्हें प्रतिष्ठित किया था।८। हे मरुद्गण ! जल को प्रेरित करने के कारण इन्द्र तुम्हारे मित्र बने हैं। उनको तुमने प्रसन्न किया है, वे वृत्र का संहार वाले इन्द्र, हवि-दाता यजमान के घर में सुसिद्ध किये गये सोम का तुम्हारे साथ बैठ-कर पान करें।९। हे इन्द्र ! तुम धनों के ईश्वर हो। तुम इच्छा पूर्वक इस सोम को अपने बल से शीघ्र पीओ।१०। हे इन्द्र ! तुम्हारे निमित्त जो अन्न-युक्त सोम संस्कारित किया है, अपने मन को उसमें लगाओ। तुम सोम-पान करने के पात्र हो। यह सोम तुम्हें आनन्दित करे।११। हे इन्द्र ! वह सोम तुम्हारी दोनों कुक्षियों में व्याप्त हो। स्तोत्रों से युक्त हुआ सोम तुम्हारे शरीर में रमे। हे वीर ! वह सोम धन के निमित्त तुम्हारी दोनों बाहुओंको पुष्ट बनावे।१२।
(१६)

सूक्त ५२

(ऋषि–विश्वामित्रः। देवता–इन्द्रः। छन्द–त्रिष्टुप्, गायत्री, जगती)

धानावन्तं करम्भिणमपूपवन्तमुक्थिनम्। इन्द्र प्रातर्जुषस्व नः॥१

पुरोलाशं पचत्यं जुषस्वेन्द्रा गुरस्व च । तुभ्यं हव्यानि सिस्रते॥२
पुरोलाशं च नो घसो जोषयासे गिरश्च नः । वधूयुरिव योषणाम्॥३
पुरोलाशं सनश्रुत प्रातःसावे जुषस्व नः । इन्द्र क्रतुर्हि ते बृहन्॥४
माध्यंदिनस्य सवनस्य धानाः पुरोलाशमिन्द्र कृष्वेह चारुम् ।
प्र यत् स्तोता जरिता तूर्ण्यर्थो वृषायमाण उप गीर्भिरीट्टे।५।१७

हे इन्द्र ! इस मिश्रित दही, सत्तू और पुरोडाश से युक्त पाषाण द्वारा प्रस्तुत हमारे सोम को प्रातः सवन में ग्रहण करो ।१। हे इन्द्र ! परिपक्व पुरोडाश का भक्षण करो । यज्ञ-योग्य पुरोडाश तुम्हारे निमित्त प्रस्तुत होता है ।२। हे इन्द्र ! हमारे इस पुरोडाश को ग्रहण करो हमारी इस सुनने योग्य वाणी को पत्नी के प्रेमी पति के समान सेवन करो ।३। हे इन्द्र ! तुम प्राचीन काल से विख्यात हो हमारे पुरोडाश को प्रातः सवन में भक्षण करते हुए अपने कर्ममें महता प्राप्त करो ।४। हे इन्द्र ! मध्य वाले सवन गवादि युक्त श्रेष्ठ पुरोडाशको यहाँ पधारकर सेवन करो । तुम्हारे सेवक स्तुतिके निमित्त उत्कंठित रहते हैं । तुम्हारी सेवा के लिए इधर-उधर गमन करने वाले स्तोता श्रेष्ठ मन्त्रोंसे तुम्हारी उपासना करते हैं, तथा पुरोडाशादि को ग्रहण करते हैं ।५। (१७)

तृतीये धानाः सवने पुरुष्टुत पुरोलाशमाहुतं मामहस्व नः ।
ऋभुमन्तं वाजवन्तं त्वा कवे प्रयस्वन्त उप शिक्षेम धीतिभिः ॥६
पूषण्वते ते चकृमा करम्भं हरिवते हर्यश्वाय धानाः ।
अपूपमद्धि सगणो मरुद्भिः सोमं पिब वृत्रहा शूर विद्वान् ॥७
प्रति धाना भरत तूयमस्मै पुरोलाशं वीरतमाय नृणाम् ।
दिवे दिवे सदृशीरिन्द्र तुभ्यं वर्धन्तु त्वा सोमपेयाय धृष्णो ।८।१८

हे इन्द्र ! तुम्हारी बहुतोंने स्तुतिकी है । तुम तीसरे सवन में हमारे भूँजे यवादि युक्त पुरोडाश का सेवन करो । तुम ऋभुओं से युक्त तथा धन और पुत्रों से युक्त हो । हम हवियों से युक्त स्तोत्रों द्वारा तुम्हारी पूजा करते हैं ।६। हे इन्द्र ! तुम पूषा देवता से युक्त हो, तुम्हारे लिए यह दधि-मिश्रित सत्तू तैयार करते हैं । तथा अश्ववान के निमित्त हम

भूँजा हुआ जी प्रस्तुत करते हैं, मरुद्गण के साथ आकर पुरोडाश ग्रहण करो। तुमने वृत्र को मारा था। तुम मेधावी हो, इस सोम का पान करो।७। हे अध्वर्युओ। इन्द्र के निमित्त भुने जौ प्रस्तुत करो। यह नायकों में महान हैं। इन्हें पुरोडाश दो। हे इन्द्र! तुम शत्रुओं को दूर करने वाले हो। तुम्हारे निमित्त नित्य की जाने वाली स्तुतियाँ सोम-पान के कर्म में तुम्हें प्रोत्साहित करें।८। (१८)

सूक्त ५३

(ऋषि–विश्वामित्रः । देवता–इन्द्र-पार्वती आदि । छन्द–त्रिष्टुप् अनुष्टुप्, जगती, गायत्री, बृहती)

इन्द्रा पर्वता बृहता रथेन वामीरिष आ वहतं सुवीराः ।
वीतं हव्यान्यध्वरेषु देवा वर्धेथां गीर्भिरिलया मदन्ता ॥१
तिष्ठा सु कं मघवन् मा परा गाः सोमस्य नु त्वा सुषुतस्य यक्षि।
पितुर्न पुत्रः सिचमा रभे त इन्द्र स्वादिष्ठया गिरा शचीवः ।।२
शंसावाध्वर्यो प्रति मे गृणीहीन्द्राय वाहः कृणवाव जुष्टम् ।
एदं बर्हिर्यजमानस्य सीदाऽथा च भूदुक्थमिन्द्राय शस्तम् ॥३
जायेदस्तं मघवन् त्सेदु योनिस्तदित् त्वा युक्ता हरयो वहन्तु ।
यदा कदा च सुनवाम सोममग्निष्ट्वा दूतो धन्वात्यच्छ ॥४
परा याहि मघवन्ना च याहीन्द्र भ्रातरुभयत्रा ते अर्थम् ।
यत्रा रथस्य बृहतो निधानं विमोचनं वाजिनो रासभस्य५।१६

हे इन्द्र ! पर्वत ! अपने श्रेष्ठ रथ पर उत्तम सन्तान-युक्त अन्न लाओ। तुम प्रकाशवान हो। हमारे यज्ञ में आकर हवि सेवन करो। हवियों द्वारा पुष्ट होते हुए हमारी उत्तम स्तुतियोंसे वृद्धिको प्राप्त होओ।१। हे इन्द्र ! कुछ समय तक इस यज्ञ स्थान में सुखसे रहो। हमारे यज्ञ में आओ। हम रमणीक निष्पन्न सोम-रस द्वारा तुम्हारा यज्ञ करतेहैं। तुम अत्यन्त बली हो, पिताके वस्त्रों को मीठे वचन बोलता हुआ बालक जैसे पकड़ लेता है, वैसे ही सुन्दर स्तोत्रों द्वारा हम तुम्हारे वस्त्रों को पकड़ते हैं।२। हे अध्वर्युओं ! हम दोनों उन इन्द्र की स्तुति करेंगे।

तुम हमको सदुपदेश करो । हम इन्द्र के प्रति श्रद्धावान् हुए उनका स्त-वन करें । तुम यजमानके कुश-रूप आसन पर विराजमान होओ हमारे द्वारा प्रदत्त उक्त (स्तुति) इन्द्र के लिए आकर्षित करने वाली हो ।३। हे इन्द्र ! स्त्री ही पुरुषों का वासस्थान है । रथ युक्त अश्व तुमको इस गृह में पहुँचावें । हम जब कभी तुम्हारे निमित्त सोम को संस्कार-वान् करें, तब हमारे द्वारा अभिषिक्त अग्नि दूत-रूप से तुमको प्राप्त हो ।४। हे इन्द्र ! तुम दूर देश में गमन करते हुए हमारे यहाँ पधारो । तुम सबका पोषण करने वाले हो, तुम्हारा प्रयोजन दोनों स्थानों पर है । जिस घर में स्त्री है, वहाँ सोम है । तुम रथ आरोहण कर घर को प्राप्त होकर घोड़ों को खोल दो ।५। (१६)

अपाः सोममस्तमिन्द्र प्र याहि कल्याणीर्जाया सुरणं गृहे ते ।
यत्रा रथस्य बृहतो निधानं विमोचनं वाजिनो दक्षिणावत् ॥६
इमे भोजा अङ्गिरसो विरूपा दिवस्पुत्रासो असुरस्य वीराः ।
विश्वामित्राय ददतो मघानि सहस्रसावे प्र तिरन्त आयुः ॥७
रूपंरूपं मघवा बोभवीति मायाः कृण्वानस्तन्वं परि स्वाम् ।
त्रिर्यद् दिवः परि मुहूर्तमागात् स्वैर्मन्त्रै रनृतुपा ऋतावा ॥८
महाँ ऋषिर्देवजा देवजूतो ऽस्तभ्नात् सिन्धुमर्णवं नृचक्षाः ।
विश्वामित्रो यदवहत् सुदासमप्रियायत कुशिकेभिरिन्द्रः ॥९
हंसा इव कृणुथ श्लोकमद्रिभिर्मदन्ती गीर्भिरध्वरे सुते सचा ।
देवेभिर्विप्रा ऋषयो नृचक्षसो वि पिबध्वं कुशिकाः सोम्यं मधु ।
।१०।२०

हे इन्द्र ! तुम यहाँ रुककर सोम पीओ । सोम पीकर ही घर को गमन करना । तुम्हारे गृह में सौभाग्यवती सुरमणीया स्त्री है । तुम घर जाने के निमित्त रथ पर चढ़ो और वहाँ अश्वों को विमुक्त करो ।६। हे इन्द्र ! यह 'ओज' और 'सुदास' राजा की ओरसे यज्ञ करते हैं । यह 'अङ्गिरा' 'मेधातिथि' आदि विविध रूप वाले हैं, देवताओं में बली रुद्रोत्पन्न मरुद्गण अश्वमेध' यज्ञ में मुझ 'विश्वामित्र' को महान् धनदें

और अन्नको बढ़ावें ।७। इन्द्र जैसी इच्छा करते हैं वैसाही रूप बना लेते हैं। वे अपने देह को माया द्वारा विविध रूप का बनाने में समर्थ हैं। वे ऋतुओं को प्रेरित करने वाले होकर भी सोम पान करने में किसी ऋतु विशेषका ध्यान नहीं रखते। वे अपनी ही स्तुतियों द्वारा बुलाये जाकर तीनों सवनों में पहुँचते हैं ।८। अत्यन्त समर्थ, तेजस्वी तेजों को उत्पन्न करने वाले, अध्वर्यु आदि को उपदेश देने वाले 'विश्वामित्र' ने जल से पूर्ण सागर के वेग को बाँध दिया। जब उन विश्वामित्र ने 'पिजवन-पुत्र सुदास' को यज्ञ कर्म में लगाया, तब इन्द्रने कौशिकों के प्रति अपना उत्तम व्यवहार व्यक्त किया ।६। हे विद्वानों ! परमहसो ! हे ऋषियों हे सबको देखने वालो ! तुम यज्ञानुष्ठान में पाषाणों से सोम के संस्कारित होनेपर स्तुतियोंसे देवताओंको प्रसन्न करो। हंसोंके समान श्लोकों को उच्चारण करो। देवताओं के साथ मधुर सोम-रस पीओ ।१०। (२०)

उप त्रेत कुशिकाश्चेतयध्वमश्वं राये प्र मुञ्चता सुदासः ।
राजा वृत्रं जंघनत् प्रागपागुदगथा यजाते वर आ पृथिव्याः ॥११
य इमे रोदसी उभे अहमिन्द्रमतुष्टवम् ।
विश्वामित्रस्य रक्षति ब्रह्मेदं भारतं जनम् ॥१२
विश्वामित्रा अरासत ब्रह्मेन्द्राय वज्रिणे। करदिन्नः सुराधसः।१३
किं ते कृण्वन्ति कीकटेषु गावो नाशिरं धुह्रे न तपन्ति धर्मम् ।
आ नो भर प्रमगन्दस्य वेदो नैचाशाखं मघवन् रन्धया नः ॥१४
ससर्परीरमतिं बाधमाना बृहन्मिमाय जमदग्निदत्ता ।
आ सूर्यस्य दुहिता ततान श्रवो देवेष्वमृतमजुर्यम् ।१५।२१

हे कौशिको ! तुम अश्व के पास आकर इसे उत्तेजना दो। "सुदास" राजा के घोड़े को धन के निमित्त, छोड़ो। इन्द्रने विघ्न करने वाले वृत्र का पूर्व, पश्चिम और उत्तर में संहार किया। 'राजासुदास'ने श्रेष्ठ भू-भाग में पावन कर्म संकार किया है ।११। हे कौशिको ! हमने आकाश-पृथिवीके सहयोगसे इन्द्रकी पूजाकीहै। स्तुतिकरने वाले विश्वामित्र का इन्द्रके प्रतिकहा गया स्तोत्र भरत-वंशियोंकी रक्षाकरे।१२।विश्वामित्रके

वंशजों ने वज्रधारी इन्द्र का स्तवन किया है। वे इन्द्र हमको श्रेष्ठ धन से सुशोभित करें ।१३। हे इन्द्र ! "कीकट" लोग जो कि अनार्य हैं वे गौओं का क्या उपभोग करते हैं ? वे न तो दुग्ध ही प्राप्त करते हैं, न घृत ही निकालते है। हे इन्द्र ! उन गौओं को हमारे पास ले आओ अधिक धन प्राप्त करने की आशा से धन उधार देने वालों के धनों को भी हमें प्राप्त कराओ ।१४। अग्नि को चैतन्य करने वाले ऋषियों द्वारा सूर्य से प्राप्त कर हमको दी गई अज्ञान को हटाने वाली रूप और शब्द से युक्त लपकती हुई वाणी शब्द द्वारा ज्ञान को प्रकट करती है। सूर्य की दुहिता वाणी अमृत रूप अन्न का विस्तार करती है ।१५। (२१)

ससर्परीरभरत् तूयमेभ्यो ऽधि श्रवः पाञ्चजन्यासु कृष्टिसु।
स पक्ष्या नव्यमायुर्दधाना यां मे पलस्तिजमदग्नयो ददुः ॥१६
स्थिरौ गावौ भवतां वीलुरक्षो मेषा वि वर्हि मा युगं वि शारि।
इन्द्रः पातल्ये ददतां शरीतोररिष्टनेमे अभि नः सचस्व ॥१७
बलं धेहि तनूषु नो बलमिन्द्रानलुत्सु नः।
बलं तोकाय तनयाय जीवसे त्वं हि बलदा असि ॥१८
अभि व्ययस्व खदिरस्य सारमोजो धेहि स्पन्दने शिंशपायाम्।
अक्ष वीलो वीलित वीलयस्व मा यामादस्मादव जीहिपो नः॥१९
अयमस्मान् वनस्पतिर्मा च हा मा च रीरिषत्।
स्वस्त्या गृहेभ्य आवसा आ विमोचनात् ।२०।२२

लपकती हुई गद्य रूपिणी वाणी सर्वत्र विद्यमान ज्ञान रूप अन्न को हमें प्रदान करे। दीर्घजीवी ऋषियों ने जिस वाणी को सूर्य से प्राप्त कर हमको प्रदान किया है,वह सूर्यकी दुहिता वाणी हमको नया जीवन प्रदान करे ।१६। दोनों वृषभ स्थिर होओ। धुर दृढ़हो जिससे दण्ड नष्ट न हो, जुआ न टूट जाय, दोनों कीलें उखड़े नहीं। वे इन्द्र रथ को गिरने से पहले ही बचावें। हे अरिष्टनेमिरथ ! तू हमको मार्ग में पहले जाता हुआ सदा प्राप्त हो ।१७। हे इन्द्र ! तुम अत्यन्त बलवान हो हमारे शरीर को जल दो। हमारे बैलों को बलिष्ठ बनाओ, पुत्र-पौत्रादि

को दीर्घजीवी होने के निमित्त शक्ति प्रदान करो ।१८। हे इन्द्र ! रथ के खदिर के काष्ठ के सार को दृढ़ बनाओ । शीशम के काष्ठ को भी दृढ़ करो । हे अक्ष ! तुम हमारे द्वारा मजबूती से बनाये गये हो । अतः दृढ़ होओ । कहो हमारे गमनशील रथ से हमको अलग मत कर देना ।१९। यह रथ वृक्षों के काष्ठों द्वारा बनाया गया है । यह हमको छोड़ न दे । जब तक हमको घर प्राप्त न हो तब तक यह रथ चलता रहे और जब तक उससे घोड़ों को खोल न दिया जाय तब तक हमारा कल्याण हो ।२०। (२२)

इन्द्रोतिभिर्बहुलाभिर्नो अद्य याच्छ्रेष्ठाभिर्मघवञ्छूर जिन्व ।
यो नो द्वेष्टयधरः सस्पदीष्ट यमु द्विष्मस्तमु प्राणो जहातु ॥२१
परशुं चिद् वि तपति शिम्बलं चिद् वि वृश्चति ।
उखा चिदिन्द्र येषन्ती प्रयस्ता फेनमस्यति ॥२२
न सायकस्य चिकिते जनासो लोधं नयन्ति पशु मन्यमानाः ।
नावाजिनं वाजिना हासयन्ति न गर्दभं पुरो अश्वान्नयन्ति ॥२३
इम इन्द्र भरतस्य पुत्रा अपपित्वं चिकितुर्न प्रपित्वम् ।
हिन्वन्त्यश्वमरणं न नित्यं ज्यावाजं परि णयन्त्याजौ ।२४।२३

हे वीर ! हे शत्रु संहारक इन्द्र ! तुम शत्रुओंका नाश करनेके कार्य में वीरोंसे युक्त उत्तम सेनाओं से हमको युक्त कर विजय प्राप्त कराओ और प्रसन्नकरो । हमसे बैर करने वाला भलेप्रकार नीचा देखे । जिससे हम द्वेषकरें उसके प्राण उसका त्याग करें ।२१। हे इन्द्र ! जैसे तपती हुई पतीली उबलती हुए फेन निकालती है,वैसे ही हमारे शत्रुओंके मुख झागोंको निकालें, जैसे सेमर का पुष्प अनायास ही छिन्न-भिन्न होजाता है, वैसे ही हमारे शत्रुओं के शरीर कट कर गिर जाँय । लोहार जैसे अग्नि पर कुठार को तपाता है, वैसे ही शत्रु सेना संतप्त हो ।२२। हे मनुष्यों ! अस्त्रादि के समान अपने प्राणों का अन्त करने वाले के अज्ञान को तुम नहीं जानते । वे लोभ के वशीभूत हुए अपने आपको पशु के समान आगे ले जाते हैं । ज्ञानी पुरुष अज्ञानी पुरुष से

सामना करके हंसी नही उड़वाते । क्योंकि अश्व की समानता गधा नहीं करना ।२३। हे इन्द्र ! यह भरतवंशी पार्थक्य जानते हैं और मेल भी जानते हैं । वे युद्ध काल में प्रेरित अश्व के समान धनुष की प्रत्यंचा का घोष करते हैं ।२४। (२३)

सूक्त ५४ (पाँचवाँ अनुवाक)

(ऋषि–प्रजापतिर्वैश्वामित्रो वाच्यो वा । देवता विश्वेदेवाः ।
छन्द–त्रिष्टुप्)

इमं महे विदथ्याय शूषं शश्वत् कृत्व ईडयाय प्र जभ्रुः ।
शृणोतु नो दम्योभिरनीकैः शृणोत्वग्निर्दिव्यैरजस्रः ॥१
महि महे दिवे अर्चा पृथिव्यै कामो म इच्छञ्चरति प्रजानन् ।
ययोर्ह स्तोमे विदथेषु देवाः सपर्यवो मादयन्ते सचायोः ॥२
युवोर्ऋतं रोदसी सत्यमस्तु महे षु णः सुविताय प्र भूतम् ।
इदं दिवे नमो अग्ने अग्ने पृथिव्यै सपर्यामि प्रयसा यामि रत्नम् ।३
उतो हि वां पूर्व्या आविविद्र ऋतावरी रोदसी सत्यवाचः ।
नरश्चिद् वां समिथे शूरसातौ ववन्दिरे पृथिवि वेविदानाः ॥४
को अद्धा वेद क इह प्र वोचद् देवाँ अच्छा पथ्या का समेति ।
दद्दृश्र एषामवमा सदांसि परेषु या गुह्येषु व्रतेषु ।५।२४

अध्ययन रूप मन्थन द्वारा प्रतिपादित स्तोत्र स्तुति के योग्य है । इसका महान् यज्ञमें बारम्बार उच्चारण किया जाता है । अपने घर तेज से परिपूर्ण हुए अग्निदेव इस स्तोत्रका श्रवण करें । वे अपने दिव्य तेज से निरन्तर पूर्ण रहते हुये हमारी स्तुतियों पर ध्यान दें ।१। हे स्तुतिकर्त्ता ! तुम आकाश-पृथिवी की अत्यन्त शक्ति को समझते हुए उन्हें पूजो । में सम्पूर्ण भोगों की कामना करता हूँ । मेरा मन सब ओर जाता है । अपने अर्चन की कामना वाले देवगण मनुष्यों के यज्ञों में जाकर आकाश, पृथिवी को पूर्ण करते हुए आनन्द प्राप्त करते हैं ।२। हे आकाश–पृथिवी ! तुम्हारा कर्म सत्य हो । तुम हमारे इस महान् यज्ञ को निर्विघ्न पूर्ण कराने में समर्थ होओ । हे अग्नि !

मैं आकाश और पृथिवी को प्रणाम करता हूँ । हवि रूप अन्न द्वारा सेवा करता हुआ मैं श्रेष्ठ धन माँगता हूँ ।३। हे सत्य धर्मवाली आकाश-पृथिवी ! प्राचीन सत्यवक्ता ऋषियों ने तुम से हित करने वाला अभीष्ट-प्राप्त किया था । हे पृथिवी ! रणक्षेत्रको प्रस्थान करने वाले भी वीर तुम्हारी महिमा को जानते हुए तुम्हें नमस्कार करते हैं ।४। उस सत्य के कारण रूप ज्ञाता कौन हैं ? उस समझे हुए विषय को प्रकट करने वाला कौन हैं ? वह सरल मार्ग कौन-सा है जो देवताओं का सामीप्य प्राप्त कराये ? दिव्य लोक के निचले स्थान में नक्षत्रादि प्रत्यक्ष दिखाई देते हैं । वे हमको उत्कृष्ट एवं कठिन व्रतों में लगाते हैं ।५। (२४)

cf HSS.1.37

कविर्नृचक्षा अभि षीमचष्ट ऋतस्य योना विघृते मदन्ती ।
नाना चक्राते सदनं यथा वे: समानेन क्रतुना संविदाने ॥६
समान्या वियुते दूरेअन्ते ध्रुवे पदे तस्थतुर्जागरूके ।
उत स्वसारा युवती भवन्ती आदु ब्रुवाते मिथुनानि नाम ॥७
विश्वेदेते जनिमा सं विविक्तो महो देवान् बिभ्रती न व्यथेते ।
एजद् ध्रुवं पत्यते विश्वमेकं चरत् पतत्रि विषुणं वि जातम् ॥८
सना पुराणमध्येम्यारान्महः पितुर्जनितुर्जामि तन्न: ।
देवासो यत्र पनितार एवैरुरौ पथि व्युते तस्थुरन्त: ॥९
इमं स्तोमं रोदसी प्र ब्रवीम्यृदूदरा: शृणवन्नग्निजिह्वा: ।
मित्र: सम्राजो वरुणो युवान आदित्यास: कवय: पप्रथाना:१०।२५

मनुष्यों के द्रष्टा सूर्य आकाश-पृथिवी को सब ओरसे देखते हैं । जल के प्राकट्य स्थान अन्तरिक्ष में यह हर्षोत्पादन करने वाली, रस से युक्त हुई, समान कर्म वाली आकाश-पृथिवी अनेक स्थान पर घोंसला रखने वाले पक्षियोंके समान विभिन्न-स्थानों को व्याप्त करती हैं ।६। परस्पर आकर्षण में बँधी हुई, पृथक् रहकर भी साथ रहने वाली, जिनका कभी विनाश नहीं होता,ऐसी आकाश-पृथिवी कभीभी नष्ट न होने वाले अन्तरिक्ष में दो तरुणी बहिनों के समान एक आत्मा वाली हुई, सृष्टि

करने में समर्थ बनकर स्थित हैं।७। यह आकाश-पृथिवी सभी भौतिक पदार्थों को प्रकट करती हुई सूर्य चन्द्र नदी, समुद्र, पर्वत आदि को धारण करके भी कम्पित नही हो सकती। स्थावर और जङ्गम पदार्थों से युक्त विश्व केवल पृथिवी को ही प्राप्त करता और चलायमान पशु पक्ष्यादि जीव आकाश-पृथिवीमें ही व्याप्त होते हैं।८।हे आकाश पृथिवी! तुम सबकी जन्मदात्री हो,तुम्हीं सबका पालन करने वाली हो। तुम्हारी प्राचीनता, पूर्व क्रमसे विकास और हमारा उत्पादन इन सबका एक ही कारण भूत है; आकाश भगिनी-रूपा है। हम उन सबका चिंतन करते हैं। तुम्हारी स्तुति करने वाले देवगण अपने-अपने वाहनों पर चढ़े हुए तुम्हारा स्तवन सुनते हैं।९। हे आकाश-पृथिवी! तुम्हारे स्तोत्रको भले प्रकार गाते हैं। सोम को उदरस्थ करने वाले अग्नि-रूप जिह्वा वाले, नित्य युवा, तेजस्वी अपने-अपने कर्मोंको प्रकट करने वाले मित्रादि देव-गण हमारी स्तुतियों को श्रवण करें। ०।   (२५)

हिरण्यपाणि: सविता सुजिह्वस्त्रिरा दिवो विदथे पत्यमानः।
देवेषु च सवितः श्लोकमश्रेरादस्मभ्यमा सर्वतातिम् ॥११
सुकृत् सुपाणिः स्ववाँ ऋतावा देवस्त्वष्टावसे तानि नो धात्।
पूषण्वन्त ऋभवो मादयध्वमूर्ध्वग्रावाणो अध्वरमतष्ट ॥१२
विद्युद्रथा मरुत ऋष्टिमन्तो दिवो मर्या ऋतजाता अयासः।
सरस्वती शृणवन् यज्ञियासो धाता रयिं सहवीरं तुरासः ॥१३
विष्णुं स्तोमासः पुरुदस्ममर्का भगस्येव कारिणो यामनि ग्मन्।
उरुक्रमः ककुहो यस्य पूर्वीर्न मर्धन्ति युवतयो जनित्रीः ॥१४
इन्द्रो विश्वैर्वीर्यैः पत्यमान उभे आ पप्रौ रोदसी महित्वा।
पुरंदरो वृत्रहा धृष्णुषेणः संगृभ्या न आ भरा भूरि पश्वः॥१५॥२६

दान के निमित्त सुवर्ण को हाथ से लेने वाले, उत्तम वचन वाले सूर्य! तुम तीनों सवनों को आकाशमें आकर प्राप्त प्राप्त करते हो। हे सूर्य! तुम स्तुति करने वालोंके स्तोत्रको स्वीकार करो। फिर इच्छित धनों को हमारे निमित्त प्रेरित करो।११। कल्याण के हाथ वाले,

सुन्दर विश्व के रचयिता, सत्य प्रतिज्ञ, धन से युक्त त्वष्टा हमारी रक्षा के लिए आवश्यक साधन दें। हे ऋभुगण ! तुम पूषा से युक्त होकर हमको धन देते हुए पुष्ट बनाओ। पाषाण को सोमाभिषेक के निमित्त प्रेरित करने वाले ऋत्विक् इस अनुष्ठान को करते हैं।१२। दमकते हुए रथ वाले, शस्त्रों से युक्त तेजस्वी शत्रुओं के नाशक, यज्ञ में प्रकट गतिमान मरुद्गण और वाक् देवता हमारी स्तुतियोको श्रवण करें। हे मरुतों ! हमको पुत्रसे सम्पन्न धन प्रदान करों।१२। धनका कारण भूत यह स्तोत्र और पूजा के योग्य हवि इस महान यज्ञ में अनेक कर्म करने वाले विष्णु को प्राप्त हों। सबको जन्म देने वाली दिशायें जिन विष्णु को नष्ट नहीं कर सकतीं वे विष्णु अत्यन्त सामर्थ्यवान् हैं। उन्होंने अपने एक पाँव से सम्पूर्ण संसार को ढक लिया था।१०। सब बलों से युक्त हुए इन्द्र ने आकाश और पृथिवी दोनों को अपनी महती सामर्थ्य से पूर्ण किया। शत्रु के गढ़ों को तोड़ने वाले वृत्र संहारक और शत्रुओं को जीतने वाली सेना से युक्त इन्द्र पशु सम्पत्ति को भले प्रकार संगृहीत कर हमको प्रदान करे।१५।　　　　(२६)

नासत्या मे पितरा गन्धुपृच्छा सजात्यमश्विनोश्चारु नाम।
युवं हि स्थो रयिदौ नो रयीणां दात्रं रक्षेथे अकवैरदब्धा ॥१६
महत् तद् वः कवयश्चारु नाम यद्ध देवा भवथ विश्व इन्द्रे।
सख ऋभुभिः पुरुहूत प्रियेभिरिमां धियं सातये तक्षता नः ॥१७
अर्यमा णो अदितिर्यज्ञियासो ऽदब्धानि वरुणस्य व्रतानि।
युयोत नो अनपत्यानि गन्तोः प्रजावान् नः पशुमाँ अस्तु गातुः॥१८
देवानां दूतः पुरुध प्रसूतो ऽनागान् नो वोचतु सर्वताता।
शृणोतु नः पृथिवी द्यौरुतापः सूर्यो नक्षत्रैरुवन्तरिक्षम् ॥१९
शृण्वन्तु नो वृषणः पर्वतासो ध्रुवक्षेमास इलया मदन्तः।
आदित्यैर्नो अदितिः शृणोतु यच्छन्तु नो मरुतः शर्म भद्रम् ॥२०
सदा सुगः पितुमाँ अस्तु पन्था मध्वा देवा ओषधीः सं पिपृक्त।
भगो मे अग्ने सख्ये न मृध्या उद् रायो अश्यां सदनं पुरुक्षोः॥२१
स्वदस्व हव्या समिषो दिदीह्यस्मद्र्यक् सं मिमीहि श्रवांसि।

विश्वाँ अग्ने वृत्सु ताञ्जेषि शत्रूनहा विश्वा सुमना दीदिही नः
२२।२७

हे अश्विद्वय ! तुम हमसे बन्धुत्व स्थापनाकी इच्छा करते हो। तुम हमारा पालन करने वाले बनो। हे अश्विनी ! हम तुम्हारा निरादर करने में समर्थ नहीं है। तुम हमको श्रेष्ठ धन देने में समर्थ हो। हम तुमको हव्यदान करते हैं। उत्तम कर्मों द्वारा हमारी रक्षा करो।१६। हे देवताओ ! हे विद्वानों ! तुम्हारा कर्म अत्यन्त श्रेष्ठ है, जो तुम इन्द्रकी सेवा में रहते हुए ऐश्वर्य या विजय प्राप्त करते हो। हे इन्द्र ! तुम बहुतों द्वारा आहूत किये हुए हो। तुम्हारी मित्रता ऋभुओं को प्राप्त है। धन-लाभ के निमित्त हमारे इस स्तोत्र को स्वीकार करो।१७। सदा गतिमान् सूर्य, देवमाता अदिति, देवगण और अहिंसायुक्त वरुण हमारा पालन करें। हमारे मार्ग से अहितकारी विघ्नों को दूर भगावें। हमारे घर को पशु और सन्तान आदि से सम्पन्न बनावें।१८। यज्ञानुष्ठानों के निमित्त अग्नि देवताओं के दूत-रूप से प्रसिद्ध हैं। वे हमको कर्म साधन से युक्त और अपराध वृत्तिसे रहित करें। आकाश पृथिवी, जलाशय, सूर्य और नक्षत्रों से युक्त अन्तरिक्ष हमारे स्तोत्रों को सुनें। ।१९। वे मरुद्गण इच्छित फलों की वर्षा करने वाले हैं। वे अभिलाषियों का अभीष्ट पूर्ण करने वाले अचल पर्वत, हवि-युक्त अन्न से प्रसन्न होकर हमारे स्तोत्र पर ध्यान दें अदिति अपने पुत्र देवताओं के सहित हमारी स्तुति सुनें और मरुद्गण हमारा मङ्गल करने वाला धन प्रदान करें।२०। हे अग्ने ! हमारा पथ सरल हो। हम अन्न यात्रा में सफलता प्राप्त करें। देवताओं ! औषधियों को मधुर रस से पूर्ण कर दो। हे अग्ने ! हम तुम्हारे मित्र हो गये हैं, अतः हमारे धन का नाश न हो। हम धन को उत्पन्न करने वाले अन्न को प्राप्त करें।२१। हे अग्ने ! इस यज्ञ-योग्य हवि का स्वाद लो। हमारे निमित्त अन्न का प्रकाश करो। अन्न हमारे लिए प्रत्यक्ष हो। युद्ध करने वाले सभी बाधक शत्रुओं पर विजय प्राप्त करो और प्रसन्न मन से हमारे सब दिनों को प्रकाशपूर्ण करो।२२।

(२७)

सूक्त ५५

(ऋषि–प्रजापतिर्वैश्वामित्रो वाच्यो वा । देवता–विश्वेदेवाः आदि । छन्द–त्रिष्टुप्)

उषसा पूर्वा अध यद् व्यूषुर्महद् वि जज्ञे अक्षरं पदे गोः ।
व्रता देवानामुप नु प्रभूषन् महद् देवानामसुरत्वमेकम् ॥१
मो षू णो अत्र जुहुरन्त देवा मा पूर्वे अग्ने पितरः पदज्ञाः ।
पुराण्योः सद्मनोः केतुरन्तर्महद् देवानामसुरत्वमेकम् ॥२
वि मे पुरुत्रा पतयन्ति कामाः शम्यच्छा दीद्ये पूर्व्याणि ।
समिद्धे अग्नावृतमिद् वदेम महद् देवानामसुरत्वमेकम् ॥३
समानो राजा विभृतः पुरुत्रा शये शयासु प्रयुतो वनानु ।
अन्या वत्सं भरति क्षेति माता महद् देवानामसुरत्वमेकम् ॥४
आक्षित् पूर्वास्वपरा अनूरुत् सद्यो जातासु तरुणीष्वन्त ।
अन्तर्वतीः सुवते अप्रवीता महद् देवानामसुरत्वमेकम् ।५।२८

जब प्राचीन उषा उदयकाल के तेजसे संतप्त होती है तब आकाश में अमरत्व प्राप्त आदित्य उदय होते हैं । सूर्योदय होनेपर यजमान यज्ञ कर्म करते हुए देवताओं का सामीप्य प्राप्त करते हैं । वे सब महान् देवता समान बल से युक्त हैं ।१। हे अग्ने ! देवगण हमारा विनाश न करें । देवत्व प्राप्त पितरगण हमको न मारें । यज्ञकी प्रेरणा देने वाले सूर्य आकाश पृथिवी के मध्य उदित होते हैं वे हमारी हिंसा न करें । उन सब देवताओं का महान बल एक ही है ।२। हे अग्ने ! हमारी बहुत-बहुत प्रकार की कामनाएँ विभिन्न दिशाओं में भ्रमण करती हैं । उन उत्तम से प्रकट हुए अग्नि के प्रति हम अपने प्राचीन स्तोत्र को चैतन्य करते हैं । अग्नि के भले प्रकार प्रदीप्त होनेपर स्तोत्र उच्चारण करेंगे । सब देवताओं का महान् पराक्रम एक ही है ।३। वे प्रजा स्वामी अग्निदेव, सभी स्थानों में यज्ञादि कर्मों के निमित्त स्थापित किये जाते हैं । वे वेदीपर रमण करते हैं । अरणियों से प्रकट होते

है । इनके माता-पिता पृथिवी और आकाश हैं । आकाश इनका वर्षा द्वारा पोषण करता है और पृथिवी इनको निवास देती है । देवताओं का बल एक समान ही है ।४। पुरातन औषधियोंमें रमे हुए और नवीन औषधियों में गुण के अनुरूप स्थित अग्निदेव फली औषधियों के अन्तर में वास करते हैं, वे औषधियाँ, बिना वीर्य-दान प्राप्त किये, अग्नि द्वारा गर्भवती हुई फल-पुष्पादि को उत्पन्न करने में समर्थ है । यह सब अग्निदेव का सामर्थ्य है । सभी देवताओं का बल समान है ।५।

शयु: परस्तादध नु द्विमाता ऽबन्धनश्चरति वत्स एक: ।
मित्रस्य का वरुणस्य व्रतानि महद् देवानामसुरत्वमेकम् ॥६
द्विमाता होता विदथेषु सम्राळन्वग्रं चरति क्षेति बुध्न: ।
प्र रण्यानि रण्यवाचो भरन्ते महद् देवानामसुरत्वमेकम् ॥७
शूरस्येव युध्यतो अन्तमस्य प्रतीचीन ददृशे विश्वमायत् ।
अन्तर्मतिश्चरति निष्षिधं गोर्महद् देवानामसुरत्वमेकम् । ८
नि वेवेति पलितो दूत आस्वन्तर्महांश्चरति रोचनेन ।
वपूंषि बिभ्रदभि नो वि चष्टे महद् देवानामसुरत्वमेकम् ।९
विष्णुर्गोपा: परमं पाति पाथ: प्रिया धामान्यमृता दधान: ।
अग्निष्टा विश्वा भुवनानि वेद महद् देवानामसुरत्वमेकम् ।१०।२९

दोनों माता-पिता रूप आकाश-पृथिवी के मध्य सूर्य अस्त होते हुए पश्चिम में शयन करते हैं । वे सूर्य उदय काल के अकेले ही आकाश में अबाध गति से विचरण करते हैं । यह कर्म मित्र वरुण की प्रेरणा से होता है । वे दोनों समान बल वाले हैं ।६। वे अग्नि आकाश पृथिवी रूप दोनों लोकों के रचयिता हैं । वे यज्ञ में भले प्रकार रमण करते हैं और आकाश में सूर्य से विचरते हैं । वे ही इस पृथिवी पर वास करते हुये सब कर्मों के कारण रूप है । होतागण सुन्दर वचनों द्वारा श्रेष्ठ स्तोत्रों का उच्चारण करते हैं । उन सब देवताओं का पराक्रम एक-सा है ।७। अति वीरतापूर्वक युद्ध करने वाले पुरुष के सामने जो कोई आता है,वही उससे हारकर पराङ्मुख होता है उसी प्रकार अग्नि

के सम्मुखजो भी आता है वही पराङ्मुख दिखाई देता है। वे सर्वज्ञाता अग्निदेव सर्वत्र व्यापते हैं। उन देवताओं का एक ही महान बल है।८। जैसे सूर्य आकाश और पृथिवीके मध्य अपनी अत्यन्त सामर्थ्य से व्याप्त हैं वैसे ही देवताओं के दूत प्राणीमात्रका पालन करने वाले अग्नि औषधियों में व्याप्त हैं,विविध रूपधारी हमको अत्यन्त कृपा-दृष्टि से देखें। सब देवों का महान बल एक ही है।९। सर्व व्यापक सबके पालक, हितैषी, कभी क्षीण न होने वाले कग्नि तेजको धारण करते हुए पृथिवी आदि लोकों की रक्षा करते हैं। वह अग्नि समस्त भूतों को जानते हैं वह सब देवों में अद्वितीय एक ही महान शक्ति हैं।१०। (२९)

नाना चक्राते यम्या वपूंषि तयोरन्यद् रोचते कृष्णमन्यत् ।
श्यावी च यदरुषी च स्वसारौ महद् देवानामसुरत्वमेकम् ।।११
माता च यत्र दुहिता च धेनू सबर्दुघे धापयेते समीची ।
ऋतस्य त सदसीले अन्तर्महद् देवानामसुरत्वमेकम् ।।१२
अन्यस्या वत्सं रिहती मिमाय कया भुवा नि दधे धेनुरूधः ।
ऋतस्य सा पयसापिन्वतेला महद् देवानामसुरत्वमेकम् ।।१३
पद्या वस्ते पुरुरूपा वपूंष्यूर्ध्वा तस्थौ त्र्यविं रेरिहाणा ।
ऋतस्य सद्म वि चरामि विद्वान् महद् देवानामसुरत्वमेकम् ।।१४
पदे इव निहिते दस्मे अन्तस्तयोरन्यद् गुह्यमाविरन्यत् ।
सध्रीचीना पथ्या सा विषूची महद् देवानामसुरत्वमेकम्।१५।३०

कृष्ण वर्णवाली रात्रि और तेजमय उज्ज्वल उषा दोनों बहिनें सूर्य से उत्पन्न होती हुई जाग्रति और निद्राके नियममें जीवोंको डालने वाली विविध रूपोंसे युक्त हैं। उन दोनोंमें एक तेजसे चमकती तथा दूसरी अंधकारसे काली रहती है। इन सब देवताओंमें उन सूर्य रूप अग्नि का एक ही महान बल है।११। पृथिवी और आकाश दोनोंही माता और पुत्रीके समान हैं। पृथिवी सब जीवोंको उत्पन्नकर उनका पालन करनेके कारण माता तथा आकाश से वर्षा के जल को दूध के समान ग्रहण करने के कारण पुत्री रूप है। वैसे ही आकाश मेघ, वर्षा आदिसे जीवोंके पालन

कर्त्ता होने से माता और पृथिवी के जल को दूध के समान सींचकर पीने से पुत्री के समान है । यह दोनों ही गौ के समान अन्न, जल रूप से दूध देने वाली हैं । उन आकाश और पृथिवी का हम स्तवन करते हैं । यह दोनों देवताओं के एक ही महान बल द्वारा समर्थ हुई हैं ।१२। गौ के समान रस वर्षा करने वाले आकाश के जल को पृथिवी मेघ-रूप से धारण करती है । इस समय वह पृथिवी के जल से उत्पन्न मेघ को बछड़े के समान चाटती है और विद्युत गर्जन के रूप से ध्वनि करती हुई भूमि को अन्नोपादक तथा पोषक वर्षाके जलसे भले प्रकार सीचतीं है । यह सब देवताओं के एक महान बल का ही परिणाम है ।१३। शरीर को विविध प्रकार से आकाश पृथिवी ढकती है । उन्नत होकर तीनों लोकों को व्याप्त करने वाले सूर्य को चाटती हुई सी चलती है । सत्य के कारणभूत सूर्य के स्थान को जानकर हम उनकी स्तुति करते हैं । देवताओं का महान बल एक ही है ।१४ दो पाँवों के समान गमनशील दिन रात्रि आकाश और पृथिवी के मध्य व्याप्त हैं । वे दोनों अद्भुत हैं, एक अन्धकार का और दूसरी उजाले का नाश करने वाली हैं । उन दोनों का मार्ग पापी और पुण्यकर्मा दोनों को ही प्राप्त है । देवताओं का एक ही महान बल है । ५।   (३०)

आ धेनवो धुनयन्तामशिश्वीः सबर्दुघाः शशया अप्रदुग्धाः ।
नव्यानव्या युवतयो भवन्तीर्महद् देवानामसुरत्वमेकम् ॥१६
यदन्यासु वृषभो रोरवीति सो अन्यस्मिन् यूथे नि दधाति रेतः ।
स हि क्षपावान् त्स भगः स राजा महद् देवानामसुरत्वमेकम् ॥१७
वीरस्य नु स्वश्व्यं जनासः प्र नु वोचाम विदुरस्व देवाः ।
षोलहा युक्ताः पञ्चपञ्चा वहन्ति महद् देवानामसुरत्वमेकम् ॥१८
देवस्त्वष्टा सविता विश्वरूपः पुपोष प्रजाः पुरुधा जजान ।
इमा च विश्वा भुवनान्यस्य महद् देवानामसुरत्वमेकम् ॥१९
महीं समैरच्चम्वा समीची उभे ते अस्य वसुना न्यृष्टे ।
शृण्वे वीरो विन्दमानो वसूनि महद् देवानामसुरत्वमेकम् ॥२०

इमां च नः पृथिवी विश्वधाया उप क्षेति हितमित्रो न राजा ।
पुरःसदः शर्मसदो न वीरा महद् देवानामसुरत्वमेकम् ॥२१
निष्षिध्वरीस्त ओषधीरुतापो रयिं त इन्द्र पृथिवी बिभर्ति ।
सखायस्ते वामभाजः स्याम महद् देवानामसुरत्वमेकम् ।२२।३१

वर्षा करने के कारण सबकी प्रीति प्राप्त करने वाली, शिशुविहीन आकाश-व्यापिनी, सदा युवती और नवीन स्वरूप वाली दिशायें कम्पायमान होती हैं। यह देवताओं की एक महान सामर्थ्य का फल है।१६। वर्षणशील मेघ गौ के मध्य स्थित वृषभ के समान दिशाओं में शब्द करता हुआ जल वर्षा करता है। इन्द्र ही उसे इस कार्य मे प्रेरित करते हैं। वे इन्द्र सबके द्वारा उपासना करने योग्यहैं और सबके स्वामी हैं। देवताओंका सामथ्य एक-सा महान है।१७। हे मनुष्यों ! हम इन्द्र के सुशोभित घोड़ोंका उत्तम वर्णन करते हैं। देवगण उन इन्द्र के अश्वों को जानते हैं। दो-दो महीनों को मिलाकर वर्ष में ७ ऋतुयें होती हैं। हेमन्त और शिशिर को एक कर देने पर पाँच ऋतुएँ मानी जाती हैं। यह इन्द्र के अश्व रूप ऋतुएँ सूर्य रूप इन्द्र का हवन करती हैं। देवताओं का महान सामर्थ्य एक ही है। १८ । त्वष्टा देव अन्तर्यामी होने से सबको प्राप्ति कराने वाले हैं। वे विभिन्न रूप वाली प्रजाओंको उत्पन्न करने वाले हैं तथा यही उनका पोषण करते हैं। यह सब लोक त्वष्टा के ही हैं। देवताओं को महान बल एक समान है।१९। इन्द्र ने ही इन महत्तावान आकाश पृथिवी को सुसंगत कर, पशु पक्षियों को प्रगट करने वाली बनाया। वे आकाश पृथिवी दोनों ही इन्द्र के तेज से व्याप्त हैं। वे सामर्थ्यवान इन्द्र शत्रुओं को हराकर उनके धन को ले लेने में प्रसिद्ध हैं। उनके साथी देवताओ का महान बल एक ही है। ।२०। विश्व के धारण करने वाले हमारी पृथिवी को आकाश के भी स्वामी, हितचिंतक मित्रों से युक्त इन्द्र स्वयं तेजस्वी हुए प्राणियों का पालन करते हैं। मरुद्गण युद्ध का अवसर प्राप्त होने पर इन्द्र के आगे चलते हैं और दिव्य स्थानों पर निवास करते हैं। देवताओं का

महान सामर्थ्य एक ही है।२१। हे इन्द्र ! यह पृथिवी रोग-नाशिनी-औषधियों को पुष्ट करती है। जल धाराएँ भी तुम्हारे सखा श्रेष्ठ ऐश्वर्यों को प्राप्त कर उनका भोग करने में समर्थ हों। देवताओं का महान बल एक ही है।२२। (३१)

॥ तृतीयोऽध्यायः समाप्तः ॥

सूक्त ५६

(ऋषि–प्रजापतिर्वैश्वामित्रो वाच्यो वा। देवता–विश्वेदेवाः।
छन्द–त्रिष्टुप्)

न ता मिनन्ति मायिनो न धीरा व्रता देवानां प्रथमा ध्रुवाणि।
न रोदसी अद्रुहा वेद्याभिर्न पर्वता निनमे तस्थिवांसः ॥१
षड् भाराँ एको अचरन् बिभर्त्यृतं वर्षिष्ठमुप गाव आगुः।
तिस्रो महीरुपरास्तस्थुरत्या गुहा द्वे निहिते दर्श्येका ॥२
त्रिपाजस्यो वृषभो विश्वरूप उत त्र्युधा पुरुध प्रजावान्।
त्र्यनीकः पत्यते माहिनावान् त्स रेतोधा वृषभः शश्वतीनाम् ॥३
अभीक आसां पदवीरबोध्यादित्यानामह्वे चारु नाम।
आपश्चिदस्मा अरमन्त देवीः पृथग् व्रजन्तीः परि षीमवृञ्जन् ॥४
त्री षधस्था सिन्धवस्त्रिः कवीनामुत त्रिमाता विदथेषु सम्राट्।
ऋतावरीर्योषणास्तिस्रो अप्यास्त्रिरा दिवो विदथे पत्यमानाः॥५
त्रिरा दिवः सवितर्वार्याणि दिवेदिव आ सुव त्रिर्नो अह्नः।
त्रिधातु राय आ सुवा वसूनि भग त्रातर्धिषणे सातये धाः ॥६
त्रिरा दिवः सविता सोषवीति राजाना मित्रावरुणा सुपाणी।
आपश्चिदस्य रोदसी चिदुर्वी रत्नं भिक्षन्त सवितुः सवाय ॥७
त्रिरुत्तमा दूणशा रोचनानि त्रयो राजन्त्यसुरस्य वीराः।
ऋतावान इषिरा दूलभासस्त्रिरा दिवो विदथे सन्तु देवाः ।८।१

देवताओं की सृष्टिसे उत्पन्न होने वाले मायावी असुर श्रेष्ठ कर्मों की हिंसा न करें। विद्वान भी उत्तम कर्मों को न त्यागें। आकाश पृथिवी भी प्रजाओं के साथ विघ्न रहित रहें। अविचल पर्वतों को कोई

झुका नहीं सकता । .। एक संवत्सर वसन्तादि षट् ऋतुओंका धारणकर्ता है । सत्य के आधारभूत, सूर्यसे युक्त संवत्सर को रश्मियाँ प्राप्त होती हैं । तीनों लोक ऊपर ही स्थिर हैं । स्वर्ग और अन्तरिक्ष गुफा में छिपे हैं । केवल पृथिवी ही प्रत्यक्ष है ।२। ग्रीष्म, वर्षा, हेमन्त ऋतुओंसे युक्त जल की वर्षा करने में समर्थ, तीनों लोकों को स्तनके समान रस दान करने वाले, प्रजायुक्त, गर्मी वर्षा शीतगुण वाले महत्वशील संवत्सर प्राणशक्ति से युक्त हैं । यह सम्वत्सर जल धारणकर पृथिवी को सींचने में समर्थ है ।३। इन सब औषधियों के समीप उनके पद रूप से संवत्सर चैतत्य होता है । मैं उन आदित्यों के सुन्दर नामों को जानता हूँ । इस संवत्सरसे स्वतन्त्रमार्गगामी जल समूह चार महीनेतक सुसंगति करता और आठ महीनोंके लिए वियुक्त रहता है ।४। हे नदियों ! त्रिगुणात्मक और त्रिसंख्यक लोकोंमें देवता निवास करते हैं । लोक-त्रय के रचयिता सूर्य यज्ञ के भी स्वामी है । अन्तरिक्ष से चलने वाली जलवती इला, सरस्वती और भारती यज्ञ के तीनों सवनों में रहें ।५। हे सूर्य ! तुम सबको बल देते हो, प्रतिदिन तीनों सवनों में आकाश में आकर हमको प्राप्त होते हुए सुन्दर, उपभोग्य धन दो । तुम हमारा पालन करने वाले हो, हमको दिन के तीनों सवनों में पशु, स्वर्ण रत्न और गवादि धन दो । हे मेधावी सूर्य ! जिस उपाय से हमको धन-लाभ हो सके, वही उपाय करो ।६। वे सवितादेव सदन में तीन बार हमको ऐश्वर्य दें । कल्याण रूप हाथ वाले, राजा मित्र और वरुण, आकाश और पृथिवी तथा अन्तरिक्ष आदि देवता, सवितादेव से ऐश्वर्य-वृद्धि की याचना करें ।७। सर्व विजेता, प्रकाशवान, अविनाशी तीन श्रेष्ठ स्थान हैं । इन तीनों में अग्नि वायु और सूर्य सुशोभित होते हैं । यज्ञ से युक्त, तिरस्कृत न किये जाने वाले द्रुतगामी देवता तीनों सवनों में हमारे यज्ञानुष्ठान में पधारें ।८। (१)

सूक्त ५७

(ऋषि–विश्वामित्रः । देवता–विश्वेदेवाः । छन्द–त्रिष्टुप्)

प्र मे विविक्वाँ अविदन्मनीषां धेनुं चरन्तीं प्रयुतामगोपाम् ।
सद्यश्चिद् या दुदुहे भूरि धासेरिन्द्रस्तदग्निः पनितारो अस्याः॥१
इन्द्रः सु पूषा वृषणा सुहस्ता दिवो न प्रीताः शशयं दुदुह्रे ।
विश्वे यदस्या रणयन्त देवाः प्र वोऽत्र वसवः सुम्नमश्याम् ॥२
या जामयो वृष्ण इच्छन्ति शक्तिं नमस्यन्तीर्जानते गर्भमस्मिन् ।
अच्छा पुत्रं धेनवो वावशाना महश्चरन्ति बिभ्रतं वपूंषि ॥३
अच्छा विवक्मि रोदसी सुमेके ग्राव्णो युजानो अध्वरे मनीषा ।
इमा उ ते मनवे भूरिवारा ऊर्ध्वा भवन्ति दर्शता यजत्राः ॥४
या ते जिह्वा मधुमती सुमेधा अग्ने देवेषूच्यत उरूची ।
तयेह विश्वाँ अवसे यजत्राना सादय पायया चा मधूनि ॥५
या ते अग्ने पर्वतस्येव धारासश्चन्ती पीपयद् देव चित्रा ।
तामस्मभ्यं प्रमतिं जातवेदो वसो रास्व सुमतिं विश्वजन्याम्६।२

वे बुद्धिमान् इन्द्र अकेले विहार करने वाली, रक्षकसे रहित गौ के समान हमको प्राप्त करें । जिस स्तुति–रूप से अभिलाषित फल दोहने को इच्छा की जाती है उस स्तुति को इन्द्र और अग्नि दोनों प्राप्त करें ।१। इन्द्र, पूजा और अभिलषित वर्षा करने वाले मँगलहस्त मित्रावरुण अन्तरिक्ष में शयन करने वाले मेघ को अन्तरिक्ष से दुहते हैं । हे विश्वे-देवताओ ! तुम उत्तम निवास देने वालेहो । इस यज्ञ-वेदीपर रमण करो जिससे हम तुम्हारे द्वारा दिये गये सुखको प्राप्तकर सकें ।२।जल वर्षक इन्द्र की शक्ति की कामना करने वाली औषधियाँ नम्र होकर इन्द्र की गर्भाधान करने वाली क्षमता का ज्ञान प्राप्त करती हैं । फल की अभि-लाषा करने वाली ओषधियाँ गवादि पशुओं के अभिमुख होती हैं ।३। यज्ञ में सोम-अभिषव करने वाले पाषाण को धारण करते हुए हम आकाश-पृथिवी मधुर वाणी द्वारा स्तुति करते हैं । हे अग्निदेव तुम्हारी वरण करने योग्य, पूजनीय एवं रमणीय प्रदीप्तियाँ मनुष्य के समक्ष ऊपर उठती हैं ।४। अग्ने तुम्हारी ज्वाला रूप जिह्वा अत्यन्त रसवती, मधुमती और प्रज्ञावती हुई देवताओं के आह्वान के निमित्त होती है ।

अपनी उस जिह्वा से यजन करने योग्य देवताओं को इस यज्ञ कर्म में हमारी रक्षा के निमित्त बुलाओ और उन देवताओंको सोम-पान कराके प्रसन्न करो ।५। हे तेजस्वी अग्निदेव ! हमको त्यागकर अन्य किसी के पास न जाने वाली विविध रूपिणी तुम्हारी कृपा पूर्ण मति हमको इच्छित फल प्रदान करती हुई बढ़ावे, उस प्रकार जैसे मेघ जल द्वारा वनस्पतियों को बढ़ाता है ।तुम स्वयं बुद्धिमान एवं निवास-दाता हो । हमको वही कृपापूर्ण बुद्धि दो तथा सबको कल्याण करने वाली बुद्धि से सुशोभित करो ।६।　　(२)

सूक्त ५८

(ऋषि–विश्वामित्रः । देवता–अश्विनौ । छन्द–त्रिष्टुप्)

धेनुः प्रत्नस्य काम्यं दुहाना ऽन्तः पुत्रश्चरति दक्षिणायाः ।
आ द्योतनिं वहति शुभ्रयामोषसः स्तोमो अश्विनावजीगः ॥१
सुयुग् वहन्ति प्रति वामृतेनोर्ध्वा भवन्ति पितरेव मेधाः ।
जरेथामस्मद् वि पणेर्मनीषां युवोरवश्चकृमा यातमर्वाक् ॥२
सुयुग्भिरश्वैः सुवृता रथेन दस्राविमं शृणुतं श्लोकमद्रेः ।
किमङ्ग वां प्रत्यवर्तिं गमिष्ठा ऽऽहुर्विप्रासो अश्विना पुराजाः ॥३
आ मन्येथामा गतं कच्चिदेवैर्विश्वे जनासो अश्विना हवन्ते ।
इमा हि वां गोऋजीका मधूनि प्र मित्रासो न ददुरुस्रो अग्ने ॥४
तिरः पुरू चिदश्विना रजांस्याङ्गूषो वां मघवाना जनेषु ।
एह यातं पथिभिर्देवयानैर्दस्राविमे वां निधयो मधूनाम् ।५।३

प्राचीन अग्नि के निमित्त उषा रात्रिको समाप्ति पर ओस रूप रस बूंदोंको दुहती है फिर उषा-पुत्र भास्कर उसके बीच घूमते हैं । उज्ज्वल प्रकाश से युक्त दिन सबको प्रकाश देने वाले सूर्य को घुमाता है । सूर्योदय से पूर्व ही अश्विनी कुमार का स्तवन करने वाले तत्पर होते हैं ।१। हे अश्विनी कुमारो ! उत्तम श्रेष्ठ तथा सत्यरूप रथ-द्वारा तुमको यज्ञ में लाने के लिए दो घोड़े जुतते हैं । माता-पिता की ओर पुत्र के जाने के समान यज्ञ तुम्हारी ओर जाता है । हमारे निकटस्थ

दैत्यों और दुष्कर्मियों को इससे दूर हटाओ । हम तुम्हारे लिए हव्य प्रदान करते हैं । तुम दोनों यहाँ आओ ।२। हे अश्वनीकुमारो ! विशेष चक्र वाले सुन्दर रथ में सुशोभित घोड़ों को जोड़ो और उस पर चढ़ कर यहाँ आओ । हम स्तोता तुम दोनों का स्तोत्र उच्चारण करते हैं, उसे आकर सुनो तथा इस बात पर भी ध्यान दो कि प्राचीन बुद्धिमानों ने क्या स्तुति की, तुम दोनों उन्हीं के अनुकूल चलो चलो ।३। हे अश्विनीकुमारों ! तुम दोनों को सभी आदर पूर्वक बुलाते हैं । उनके आह्वान पर ध्यान देकर अपने अश्वों सहित यज्ञ में पधारो । वे तुम्हारे निमित्त मित्र के समान प्रसन्नताप्रद दुग्धादि से मिश्रित हव्य प्रदान करते हैं । उषा के पश्चात् आदित्य–देव उदित हो रहे हैं । अतः शीघ्र ही पधारो ।४। हे अश्वियों ! तुम दोनों की वाणी सब लोकों को प्राप्त हो । तुम्हारी वाणी सङ्कटों को दूर करे । तुम दोनों विद्वज्जनों के मार्गों से इस लोक में आगमन करो । तुम शत्रुओं का संहार करने में समर्थ हो । इस मधुर रस से पूर्ण पुष्टि-कारक सोम को तुम्हारे निमित्त ही पात्रों में निचोड़ कर रखा गया है ।५। (३)

पुराणमोकः सख्यं शिवं वां युवोर्नरा द्रविणं जह्नाव्याम् ।
पुनः कृण्वानाः सख्या शिवानि मध्वा मदेम सह नू समानाः ॥६
अश्विना वायुना युवं सुदक्षा नियुद्भिश्च सजोषसा युवाना ।
नासत्या तिरोअह्न्यं जुषाणा सोमं पिबतमस्रिधा सुदानू ॥७
अश्विना परि वामिषः पुरूचीरीयुर्गीर्भिर्यतमाना अमृध्राः ।
रथो ह वामृतजा अद्रिजतः परि द्यावापृथिवी याति सद्यः। ८
अश्विना मधुषुत्तमो युवाकुः सोमस्तं पातमा गतं दुरोणे ।
रथो ह वां भूरि वर्पः करिक्रत् सुतावतो निष्कृतमागमिष्ठः ।९।४

हे अश्विनीकुमारो ! तुम्हारी मित्रता प्राचीन और सबको आवश्यक मङ्गल-कारी है । तुम दोनों सबका नेतृत्व करने वाले हो । तुम

दोनों का धन जह्नु कुल वालों के लिए कल्याणकारी हो। तुम दोनोंके मैत्री भाव का सुख बारम्बार प्राप्त करे। प्रसन्नता उत्पन्न करने वाले सोम का पान करते हुए हम भी तुम दोनों के साथ शीघ्र ही तुष्टि को प्राप्त करें।६। हे अश्विनी कुमारो ! तुम सभी उपयुक्त सामर्थ्योंसे युक्त हो। तुम मिथ्यात्व रहित, सतत युवा तथा शोभनीय धनों के देने वाले हो। वायु तथा नियमों से नियुक्त अश्वों से युक्त हुए, यहाँ आकर अक्षय गुण वाले सोम पीने के अभ्यासी तुम दोनों ही दिन के प्रकाश में सोम पानकरो।७। हे अश्विनी-कुमारो ! यह पर्याप्त हव्य तुमको प्राप्त होता है। कर्मोंमें चतुर तथा पाप रहित स्तुति करने वाले उत्तम स्तोत्रों द्वारा तुम दोनों की पूजा करते हैं। स्तुति करने वाला उपासकों द्वारा आकर्षित किया गया जलदायक रथ आकाश और पृथिवी के बीच चलता है।८। हे अश्विनी-कुमारो ! यह अत्यन्त मधुर रस तथा दुग्धादिसे मिश्रित सोम प्रस्तुत है, उसे पीओ। तुम दोनों का धन देने वाला श्रेष्ठ रथ सोम सिद्ध करने वाले यजमान के सुशोभित घर में बारम्बार पहुँचता है।९। (४)

सूक्त ५९

(ऋषि–विश्वामित्रः। देवता–मित्रः। छन्द–त्रिष्टुप्, गायत्री)

मित्रो जनान् यातयति ब्रुवाणो मित्रो दाधार पृथिवीमुत द्याम्।
मित्रः कृष्टीरनिमिषाभि चष्टे मित्राय हव्यं घृतवज्जुहोत ॥१
प्र स मित्र मर्तो अस्तु प्रयस्वान् यस्त आदित्य शिक्षति व्रतेन।
न हन्यते न जीयते त्वोतो नैनमंहो अश्नोत्यन्तितो न दूरात् ॥२
अनमीवास इलया मदन्तो मितज्ञवो वरिमन्ना पृथिव्याः।
आदित्यस्य व्रतमुपक्षियन्तो वयं मित्रस्य सुमतौ स्याम ॥३
अयं मित्रो नमस्यः सुशेवो राजा सुक्षत्रो अजनिष्ट वेधाः।
तस्य वयं सुमतौ यज्ञियस्याऽपि भद्रे सौमनसे स्याम ॥४
महाँ आदित्यो नमसोपसद्यो यातयज्जनो गृणते सुशेवः।
तस्मा एतत् पन्यतमाय जुष्टमग्नौ मित्राय हविरा जुहोत ॥५।५

देवगण पूजित होने पर सम्पूर्ण संसार को कृषि आदि कर्मों में प्रेरित करते हैं । वर्षा द्वारा अन्नादि को उत्पन्न करने वाले मित्र देवता पृथिवी और आकाश दोनों को धारण करने वाले हैं । वे मित्र देवता कर्म वाले व्यक्तियों को सब प्रकार के अनुग्रह की दृष्टि से देखते हैं। उन मित्र देव के निमित्त घृतयुक्त हवियाँ दो ।१। हे आदित्य ! तुम्हें मित्र के सहित जो व्यक्ति हवियाँ देता है, वह अन्नों का स्वामी हो। जो मनुष्य तुम्हारी रक्षा प्राप्त कर लेता है, उसकी हिंसा कोई नहीं कर सकता । तुम्हारे निमित्त जो मनुष्य हवि देता है, उसके निकट पाप कभी नहीं आता ।२। हे मित्र ! हम रोगोंसे उचें,अन्न प्राप्ति द्वारा पुष्ट हों । हम इस विस्तृत पृथिवी पर अपनी जाँघों को सिकोड़ कर (जानु के बल बैठे हुए) आदित्यके व्रत का पालन करते हैं । वे आदित्य हमारे प्रति अपनी कृपा-दृष्टि रखें ।३। यह आदित्य सुन्दर प्रकाश वाले बल में पड़े हुए, सबको उत्पन्न करने वाले, सबके स्वामी तथा नमस्कार करने के योग्य हैं । इनके प्रादुर्भाव पर यज्ञ कर्म होते हैं । हम यजमान इनकी कृपा तथा मङ्गलकारी वात्सल्य भाव को प्राप्त करें ।४। उन महान लोकों के प्रवर्त्तक आदित्य की नमस्कारों से युक्त पूजा करनी चाहिये, स्तुति करने वालों से वे आदित्य अत्यन्त प्रसन्न होते हैं। हे स्तोताओं ! मित्र देवता स्तुति के पात्र हैं, उनके निमित्त प्रीतिदायक हवियाँ अग्नि में डालो ।५। (५)

मित्रस्य चर्षणीधृतोऽवो देवस्य सानसि । द्युम्नं चित्रश्रवस्तमम्॥६
अभि यो महिना दिवं मित्रो बभूव सप्रथाः ।
अभि श्रवोभिः पृथिवीम् ॥७
मित्राय पञ्च येमिरे जना अभिष्टिशवसे ।
स देवान् विश्वान् बिभर्ति ॥८
मित्रो देवेष्वायुषु जनाय वृक्तबर्हिषे । इष इष्टव्रता अकः ।९।६

वर्षा के द्वारा मनुष्योंको धारण करने वाले मित्र देवता का प्रभाव अन्नादि धन, कीर्ति और ज्ञान से युक्त होकर सबके लिए सेवन

करने के योग्य तथा देने वाला हो ।६। मित्र-देवता ने अपनी महत्ता से आकाश को वशीभूत किया है, उन्होंने अपने कर्मों द्वारा अत्यन्त यशस्वी पृथिवी को सेवन करने योग्य अन्न से युक्त किया ।७। ब्राह्मण क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र तथा निषाद, यह पाँचों वर्ण शत्रुओं की जीतने की क्षमता वाले मित्र देवता के प्रति सम्मान प्रदर्शित करें। वे मित्र अपने स्वरूप द्वारा ही सब देवताओं का पोषण करते हैं।८। जो व्यक्ति विद्वानों-देवताओं एवं अन्य मनुष्यों के कुश को काटकर लाता है,मित्र देवता उसके लिए मङ्गलकारी अन्न प्रदान करते हैं ।६।   (६)

सूक्त ६०

(ऋषि—विश्वामित्रः । देवता—ऋभवः, इन्द्रः । छन्द—जगती)

इहेह वो मनसा बन्धुता नर उशिजो जग्मुरभि तानि वेदसा ।
याभिर्मायाभिः प्रतिजूतिवर्पसः सौधन्वना यज्ञियं भागमानश ॥१
याभिः शचीभिश्चमसाँ अपिंशत यया धिया गामरिणीत चर्मणः।
येन हरी मनसा निरतक्षत तेन देवत्वमृभवः समानश ॥२
इन्द्रस्य सख्यमृभवः समानशुर्मनोर्नपातो अपसो दधन्विरे ।
सौधन्वनासो अमृतत्वमेरिरे विष्ट्वी शमीभिः सुकृतः सुकृत्यया ॥३
इन्द्रेण याथ सरथं सुते सचाँ अथो वशानां भवथा सह श्रिया ।
न वः प्रतिमै सुकृतानि वाघतः सौधन्वना ऋभवो वीर्याणि च॥४
इन्द्र ऋभुभिर्वाजवद्भिः समुक्षितं सुतं सोममा वृषस्वा गभस्त्योः।
धियेषितो मघवन् दाशुषो गृहे सौधन्वनेभिः सह मत्स्वा नृभिः।५
इन्द्र ऋभुमान् वाजवान् मत्स्वेह नो ऽस्मिन् शच्या पुरुष्टुत ।
इमानि तुभ्यं स्वसराणि येमिरे व्रता देवानां मनुषश्च धर्मभिः।६
इन्द्र ऋभुभिर्वाजिभिर्वाजयन्निह स्तोमं जरितुरुप याहि यज्ञियम्
शतं केतेभिरिषिरेभिरायवे सहस्रणीथो अध्वरस्य होमनि ।७।७

हे ऋभुओ ! तुम्हारे ऐश्वर्य, कर्म और सामर्थ्य को सभी जानते हैं । हे मनुष्यों ! तुम सुधन्वा के वंशज हो, तुम अपने जिस कर्म द्वारा

शत्रुओं को हराने में उपयुक्त तथा विशिष्ट तेज से युक्त होकर यज्ञ भाग को प्राप्त करते हो, उस सब कर्म को तुम इच्छा करते ही जान लेते हो ।१। ऋभुओ ! तुमने अपनी जिस शक्ति से चमस का विभाजन किया था, जिस बुद्धि की शक्ति से तुमने गौ शरीर में चर्म जोमें था तथा जिस ज्ञान से तुमने इन्द्र के दोनों घोड़ों की रचना की थी, अपने उन्हीं सब कर्मों द्वारा तुम यज्ञ भाग के अधिकारी होकर देवत्व प्राप्त कर सके ।२। मनुष्यों के वंशज ऋभुओं ने यज्ञादि कर्मों द्वारा इन्द्र की मित्रतासे शरीर में प्राण-युक्त किये हैं। पुण्य-कर्म करने वाले यह सुधन्वा के पुत्र कर्म के बल से अविनाशी पद प्राप्त किये हुए हैं ।३। हे ऋभुओं! तुम इन्द्र के साथ एक ही रथ पर चढ़कर सोम सिद्ध करने वाले स्थान में जाओ। फिर मनुष्यों के स्तोत्रों को स्वीकार करो। हे सुधन्वा के पुत्रो ! तुम अमृत की शक्ति को वहन करने वाले हो। तुम्हारे श्रेष्ठ कर्मों को कोई रोक नहीं सकता। हे ऋभुगण ! तुम्हारी शक्ति का सामना करनेमें कोई भी समर्थ नहीं है ।४। हे इन्द्र ! जैसे सूर्य वेगवती तथा तेजस्विनी रश्मियों को पुष्ट करता है, वैसे ही तुम पृथिवी को बलवान् और ज्ञानीजनों से पुष्ट करो। हे इन्द्र ! तुम ऋभुओं के सहित सोम-पान करो, और स्तुतियों द्वारा आहूत हुए तुम यजमान के घर में सौधन्वों के साथ सोम पान करते हुए आनन्द का लाभ प्राप्त करो ।५। हे इन्द्र ! तुम बहुतों के द्वारा स्तुत्य हो। तुम इन्द्राणी सहित तथा ऋभुओं से युक्त होकर हमारे तीसरे सवन में आनन्द प्राप्त करो। हे इन्द्र ! दिन में तीनों सवनों में यह सवन तुम्हारे सोम-पान के लिए निश्चित है। वैसे देवताओं के सब व्रतों और मनुष्यों के सब कर्मों द्वारा सभी दिन तुम्हारी पूजाके लिए श्रेष्ठ हैं ।६। हे इन्द्र ! स्तुति करने वालों के लिए अन्न सम्पादन करते हुए बलवान् ऋभुगण सहित स्तोता की स्तुतियों के प्रति इस यज्ञ में पधारो। शत-संख्यक कुशल अश्वों के द्वारा मरुद्गण भी यजमानके सहस्र संख्यक हिंसा रहित यज्ञमें आगमन करें ।७। (७)

सूक्त ६१

(ऋषि—विश्वामित्र: । देवता—उषा: । छन्द—त्रिष्टुप्)

उषो वाजेन वाजिनि प्रचेता: स्तोमं जुषस्व गृणतो मघोनि ।
पुराणी देवि युवति: पुरंधिरनु व्रतं चरसि विश्ववारे ॥१
उषो देव्यमर्त्या वि भाहि चन्द्ररथा सूनृता ईरयन्ती ।
आ त्वा वहन्तु सुयमासो अश्वा हिरण्यवर्णां पृथुपाजसो ये ॥२
उष: प्रतीची भुवनानि विश्वोर्ध्वा तिष्ठस्यमृतस्य केतु: ।
समानमर्थं चरणीयमाना चक्रमिव नव्यस्या ववृत्स्व ॥३
अव स्यूमेव चिन्वती मघोन्युषा याति स्वसरस्य पत्नी ।
स्वर्जनन्ती सुभगा सुदंसा आन्ताद् दिव: पप्रथ आ पृथिव्या: ॥४
अच्छा वो देवीमुषसं विभातीं प्र षो भरध्वं नमसा सुवृक्तिम् ।
ऊर्ध्वं मधुधा दिवि पाजो अश्रेत् प्र रोचना रुरुचे रण्वसंदृक् ॥५
ऋतावरी दिवो अर्कैरबोध्या रेवती रोदसी चित्रमस्थात् ।
आयतीमग्न उषसं विभातीं वाममेषि द्रविणं भिक्षमाण: ॥६
ऋतस्य बुध्न उषसामिषण्यन् वृषा मही रोदसी आ विवेश ।
मही मित्रस्य वरुणस्य माया चन्द्रेव भानुं वि दधे पुरुत्रा ।७।८

हे उषा तुम धनेश्वर और अन्न वाली हो । तुम श्रेष्ठ ज्ञान से युक्त होकर स्तुति करने वाले के स्तोत्र को स्वीकार करो । तुम सभी के द्वारा वरण करनेके योग्य हो । अत: प्राचीन कालींन युवतीके समान सुशोभित तथा बहुतो के स्तोत्रों से युक्त होकर यज्ञानुष्ठान निमित्त शीघ्र आओ ।१। हे उषा ! तुम मरण धर्म से मुक्त हो तुम्हारा रथ स्वर्णयुक्त है । तुम सत्य रूप वचनों का उच्चारण करने वाली हो । किरणों की शोभा शोभायमान होती हो । अरुण वर्णवाले बलवान अश्व सरलता से तुम्हारे रथ से जुड़ते हैं । ने तुम्हें आहूत करें ।२। हे उषे ! तुम सम्पूर्ण संसार से प्राणियों के सामने आती हो । तुम मरण से रहित तथा सूर्य को सूचना देने वाली, समान मार्ग में चलती

हुई, उच्चाकाश में गमन करती हो। तुम सूर्यके रथके समान बारम्बार उस मार्ग पर चलो ।३। वस्त्र के समान ढकने वाली घोर अन्धकार का नाश करने वाली, धन से युक्त उषा सूर्य की पत्नी के रूप में गमन करती है, वह अत्यन्त सौभाग्य-शालिनी और सत्कर्मों की साधिका है। वही उषा और पृथिवी की सीमा में प्रकाशित होती है ।४। हे स्तुति करने वालो ! तुम्हारे सामने सुशोभित उषा प्रत्यक्ष होतो है। तुम नमस्कार पूर्वक इनकी स्तुति करो। उन स्तुतियों को पुष्ट करने वाली उषा आकाश के उन्नत तेज को धारण करती है। वह उषा अत्यन्त सुन्दर, सुशोभित तथा तेजस्विनी है ।५। उस सत्य से युक्त उषा को आकाश के तेज के रूप से प्रकट होने पर सब जानते हैं। वह उषा धनैश्वर्य युक्त है, और अनेक प्रकार से आकाश-पृथिवी में व्याप्त होती हैं। हे अग्ने ! उषा तुम्हारे सामने आती है। तुम उससे हविकी याचना करते हुए सुखकारी धनों को पाते हो ।६। आदित्य ही वृष्टि द्वारा जल गिराते हैं। वे सत्य रूप दिन के आरम्भ में उषा को भेजकर आकाश-पृथिवी के मध्य प्रविष्ट होते हैं। फिर वह अत्यन्त महत्वशाली उषा मित्रावरुण की प्रभा के रूप में प्रकट होकर सुवर्णके समान अपनी प्रदीप्ति को संसार में फैलाती है ।७। (८)

सूक्त ६२

(ऋषि—विश्वामित्रः जमदग्निर्वा। देवता—इन्द्रावरुणौ इत्यादयः। छन्द—त्रिष्टुप् गायत्री।)

इमा उ वां भृमयो मन्यमाना युवावते न तुज्या अभूवन्।
क्वत्यदिन्द्रावरुणा यशो वां येन स्मा सिनं भरथः सखिभ्यः ॥१
अयमु वां पुरुतमो रयीयञ्छश्वत्तममवसे जोहवीति।
सजोषाविन्द्रावरुणा मरुद्भिर्दिवा पृथिव्या शृणुतं हवं मे ॥२
अस्मे तदिन्द्रावरुणा वसु ष्यादस्मे रयिर्मरुतः सर्ववीरः।
अस्मान् वरूत्रीः शरणैरवन्त्वस्मान् होत्रा भारती दक्षिणाभिः॥३

बृहस्पते जुषस्व नो हव्यानि विश्वदेव्य । रास्व रत्नानि दाशुषे४
शुचिमर्कैबृहस्पतिमध्वरेषु नमस्यत । अनाम्योज आ चके ।५।६

हे इन्द्रावरुण ! सबको ढकने वाले अन्धकारके समान सबको वशी-भूत करने वाले तुम दोनों की भ्रमण-शील क्रियायें जानी जाती हैं । वे क्रियाएँ तुम्हारे साधकों के लाभ के लिए हैं, तथा किसी प्रकार भी नाश के योग्य नहीं हैं । हे इन्द्रावरुण ! तुम्हारा वह यश और तेज कहाँ है ? जिसके द्वारा तुम मित्रों के निमित्त अन्न और बल की वृद्धि करते हो ।१। हे इन्द्रावरुण ! धन की इच्छा करने वाले यह साधक तुम दोनों को अन्न प्राप्ति के निमित्त बुलाते हैं । हे मरुतो ! आकाश और पृथिवीसे सङ्गत हुए तुम मेरे स्तोत्रको सुनो ।२। हे इन्द्रावरुण ! हमको वह अलौकिक ऐश्वर्य प्राप्त हो । तुम्हारी रक्षक सेनाएँ अपने शत्रु-नाशक साधनों तथा शस्त्रों द्वारा हमारी रक्षा करें । सबका पालन करने वाली, प्रदान करनेके योग्यवाणी और उदार बचनों द्वारा हमारा पोषण करें ।३। हे बृहस्पते ! तुम सब सज्जनों का हित करने वाले हो। हमारे द्वारा दिये जाने वाली हवियों को स्वीकार करो । हविदाता यज-मान को श्रेष्ठ तथा रमणीय धन प्रदान करो ।४। हे ऋत्विजों ! तुम श्रेष्ठ स्तोत्रों द्वारा बृहस्पति को यज्ञादि शुभ कर्मों के अवसरों पर नम-स्कार द्वारा पूजो । मैं उनसे ही शत्रु द्वारा कभी न झुकाये जा सकने वाले पराक्रम की याचना करता हूँ ।५।

(६)

वृषभं चर्षणीनां विश्वरूपमदाभ्यम् । बृहस्पतिं वरेण्यम् ॥६
इयं ते पूषन्नाघृणे सुष्टुतिर्देव नव्यसी । अस्माभिस्तुभ्यं शस्यते।७
तां जुषस्व गिरं मम वाजयन्तीमवा धियम्। वधूयुरिव योषणाम्८
यो विश्वाभि विपश्यति भुवना सं च पश्यति ।
स नः पूषाविता भुवत् ॥९
तत् सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि । धियो यो नः प्रचोदयात्
।१०।१०

सर्व मनुष्यों में सर्व सुखों की वर्षा करने में समर्थ, सब सत्कार पाने के योग्य, किसीके द्वारा भी हिंसित न होने वाले, बलवान, सबपर

अनुग्रह करने वाले, श्रेष्ठ मार्ग पर प्रेरणा करने वाले बृहस्पति सभी पदार्थों के जानने वाले हैं। उनको नमस्कार करो ।६। हे पूषन् ! तुम सब प्रकारसे प्रकाशवान् तथा प्रत्येक सुख की वर्षा करने में समर्थ हो। तुम्हारा यह अत्यन्त नवीन स्तोत्र सदाही स्तुति करने के योग्य हो। इस श्रेष्ठ स्तुति को हम तुम्हारे प्रति सदैव उच्चारण करते रहें। ।७। पत्नी की कामना करने वाला पुरुष जैसे पुष्टि चाहने वाली रमणी को प्रेम पूर्वक स्वीकार करता है, वैसे ही हे पूषन् ! मेरी उस ज्ञानमय तथा सत्यात्य को जानने वाली वाणी और श्रेष्ठ धारावती मन्त्रमय बुद्धि को प्रेम-भावना पूर्वक स्वीकार करो ।८। जो पूषा सब लोकों को समान रूप से देखते हैं, तथा सब लोकों को विविध दृष्टिकोण से देखते हैं, वह हमारे पोषक तथा सब प्रकार से रक्षा करने वाले हों ।६। जो सविता देव हमारी बुद्धियों को सन्मार्ग में प्रेरित करते हैं, उन पूर्ण तेजस्वी, सर्व प्रकाशक, सर्वज्ञाता, सर्वदाता, सर्वस्रटा, परमेश्वर के उस अद्भुत, सर्वश्रेष्ठ पापों का नाश करने वाले, तेज को धारण करते हुए उसी का ध्यान करें ।१०। (१०)

देवस्य सवितुर्वयं वाजयन्तः पुरंध्या। भगस्य रातिमीमहे ॥११
देवंनरः सवितारं विप्रायज्ञैः सुवृक्तिभिः। नमस्यन्तिधियेषिताः१२
सोमो जिगाति गातुविद् देवानामेति निष्कृतम्।
ऋतस्य योनिमासदम् ॥१३
सोमो अस्मभ्यं द्विपदे चतुष्पदे च पशवे। अनमीवा इषस्करत्।१४
अस्माकमायुर्वर्धयन्नमिमातीः सहमानः। सोमः सधस्थमासदत्१५
आ नो मित्रावरुणा घृतैर्गव्यूतिमुक्षतम्। मध्वा रजांसि सुक्रतू१६
उरुशंसा नमोवृधा मह्ना दक्षस्य राजथः।
द्राघिष्ठाभिः शुचिव्रता ॥१७
गृणाना जमदग्निना योनावृतस्य सीदतम्। पातं सोममृतावृधा।
१८।११

हम सर्वप्रकाशक. तेजोमय,सब ऐश्वर्योंको देनेवाले सबके भजने योग्य कल्याण रूप, सुखकारी सवितादेवकी दान बुद्धिकी, अन्न बल और धन

की कामना करते हुए, धारणा-सामर्थ्य से युक्त स्तुति द्वारा याचना करते हैं । ११। मेधावी जन श्रेष्ठ कर्मों में प्रेरित करने वाली बुद्धि की प्रेरणा से दोषों का समूल नाश करने में समर्थ यज्ञादि उत्तम कर्मों के प्रकाशक, सर्व प्रेरक तथा रचयिता सवितादेव को नमस्कार पूजा करते हैं ।१२। सोम ज्ञानी जनों की प्रशंसा को प्राप्त करता हुआ अनेक साधन-सम्पन्न कर्मों के कारण उनके आश्रय को प्राप्त करता है। वह अत्यन्त पुष्ट और सत्य के आश्रय से यज्ञ स्थान को जाता हैं ।१३। वह सोम हम दो पाँव वाले मनुष्यों के निमित्त तथा चार पांव वाले पशुओं के निमित्त भी, रोग-रहित, स्वास्थ्य-प्रद अन्नों को उत्पन्न करने में समर्थ हो ।१४। वह सोम हमारी आयु-वृद्धि करता हुआ तथा देह के सभी रोगों को शत्रु के समान नष्ट करता हुआ हमारे यज्ञ स्थान में हमारे साथ आकर निवास करे ।१५। हे मित्रावरुण ! तुम दोनों हमारे बीच में श्रेष्ठ कर्मों को करते हुए, उत्तम आचरणों द्वारा, ज्ञान-युक्त मधुर वचनों से लोकों को सींचो अथवा पृथिवी को मधुर रस से सिक्त करो ।१६। में मित्रा-वरुण ! तुम दोनों अत्यन्त शुद्ध आचरण करने वालेहो । तुम प्रशस्त स्तुतियोंसे युक्त नमस्कार पूर्वक पूजन किये जातेहुए वृद्धिको प्राप्त होतेहो । तुम अपनी अत्यन्त पुरुषार्थ युक्त शक्ति तथा बल और ज्ञान के महान सामर्थ्य से सुशोभित होओ ।१७। हे मित्रावरुण ! तुम प्रज्वलित अग्नि के समान सत्य को प्रकाशित करने वाले ज्ञान के द्वारा उपदेश करते हुए परिपूर्ण हुए घर के समान विराजमान होओ । दोनों सत्य के बल से वृद्धि प्राप्त होते हुए नित्य श्रेष्ठ सेवन करने योग्य श्रेष्ठ सोम रस का पान करो ।१८। (११)

॥ तृतीय-मण्डलम् समाप्तम् ॥

सूक्त १ [पहला अनुवाक]

(ऋषि—वामदेवः । देवता—अग्निः अग्नीवरुणौ वा)
छन्द—त्रिष्टुप् इत्यादीनि)

त्वां ह्यग्ने सदमित् समन्यवो देवासो देवमरतिं न्येरिर इति
क्रत्वा न्येरिरे ।

अमर्त्यं यजत मर्त्येष्वा देवमादेवं जनत प्रचेतसं विश्वमादेवं
जनत प्रचेतसम् ॥१

स भ्रातरं वरुणमग्न आ ववृत्स्व देवाँ अच्छा सुमती यज्ञवनसं
ज्येष्ठं यज्ञवनसम्।

ऋतावानमादित्यं चर्षणीधृतं राजानं चर्षणीधृतम् ॥२
सखे सखायमभ्या ववृत्स्वाशुं न चक्रं रथ्येव रह्यास्मभ्यं
दस्म रंह्या।

अग्ने मृलीकं वरुणे सचा विदो मरुत्सु विश्वभानुषु।
तोकाय तुजे शुशुचान शं कृध्यस्मभ्यं दस्म शं कृधि ॥३
त्वं नो अग्ने वरुणस्य विद्वान् देवस्य हेलोऽव यासिसीष्ठाः।
यजिष्ठो वह्नितमः शोशुचानो विश्वा द्वेषांसि प्र मुमुग्ध्यस्मत्।४
स त्वं नो अग्नेऽवमो भवोती नेदिष्ठो अस्या उषसो व्युष्टौ।
अव यक्ष्व नो वरुणं रराणो वीहि मृलीकं सुहवो न एधि।५।१२

हे अग्ने! तुम प्रकाशवान् हो। वेग से चलते हो। शत्रु को विजय करने की इच्छा वाले स्पर्द्धा से युक्त देवता तुम्हें युद्ध के निमित्त प्राप्त करते हैं। यजमान तुम्हारी स्तुति करते हुए आकर्षित करते हैं। तुम अविनाशी प्रकाशवान् और अत्यन्त ज्ञानी हो, मनुष्यों को यज्ञ-कर्म के निमित्त प्राप्त करनेके लिए देवताओं ने तुम्हें प्रकट किया। तुम कर्मोंके ज्ञाता हो,सब यज्ञों में प्रत्यक्ष रहने के लिए देवताओं ने तुम्हारी उत्पत्ति की है।१। हे अग्ने! वरुण तुम्हारे भाई हैं। वे हवियों के पात्र, यज्ञ का उपभोग करने वाले, जल वाले, प्रशंसित, अदितिके पुत्र हैं। वे जल वृद्धि द्वारा मनुष्य को धारण करने वाले हैं। वे सुन्दर प्रज्ञा वाले एवं शोभनीय हैं। इन वरुण को स्तुति करने वालों के सामने लाओ।२। हे अग्ने! तुम मित्र-भाव से युक्त हो। जैसे गमनोपयुक्त रथ में जुते दो घोड़े जल्दी चलने वाले पहियों को लक्ष्य पर पहुँचाते हैं, वैसे ही तुम अपने मित्र वरुण को हमारे पास पहुँचाओ। हे अग्ने! तुम्हारे सहयोग से वरुण ने सुखदायक हवियाँ प्राप्त की हैं, तथा अत्यन्त तेजस्वी मरुतों के लिए भी सुख दायक हव्य-अर्जन किया है। हे अग्ने! तुम

हमारी सन्तान को सुख दो, और हमको कल्याण प्रदान करो ।३। हे अग्ने ! तुम सर्व कर्मों के दाता हो । प्रकाशवान वरुण को हमारे प्रति क्रोधित न होने दो । तुम यज्ञ करने वालों में श्रेष्ठ हवियों के वहन करने वाले और अत्यन्त प्रकाशवान् हो । तुम हर प्रकार के पापों से हमारी रक्षाकरो ।४। हे अग्ने ! रक्षण कर्मों द्वारा हमारे अत्यन्त समीप होओ । उषा की समाप्ति पर, प्रातः वेला में यज्ञादि कर्मों की सिद्धि के निमित्त हमारे अत्यन्त निकट आओ । हमारे निमित्त जल से होने वाले रोगों को पहिले ही नष्ट कर दो । तुम यजमानों को अभीष्ट फल देते हो । इस तुष्टि प्रद हवि का सेवन करो । हम तुम्हें भले प्रकार आहूत करते हैं । तुम हमारे निकट आओ ।५। (१२)

अस्य श्रेष्ठा सुभगस्य संदृग् देवस्य चित्रतमा मर्त्येषु ।
शुचि घृतं न सप्तमघ्न्याया: स्पार्हा देवस्य मंहनेव धेनो ॥६
त्रिरस्य ता परमा सन्ति सत्या स्पार्हा देवस्य जनिमान्यग्नेः ।
अनन्ते अन्तः परिवीत आगाच्छुचिः शुक्रो अर्यो रोरुचानः ॥७
स दूतो विश्वेदभि वष्टि सद्मा होता हिरण्यरथो रंसुजिह्वः ।
रोहिदश्वो वपुष्यो विभावा सदा रण्वः पितुमतीव संसत् ॥८
स चेतयन्मनुषो यज्ञबन्धुः प्र तं मह्या रशनया नयन्ति ।
स क्षेत्यस्य दुर्यासु साधन् देवो मर्तस्य सधनित्वमाप ॥९
स तू नो अग्निर्नयतु प्रजानन्नच्छा रत्नं देवभक्तं यदस्य ।
धिया यद् विश्वे अमृता अकृण्वन् द्यौष्पिता जनिता सत्यमुक्षन् ।
१०।१३

श्रेष्ठ ऐश्वर्यवान् अग्नि की मनुष्यों के मध्य अत्यन्त श्रेष्ठतथा अद्भुत अनुग्रह दृष्टि हो । जैसे दूध की इच्छा वाले मनुष्यों को गौ का पवित्र दूध थनों से निकल कर उष्ण ही प्राप्त होता है, जैसे गौ दान की अभिलाषा वाले को दान स्पृहणीय होता है, जैसे अग्नि का तेज भी गाय के समान पोषण-योग्य एवं स्पृहणीय होता है । ६ । अग्नि के तीन रूप अग्नि, वायु और सूर्य प्रसिद्ध एवं श्रेष्ठ हैं । अनन्त आकाश में अपने तेज से व्याप्त सबके शुद्ध करने वाले, प्रकाश से युक्त और अत्यन्त तेजस्वी अग्नि हमारे यज्ञको प्राप्त हों ।७। वे अग्नि दवताओंके

बुलाने वाले दूत, सुवर्ण रथ वाले, कमनीय ज्वालाओं वाले, यज्ञों के प्राप्त होनेकी कामना करते हैं। सुन्दर अश्व वाले, प्रदीप्त, अग्नि अन्न से सम्पन्न घर के समान सुखकर हैं।८। अग्नि यज्ञ में व्याप्त होते हैं। वे यज्ञ कर्मो की इच्छा वाले मनुष्य को जानते हैं। अध्वर्यु गण उन्हें उत्तरवेदी में नियम पूर्वक स्थापित करते हैं। यजमानों का अभीष्ट सिद्ध करते हुए उनके घरोंमें रहते हैं। वे प्रकाशवान् अग्नि धन-सम्पनों के साथ निवास करते हैं।९। जिस रमणीय ऐश्वर्य को स्तुति करने वाले भजते है। अग्निका वह श्रेष्ठ ऐश्वर्य हमारे सामने आवे। अविनाशी देवताओं से अग्नि को यज्ञ के निमित्त उत्पन्न किया है, आकाश उनके पालक पितृ-रूप हैं। अध्वर्यु लोग घृतादि की आहुतियो से उस सत्यभूत अग्नि को सींचते हैं।१०। (१३)

स जायत प्रथमः पस्त्यासु महो बुध्ने रजसो अस्य योनौ।
अपादशीर्षा गुहमानो अन्ता ऽऽयोयुवानो वृषभस्य नीले ॥११
प्र शर्ध आर्त प्रथमं विपन्यॉं ऋतस्य योना वृषभस्य नीले।
स्पार्हो युवा वपुष्यो विभावा सप्त प्रियासोऽजनयन्त वृष्णे ॥१२
अस्माकमत्र पितरो मनुष्या अभि प्र सेदुर्ऋतमाशुषाणाः।
अश्मव्रजाः सुदुघा वव्रे अन्तरुदुस्रा आजन्नुषसो हुवानाः ॥१३
ते मर्मृजत ददृवांसो अद्रिं तदेषामन्ये अभितो वि वोचन्।
पश्वयन्त्रासो अभि कारमर्चन् विदन्त ज्योतिश्चकृपन्त धीभिः१४
ते गव्यता मनसा दृध्रमुब्धं गा येमानं परि षन्तमद्रिम्।
दृलहं नरो वचसा दैव्येन व्रजं गोमन्तमुशिजो वि वव्रुः।१५।१४

अग्नि सबसे श्रेष्ठ हैं। वे घरों में रहने वाले मनुष्यों के मध्य घरों के प्रधान पुरुष के समान निवास करते हैं। वे महान जन-समूह के आश्रय स्थान रूप एवं बिना पांव वाले हैं। वे सब के शीर्ष-रूप होते हुए भी शिरोहित हैं। वे सब के भीतर रमे रहते है। तथा जल वर्षक मेघों में व्याप्त होते हुए धूमाकार लगते हैं।११। हे अग्ने! तुम जलों के उत्पत्ति स्थान में

मेघ के नीड़ रूप अन्तरिक्ष में स्तुतियोंसे युक्त हुए व्याप्त रहते हो सर्व श्रेष्ठ तेज तुम्हारे पास उपस्थित रहता है । जो अग्निदेव सबके चाहने योग्य, सतत युवा, कमनीय एवं प्रकाश से युक्त हैं, सप्त होता इन्हीं के लिये स्तुतियाँ उच्चारित करते हैं ।१२। इस लोक में हमारे पितर यज्ञ साधनके निमित्त अग्निके सम्मुख उपस्थित हुए उन्होंने उषाका आह्वान किया और अग्निकी उपासनासे प्राप्तहुई शक्तिके द्वारा पर्वतकी गुफाओं में छाये हुए घोर अन्धकार में से दुहने योग्य पयस्विनी गौओं को बाहर निकाला ।१३। उन्होंने पर्वत को तोड़ते समय अग्निकी पूजा की । अन्य ऋषियों ने भी उनके कर्मों का सर्वत्र बखान किया । उन्हें पशु-रक्षा के उपायोंका पूर्ण ज्ञानथा । उन्होंने अभीष्ट फल देने वाली अग्निकी स्तुति द्वारा देखने वाली इन्द्रियका लाभ प्राप्त किया, तथा अपनी उत्तम बुद्धि द्वारा यज्ञ-कर्म का साधन किया ।१४। पूर्वाजरण कर्मों के करने में अग्रगण्य थे । वे अग्नि की सदा कामना करते थे । उन्होंने गौके प्राप्तकरने की इच्छा से अत्यन्त दृढ़ गौओं से भरे हुए गौ शाला के समान पर्वतको अग्निकी स्तुतियों से प्राप्त शक्ति द्वारा खोला ।१५।   (१४)

ते मन्वत प्रथमं नाम धेनोस्त्रिः सप्त मातुः परमाणि विन्दन् ।
तज्जानतीरभ्यनूषत व्रा आविर्भुवदरुणीर्यशसा गोः ॥१६
नेशत् तमो दुधितं रोचत द्यौरुद् देव्या उषसो भानुरर्त ।
आ सूर्यो बृहतस्तिष्ठदज्राँ ऋजु मर्तेषु वृजिना च पश्यन् ॥१७
आदित् पश्चा बुबुधाना व्यख्यन्नादिद् रत्नं धारयन्त द्युभक्तम् ।
विश्वे विश्वासु दुर्यासु देवा मित्र धिये वरुण सत्यमस्तु ॥१८
अच्छा वोचेय शुशुचानमग्निं होतारं विश्वभरसं यजिष्ठम् ।
शुच्यूधो अतृणन्न गवामन्धो न पूतं परिषिक्तमंशोः ॥१९
विश्वेषामदितिर्यज्ञियानां विश्वेषामतिथिर्मानुषाणाम् ।
अग्निर्देवानामव आवृणानः सुमृलीको भवतु जातवेदाः ।२०।१५

हे अग्ने ! स्तुति करने वाले अङ्गिरा आदि ऋषियों ने ही वाणी

रूपिणी माता से उत्पन्न स्तुतियों के साधन का शब्दों का प्रथम बार ज्ञान प्राप्त किया फिर सत्ताईस छन्दों को जाना। इसके पश्चात् इनके जानने वाली उषा की स्तुति की और तब आदित्य के तेज युक्त अरुण वर्ण वाली उषा का आविर्भाव हुआ ।१६। रात्रि के द्वारा उत्पन्न अन्धकार उषा की प्रेरणा से नष्ट हुआ, फिर अन्तरिक्ष प्रकाशवान् हुआ। उषा की आभा प्रकट हुई । मनुष्यों के सत्यासत्य कर्मों को देखने में समर्थ आदित्य सुदृढ़ पर्वत पर चढ़ गये ।१७। सूर्य के उदित होने पर अङ्गिरा आदि ऋषियों ने पणियों के द्वारा चुराई गई गौओं को जाना तथा पीछे से उन्हें भले प्रकार देखा। इनके सब स्थानों को यज्ञ-कर्म में भाग प्राप्त करने के पात्र देवता प्राप्त हुए। हे मित्रता की भावना से ओत-प्रोत अग्निदेव तुम वरुण के क्रोध को शान्त करने वाले हो। तुम्हारी पूजा करने वाले को सुन्दर फल प्राप्त हों ।१८। हे अग्ने ! तुम देवनाओं का आह्वान करने वाले, अत्यन्त प्रदीप्ति वाले, संसार का पालन करने वाले, सब की अपेक्षा अधिक यज्ञ कर्म करने वाले हो। तुम्हारा स्तवन करते हैं। तुम्हारे निमित्त आहुति देने वाले यजमान न तो दूध दुहते हैं, और न सोम का संस्कार करते हैं। वे केवल तुम्हारी पूजा करते हैं। अग्निदेव, यज्ञ के लिए अतिथि के समान पूजनीय है। स्तोताओं का हव्य भक्षण करने वाले अग्निदेव स्तुति करने वाली को सुखी करें ।१९-२०। (१५)

सूक्त २

(ऋषि—वामदेवः । देवता—अग्निः । छन्द—त्रिष्टुप्)

यो मर्त्येष्वमृत ऋतावा देवो देवेष्वरतिर्निधायि ।
होता यजिष्ठो मह्ना शुचध्यै हव्यैरग्निर्मनुष ईरयध्यै ॥१
इह त्वं सूनो सहसो नो अद्य जातो जातॉ उभयॉ अन्तरग्ने ।
दूत ईयसे युयुजानऋष्व ऋजुमुष्कान् वृषणः शुक्रांश्च ॥२
अत्या वृधस्नू रोहिता घृतस्नू ऋतस्य मन्ये मनसा जविष्ठा ।
अन्तरीयसे अरुषा युजानो युष्मांश्च देवान् विश आ च मर्तान् ॥३
अर्यमणं वरुणं मित्रमेषामिन्द्राविष्णू मरुतो अश्विनोत ।

स्वश्वो अग्ने सुरथः सुराधा एदु वह सुहविषे जनाय ॥४
गोमाँ अग्नेऽविमाँ अश्वी यज्ञो नृवत्सखा सदमिदप्रमृष्यः ।
इलावाँ एषो असुर प्रजावान् दीर्घो रयिः पृथुबुध्नः सभावान् ।
।५।१६

अविनाशी अग्नि सप्य स्वरूप से मनुष्य के मध्य रहते हैं। जो प्रकाशवान अग्निदेव इन्द्रादि देवताओंके साथ मिलकर शत्रुओंको हराने वाले हैं, वे अग्नि देवताओं को बुलाने में समर्थ है, तथा सबसे अधिक यज्ञानुष्ठान करते हैं। वे उत्तर वेदी पर अपनी महिमा द्वारा ही प्रदीप्त होने के लिए विराजते हैं तथा हवि वहन करते हुए यजमानों को मोक्ष करानेके लिए प्रकट हुए हैं।१। हे बलोत्पन्न अग्निदेव ! तुम आज हमारे कार्यमें सहायक सिद्ध हुए हो तुम दर्शनीय हो अपने पुष्ट तेजस्वी, बली घोड़ों को रथमें जोड़कर देवताओं और मनुष्योंके बीच हवि-वाहक बनकर दूतरूप से प्राप्त होते हो।२। हे अग्नि ! तुम सत्य के रूप हो। मैं तुम्हारे दोनों लाल रङ्ग वाले घोड़ों की स्तुति करता हूँ। तुम्हारे वे घोड़े मन से भी अधिक वेग वाले हैं। वे अन्न और जल की वर्षा करते हैं। तुम उन तेजस्वी घोड़ों को अपने रथ में जोड़कर देवताओं और मनुष्यों के बीच में पधारो।३। हे अग्ने ! तुम्हारे घोड़े, रथ एवं ऐश्वर्य सभी श्रेष्ठ हैं। अर्यमा. वरुण, मित्र, इन्द्र, विष्णु मरुद्गण तथा दोनों अश्विनी-कुमारों को हवियुक्त यजमानों के निमित्त इन मनुष्यों के मध्य बुलाओ।४। हे शक्तिशाली अग्निदेव ! हमारा यज्ञ, गौ, बैल और अश्व लाभ करने वाला हो। जो अध्वर्युओं और यजमानों द्वारा किया जाता है, वह यज्ञ हव्य से सम्पन्न तथा सन्तानों से युक्त हो, और अनुष्ठान धन तथा ऐश्वर्यों का कारणभूत और उपदेश से पूर्ण हो।५। (१६)

यस्त इध्मं जभरत् सिष्विदानो मूर्धानं वा ततपते त्वाया ।
भुवस्तस्य स्वतवाँः पायुरग्ने विश्वस्मात् सीमघायत उरुष्य ॥६
यस्ते भरादन्नियते चिदन्नं निशिषन्मन्द्रमतिथिमुदीरत् ।

आ देवयुरिनधते दुरोणे तस्मिन् रयिध्रुवो अस्तु दास्वान् ॥७
यस्त्वा दोषा य उषसि प्रशंसात् प्रियं वा त्वा कृणवते हविष्मान्।
अश्वो म स्वे दम आ हेम्यावान् तमंहसः पीपरो दाश्वांसम् ॥८
यस्तुभ्यमग्ने अमृताय दाशद् दुयस्त्वे कृणवते यतस्रुक ।
न स राया शशमानो वि योषन्नैनमंहः परि वरदघायोः ॥९
यस्य त्वमग्ने अध्वरं जुजोषो देवो मर्तस्य सुधितं रराणः ।
प्रीतेदसद्धोत्रा सा यविष्ठाऽसाम यस्य विधतो वृधासः ।१०।१७

हे अग्ने ! तुम्हारे निमित्त लकड़ियों को ढोने वाला जो मनुष्य पसीने से युक्त होता है, जो तुम्हारी काममा से अपने मस्तक को काष्ठ के बोझ से भारी करता है, तुम उसकां पालन करते हुए उसे धनसे युक्त करते हो । तुम उसके अहित चिंतकों से भी उसकी रक्षा करते हो ।६। हे अग्ने ! अन्न की कामना से जो तुम्हें देने के निमित्त हव्य सञ्चित करता है, जो तुमको सोम-रस देता है, जो तुम्हें उत्तर वेदी पर अतिथि रूप से प्रतिष्ठित करता है तथा जो व्यक्ति देवत्व की कामना से अपने घर में तुम्हें स्थापित करता है, उसका पुत्र धर्ममार्गी, दृढ़ तथा उदार हो ।७। हे अग्ने ! जो मनुष्य रात्रि के समय तथा जो व्यक्ति उषा वेला में तुम्हारा स्तवन करता है, तुम उस यजमान की, सुवर्ण से बनी झूल वाले अश्वके समान चलते हुए आकर रक्षा करो ।८। हे अग्ने ! तुम्हारा कभी नाश नहीं होता । जो यजमान तुमको हवि देता है, जो यजमान तुम्हारे निमित्त स्रुक को ठीक करता है तथा जो यजमान तुम्हारी पूजा-सेवा करता है, वह स्तुति करने वाला यजमान कभी भी निर्धन न हो । हिंसकों की हिंसा उसे कभी भी स्पर्श न करे ।९। हे सद्य युवा अग्ने ! तुम सदा प्रसन्न रहते हो तथा प्रकाशवान् हो । जिस यजमान का भले प्रकार सम्पादित और हिंसा-शून्य भावना से दिया हुआ अन्न सेवन करते हो, वह होता निश्चय ही प्रेम करने वाला है । अग्नि की सेवा करने वाले जो यजमान यज्ञ को बढ़ाते हैं, हम उन्हीं का अनुसरण करेंगे ।१०।

चित्तिमचित्तिं चिनवद् वि विद्वान् पृष्ठेव वीता वृजिना च मर्तान् ।
राये च नः स्वपत्याय देव दितिं च रास्वादितिमुरुष्य ॥११
कविं शशासुः कवयोऽदब्धा निधारयन्तो दुर्यास्वायोः ।
अतस्त्वं दृश्याँ अग्न एतान् पड् भिः पश्येरद्भुताँ अर्य एवैः ॥१२
त्वमग्ने वाघते सुप्रणीतिः सुतसोमाय विधते यविष्ठ ।
रत्नं भर शशमानाय घृष्वे पृथु श्चन्द्रमवसे चर्षणिप्राः ॥१३
अधा ह यद् वयमग्ने त्वाया पड्भिर्हस्तेभिश्चकृमा तनूभिः ।
रथं न क्रन्तो अपसा भुरिजोर्ऋतं येमुः सुध्य आशुषाणाः ॥१४
अधा मातुरुषसः सप्त विप्रा जायेमहि प्रथमा वेधसो नॄन् ।
दिवस्पुत्रा अङ्गिरसो भवेमाऽद्रिं रुजेम धनिनं शुचन्तः ।१५।१८

जैसे अश्व को पालने वाला उसकी पीठके कसे हुए साज को अलग कर देता है, वैसे ही अग्नि पाप-पुण्य को पृथक् करे। हे अग्ने ! हमको पुत्र से युक्त धन प्रदान करो। तुम दान देने वाले को धन प्रदान करो और उसकी निकट से पालन करो।११। हे अग्ने ! मनुष्यों के घर में निवास करने वाले तथा कभी भी निरादृत न होने वाले देवताओं ने तुम, अत्यन्त ज्ञानी को होता नियुक्त किया है। हे अग्ने ! तुम यज्ञ का पालन करने वाले एवं मेधावान् हो। तुम अपने चञ्चल तेज के द्वारा देवताओं को दर्शनीय बनाओ।१२। हे सद्य युवा अग्ने ! तुम अत्यन्त तेज वाले हो। तुम मनुष्यों की इच्छाओं को पूर्ण करते हो। तुम उत्तर वेदी पर प्रतिष्ठित किये जाने के पात्र हो। जो यजमान तुम्हारे निमित्त सोम का अभिषव करता है, तुम्हारी सेवा करता हुआ स्तोत्र उच्चारण करता है, उसी की रक्षाके निमित्त उसे प्रसन्नता, श्रेष्ठ धन प्रदान करो।१३। हे अग्ने ! जिस कारण हम तुम्हारी अभिलाषा करते हुए हाथ-पाँव तथा देह को कार्यरत करते हैं उसी कारण उस में कार्य वाले, यज्ञ कार्यमें लगे हुए अङ्गिरादि ऋषियों ने अपने हाथों से अरणि मंथन द्वारा शिल्पी के पथ निर्माण करने के समान तुमने सत्य के कारण रूप को प्रकट किया।१४। हम सात विप्र आरम्भिक मेधावी हैं। हमने सात।

रूप उषा के प्रारम्भकाल में अग्नि में उत्पन्न किया है। हम प्रकाशवान आदित्य के पुत्र अङ्गिरा हैं। हम तेजस्वी होकर जल से पूर्ण मेघ को विदीर्ण करेंगे ।१५।

(१८)

अधा यथा नः पितरः परासः प्रत्नासो अग्न ऋतमाशुषाणाः ।
शुचीदयन् दीधितिमुक्थशासः क्षामा भिन्दन्तो अरुणीरप व्रन्१६
सुकर्माणः सुरुचो देवयन्तो ऽयो न देवा जनिमा धमन्तः ।
शुचन्तो अग्निं ववृधन्त इन्द्रमूर्वं गव्यं परिषदन्तो अग्मन् ॥१७
आ यूथेव क्षुमति पश्वो अख्यद् देवानां यज्जनिमान्त्युग्र ।
मर्तानां चिदुर्वशीरकृप्रन् वृधे चिदर्य उपरस्यायोः ॥१८
अकर्म ते स्वपसो अभूम ऋतमवस्रन्नुषसो विभातीः ।
अनूजमग्निं पुरुधा सुश्चन्द्रं देवस्य मर्मृजतश्चारु चक्षुः ॥१९
एता ते अग्न उचथानि वेधो ऽवोचाम कवये ता जुषस्व ।
उच्छोचस्व कृणुहि वस्यसो नो महो रायः पुरुवार प्र यन्धि२०।१९

हे अग्ने ! हमारे पितरों ने श्रेष्ठ, परम्परागत और सत्य के कारण रूप यज्ञ कर्मों को करके उत्तम पद तथा तेज को प्राप्त किया। उन्होंने उक्थों के द्वारा अन्धकार का नाश किया और पणियों द्वारा अपहृत गौओं को ढूँढ निकला ।१६। धौंकनी के द्वारा स्वच्छ हुए लोहे के समान, यज्ञादि श्रेष्ठ कार्यों में लगे, देवताओं की कामना वाले स्तोता अपने मनुष्य जन्म को यज्ञादि कार्यों के द्वारा स्वच्छ करते हैं। वे अग्नि को प्रदीप्त करते हुए इन्द्र को बढ़ाते हैं। उन्होंने चारों ओर उपासना करते हुए वृहद् गो-समूह को हारा था ।१७। हे अग्निदेव ! तुम तेजवान हो। अन्न से युक्त घर में पशुओं के रहने के समान देवताओं की गौओं का सामीप्य अङ्गिरादि को प्राप्त है। उनके द्वारा लाई गई गौओं ने प्रजाओं को पुष्ट कियां। वर्द्धन-सामर्थ्य से युक्त मनुष्य सन्तानवान तथा पोषण-सामर्थ्य से युक्त हो गये ।१८। हे अग्ने ! हम तुम्हारी पूजा करते हैं, उसी से हम श्रेष्ठ कर्म वाले बनते हैं। अन्धकार का नाश करने वाली उषा सम्पूर्ण तेजों से युक्त हुई प्रसन्नता देने

वाले अग्नि को धारण करने वाली है । तुम प्रकाश से युक्त हो । हम तुम्हारे रमणीय तेज की उपासना करते हैं ।१६। हे अग्निदेव ! तुम विद्वान् हो । हम तुम्हारे निमित स्तोत्रों का उच्चारण करते हैं, तुम इनको ग्रहण करो । तुम प्रदीप्त होकर हमको बढ़ाओ । तुम बहुतों द्वारा वरणीय हो । हमको उत्तम धन प्रदान करो । श्रेष्ठ घर वालों में उत्तम निवास हमको दो ।२०।   (१६)

सूक्त ३

(ऋषि—वामदेवः । देवता—अग्निः, रुद्रः । छन्द—त्रिष्टुप्)

आ वो राजानमध्वरस्य रुद्रं होतारं सत्ययजं रोदस्योः ।
अग्निं पुरा तनयित्नोरचिताद्धिरण्यरूपमवसे कृणुध्वम् ॥१
अयं योनिश्चकृमा यं वयं ते जायेव पत्य उशती सुवासाः ।
अर्वाचीनः परिवीतो नि षीदेमा उ ते स्वपाक प्रतीचीः ॥२
आशृण्वते अदृपिताय मन्म नृचक्षसे सुमृलीकाय वेधः ।
देवाय शस्तिममृताय शंस ग्रावेव सोता मधुषुद् यमीले ॥३
त्वं चिन्नः शम्या अग्ने अस्या ऋतस्य बोध्यृतचित् स्वाधीः ।
कदा त उक्था सधमाद्यानि कदा भवन्ति सख्या गृहे ते ॥४
कथा ह तद् वरुणाय त्वमग्ने कथा दिवे गर्हसे कन्न आगः ।
कथा मित्राय मीलहुषे पृथिव्यै ब्रवः कदर्यम्णे कद् भगाय ।५।२०

हे पुरुषों ! देवताओं का आह्वान करने वाले, यज्ञ के स्वामी, आकाश-पृथिवी को अन्न से पूर्ण करने वाले, सुवर्ण के समान आभा वाले तथा शत्रुओं को रुलानेमें समर्थ रौद्रकर्म वाले अग्निदेव की, मृत्यु, के पूर्व ही रक्षा प्राप्त करने के निमित्त पूजा करो ।१। हे अग्ने ! पति की कामना वाली एवं सुन्दर वस्त्रों से सुशोभित जननी किस प्रकार पति के लिए स्थान देती है वैसे ही हम भी उत्तर वेदी रूप स्थान तुम्हारे लिए देते हैं । तुम्हारा यही स्थान है । हे अग्निदेव ! तुम श्रेष्ठ कर्मों को करने वाले हो । तुम अपने तेज से सुशोभित हुए हमारे सामने पधारो । यह स्तुति तुम्हारी उपासना में पहुँचे ।२। हे स्तोता ! तुम

स्तोत्रों को सुनने वाले, निरालस्य, सुखदाता, द्रष्टा एवं अविनाशी अग्नि की कामना से स्तुतियों का उच्चारण करो। पाषाण जैसे सोम का अभिषव करने में समर्थ है, उसी प्रकार यजमान अग्नि के निमित्त स्तुति करनेमें रत रहते हैं।३। हे अग्ने ! हमारे इस यज्ञानुष्ठान में तुम देवता बनो ! तुम सत्य के जानने वाले और श्रेष्ठ कर्मों के करने वाले हो। तुम हमारे स्तोत्रको जानो। आह्लाद उत्पन्न करने वाले तुम्हारे स्तोत्र कब कहे जायेंगे ? कब तुम हमारे घरमें मैत्री भाव से व्याप्त होगे।४। हे अग्ने ! हमारे पापों की बात वरुण के सामने क्यों करते हो ? हमारी निन्दा सूर्य से क्यों करते हो ? हमारा तुम्हारे प्रति कौन सा अपराध हुआ है ? अभीष्ट फल देने वाले मित्र, पृथिवी अर्यमा और भग से तुमने क्या बात कही ?।५।   (२०)

कद् धिष्ण्यासु वृधसानो अग्ने कद् वाताय प्रतवसे शुभंये।
परिज्मने नासत्याय क्षे ब्रवः कदग्ने रुद्राय नृघ्ने ॥६
कथा महे पुष्टिंभराय पूष्णे कद्रुद्राय सुमखाय हविर्दे।
कद् विष्णव उरुगायाय रेतो ब्रवः कदग्ने शरवे बृहत्यै ॥७
कथा शर्धाय मरुतामृताय कथा सूरे बृहते पृच्छ्यमानः।
प्रति ब्रवोऽदितये तुराय साधा दिवो जातवेदश्चिकित्वान् ॥८
ऋतेन ऋतं नियतमील आ गोरामा सचा मधुमत् पक्वमग्ने।
कृष्णा सती रुशता धासिनैषा जामर्येण पयसा पीपाय ॥९
ऋतेन हि ष्मा वृषभश्चिदक्तः पुमाँ अग्निः पयसा पृष्ठ्येन।
अस्पन्दमानो अचरद् वयोधा वृषा शुक्रं दुदुहे पृश्निरूधः ।१०।२१

हे अग्ने ! तुम जब यज्ञ में बढ़ते हो तब उस बात को क्यों कहते हो ? महान् बली, शुभकारी, सर्वत्र गतिमान, सत्यमें अग्रणी वायु से भी वह बात क्यों कहते हो ? पृथिवी तथा पापियों का संहार करने वाले रुद्र से वह क्यों कहते हो ?।६। हे अग्निदेव ! उन श्रेष्ठ एवं पालक पूषा से, यज्ञ के पात्र एवं हवियुक्त रुद्र से, बहुत-सी स्तुतियों के पात्र विष्णु से तथा महान संवत्सर के समक्ष वह बात क्यों कहते हो ? ।७।

हे अग्ने ! सत्य के कारण रूप मरुदगण से वह बात क्यों कहते हो ? पूछे जाने पर भी सूर्य से, अदिति से तथा द्रुतगामी वायु से क्यों कहते हो ? हे सबको जानने वाले मेधावी ! तुम महान कर्मों को सिद्ध करो ।८। हे अग्ने ! हम सत्य के कारणभूत यज्ञ से सम्बन्धित दुग्ध को गौओं से नित्य माँगते हैं । वह गौएँ कच्ची अवस्था में पक्व एवं मधुर दध को धारण करती हैं । उनमें काली गौएं भी पुष्टिप्रद, प्राणदाता श्वेत दूध देकर मनुष्योंको पुष्ट करती हैं ।९। इच्छित फलकी वर्षा करने वाले श्रेष्ठ अग्निदेव पोषक दूध द्वारा सींचे जाते हैं । अन्नदाता अग्नि देव अपने सम्पूर्ण तेज को एकत्र करते हुए गमन करते हैं । जल की वर्षा करने वाले आदित्य अन्तरिक्ष का दोहन करते हैं ।१०। (२१)

ऋतेनाद्रिं व्यसन् भिदन्तः समङ्गिरसो नवन्त गोभिः ।
शुनं नरः परि षदन्नुषासमाविः स्वरभवज्जाते अग्नौ ।।११
ऋतेन देवीरमृता अमृक्ता अर्णोभिरापो मधुमद्भिरग्ने ।
वाजी न सर्गेषु प्रस्तुभानः प्र सदमित् स्रवितवे दधन्युः ।।१२
मा कस्य यक्षं सदमिद्धुरो गा मा वेशस्य प्रमिनतो मापेः ।
मा भ्रातुरग्ने अनृजोर्ऋणं वेर्मा सख्युर्दक्षं रिपोर्भुजेम ।।१३
रक्षा णो अग्ने तव रक्षणेभी रारक्षाणः सुमख प्रीणानः ।
प्रति ष्फुर वि रुज वीड्वंहो जहि रक्षो महि चिद् वावृधानम् १४
एभिर्भव सुमना अग्ने अर्कैरिमान् त्स्पृश मन्मभिः शूर वाजान् ।
उत ब्रह्माण्यङ्गिरो जुषस्व सं ते शस्तिर्देववाता जरेत ।।१५
एता विश्वा विदुषे तुभ्यं वेधो नीथान्यग्ने निण्या वचांसि ।
निवचना कवये काव्यान्यशंसिषं मतिभिर्विप्र उक्थैः ।१६।२२

गौओं को रोकने वाले पर्वत को 'मेधातिथि' आदि ने चीर डाला और तब गौओं को पाया । कर्मों में अग्रसर अङ्गिराओं ने उषा को सुख से प्राप्त किया । फिर अरणि-मन्थन से अग्नि के प्रकट होने पर सूर्य उदित हुए । ।११। हे अग्ने ! अविनाशी, मधुर जल वाली नदियाँ यज्ञ द्वारा प्रेरणा प्राप्त कर, चलने के लिए उमंगित अश्व के समान निर्विघ्न रूप से सदा बहती हैं ।१२। हे अग्ने ! जो कोई हमारी हिंसा

करे, उस यज्ञ में तुम कभी न पहुँचना, किसी दुष्ट पड़ोसी के यज्ञ में कभी मत जाना। हमारे सिवाय किसी अन्य को मित्र न बनाना। तुम कुटिल बुद्धि वाले बन्धु की हवियों की इच्छा मत करना। हम भी शत्रु के दिये अन्न का सेवन नहीं करते। केवल तुम्हारे दिये धन को ही भोगेंगे।१३। हे अग्ने ! तुम उत्तम यज्ञ वाले हो। तुम हमारी रक्षा करते हो। तुम हवि द्वारा प्रसन्न होकर अपना आश्रय प्रदान करते हुए हमारी रक्षा करो। तुम हमको बढ़ाओ। हमारे घोर पाप का नाश करते हुए इस बढ़े हुए अज्ञान को नष्ट कर डालो।१४। हे अग्ने ! हमारे उपासना योग्य स्तोत्रों द्वारा तुम हम पर स्नेह करो। हमारी स्तुतियों से युक्त हवियों को स्वीकार करो। तुम हवि रूप अन्न को ग्रहण करने वाले हो हमारे स्तोत्रों को ग्रहण करो। देवताओं के निमित्त की जाने वाली स्तुतियाँ तुम्हें बढ़ावे।१५। हे अग्ने ! तुम विधायक हो। तुम कर्मों के ज्ञाता तथा मनुष्योंके स्रष्टा हो। हम बुद्धिमान मनुष्य तुम्हारी कामना से फलदायक, अत्यन्त गूढ़ उच्चारण के योग्य हमारे द्वारा रचित इस सम्पूर्ण स्तोत्र का भले प्रकार से उच्चारण करते हैं।१६। (२२)

सूक्त ४

(ऋषि—वामदेवः। देवता—रक्षोहाऽग्निः। छन्द—त्रिष्टुप्)

कृणुष्व पाजः प्रसितिं न पृथ्वीं याहि राजेवामवाँ इभेन।
तृष्वीमनु प्रसितिं द्रूणानो ऽस्तासि विध्य रक्षसस्तपिष्ठैः ॥१
तव भ्रमास आशुया पतन्त्यनु स्पृश धृषता शोशुचानः।
तपूंष्यग्ने पतङ्गानसंदितो वि सृज विष्वगुल्काः ॥२
प्रति स्पशो सृज तूर्णितमो भवा पायुर्विशो अस्या अदब्धः।
यो नो दूरे अघशंसो यो अन्त्यग्ने माकिष्टे व्यथिरा दधर्षीत् ॥३
उदग्ने तिष्ठ प्रत्या तनुष्व न्यमित्राँ ओषतात् तिग्महेते।
यो नो अरातिं समिधान चक्रे नीचा तं धक्ष्यतसं न शुष्कम् ॥४
ऊर्ध्वो भव प्रति विध्याध्यस्मदाविष्कृणुष्व दैव्यान्यग्ने।
अव स्थिरा तनुहि यातुजूनां जामिमजामिं प्र मृणीहि शत्रून् ५।२३

हे अग्ने ! तुम अपनी तेज-राशि को व्याध द्वारा अपने जाल को बढ़ाने के समान विस्तृत करो । मन्त्री को साथ लेकर राजा के गमन करने के समान तुम अपने भय रहित तेज के साथ गमन करो । तुम अपनी द्रुत वेग वाली सेना के साथ शत्रु की सेना का संहार करो । शत्रुओं को नष्ट कर डालो । तुम अपने तीक्ष्ण तेजसे असुरों को विदीर्ण कर डालो ।१। हे अग्ने ! तुम्हारी गतिमती, द्रुतगामिनी किरणें सब जगह जाती हैं । तुम अत्यन्त तेजस्वी हो । शत्रुओं को हराने में समर्थ तेज द्वारा शत्रुओं को जला डालो । शत्रु तुमको बाधित नहीं कर सकते तुम आकाश से गिरने वाले तारों के समान वेग से जाने वाले अपने तेज को प्रेरित करो ।२। हे अग्ने ! तुम अत्यन्त वेग वाले हो । शत्रुओं को रोकने वाली अपनी शक्ति को शत्रुओं के प्रति चलाओ । तुम्हें कोई हिंसित नहीं कर करता । दूर या पास से हमारा अनिष्ट-चिंतन करने वाले से हमारी सन्तानों की रक्षा करो । हमको कोई भी शत्रु वशीभूत न कर पावे, इसका ध्यान रखो, क्योंकि हम साधक तुम्हारे ही हैं ।३। हे तीक्ष्ण ज्वाला वाले अग्नि ! दुष्टों का संहार करने को तैयार होओ । शत्रुओं पर अपनी ज्वालाओं का आवरण डाल दो और उन्हें भस्म कर डालो । हे अग्ने ! हमारे साथ शत्रुता का व्यवहार करने वाले दुष्ट को सूखे काठ के समान जला डालो ।४। तुम दुष्टों का संहार करने को तैयार होओ । हमसे अधिक बलवान शत्रुओं को एक-एक मारो । अपने दिव्य तेज को प्रत्यक्ष करो । जीवों को सन्तापित करने वाले दुष्टों को विजय रहित करो । पहले पराजित हुए अथवा अपराजित शत्रुओं का नाश कर डालो ।५। (२३)

स ते जानाति सुमतिं यविष्ठ य ईवते ब्रह्मणे गातुमैरत् ।
विश्वान्यस्मै सुदिनानि रायो द्युम्नान्यर्यो वि दुरो अभि द्यौत् ।६
सेदग्ने अस्तु सुभगः सुदानुर्यस्त्वा नित्येन हविषा य उक्थैः ।
पिप्रीषति स्व आयुषि दुरोणे विश्वेदस्मै सुदिना सासदिष्टिः ।।७
अर्चामि ते सुमतिं घोष्यर्वाक् सं ते वावाता जरतामियं गीः ।

स्वश्वास्त्वा सुरथा मर्जयेमाऽस्मे क्षत्राणि धारयेरनु द्यून् ॥८
इह त्वा भूर्या चरेदुप त्मन् दोषावस्तर्दीदिवांसमनु द्यून् ।
क्रीडन्तस्त्वा सुमनसः सपेमाऽभि द्युम्ना तस्थिवांसो जनानाम्।९
यस्त्वा स्वश्वः सुहिरण्यो अग्न उपयाति वसुमता रथेन ।
तस्य त्राता भवसि तस्य सखा यस्त आतिथ्यमानुषग् जुजोषत्
।१०।२४

हे अत्यन्त युवा अग्ने ! तुम गतिमान एवं मुख्यहो । तुम्हारे प्रति स्तुति करने वाला मनुष्य तुम्हारी कृपा प्राप्त करताहै । हे यज्ञस्वामिन्! तुम उसके निमित्त समस्त सौभाग्यशाली दिनों को, अन्न एवं रत्नादि धनोंको ग्रहण करो, तुम उसके सामने प्रकाशमान होओ ।६। हे अग्नि! जो व्यक्ति नित्य हवि-दान एवं मन्त्ररूप स्तुतियाँ प्रेरित करनेके उद्देश्य से तुम्हारी प्रीतिकी इच्छा करता है,वह व्यक्ति सौभाग्यशाली एवं दान-शील हो । वह कठिनता से प्राप्त होने वाली अपनी सौवर्ष की आयुको भोगे उस यजमान के लिए सभी दिन सौभाग्य की वर्षा करने वालेहो। वह यज्ञ का पालन करने के साधनों से सम्पन्न हो ।७। हे अग्निदेव ! हम तुम्हारी कृपापूर्ण बुद्धिका स्तवन करते हैं । तुम्हारे निमित्त उच्चारण किएहुए वाक्य प्रतिध्वनित होते हुए तुम्हारा स्तवन करें, हम अपने पुत्र पौत्रादि एवं श्रेष्ठ रथ और अश्वोंसे युक्त तुम्हारी सेवा करने वाले हों । तुम हमारे निमित्त नित्यप्रति शोभन अन्न धारण करो ।८। हेअग्ने तुम दिन रात प्रदीप्त होते हो । इस लोक के मनुष्य तुम्हारा सामीप्य प्राप्तकर नित्यप्रति तुम्हारी सेवा करते हैं । शत्रुओं के धनको अपनाते हुए हम भी अपने घर में सन्तानों के सहित मोद करते हुए प्रसन्न हृदय से तुम्हारी विविध भाँति सेवा करते हैं ।९। हे अग्ने ! जो मनुष्य यज्ञ के योग्य सुन्दर घोड़ों से युक्त धन आदि सम्पन्न रथ के सहित तुम्हारे निकट जाता है, तुम उस ममुष्य की रक्षा करते हो । जो मनुष्य तुम्हें अतिथि मानकर तुम्हारा पूजन करता है, तुम उसके मित्र-भाव रखने वाले होओ ।१०। (२४)

महो रुजामि वन्धुता वचोभिस्तन्मा पितुर्गोतमादन्वियाय ।
त्वं नो अस्य वचसश्चिकिद्धि होतर्यविष्ठ सुक्रतो दमूनाः ॥११
अस्वप्रजस्तरणयः सुशेवा अतन्द्रासोऽवृका अश्रमिष्ठाः ।
ते पायवः सध्र्यञ्चो निषद्याऽग्ने तव नः पान्त्वमूर ॥१२
ये पायवो मामतेयं ते अग्ने पश्यन्तो अन्धं दुरितादरक्षन् ।
ररक्ष तान् त्सुकृतो विश्ववेदा दिप्सन्त इद् रिपवो नाह देभुः १३
त्वया वयं सधन्यस्त्वोतास्तव प्रणीत्यश्याम वाजान् ।
उभा शंसा सूदय सत्यताते ऽनुष्ठुया कृणुह्यह्रयाण ॥१४
अया ते अग्ने समिधा विधेम प्रति स्तोमं शस्यमानं गृभाय ।
दहाशसो रक्षसः पाह्यस्मान् द्रुहो निदो मित्रमहो अवद्यात्१५।२५

हे अग्ने ! तुम अत्यन्त युवा, बुद्धिमान एवं होता रूप हो । स्तोत्र द्वारा तुम से जो हमारा भ्रातृ भाव उत्पन्न हुआ है, उसके द्वारा हम आसुरी वृत्ति वाले शत्रुओं को विदीर्ण करें । यह स्तोतारूप वाणी गौतमों द्वारा हमको प्राप्त हुई है । तुम शत्रुओं का संहार करने वाले हो । हमारे स्तुति रूप वचनों पर पूरी तरह ध्यान देने की कृपा करो ।११। हे अग्ने ! तुम सर्वज्ञाता हो तुम्हारी रश्मियाँ सदैव चेतन रहती हैं। वे सदा गमनशील प्रमाद रहित अहिंसित अश्रान्त एवं सुसज्जित रहती हुईं रक्षा कार्यमें समर्थ हैं । वे रश्मियाँ इस यज्ञ स्थानपर रमण करती हुई हमारी रक्षा करें ।१२। हे अग्ने ! तुम्हारी इन रक्षणमय रश्मियों ने ममता के नेत्रहीन पुत्र दीर्घमान पर अनुग्रह कर उसकी शापसे रक्षा की । हे अग्निदेव ! तुम अत्यन्त मेधावी हो । अपनी उन रश्मियों का स्नेह पूर्वक पालन करते हो । तुम्हारे शत्रु तुम्हारा नाश करने की इच्छा करते हुए भी अपने प्रयत्न में विफल होते हैं ।१३। हे अग्ने ! तुम निःसङ्कोच गमन करते हो हम स्तुति करने वाले तुम्हारी कृपासे धनवान होकर तुम्हारा आश्रय प्राप्त करें । तुम्हारी प्रेरणा से हमको अन्न-लाभ हो । हे अग्ने ! तुम सत्य का विस्तार करने वाले हो । तुम पाप का नाश करने में समर्थ हो । निकट या दूर के शत्रुओं का तुम

नाश करो और सभी कार्यों का साधन करो ।१४। हे अग्ने ! प्रस्तुत स्तुति द्वारा हम तुम्हारी सेवा करें। हमारे स्तोत्रको ग्रहण करो। जो दुष्ट स्तुति नहीं करते, उन्हें भस्म कर डालो। हे अग्ने ! तुम मित्रों द्वारा पूजनीय हो हमको शत्रुओं और निन्दकों की निन्दापूर्ण वार्ताओं से बचाओ ।१५। (२५)

।। इति चतुर्थोऽध्यायः समाप्तः ।।

सूक्त ५

(ऋषि—वामदेवः । देवता—वैश्वानरः । छन्द—त्रिष्टुप्)

वैश्वानराय मीलहुषे सजोषाः कथा दाशेमाग्नये बृहद् भाः ।
अनूनेन बृहता वक्षथेनोप स्तभायदुपमिन्न रोधः ॥१
मा निन्दत य इमां मह्यं रातिं देवो ददौ मर्त्याय स्वधावान्।
पाकाय गृत्सो अमृतो विचेता वैश्वानरो नृतमो यह्वो अग्निः।२
साम द्विबर्हा महि तिग्मभृष्टिः सहस्ररेता वृषभस्तुविष्मान् ।
पदं न गोरपगूलहं विविद्वानग्निर्मह्यं प्रेदु वोचन्मनीषाम् ॥३
प्र ताँ अग्निर्बभसत् तिग्मजम्भस्तपिष्ठेन शोचिषा यः सुराधाः ।
प्र ये मिनन्ति वरुणस्य धाम प्रिया मित्रस्य चेतसो ध्रुवाणि।४
अभ्रातरो न योषणो व्यन्तः पतिरिपो न जनयो दुरेवाः ।
पापासः सन्तो अनृता असत्या इदं पदमजनता गभीरम् ।५।१

हम सब समान प्रीति वाले साधक यजमान उन अभीष्ट की वर्षा करने वाले अत्यन्तदीप्तिमान वैश्वानर अग्निको प्रसन्न करनेके निमित्त किस प्रकार हविदें ? जैसे छप्परको खम्भा धारण करताहै वैसेही अग्नि देव अपने सम्पूर्ण रूप द्वारा आकाश को धारण करते हैं ।१। हे होताओ हवियुक्त होकर हम मरणधर्मा परिपक्व बुद्धि वाले यजमानों को अग्नि देव धन देते हैं,उनका निरादर न करो । वे अविनाशी अग्निदेव अत्यन्त मेधावीहैं। वे श्रेष्ठ नेतृत्व वाले वैश्वानर अग्नि अत्यन्त न महान है ।२। मध्यम एवं उत्तम दोनों स्थानों में व्याप्त अग्निदेव अपने तीक्ष्ण तेज से युक्त हैं। वे अभीष्टोंकी वर्षा करने वाले सारयुक्त एवं धन सम्पन्न होते

हुए भी पर्वत में छिपे गोष्ठ के समान रहस्यपूर्ण हैं। उनका ज्ञान प्राप्त करना उचितहै। विद्वज्जन महान् स्तोंत्रोंके अध्ययन द्वारा हमको उनका स्वरूप ज्ञात करावें।३। जो व्यक्ति मेधावी मित्र और वरुण के प्रिय की हिंसा करना चाहता है। उसे तीक्ष्ण दाँत वाले सुन्दर धनयुक्त अग्निदेव अपने अत्यन्त क्लेशदायी तेजके द्वारा भस्म कर डालें।४। जैसे पालन करने वाले भाई से द्वेष करने वाली स्त्री यथा पतिसे द्वेष करने वाली मिथ्याचारिणी स्त्री दुःख देने वाली गम्भीर दशा को प्राप्त हो जाती है वैसे ही यश-विहीन एवं अग्निसे द्वेष करने वाले सत्य रहित तथा सत्य वाणी से शून्य पापाचारी अधःपतन को प्राप्त होवें।५।   (१)

इदं मे अग्ने कियते पावकाऽमिनते गुरुं भारं न मन्म ।
बृहद् दधाथ धृषता गभीरं यह्वं पृष्ठं प्रयसा सप्तधातु ॥६
तमिन्न्वेव समना समानमभि क्रत्वा पुनती धीतिरश्याः ।
ससस्य चर्मन्नधि चारु पृश्नेरग्रे रुप आरुपितं जबारु ॥७
प्रवाच्यं वचसः किं मे अस्य गुहा हितमुप निणिग् वदन्ति ।
यदुस्त्रियाणामप वारिव व्रन् पाति प्रियं रुपो अग्रं पदं वेः ॥८
इदमु त्यन्महि महामनीकं यदुस्त्रिया सचत पूर्व्यं गौः ।
ऋतस्य पदे अधि दीद्यानं गुहा रघुष्यद् रघुयद् विवेद ॥९
अध द्युतानः पित्रोः सचासा ऽमनुत गुह्यं चारु पृश्नेः ।
मातुष्पदे परमे अन्ति षद् गोर्वृष्णः शोचिषः प्रयतस्य जिह्वा
॥१०॥२

हे पावक ! हम तुम्हारे प्राप्त किये जाने वाले व्रतको नहीं छोड़ते, जैसे दुर्बलको कोई भारी बोझ से लाद दे उसी प्रकार तुम हमको सुन्दर धन प्रदान करो। वह धन शत्रु को रगड़ने वाला, अन्न से युक्त पोषण करने में समर्थ ज्ञान वर्धक एवं महान सप्त धातुओं से युक्त है।६। वह सब प्रकार उपयुक्त, समान शोधन करने वाली स्तुति-पूजन-विधिके द्वारा वैश्वानर अग्नि को प्राप्त हो। स्तुति वैश्वानर अग्नि को बढ़ाने वाली उज्ज्वल पृथिवी के समीप से अचल आकाश पर विचरण करनेके

निमित्त पूर्व दिशा में प्रकट हुई है।७। विद्वानों का कथन है कि दोग्धा जिस दूध को जलके समान दुहते हैं, उस दूध को वैश्वानर अग्नि गुहा में गुप्त रखते हैं। वे विस्तृत भू-मण्डल के प्रिय स्थान के रक्षक है, यह वचन कितना अद्‌भुत अथवा अधिक शक्ति वाला कहा जाने के योग्य है।८। जिन अग्निदेव को दूध देने वाली गायें यज्ञादि शुभ कर्म में सेवा करती हैं, जो अग्नि स्वयं प्रकाशवान् हैं, जो गुफा में बसे हुए हैं, जो शीघ्र गतिमान् एवं वेगवान हैं, वे महान पूजनीय हैं, सूर्य मण्डल में व्याप्त उन वैश्वानर अग्नि को हम भले प्रकार जानते हैं।९। फिर-पिता माता के समान आकाश पृथिवीके बीचमें व्याप्त हुए प्रकाशबान् वैश्वानर गौ के ऊर्ध्व भागमें श्रेष्ठ एवं सुस्वादु दूधको पीने के निमित्त चैतन्य हों। उन अभोष्टों की वर्षा करने वाले, प्रकाशवान् वैश्वानर अग्नि की जिह्वा, मातृ-रूपिणी गौ ऊर्ध्व स्थान में पय-पान करने की इच्छा करती है।१०। (२)

ऋतं वोचे नमसा पृच्छ्यमानस्तवाशसा जातवेदो यदीदम।
त्वमस्य क्षयसि यद्ध विश्वं दिवि यदु द्रविणं यत् पृथिव्याम् ॥११
किं नो अस्य द्रविणं कद्ध रत्नं वि नो वोचो जातवेदश्चिकित्वान्।
गुहाध्वनः परमं यन्नो अस्य रेकु पदं न निदाना अगन्म ॥१२
का मर्यादा वयुना कद्ध वाममच्छा गमेम रघवो न वाजम्।
कदा नो देवीरमृतस्य पत्नीः सूरो वर्णेन ततनन्नुषासः ॥१३
अनिरेण वचसा फल्ग्वेन प्रतीत्येन कृधुनातृपासः।
अधा ते अग्ने किमिहा वदन्त्यनायुधास आसता सचन्ताम् ॥१४
अस्य श्रिये समिधानस्य वृष्णो वसोरनीकं दम आ रुरोच।
रुशद् वसानः सुदृशीकरूपः क्षितिर्न राया पुरुवारो अद्यौत्।१५।२

मुझसे कोई अत्यन्त आदर पूर्वक पूछे तो हे विद्वान्! मैं अवश्य ही सत्य बात कहूँ अग्ने! तुम्हारी स्तुति करते हुए हम इस सुन्दर धनको प्राप्त करें तो तुम धन के अधिपति बनो। क्योंकि तुम सभी धनों के स्वामी हो। पृथिवी और आकाशमें जितने भी धन हैं, उन सबके ही

तुम अधीश्वर हो ।११। इस धन की साधन-भूत शक्ति क्या है ? इसका हितकारी धन कौन'सा है ? हे अग्निदेव! तुम जो जानते हो, वह हमको बताओ । इस धन को प्राप्त करने का जो सरल मार्ग हैं, उसका श्रेष्ठ उपाय बताओ, जिससे हम अपने लक्ष्य को प्राप्त करनेमें निन्दाके भागी न बने ।१२। मर्यादा क्या है ? करने योग्य कर्त्तव्य कौन-कौन से हैं ? जानने योग्य ज्ञान कौन से हैं ? वेगवान अश्व जैसे युद्धको जाता है एवं शीघ्र कार्य क्षम निरालस्य हुआ ज्ञान-विज्ञानों को प्राप्त करता है । वैसे ही हम भी कब गतिमान होंगे और ज्ञानैश्वर्यको प्राप्त करेंगे ? उज्ज्वल प्रकाश वाली अविनाशिनी उषा सूर्य के प्रकाश से युक्त हुई कब हमारे निमित्त प्रकाशित होगी ? ।१३। अन्नसे वञ्चित विरुद्ध ज्ञान वाला, अतृप्त मनुष्य इस लोक में स्वल्प वचन से तुम्हारे प्रति क्या कहता है ? वह हथियारों से रहित निहत्थे व्यक्ति की भाँति असत् ज्ञान से युक्त हुए क्लेश पाता है ।१४। इस सुखपूर्वक देदीप्यमान अग्नि की तेज राशि यज्ञ स्थान में प्रदीप्त होती है । यजमान को सुख देने के निमित्त वे उज्ज्वल तेज को धारण करते हैं, अतः उनका स्वरूप अत्यन्त सुन्दर है । जैसे अश्वादि धनों से युक्त हुआ राजा चमकता है, वैसे ही अग्निदेव यज्ञ-की स्तुतियों द्वारा पूजित होकर चमकते हैं ।१५। (३)

सूक्त ६

(ऋषि—वामदेवः । देवता—अग्निः । छन्द—पंक्तिः त्रिष्टुप्)

ऊर्ध्व ऊ षु णो अध्वरस्य होतरग्ने तिष्ठ देवताता यजीयान् ।
त्वं हि विश्वमभ्यसि मन्म प्र वेधसश्चित् तिरसि मनीषाम् ॥१
अमूरो होता न्यसादि विक्ष्वग्निर्मन्द्रो विदथेषु प्रचेताः ।
ऊर्ध्वं भानुं सवितेवाश्रेन्मेतेव धूमं स्तभायदुप द्याम् ॥२
यतासुजूर्णी रातिनी घृताची प्रदक्षिणिद् देवतातिमुराणः ।
उदु स्वरुर्नवजा नाक्रः पश्वो अनक्ति सुधितः सुमेकः ॥३
स्तीर्णे बर्हिषि समिधाने अग्ना ऊर्ध्वो अध्वर्युर्जुजुषाणो अस्थात्
पर्यग्निः पशुपा न होता त्रिविष्ट्येति प्रदिव उराणः ॥४

परित्मना मितद्रु रेति होता ऽग्निर्मन्द्रो मधुवचा ऋतावा ।
द्रवन्त्यस्य वाजिनो न शोका मयन्ते विश्वा भुवना यदभ्रात्।५।४

हे होता अग्ने ! तुम याज्ञिकों में श्रेष्ठ हो । तुम हमसे परमोच्च पद पर अवस्थित होओ । तुम सभी शत्रुओंके जीतने वाले हो । स्तुति करने वालों की स्तुतियों को प्रशस्त करो ।१। वे अग्निदेव यज्ञ का सम्पादन करने वाले प्रसन्नता को उत्पन्न करने वाले अत्यन्त ज्ञानी और मेधावी हैं । वे यज्ञ मण्डप में यजमानों के मध्य विराजमान होते हैं । वे उदय होते हुए सूर्य के सम न ऊँचे उठते हैं और और खम्भेके समान धूपको धारण करते हैं ।२। प्राचीन एवं संयत जुहू घृतसे पूर्ण हुआ है । यज्ञ की वृद्धि करने वाले अध्वर्यु प्रदक्षिणा करते हुए अपनी कामनाको प्राप्त करते हैं । नवोत्पन्न यूप ऊपर उठता हुआ सुखकारी होता है । हितकर्त्ता यजमान गवादि पशुओं को प्राप्त करता है ।३। कुश को बिछा जाने पर तथा अग्नि के समृद्ध होने पर अध्वर्युगण दोनों का अन्दर करने के निमित्त प्रस्तुत होते हैं । यज्ञ का सम्पादन करने वाले प्राचीन अग्निदेव घोड़े से हव्य को भी प्रचुर करते हैं । वे पालकों के समान ऐश्वर्य बुद्धि करते हुए उत्तम, माध्यम अधम तीनों श्रेणी के जीवों पर अनुग्रह करते हैं ।४। प्रसन्नता प्रदान करने वाले, होता रूप मिष्टभाषी यज्ञ से युयत अग्निदेव परिमित गति वाले होकर सर्वत्र गमन करते हैं उनका प्रकाश पुंज घोड़े के समान सब ओर दौड़ता हैं । वे जब प्रदीप्त होते हैं तब अखिल विश्व के प्राणी डर जाते हैं ।५। (५)

भद्रा ते अग्ने स्वनीक संदृग् घोरस्य सतो विषुणस्य चारुः ।
न यत् ते शोचिस्तमसा वरन्त न ध्वस्मानस्तन्वी रेप आ धुः।।६
न यस्य सातुर्जनितोरवारि भ मातरापितरा नू चिदिष्टौ ।
अधा मित्रो न सुधितः पावको ऽग्नर्दीदाय मानुषीषु विक्षु ।।७
द्विर्यं पञ्च जीजनन् त्संवसानाः स्वसारो अग्नि मानुषीषु विक्षु ।
उषर्बुधमथर्यो न दन्तं शुक्रं स्वास परशुं न तिग्मम् ।।८
तव त्ये अग्ने हरितो घृतस्ना रोहितास ऋज्वञ्चः स्वञ्चः ।
अरुषासो वृषण ऋजुमुष्का आ देवतातिमह्वन्त दस्माः ।।९

ये ह त्ये ते सहमाना अयासस्त्वेषासो अग्ने अर्चयश्चरन्ति ।
श्येनासो न दुवसनासो अर्थं तुविष्वणसो मारुतं न शर्धः ॥१०
अकारि ब्रह्म समिधान तुभ्यं शंसात्युक्थं यजते व्यू धाः ।
होतारमग्निं मनुषो नि षेदुर्नमस्यन्त उशिजः शंसमायोः ।११।५

हे अग्ने ! तुम्हारी ज्वालाएँ सुन्दर हैं । तुम दुष्टोंको भयभीत करने वाले एवं सर्वव्यापक हो । तुम्हारा मनोहर और कल्याणकारी स्वरूप भले प्रकार दर्शनीय है । रात्रि के अन्धकार भी तुम्हारे प्रकाश को रोकनेमें समर्थ नहीं है । राक्षसादि दुष्ट तुम्हारे शरीरपर पापमय प्रयोग करने में सफल नही हो सकते ।६। हे वैश्वानर अग्निदेव ! तुम वर्षा के कारण भूत हो । तुम्हारा दान किसी के द्वारा रोका नहीं जा सकता । जिस अग्नि को प्रेरित करने में माता-पिता रूप पृथिवी-आकाश शीघ्र ही समर्थ नहीं होते, वे अग्नि तृप्त होकर पवित्र करने वाले हैं और मनुष्योंके बीच मित्रके समान प्रतिष्ठित हुए प्रकाशित होते हैं ।७। मनुष्यों की दसों अंगुलियाँ, नारी के समान जिस अग्नि को प्रदीप्त करती हैं वे अग्नि उषाकाल में जागने वाले, हव्य ग्रहण करने वाले, उत्तम प्रकाश से दमकने वाले एवं सुन्दर स्वरूप वाले हैं वे तीखे मुख वाले फरसे के समान शत्रुओं का नाश करते हैं ।८। हे अग्ने ! तुम्हारे उन घोड़ों को हम अपने सम्मुख बुलाते हैं । उनके मुख से फेन निकलता है । वे लाल वर्ण वाले, सीधे मार्ग पर चलने वाले हैं । उनकी चाल सुन्दर है और वे दमकते हुए शरीर वाले युवावस्थासे युक्त, बलवान् तथा देखने योग्य हैं ।९। अग्ने तुम्हारी रश्मियाँ शत्रुओं को वश में करने में समर्थ हैं । वे गमनशील, दमकती हुई और पूजा के योग्य रश्मियाँ मरुतोंके समान विविध नाद करने वाली हैं तथा वे घोड़े के समान गन्तव्य स्थान पर पहुँचने में पूर्ण समर्थ हैं ।१०। हे देदीप्यान अग्निदेव ! यह महान् स्तोत्र तुम्हारे निमित्त ही हमने किया है । तुम्हारे निमित्ति ही विद्वान् पुरुष श्रेष्ठ वचनों का उच्चारण करते हैं । यजमान तुम्हारा यज्ञ करते हैं । इसलिए तुम हमको धनैश्वर्य प्रदान करो । मनुष्यों

के होता अग्निका पूजन करने के लिए तथा पशु आदि धनोंकी कामना के साथ ऋत्विक् आदि विद्वान् यहाँ बैठे हैं ।११। (५)

सूक्त ७

(ऋषि—वामदेवः । देवता–अग्निः । छन्द–त्रिष्टुप्, जगती, अनुष्टुप्)

अयमिह प्रथमो धायि धातृभिर्होता यजिष्ठो अध्वरेष्वीड्यः ।
यमप्नवानो भृगवो विरुरुचुर्वनेषु चित्रं विभ्वं विशेविशे ॥१
अग्ने कदा त आनुषग् भुवद् देवस्य चेतनम् ।
अधा हि त्वा जगृभ्रिरे मर्तासो विक्ष्वीड्यम् ॥२
ऋतावानं विचेतसं पश्यन्तो द्यामिव स्तृभिः ।
विश्वेषामध्वराणां हस्कर्तारं दमेदमे ॥३
आशुं दूतं विवस्वतो विश्वा यश्चर्षणीरभि ।
आ जभ्रुः केतुमाययवो भृगवाणं विशेविशे ॥४
तमीं होतारमानुषक् चिकित्वांसं नि षेदिरे ।
रण्वं पावकशोचिषं यजिष्ठं सप्त धामभिः ।५।६

यह अग्नि सबसे श्रेष्ठ, सबके आदि मे वर्तमान, सर्व सुखोंके दाता पूजनीय एवं सभी यज्ञों में स्तुति करने के योग्य हैं । इन्हें आदि काल में भृगुओं ने प्रदीप्त किया था । अग्नि याज्ञिकों में श्रेष्ठ तेजस्वी एवम् पाप नाशक हैं । इन परमेश्वर अग्नि को यज्ञ करने वाले विद्वान् प्रतिष्ठित करते हैं ।१। हे अग्ने ! तुम मनुष्यों के द्वारा पूजा करने के योग्य हो । तुम अत्यन्त दीप्तिमान हो । तुम्हारा प्रकाश कब अनुकूल होगा ? तुमको जीवनदाता रूप से यह मरणधर्मा मनुष्य कब ग्रहण करेंगे ? ।२। वे अग्निदेव विविध ज्ञानों से युक्त, माया से रहित तथा नक्षत्रों से युक्त आकाश के समान सभी यज्ञों को सम्पन्न करने वाले हैं । दर्शनीय अग्नि को ऋत्विक् आदि मेधावी जन प्रत्येक यज्ञ स्थानमें प्रतिष्ठित करते हैं ।३। जो अग्निदेव प्रजाओं के सुख के निमित्त अपना तेजोमय प्रकाश देते हैं, वे शीघ्र गमनशील, यजमान के दूत

स्वरूप एवं ज्ञान के प्रकाशसे युक्त हैं। अग्निदेव का प्रकट होना प्रत्येक प्रजाजन के लिए कल्याण करने वाला हो ।४। उन होता रूप अग्नि को अध्वर्यु आदि ने यथा-स्थान प्रतिष्ठित किया है। वे तेजस्वी एवं पवित्र करने वाली प्रदीप्ति से युक्त हैं। वे अत्यन्त दानशील तथा सभीके सखा रूप हैं। वे सप्त तेजोयुक्त अग्नि अनुकूल होकर यज्ञ स्थान में निवास करें ।५।   (६)

तं शश्वतीषु मातृषु वन आ वीतमश्रितम् ।
चित्रं सन्तं गुहा हितं सुवेदं कूचिदर्थिनम् ।।६
ससस्य यद् वियुता सस्मिन्नूधन्नृतस्य धामन् रणयन्त देवाः ।
महाँ अग्निर्नमसा रातहव्यो वेरध्वराय सदमिद्दतावा ।।७
वेरध्वरस्य दूत्यानि विद्वानुभे अन्ता रोदसी संचिकित्वान् ।
दूत ईयसे प्रदिव उराणो विदुष्टरो दिव आरोधनानि ।।८
कृष्णं त एम रुशतः पुरो भाश्चरिष्ण्वर्चिर्वपुषामिदेकम् ।
यदप्रवीता दधते ह गर्भं सद्यश्चिज्जातो भवसीदु दूतः ।।९
सद्यो जातस्य ददृशानमोजो यदस्य वातो अनुवाति शोचिः ।
वृणक्ति तिग्मामतसेषु जिह्वां स्थिरा चिदन्ना दयते वि जम्भैः१०
तृषु यदन्ना तृषुणा ववक्ष तृषुं दूतं कृणुते यह्वो अग्निः ।
वातस्य मेळिं सचते निजूर्वन्नाशुं न वाजयते हिन्वे अर्वा ।११।७

मातृभूत जलों में तथा वृक्षों में विद्यमान, जलने के भय से बहुत से प्राणियों द्वारा असेवित गुहामें अवस्थित, अद्भुत मेधावी और सर्वत्र हव्य सामग्री को ग्रहण करने वाले अग्नि की मनुष्यों ने उपासना की है ।६। देवता निद्रा को त्यागकर उषाकाल में जिन अग्नि को यज्ञ स्थान में स्तुतियों द्वारा प्रसन्न करते हैं, सत्य से युक्त महान अग्निदेव नमस्कार पूर्वक दिये हुए हव्यको स्वीकार करते हुए यजमान द्वारा किये गये यज्ञ को जानते रहें ।७। अग्ने ! तुम ज्ञानवान हो। यज्ञ में दौत्य कर्म करने वाले हो। तुम इन लोगों और आकाश पृथिवी के बीच अवस्थित

हुए अन्तरिक्षको भली प्रकार जानते हो। अग्निदेव ! तुम प्राचीन हो। अतः यज्ञ को भी बढ़ाकर अधिक कर देते हो। तुम अत्यन्त मेधावी हो, सर्व श्रेष्ठ एवं देवताओं के दूत हो। तुम देवताओं के लिए हवि पहुँचानेके लिए स्वर्ग के उच्च स्थान को भी प्राप्त होओ।८। हे अग्ने! तुम प्रकाश से युक्त हो। तुम्हारा चलने का मार्ग काले रङ्ग का है। तुम्हारी कान्ति आगे से ही दिखाती है। तुम्हारा तेज सभी तेजोमय पदार्थों में सर्वश्रेष्ठ है। तुम्हारी प्राप्तिके निमित्त तुम्हारे उत्पत्ति कारण काष्ठ को ग्रहण किया जाता है और तुम उत्पन्न होते ही यजमान के दूत बन जाते हो।९। अरणियों को मथने के पश्चात् उत्पन्न होने वाले अग्निके तेजको ऋत्विज आदि ही देखते हैं। जब अग्नि की शाखा रूप लपटों के लक्ष्य पर वायु प्रवाहमान होती है, तब अग्नि अपनी तीक्ष्ण ज्वाला को वृक्षों के समूह में व्याप्त कर देते हैं तथा अन्न रूप काष्ठादि को अपने तेज से खा जाते हैं।१०। अग्नि देव शीघ्रगामी किरणों द्वारा अन्नादि काष्ठ को शीघ्र ही जला डालते हैं। अग्नि महान हैं। वे शीघ्र गमन करने वाले दूत बन जाते है। वे काष्ठों को जलाकर वायु के साथ मिल जाते हैं। जैसे अश्वारोही अपने अश्वको पुष्ट करते हैं और प्रेरणा देते हैं।११। (७)

सूक्त ८

(ऋषि—वामदेवः। देवता—अग्निः। छन्द—गायत्री)

दूतं वो विश्ववेदसं हव्यवाहममर्त्यम्। यजिष्ठमृञ्जसे गिरा ॥१
स हि वेदा वसुधितिं महाँ आरोधनं दिवः। स देवाँ एह वक्षति२
स वेद देव आनमं देवाँ ऋतायते दमे। दाति प्रियाणि चिद् वसु३
स होता सेदु दूत्यं चिकित्वाँ अन्तरीयते। विद्वाँ आरोधनं दिवः४
ते स्याम ये अग्नये ददाशुर्हव्यदातिभिः। य ईं पुष्यन्त इन्धते॥५
ते राया ते सुवीर्यैः ससवांसो वि शृण्विरे। ये अग्ना दधिरे दुवः६
अस्मे रायो दिवेदिवे सं चरन्तु पुरुस्पृहः। अस्मे वाजास ईरताम्७
स विप्रश्चर्षणीनां शवसा मानुषाणाम्। अति क्षिप्रेव विध्यति८।८

हे अग्ने ! तुम समस्त धनों के स्वामी, देवताको हवि पहुंचाने वाले अविनाशी अत्यन्त यज्ञ करने वाले एवम् देबताओं के निमित्त दौत्य-कर्म करने वाले हो । तुम अग्निदेव को हम साधारण स्तुतियों द्वारा बढ़ाते हैं ।१। वे अग्नि महान् हैं । वे यजमानों का मनोरथ सिद्ध करने वाले अग्नि प्रकाशमान हैं । वे इन्द्रादि देवों को नमस्कार करने के क्रमों के भी ज्ञाता हैं । वे अग्निदेव देवों को हमारे यज्ञ में बुलावें ।२। वे अग्नि प्रकाशमान हैं । वे इन्द्रादि देवों को नमस्कार करने के क्रम को जानने वाले हैं । वे यज्ञ की अभिलाषा करने वाले यजमान को यज्ञ स्थान में अभीष्ट धन देते हैं ।३। दौत्य-कर्म के ज्ञाता अग्निदेव होता रूप हैं । स्वर्गारोहण योग्य स्थान को जानने वाले हैं तथा आकाश और पृथिवी के मध्य गमन करते रहते हैं ।४। जो यजमान उन्हें काष्ठके द्वारा प्रज्वलित करता है, उन्हें हव्य द्वारा बढ़ता हुआ प्रसन्न करता है, हम भी उस यजमान के समान कर्म करते हुए अग्नि को प्रसन्न करें ।५। यजमान अग्नि की पूजनादि परिचर्या करते हैं । धन से युक्त होते हुए विभिन्न इश्वर्यों को भोगते हुए अन्नादि सुखों से पूर्ण होते हैं ।६। ऋत्विक् आदि द्वारा कामना किया धन प्रतिदिन हमारे पास आवे ओर उसके द्वारा हमको विभिन्न ज्ञान-विज्ञान तथा बलादि की प्राप्ति हो।७। वे अग्निदेव विद्वान् हैं । वे मनुष्यों के दुःखोंको वेग से चलने वाले बाणों के समान अपने बल से प्रहार करके नष्ट कर डालें ।८।   (८)

सूक्त ९

(ऋषि—वामदेवः । देवता—अग्निः । छन्द—गायत्री)

अग्ने मृल महाँ असि य ईमा देवयु जनम् । इयेध बर्हिरासदम्।।१
स मानुषीषु दूलभो विक्षु प्रावीरमर्त्यः । दूतो विश्वेषां भुवत्।।२
स सद्म परि णीयते होता मन्द्रो दिविष्टिषु । उत पोता नि षीदति ।।३
उत ग्ना अग्निरध्वर उतो गृहपतिर्दमे । उत ब्रह्मा नि षीदति।४
वेषि ह्यध्वरीयतामुपवक्ता जनानाम् । हव्या च मानुषाणाम् ।।५

वेषीद्वस्य दूत्यं यस्य जुजोषो अध्वरम्। हव्यं मर्तस्व वोलहवे॥६
अस्माकं जोष्यध्वरमस्माकं यज्ञमङ्गिरः। अस्माकं शृणुधी हवम्७
परि ते दूलमो रथो ऽस्माँ अश्नोतु विश्वतः। येन रक्षसि दाशुषः
।८।६

हे अग्ने ! हमको सुख दो। तुम देवताओंकी इच्छा करने वाले एवं महान् हो। तुम यजमान के निकट कुश पर विराजमान होने की इच्छा से आते हो।१। राक्षसादि दुष्टों द्वारा भी जिनकी हिंसा नहीं हो सकती जो मर्त्यलोक में स्वच्छन्द विचरण करने में समर्थ हैं,वे अग्निदेव अबिनाशी हैं। वे सब देवताओं के दूत है।२। ऋत्विग्गण आदि यज्ञ गृह में लाये जाकर अग्निदेव स्तुति के पात्र होते हैं या वे स्तुत हुए यज्ञ स्थान में आते हैं।३। या वे अग्निदेव अध्वर्यु अथवा देव-पत्नी रूप होते हैं। अथवा यज्ञ-गृह में बृहस्पति रूपसे प्रतिष्ठित होतेहैं। अथवा यज्ञ में ब्रह्मा रूप से विराजमान होते हैं ।४। हे अग्ने ! तुम यज्ञ की कामना करने वाले मनुष्यों की हवियों की अभिलाषा करते हो। तुम अध्वर्यु आदिके कर्मों के ज्ञाता ब्रह्मा रूप हो। तुम यज्ञ कर्मों के उपदेष्टा स्वरूप हो।५। हे अग्ने ! तुम हवियाँ वहन करने के निमित्त जिस यजमान के यज्ञ को सेवन करते हो,उस यजमान के यज्ञमें दौत्य कर्म करने के लिए भी तुम इच्छा करते हो।६। हे तेजस्वी ! तुम हमारे यज्ञ का सेवन करो, हमारे हव्य को ग्रहण करो और आह्वान करने वाले हमारे स्तोत्र को सुनने का अनुग्रह करो ।७। हे अग्ने तुम अपने जिस रथ पर चढ़कर सब दिशाओं में गमन करते हुए हव्यदाता यजमान की रक्षा करते हो, तुम्हारा वह रथ कभी हिंसित नही हो सकता। वह रथ हमारे सब ओर व्याप्त होता हुआ रक्षा करे ।८। (६)

सूक्त १०

(ऋषि-वामदेवः। देवता-अग्निः। छन्द-पदपंक्तिः, महापदपंक्तिः,उष्णिक्)

अग्ने तमद्याऽश्वं न स्तोमैः क्रतुं न भद्रं हृदिस्पृशम्।
ऋध्यामा त ओहैः ॥१

अधा ह्यग्ने क्रतोर्भद्रस्य दक्षस्य साधोः ।
रथीर्ऋतस्य बृहतो बभूथ ॥२
एभिर्नो अर्कैर्भवा नो अर्वाङ् स्वर्ण ज्योतिः ।
अग्ने विश्वेभिः सुमना अनीकैः ॥३
आभिष्टे अद्य गीर्भिर्गृणन्तो ऽग्ने दाशेम ।
प्र ते दिवो न स्तनयन्ति शुष्माः ॥४
तव स्वादिष्ठा ऽग्ने संदृष्टिरिदा चिदह्न आ चिदक्तोः ।
श्रिये रुक्मो न रोचत उपाके ॥५
घृतं न पूतं तनूररेपाः शुचि हिरण्यम् ।
तत् ते रुक्मो न रोचत स्वधावः ॥६
कृतं चिद्धि ष्मा सनेमि द्वेषो ऽग्न इनोषि मर्तात् ।
इत्था यजमानादृतावः ॥७
शिवा नः सख्या सन्तु भ्रात्रा ऽग्ने देवेषु युष्मे ।
सा नो नाभिः सदने सस्मिन्नूधन् ॥८॥१०

हे अग्ने ! हम ऋत्विग्गण स्तुति द्वारा तुमको बढ़ाते हैं। जैसे घोड़ा सवार को चढ़ाता है, वैसे ही तुम हवियों को वहन करते हो। तुम यज्ञ करने वालेका उपकार करते हो। तुम यजन करने योग्य तथा अत्यन्त प्रिय एवं सुखकारी हो।१। हे अग्ने ! तुम हमारे यजन के योग्य हो। तुम बढ़े हुए अभीष्ट फल को सिद्ध करने वाले, सत्य के आधारभूत एवं महान हो तथा रथी के समान नेतृत्व करने वाले हो।२। हे अग्ने तुम प्रकाश से युक्त सूर्य के समान तेज से पूर्ण एवं श्रेष्ठ अन्तःकरण वाले हो। तुम हमारे द्वारा उत्तम चित्त होकर हमारे सामने आओ।३। हे अग्ने ! हम आज वाणी द्वारा स्तुति करके तुम्हारे लिए हव्य प्रदान करेंगे। सूर्य-रश्मि के समान तुम्हारी पवित्र करने वाली ज्वाला है। अथवा मेघ के समान गर्जनशील है।४। हे अग्ने ! तुम्हारी परमप्रिय प्रदीप्ति अलङ्कार के समान पदार्थों को भूषित करने के निमित्त उनके पास रात दिन सुशोभित होती है।५। हे अग्ने ! तुम

अन्न से युक्त हो। तुम्हारा स्वरूप शुद्ध घृतके समान पाप से शून्य है। तुम्हारा पवित्र एवं शुद्ध तेज आभूषण के समान प्रकाशवान् है।६। हे सत्य से युक्त अग्ने ! तुम निरन्तर होते हुए भी यजमानों द्वारा उत्पन्न होते हो। । तुम यजमानों के पाप को दूर करने में निश्चय ही समर्थ हो।७। हे अग्ने ! तुम प्रकाशवान्हो। तुम्हारे प्रति हमारा जो बन्धुत्व और मैत्री भाव है, वह कल्याणाकरी हो। यह मैत्रीभाव एवं भ्रातृत्व सम्पूर्ण यज्ञ में हमारा मंगल रूप हो।८। (१०)

सूक्त ११ [दूसरा अनुवाक]

(ऋषि–वामदेवः। देवता–अग्निः। छन्द–त्रिष्टुप्)

भद्रं ते अग्ने सहसिन्ननीकमुपाक आ रोचते सूर्यस्य।
रुशद् दृशे ददृशे नक्तया चिदरूक्षितं दृश आ रूपे अन्नम्॥१
वि षाह्यग्ने गृणते मनीषां खं वेपसा तुविजात स्तवानः।
विश्वेभिर्यद् वावनः शुक्र देवैस्तन्नो रास्व सुमहो भूरि मन्म॥२
त्वदग्ने काव्या त्वन्मनीषास्त्वदुक्था जायन्ते राध्यानि।
त्वदेति द्रविणं वीरपेशा इत्थाधिये दाशुषे मर्त्याय॥३
त्वद् वाजी वाजंभरो विहाया अभिष्टिकृज्जायते सत्यशुष्मः।
त्वद् रयिर्देवजूतो मयोभुस्त्वदाशुर्जूजुवाँ अग्ने अर्वा॥४
त्वामग्ने प्रथमं देवयन्तो देवं मर्ता अमृत मन्द्रजिह्वम्।
द्वेषोयुतमा विवासन्ति धीभिर्दमूनसं गृहपतिममूरम्॥५
आरे अस्मदमतिमारे अंह आरे विश्वां दुर्मतिं यन्निपासि।
दोषा शिवः सहसः सूनो अग्ने यं देव आ चित् सचसे स्वस्ति॥६।११

हे अग्ने ! तुम बल से युक्त हो। तुम्हारा यजन योग्य तेज सूर्य के देदीप्यमान तेज के समान है। तुम्हारा तेज सुन्दर एवं दर्शनीय है, वह रात्रि में छिपता नहीं। तुम अत्यन्त रूप वाले हो। तुम्हारी प्रेरणा से घृतादि युक्त अन्न उत्पन्न होता है।१। हे बहुत जन्म वाले अग्निदेव तुम यज्ञ करने वालों के द्वारा पूजित हुए। स्तोता यजमान के निमित्त

पुण्यलोक का द्वार खोलो, तुम सुन्दर तेज से युक्त हो देवताओंके साथ तुम यजमान को जो धन प्रदान करते हो, हमको भी वही इच्छित धन प्रदान करो ।२। हे अग्ने ! हवियों का वहन करना और देवताओं के आगमन सम्बन्धी कार्य तुम्हारे द्वाराही प्रकट हुएहैं । स्तुतिरूपिणी वाणी तुम्हारे द्वारा ही उत्पन्न हुई है और आराधना के योग्य मात्र भी तुमने ही प्रकट हुए हैं । सत्य कर्म वाले एवं हविदाता के निमित्त वृद्धिदायक धन एवं अन्न भी तुम्हारे द्वारा ही उत्पन्न हुए हैं ।३। हे अग्ने ! शक्ति शाली हव्य वहन करने वाले यज्ञ कर्मों के साधक महान और सत्यबल से युक्त पुत्र तुम्हारे द्वारा ही प्रकट हुए हैं । देवताओं के द्वारा प्रेरित कल्याणकारी एश्वर्य तुम्हारे द्वारा प्रकट होता है। विशेष गति वाला, वेगवान शीघ्रगामी अश्व भी तुम्हारे द्वारा हो उत्पन्न हुआ है ।४। हे अग्ने तुम अविनाशी हो । देवताओं की कामना करने वाले मनुष्य स्तुतियों द्वारा तुम्हारी सेवा करते हैं । तुम देवताओं में आदि देवता हो । तुम दीप्तिमान हो । तुम्हारी जिह्वा देवताओंको बलवान बनाने वाली है । तुम पापों को दूर करते हो तथा दैत्योंका संहार करने की कामना करते रहते हो ।५। हे बलोत्पन्न अग्निदेव ! तुम रात्रि के समय मंगलकारी एवं प्रकाशवान् होकर हमारे कल्याण के निमित्त जागरूक रहते हो । जिस कारणवश तुम यजमानों को पुष्ट करते हो उसी से हमारे समीप उत्पन्न हुई मतिहीनता को हटाओ, हमारे पास के पाप को हटा दो । हमारे पास से कुबुद्धि को दूर करो ।६   (११)

सूक्त १२

(ऋषि—वामदेव: देवता—अग्नि: । छन्द—त्रिष्टुप् पंक्ति)

यस्त्वामग्न इनधते यतस्रुक् त्रिस्ते अन्नं कृणवत् सस्मिन्नहन् ।
स सु द्युम्नैरभ्यस्तु प्रसक्षत् तव क्रत्वा जातवेदश्चिकित्वान् ।।१
इध्मं यस्ते जभरच्छश्रमाणो महो अग्ने अनीकमा सपर्यन् ।
स इधानः प्रति दोषामुषासं पुष्यन् रयिं सचते घ्नन्न मित्रान् ।।२
अग्निरीशे बृहतः क्षत्रियस्याऽग्निर्वाजस्य परमस्य रायः ।

दधाति रत्नं विधते यविष्ठो व्यानुषङ् मर्त्याय स्वधावान् ॥३
यच्छिद्धि ते पुरुषत्रा यविष्ठाऽचित्तिभिश्चकृमा कच्चिदागः ।
कृधी ष्वस्माँ अदितेरनागान् व्येनांसि शिश्रथो विष्वगग्ने ॥४
महश्चिदग्न एनसो अभीक ऊर्वाद् देवानामुत मर्त्यानाम् ।
मा ते सखायः सदमिद् रिषाम यच्छा तोकाय तनयाय शं योः॥५
यथा ह त्यद् वसवो गौर्यं चित् पदि षितामसुञ्चता यजत्राः ।
एवो ष्वस्मन्मुञ्चत व्यंहः प्र तार्यग्ने प्रतरं न आयुः ।६।१२

हे अग्ने! स्रुक को स्थिरकर जो यजमान तुम्हें प्रदीप्त करता है एवं जो तुम्हें नित्यप्रति तीनों सवनों में हविरूप अन्नदान करता है, वह तुम्हें तृप्ति करने वाले कर्म द्वारा तुम्हारे तेज का ज्ञान प्राप्त कर अपने शत्रुओं को जीतता है ।१। हे अग्ने ! जो व्यक्ति तुम्हारे लिए यज्ञसाधक काष्ठ को लाता है तथा जो व्यक्ति की खोज से थक कर तुम्हारे तेज की पूजा करता है एवं रात और दिन में तुम्हें प्रज्वलित करता है वह यजमान सन्तान और पशुओं से सम्पन्न होकर शत्रुओं का नाश करता है और धन प्राप्त करता है ।२। वे अग्नि महान शक्ति के स्वामी तथा श्रेष्ठ अन्न और पशु-रूप धन के अधिपति हैं। अत्यन्त युवा एवं अन्नवान अग्नि-सेवा करने वाले यजमान को सुन्दर धनसे सम्पन्न करें ।३। हे सद्य युवा अग्निदेव ! तुम्हारे सेवकों के मध्य हम अज्ञान के वश में पड़े हुए तुम्हारा अपराध करते हैं, तुम पृथिवी के निकट हमको उन अपराधों और पापों से बचा दो । हे अग्ने ! तुम सर्वत्र प्राप्त हो। हमारे पापों को हटाओ ।४। अग्ने ! तुम हमारे मित्र हो । हमने इन्द्रादि देवताओं अथवा सब मनुष्योंका जो अपराध या पाप कियाहै, उस घोर पाप से हम कभी भी विघ्नों को प्राप्त न हो । तुम हमारी सन्तान को भी पाप-रूप उपद्रवों से बचाते हुए सुख प्रदान करो ।५। हे अग्ने ! तुम पूज्य एवं निवास से युक्त हो। तुमने जिस प्रकार पाँवों से बँधी हुई गौ को बचाया था, उसी प्रकार हमको पाप से बचाओ। हे अग्ने ! हमारी आयु तुम्हारे द्वारा बढ़ाई गई है,तुम इसे और भी बढ़ाओ ।६। (१२)

सूक्त १३

(ऋषि—वामदेवः । देवता—अग्निः । छन्द—त्रिष्टुप्)

प्रत्यग्निरुषसामग्रमख्यद् विभातीनां सुमना रत्नधेयम् ।
यातमश्विना सुकृतो दुरोणमुत् सूर्यो ज्योतिषा देव एति ।।१
ऊर्ध्वं भानुं सविता देवो अश्रेद् द्रप्सं दविध्वद् गविषो न सत्वा।
अनु व्रतं वरुणो यन्ति मित्रो यत् सूर्यं दिव्यारोहयन्ति ।।२
यं सीमकृण्वन् तमसे विपृचे ध्रुवक्षेमा अनवस्यन्तो अर्थम् ।
तं सूर्यं हरितः सप्त यह्वीः स्पशं विश्वस्य जगतो वहन्ति ।।३
वहिष्ठेभिर्विहरन्यासि तन्तुमवव्ययन्नसितं देव वस्म ।
दविध्वतो रश्मयः सूर्यस्य चर्मेवावाधुस्तमो अप्स्वन्तः ।।४
अनायतो अनिबद्धः कथायं न्यङ्ङुत्तानोऽव पद्यते न ।
कथा याति स्वधया को ददर्श दिवः स्कम्भः समृतः पाति नाकम्
।५।१३

हे श्रेष्ठ मन वाले अग्निदेव ! अन्धकार का नाश करने वाले उषा के प्रकाशके पहिले तुम प्रबुद्ध होते हो । हे अश्विनीकुमारो ! तुम यजमान के घर में गमन करो । ऋत्विक् आदि को प्रेरणा देने सूर्य अपने तेज सहित उषा काल में उदित होते हैं ।१। सूर्यदेव किरणों को विकसित करते हैं । जब किरणें सूर्य को आकाशमें चढ़ाती हैं तब वरुण मित्र और अन्न सभी देवता अपने कर्मों के पीछे चलते हैं, उसी प्रकार जिस प्रकार बलिष्ठ बैल गौओं की इच्छा कर धूल उड़ाता हुआ गौओं के पीछे चलता है ।२। सृष्टि-रचयिता देवताओं ने संसार के कार्य को न त्याग कर अन्धेरे को नष्ट करने के निमित्त जिस सूर्य की रचना की वह सूर्य समस्त प्राणियोंको जानने वाले हैं । उन्हें सात घोड़े धारण करते हैं ।३। हे प्रकाशवान् सूर्य ! तुम संसार का पालन करने वाले अन्न के निमित्त रश्मियों को बढ़ाते हो । तुम ही उस काले रङ्ग की रात्रि को भगाते हो और अत्यन्त बोझ को भी ढो लेने वाले घोड़ो द्वारा गमन करते हो । सूर्य की गतिमान रश्मियाँ अन्तरिक्ष में स्थित

अन्धकार को दूर करने वाली हों ।४। प्रत्यक्ष प्राप्त सूर्य को कोई बाँध नहीं सकता। नीचे रहने वाले सूर्य की कोई हिंसा नहीं कर सकता। वे किस बल से ऊँचे उठते हुए चलते हैं? आकाश में खम्भे के समान हुए सूर्य स्वयं को आश्रय देते हैं। इसे कौन देखता है? ।५। (१३)

सूक्त १४

(ऋषि वामदेवः । देवता–अग्निलिङ्गोक्ता वा । छन्द–पंक्तिः त्रिष्टुप्)

प्रत्यग्निरुषसो जातवेदा अख्यद् देवो रोचमाना महोभिः ।
आ नासत्योरुगाया रथेनेमं यज्ञमुप नो यातमच्छ ॥१
ऊर्ध्वं केतुं सविता देवो अश्रेज्ज्योतिर्विश्वस्मै भुवनाय कृण्वन् ।
आप्रा द्यावापृथिवी अन्तरिक्षं वि सूर्यो रश्मिभिश्चेकितानः ॥२
आवहन्त्यरुणीर्ज्योतिषागान्मही चित्रा रश्मिभिश्चेकिताना ।
प्रबोधयन्ती सुविताय देव्युषा ईयते सुयुजा रथेन ॥३
आ वां वहिष्ठा इह ते वहन्तु रथा अश्वास उषसो व्युष्टौ ।
इमे हि वां मधुपेयाय सोमा अस्मिन् यज्ञे वृषणा मादयेथाम् ॥४
अनायतो अनिबद्धः कथायं न्यङ्ङुत्तानोऽव पद्यते न ।
कया याति स्वधया को ददर्श दिवः स्कम्भः समृतः पाति नाकम्
।५।१४

जैसे तेजवन्त सूर्य प्रकाशित हुआ उषा को प्रकाशवान् करता है, जैसे ही धनैश्वर्य के अधिपति अग्नि महान सम्पत्तियों से प्रकाशित होनेवाली अपनी किरणों को प्रकाशित करते हैं। अश्विद्वय! तुम गमनशील हो। रथ पर चढ़कर तुम दोनों इस यज्ञ को आकर प्राप्त होओ ।१। प्रकाशवान् सूर्य सब लोकों को प्रकाशित करके किरणों के आश्रय पर चलते हैं। सबके द्रष्टा सूर्य ने अपनी रश्मियों द्वारा आकाश, पृथिवी और और अन्तरिक्ष को पूर्ण किया है ।२। धनों को धारण करने वाली, महती ज्योतिर्मय अरुण वर्ण वाली उषा रश्मियोंके द्वारा तेज वाली हुई प्रकट होती है। वह उषा जीव-मात्रको चैतन्य करती हुई अपने सुशोभित रथ द्वारा कल्याण के निमित्त गमनशील होती है।३। हे अश्विनी कुमारो!

उषा के उदय होने पर वहन करने की अत्यन्त [क्षमता वाले गमनशील घोड़े तुमको इस यज्ञमें पहुँचावें। तुम दोनों कामनाओं की वर्षा करने वाले हो। यह सोम तुम्हारे निमित्त प्रस्तुत हैं, अतः इस यज्ञ में सोम पीकर पुष्टि को प्राप्त करी ।४। प्रत्यक्ष उपलब्ध सवितादेव को बाँधने में कोईभी समर्थ नहीं है। ये नीचे रहें तन भी उनकी हिंसा किया जाना सम्भव नहीं। वे किस दल से ऊँचे उठते हुए चलते हैं ? वे आकाश-स्तम्भ के समान स्वर्ग के आश्रयभूत हैं। इसे कौन देखता है ? अर्थात् अर्थात् इस तत्व का ज्ञाता कोई नहीं है ।५। (१४)

सूक्त १५

(ऋषि-वामदेवः। देवता-अग्निः, सोमकः, अश्विनौ। छन्द-गायत्री)

अग्निर्होता नो अध्वरे वाजी सन् परि णीयते। देवो देवेषु यज्ञियः१
परि त्रिविष्टयध्वरं यात्यग्नी रथीरिव। आ देवेषु प्रयो दधत्।२
परि वाजपतिः कविरग्निर्हव्यान्यक्रमीत्। दधद् रत्नानि दाशुषे।३
अयं यः सृञ्जयेपुरो दैववाते समिध्यते। द्युमा अमित्रदम्भनः ।।४
अस्य घा वीर ईवतो ऽग्नेरीशीत मर्त्यः।
तिग्मजम्भस्य भीलहुषः ।५।१५

यज्ञका सम्पादन करने वाले देवताओंमें यत्र के योग्य एवं प्रदीप्तिमान् अग्निदेव को हमारे यज्ञ में लाने वाले तेज चलने वाले घोड़े नित्य प्रति तीन वार गमनशील रथके समान चलते हैं ।१-२। अन्नोंको रक्षा करने वाले मेधावी अग्निदेव हविदाता यजमान को सुन्दर धन प्रदान करते हुए हविरन्नको सब ओर से व्याप्त करते हैं ।३। जो अग्नि देव वायु के सम्पर्क से अधिक प्रकाशित होते हुए शत्रुओं का नाश करते में समर्थ हैं, वह तेजस्वी अग्नि विद्वानों द्वारा प्राप्त होने योग्य हैं। वे शत्रु-विजय के कार्यसे सबसे आगे प्रदीप्तियुक्त होती हैं ।४। वीर स्तोता तेज वाले, शत्रुओं पर अस्त्र अस्त्रादि की वर्षा करने में समर्थ एवम् गमनशील अग्नि पर अपना अधिकार करने वाले हों ।५। (१५)

तमर्वन्तं न सानसिमरुषं न दिवः शिशुम्। मर्मृज्यन्ते दिवेदिवे६

बोधद्यन्मा हरिभ्यां कुमारः साहदेव्यः। अच्छा न हूत उदरम्।७
उत त्या यजता हरी कुमारात् साहदेव्यात्। प्रयता सद्य आ ददे८
एष वां देवावश्विना कुमारः साहदेव्यः। दीर्घायुरस्तु सोमकः।९
तं युवं देवावश्विना कुमारं साहदेव्यम्। दीर्घायुषं कृणोतन१०१६

वह हवन-अश्व के समान हविवाहक, आकाश के पुत्र के समान सूर्य की तरह प्रदीप्ति वाले तथा समान यजनीय अग्निदेव की यजमान -गण बारम्बार सेवा करें।६। "सहदेव" के पुत्र राजा 'सोमक' ने इन दोनों अश्वों को हमको देने का विचार प्रकट किया, तब हम उनके पास जाकर इव दोनों को लेकर चले आये।७। "सहदेव पुत्र" राजा "सोमक" के पास से उन परिचर्या योग्य सुन्दर घोड़ों को हमने उसी दिन ले लिया।८। हे अश्विनी कुमारो ! तुम दोनों उज्ज्वल तेज वाले हो 'सहदेव पुत्र' राजा 'सोमक'ने तुम दोनोको तृप्त किया है, 'सोमक' सों वर्ष की आयु प्राप्त करें।९। हे अश्विनीकुमारो ? तुम दोनों उज्ज्वल कान्ति वाले हो। 'सहदेव' के पुत्र राजा 'सोमक' को तुम दीर्घ आयु प्रदान करो।१०'

(१६)

सूक्त १६

(ऋषि–वामदेवः। देवता–इन्द्रः। छन्द–त्रिष्टुप्)

आ सत्यो यातु मघवाँ ऋजीषी द्रवन्त्वस्य हरय उप नः।
तस्मा इदन्धः सुषुमा सुदक्षमिहाभिपित्वं करते गृणानः॥१
अव स्य शूराध्वनो नान्ते ऽस्मिन् नो अद्य सवने मन्दध्यै।
शंसात्युक्थमुशनेव वेधाश्चिकितुषे असुर्याय मन्म॥२
कविर्न निण्यं विदथानि साधन् वृषा यत् सेकं विपिपानो अर्चात्।
दिव इत्था जीजनत् सप्त कारूनह्ना चिच्चक्रुर्वयुना गृणन्तः॥३
स्वर्यद् वेदि सुदृशीकमर्कैर्महि ज्योती रुरुचुर्यद्ध वस्तोः।
अन्धा तमांसि दुधिता विचक्षे नृभ्यश्चकार नृतमो अभिष्टौ।४
ववक्ष इन्द्रो अमितमृजीष्युभे आ पप्रौ रोदसी महित्वा।
अतश्चिदस्य महिमा वि रेच्यभि यो विश्वा भुवना बभूव।५।१७

सोम के स्वामी, सत्यसे युक्त इन्द्र हमारे पास आवें। इनके घोड़े हमारे पास आवें। हम यजमान इन्द्र के निमित्त ही अन्न के सार रूप सोमको सिद्ध करेंगे।वे इन्द्र हमारे द्वारा पूजित होकर हमारी कामना को सिद्ध करें।१। हे इन्द्र! तुम शत्रुओं को डराने वाले हो। दिन के इस मध्य सवन में, जैसे अपने निर्दिष्ट स्थान पर पहुँच कर अश्वों को विमुक्त किया जाता है, वैसे ही तुम हमको विमुक्त करो जिससे सवन में हम तुम्हें पुष्ट कर सकें। हे इन्द्र तुम शत्रुओं का नाश करने वाले एवं सर्वदाता हो। उशना के समान, यजमान गण तुम्हारे निमित्त सुन्दर स्तोत्र को कहते हैं।२। गूढ़ अर्थोंका सम्पादन करने वाले कवियों के समान, कामनाओं को वर्षा करने वाले इन्द्र कार्योंका सम्पादन करते हैं। जब सेवन के योग्य सोम को अधिक परिमाण में पीकर पुष्टि को प्राप्त करते हैं जब आकाश से सप्त रश्मियाँ मनुष्यों के लिए ज्ञानमयी होती हैं।३। जब प्रकाश स्यरूप आकाश रश्मियों के द्वारा उक्त प्रकार से दर्शनीय होता है, तब देवतागण तेज से दमकते हुए, उन स्वर्ग में निवास करते हैं। सबका नेतृत्व करने वाले सवितादेव ने प्रकट होकर मनुष्यों के देखने के लिए गम्भीर अँधेरे का नाशकर डाला।४। सोमवान् इन्द्र अत्यन्त महिमावान् हो जाते हैं, वे अपनी महिमा से आकाश और पृथिवी दोनों को सम्पन्न करते हैं। इन्द्र ने सब लोकों को व्याप्त किया है, क्योंकि वे सब लोकों से महान् हैं।५। (१७)

विश्वानि शक्रो नर्याणि विद्वानपो रिरेच सखिभिर्निकामैः।
अश्मानं चिद् ये बिभिदुर्वचोभिर्व्रजं गोमन्तमुशिजो वि वव्रुः॥६
अपो वृत्रं वव्रिवांसं पराहन् प्रावत् ते वज्रं पृथिवी सचेताः।
प्रार्णांसि समुद्रियाण्यैनोः पतिर्भवञ्छवसा शूर धृष्णो॥७
अपो यदद्रिं पुरुहूत दर्दराविर्भुवत् सरमा पूर्व्यं ते।
स नो नेता वाजमा दर्षि भूरिं गोत्रा रुजन्नङ्गिरोभिर्गृणानः॥८
अच्छा कविं नृमणो गा अभिष्टौ स्वर्षाता मघवन्नाधमानम्।
ऊतिभिस्तमिषणो द्युम्नहूतौ नि मायावानब्रह्मा दस्युरर्त॥९

आ दस्युघ्ना मनसा याह्यस्तं भुवत् ते कुत्सः सख्ये निकामः।
स्वे योनो नि षदतं सरूपा वि वां चिकित्सदृतचिद्ध नारी।१०।१८

वे इन्द्र मनुष्यों के लिए हितकारक सभी कार्योंको जानते हुए जल वर्षा आदि करते हैं। उन्होंने कामनायुक्त मित्र-भाव वाले मरुद्गण के लिये जल वर्षा की थी। जिन मरुद्गण ने वाणी की ध्वनि से ही पर्वतों को चीर डाला, उन्होंने इन्द्र की कामना करते हुए गौओं से पूर्ण गोष्ठ को खोल दिया।६। हे इन्द्र! तुम्हारा वज्र लोकोंकी रक्षा करने वाला है। उसने जलों के आवरण रूप मेघ को गतिमान किया। यह चैतन्य पृथिवी तुमसे पूर्ण हुई है, तुम अत्यन्त वीर एवं घर्षणशील हो। हे इन्द्र! तुम अपनी ही शक्ति से लोकों का पालन करते हुए सामुद्रिक और आकाशस्थ जल प्रेरित करो।७। हे इन्द्र! तुम बहुतों द्वारा बुलाये गये हो। जब तुमने वर्षा वाले जल को देखकर मेघ को चीरा था जब तुम्हारे निमित्त "सरमा" ने पणियों द्वारा चुराई गई गौओंका रहस्योद्-घाटन किया था। तुम अङ्गिराओं द्वारा स्तुत्य होकर हमको अन्न देते और हमारा कल्याण करते हो।८। धनेश्वरयुक्त इन्द्र! मनुष्य तुम्हारा आदर करते हैं। धन देने के निमित्त "कुत्स" के सामने गये थे। पुकारने पर तुमने शत्रुओं के उपद्रवों से उनको बचा कर आश्रय किया था। अपनी सुमति से कपटी ऋत्विकों के कार्यों को तुमने जान लिया और "कुत्स" के धन की इच्छा करने वाले शत्रु को नष्ट कर डाला।९। हे इन्द्र तुमने शत्रुओं के मारने का निश्चय कर लिया और 'कुत्स" के घर जा पहुँचे। "कुत्स" भी तुम्हारी मित्रता के लिये आतुर था। अब तुम दोनों अपने स्थान पर अवस्थित हुए। सत्य को देखने वाली तुम्हारी पत्नी शची तुम दोनों का एक-सा रूप देखकर अत्यन्त संशयमें पड़ गई।१०।

(१८)

यासि कुत्सेन सरथमवस्युस्तोदो वातस्य हर्योरीशानः।
ऋज्रा वाजं न गध्यं युयूषन् कविर्यदहन् पार्याय भूषात्॥११
कुत्साय शुष्णमशुषं नि बर्हीः प्रपित्वे अह्नः कुयवं सहस्रा।

सक्रो दस्यून् प्र मृण कुत्स्येन प्र सूरश्चक्रं वृहताद भीके ।१२
त्वं पिप्रुं मृगयं शूशुवांसमृजिश्वने वैदथिनाय रन्धीः ।
पञ्चाशत् कृष्णा नि वपः सहस्रा ऽत्कं न पुरो जरिमा वि दर्दः१३
सूर उपाके तन्वं दधानो वि यत् ते चेत्यमृतस्यवपः ।
मृगो न हस्ती तविषीमुषाणः सिंहो न भीम आयुधानि बिभ्रत्१४
इन्द्रं कामा वसूयन्तो अग्मन् त्स्वर्मीलहे न सवने चकानाः ।
श्रवस्यवः शशमानास उक्थैरोको न रण्वा सुदृशीव पुष्टिः।१५।१६

जब ज्ञानी 'कुत्स'ग्रहण करने योग्य अन्नके समान शीघ्रगामी दोनों घोड़ों को अपने रथको जोड़कर संकटावस्था से छुटकारा पाने में समर्थ हुए, तब हे इन्द्र ! तुमने उसके पथ पर उसकी रक्षा करने के लिए एक साथ गमन किया। तुम शत्रुओंका नाश करने वाले वायुके समान गति वाले अश्वों के स्वामी हो।११। हे इन्द्र ! तुमने कुत्सके कारण शुष्ण को मार डालो। दिन के आरम्भ में तुमने कुयव नामक दैत्य का वध किया उसी समय तुमने सूर्य के चक्र को भी तोड़ दिया।१२। हे इन्द्र ! तुमने "पिप्रू" और "प्रवृक" नामक असुरों का वध किया। तुमने वैदथि के पुत्र "ऋजिश्वा" को बनाया और पचास सहस्र काले रङ्ग वाले दैत्यों को मार डाला। जैसे बुढ़ापा रूप का नाश कर देता है, वैसे ही तुमने शम्बर के नगरों का नाश कर डाला।१३। हे इन्द्र तुम अविनाशी हो। तुम जब सूर्य के समीप प्रकट हो तब तुम्हारा रूप अत्यन्त दीप्तिमान होता है। सूर्य के सामने सभी फीके पड़ जाते हैं, परन्तु इन्द्र का रूप अधिक तेजोमय होता जाता है। हे इन्द्र ! तुम मृगया के समान शत्रुओं को जलाते और शस्त्र धारण करते हो तथा उस समय सिंह के समान विकराल हो जाते हो।१४। दैत्यों द्वारा उत्पन्न भयको निवारण करने के निमित्त इन्द्र की आश्रय कामना वाले एवं धन की अभिलाषा करने वाले युद्ध के समान यज्ञ में इन्द्र से अन्न माँगते हैं। वे स्तोत्रों द्वारा इन्द्र की स्तुति करते हुए उनके समीप जाते हैं। उस समय वे

इन्द्र उनके लिए आश्रय स्थान के समान रक्षक और रमणीय एवं दर्श-
नीय धन के समान ऐश्वर्य सम्पन्न होते हैं।१५। (१६)

तमिद् व इन्द्रं सुहवं हुवेम यस्ता चकार नर्या पुरूणि ।
यो मावते जरित्रे गध्यं चिन्मक्षू वाजं भरति स्पार्हराधाः ॥१६
तिग्मा यदन्तरशनिः पताति कस्मिश्चिच्छूर मुहुके जनानाम् ।
घोरा यदर्य समृतिर्भवात्यध स्मा नस्तन्वो बोधि गोपाः ॥१७
भुवोऽविता वामदेवस्य धीनां भुवः सखावृको वाजसाती ।
त्वामनु प्रमतिमा जगन्मोरुशंसो जरित्रे विश्वध स्याः ।१८
एभिर्नृभिरिन्द्र त्वायुभिष्ट्वा मघवद्भिर्मघवन् विश्व आजौ ।
द्यावो न द्युम्नैरभि सन्तो अर्यः क्षपो मदेम शरदश्च पूर्वीः ॥१९
एवेदिन्द्राय वृषभाय वृष्णे ब्रह्माकर्म भृगवो न रथम् ।
नू चिद् यथा नः सख्या वियोषदसन्न उग्रोऽविता तनूपाः ॥२०
नू ष्टुत इन्द्र नू गृणान इषं जरित्रे नद्यो न पीपेः ।
अकारि ते हरिवो ब्रह्म नव्यं धिया स्याम रथ्यः सदासाः ।२१।२०

इन्द्रने मनुष्यों के कल्याणके निमित्त अनेकों प्रसिद्ध कार्य किए हैं। वे इन्द्र धनैश्वर्य से युक्त एवं कामना के योग्य हैं। वे हमारे समान साधक के ग्रहण करने योग्य अन्न को शीघ्र ले आते हैं। हे मनुष्यों! तुम्हारे निमित्त हम साधकगण उन इन्द्र का सुन्दर आह्वान करते हैं।१६। हे इन्द्र! तुम वीरहो। मनुष्यों द्वारा होने वाले युद्धमें हमारे बीच तीक्ष्ण वज्रपात हो अथवा शत्रुओंसे हमारा अत्यन्त घोर संग्रामहो तब तुम हमारे शरीरको अपने नियन्त्रण में रखते हुए हर प्रकार से हमारी रक्षा करना।१७। हे इन्द्र! तुम वामदेव द्वारा किये जाने वाले यज्ञ-कार्य की रक्षा करो। तुम किसीके द्वारा हिंसित नहीं किये जा सकते। तुम संग्राम में हमारे प्रति सहृदयता का व्यवहार करो। तुम अत्यन्त सुन्दर मति वाले हो। तुम हमारे समीप आओ। हे इन्द्र! तुम सदा स्तोताओं की प्रशंसा करने वाले बनो।१८। हे इन्द्र! तुम ऐश्वर्यवान्

हो । हम संग्रामों में तुम्हारी कामना करते हैं । जैसे धनवान् अपने धन से दमकता है,वैसे हमभी धन एवं पुत्र-पौत्रादि कुटुम्बियोंके साथ दीप्ति-युक्त हों । हम अपने शत्रुओं को हराकर रातों और वर्षों में प्रसन्नतासे तुम्हारा स्तवन करते रहें ।१९। हम वही कार्य करेंगे, जिससे इन्द्र के साथ हुई हमारी मैत्री का विच्छेद न हो, और शरीरों की रक्षा करने वाले तेजस्वी इन्द्र हमारा पालन करते रहें । अनुभवी रथ निर्माता जैसे सुन्दर रथ बनाता है, वैसे ही हम भी कामनाओं की वर्षा करने वाले नित्य युवा इन्द्र के निमित्त सुन्दर स्तोत्रों को रचते हैं ।२०। हे इन्द्र ! तुम पुरातन काल में ऋषियों द्वारा पूजित होकर और अब हमारे द्वारा नमस्कृत होकर, जल द्वारा नदी पूर्ण करने के समान स्तुति करने के वालों के लिए अन्न धनकी वृद्धि करते हो । हम तुम्हारे निमित्त नवीन स्तोत्र बनाते हैं, जिससे रथादि से युक्त हुए स्तुति वचनों द्वारा तुम्हें सदा प्रसन्न करते रहें ।२१।

(२०)

सूक्त १७

(ऋषि—वामदेवः । देवता—इन्द्रः । छन्द—त्रिष्टुप्, एकपदा विराट्)

त्वं महाँ इन्द्र तुभ्यं ह क्षा अनु क्षत्रं मंहना मन्यत द्यौः ।
त्वं वृत्रं शवसा जघन्वान् त्सृजः सिन्धूंरहिना जग्रसानान् ॥१
तव त्विषो जनिमन् रेजत द्यौ रेजद् भूमिर्भियस स्वस्य मन्योः ।
ऋषायन्त सुभ्यः पर्वतास आर्दन् धन्वानि सरयन्त आपः ॥२
भिनद् गिरिं शवसा वज्रमिष्णन्नाविष्कृण्वानः सहसान ओजः ।
वधीद् वृत्रं वज्रेण मन्दसानः सरन्नापो जवसा हतवृष्णीः ॥३
सुवीरस्ते जनिता मन्यत द्योरिन्द्रस्य कर्ता स्वपस्तमो भूत् ।
य ईं जजान स्वर्यं सुवज्रमनपच्युतं सदसो न भूम ॥४
य एक इच्च्यावयति प्र भूमा राजा कृष्टीनां पुरुहूत इन्द्रः ।
सत्यमेनमनु विश्वे मदन्ति रातिं देवस्य गृणतो मघोनः ।५।२१

हे इन्द्र ! तुम महान हो । महती पृथिवीने तुम्हारी शक्ति का सम-

र्थन किया, और आकाशने तुम्हारे बलका अनुमोदन किया। तुमने अपने बलसे लोकों को ढक देने वाले वृत्रासुर को मारा। वृत्र ने जिन नदियों को वशीभूत किया, तुमने उनको मुक्त कर दिया ।१। हे इन्द्र ! तुम अत्यन्त तेजस्वी हो। तुम्हारे प्राकट्य पर आकाश तुम्हारे क्रोध के भय से काँप गया। उस समय पृथिवीभी काँप गई और मेघ-समूहको तुमने बाँध लिया। तुम्हारी प्रेरणा से प्राणियों की प्यास मिटने के निमित्त उन मेघों ने मरुभूमि में जल-वर्षा की ।२। शत्रुओं को हराने वाले इन्द्र ने अपने तेज के प्रकाश और शक्ति द्वारा वज्र को चलाकर पर्वतो को चीर डाला। सोम पीकर पुष्ट होने के पश्चात् इन्द्रने अपने वज्र से वृत्र को मार दिया। उस वृत्र के नष्ट होने पर जल निरावरण ही वेग से गिरने लगा ।३। तुम अत्यन्त पूजा के योग्य वज्र से युक्त, दिव्य-स्थानके अधिपति एवं अविनाशी हो। तुम अत्यन्त महिमा वाले हो,जिन तेजस्वी प्रजापति ने तुम्हें प्रकट किया था, वे अपने को सुन्दर पुत्र वाले मानते थे। इन्द्रके जनक प्रजापति का कर्म अत्यन्त श्रेष्ठ और प्रशंसित था ।४। मनुष्यमात्र के स्वामी, बहुतों द्वारा बुलाये गये, देवताओं में मुख्य इन्द्र शत्रु द्वारा उत्पन्न किये गये भयको मिटाते हैं। वे ऐश्वर्य और प्रदीप्तिमान् हैं। उन सखारूप इन्द्र के लिए सभी यजमान स्तोत्रों द्वारा नमस्कार करते है ।५। (२१)

सत्रा सामा अभवन्नस्य विश्वे सत्रा मदासो बृहतो मदिष्ठाः।
सत्राभत्रो वसुपतिर्वसूनां दत्रो विश्वा अधिथा इन्द्र कृष्टीः ॥६
त्वमध प्रथमं जायमानो ऽमे विश्वा अधिथा इन्द्र कृष्टीः।
त्वं प्रति प्रवत आशयानमहिं वज्रेण मघवन् वि वृश्चः ॥७
सत्राहणं दाधृषिं तुम्रमिन्द्रं महामपारं वृषभं सुवज्रम्।
हन्ता योवृत्रं सनितोत वाजं दाता मघानि मघवा सुराधाः ॥८
अयं वृतश्चातयते समीचीर्य आजिषु मघवा शृण्व एकः।
अयं वाजं भरति यं भरति यं सनोत्यस्य प्रियासः सख्ये स्याम ॥९
अयं शृण्वे अध जयन्नुत घ्नन्नयमुत प्र कृणुते युधा गाः।

यदा सत्यं कृणुते मन्युमिन्द्रो विश्वं दृलहं भयत एजदस्मात्१०।२२

सभी सोम इन्द्रके निमित्त उत्पन्न होते हैं। यह सोम शक्ति उत्पन्न करने वाले हैं, और उन महान इन्द्र को प्रसन्नता देते हैं। हे इन्द्र! ऐश्वर्यवान सभी प्रजाओं का पालन-पोषण करते हो।६। हे धनैश्वर्य सम्पन्न इन्द्र! तुमने उत्पन्न होते ही वृत्र के भय से बचाने के लिए प्रजाओं का रक्षण किया। तुमने सब प्रदेशों को जल-युक्त कर देने के उद्देश्य से जलको रोकने वाले शत्रु को छिन्न-भिन्न कर डाला।७। बहुत से शत्रुओं को मारने वाले, विकराल शत्रुओंको प्रेरणा देने वाले, महान् एवं अविनाशी इन्द्र का हम स्तवन करते हैं, वे इन्द्र अभीष्टों की वर्षा करने वाले और सुन्दर वज्र वाले हैं। उन्होंने वृत्र का संहार किया था। वे अन्न प्रदान करने वाले उज्ज्वल वनोंके अधिपति हैं। सदा धन प्रदान करते रहते हैं। उन इन्द्र का हम स्तवन करते हैं।८। जो इन्द्र अत्यन्त धनवान एवं युद्ध में अद्वितीय वीर सुने गये हैं, वे सुसङ्गत और विशाल शत्रु सेना का संहार करने में समर्थ हैं। वे जिस अन्न-धन को धारण करते हैं, वही यजमान को प्रदान करते हैं। इन इन्द्र के साथ हमारा सख्य भाव अटूट रहे।९। वे इन्द्र शत्रुओं से पशुओं को छीन लेते हैं। जब ये क्रोधित होते हैं तब यह स्थावर-जङ्गम-रूप अखिल विश्व इन्द्र के भय से नितान्त भीत हो उठता है।१०।   (२२)

समिन्द्रो गा अजयत् सं हिरण्या समश्विवा मघवा यो ह पूर्वीः।
एभिर्नृभिर्नृतमो अस्य शाकै रायो विभक्ता संभरश्च वस्वः ॥११
कियत् स्विदिन्द्रो अध्येति मातुः कियत् पितुर्जनितुर्यो जजान।
यो अस्य शुष्मं मुहुकैरियर्ति वातो न जूतः स्तनयद्भिरभ्रैः ॥१२
क्षियन्तं त्वमक्षियन्तं कृणोतीयर्ति रेणुं मघवा समोहम्।
विभञ्जनुरशनिमाँ इव द्यौरुत स्तोतारं मघवा वसौ धात् ॥१३
अयं चक्रमिषणत् सूर्यस्य न्येतशं रीरमत् ससृमाणम्।
आ कृष्ण ईं जुहुराणो जिघर्ति त्वचो बुध्ने रजसो अस्य योनौ१४
असिक्न्यां यजमानो न होता।१५।२३

जिन ऐश्वर्यशाली इन्द्रने दैत्योंपर विजय प्राप्तकी थी तथा शत्रुओं के महान धन पर अधिकार किया था, जिन इन्द्रने शत्रुओं को जीतकर उनके घोड़ों को छीन लिया था, वे सर्व-समर्थ इन्द्र सब में अग्रणी और स्तुति करने वालों से पूजित होकर पशुओं को बाँटने और धनादि की रक्षा करने वाले हों।११। इन्द्रने अपने माता-पिता से कितना बलप्राप्त किया? जिन इन्द्र ने अपने पिता प्रजापति के पास से इस संसार को उत्पन्न कर संसार को शक्ति दी थी, उन इन्द्र का गर्जना करने वाले मेघ से प्रेरित वायु के समान आह्वान किया जाता है।१२। इन्द्र धन-वान हैं, वे निर्धन मनुष्य को धन से पूर्ण करते हैं। अन्तरिक्ष के समान दृढ़ वज्रयुक्त शत्रु संहारक इन्द्र सब पापों को मिटाते हैं, और स्तुति करने वाले को धन देते हैं।१३। इन्द्र ने सूर्य के शस्त्र को प्रेरणा की तथा संग्रामोद्यत एतश को निवारण किया, टेढ़ी गति और काले रङ्ग वाले मेघ ने तेज आश्रय रूप और जल पूर्ण अन्तरिक्ष में वास करने वाले इन्द्र का अभिषेक किया था।१४। जैसे यजमान अंधेरी रात में भी इन्द्र का आह्वान करता है, वैसे ही इन्द्र प्रजाओं को रात्रि में भी ऐश्वर्यादि प्रदान करते हैं।१५। (२३)

गव्यन्त इन्द्रं सख्याय विप्रा अश्वायन्तो वृषणं वाजयन्तः।
जनीयन्तो जनिदामक्षितोतिमा च्यावयामोऽवते न कोशम् ॥१६
त्राता नो वोधि ददृशान आपिरभिख्याता मर्डिता सोम्यानाम्।
सखा पिता पितृतमः पितॄणां कर्तेमु लोकमुशते वयोधाः ॥१७
सखीयतामविता बोधि सखा गृणान इन्द्र स्तुवते वयो धाः।
वयं ह्या ते चकृमा सबाध आभिः शमीभिर्महयन्त इन्द्र ॥१८
स्तुत इन्द्रो मघवा यद्ध वृत्रा भूरीण्येको अप्रतीनि हन्ति।
अस्य प्रियो जरिता यस्य शर्मन्नकिर्देवा वारयन्ते न मर्ताः ॥१९
एवा न इन्द्रो मघवा विरप्शी करत् सत्या चर्षणीधृदनर्वा।
त्वं राजा जनुषां धेह्यस्मे अधि श्रवो माहिनं यज्जरित्रे ॥२०
नू ष्टुत इन्द्र नू गृणान इषं जरित्रे नद्यो न पीपेः।

अकारि ते हरिवो ब्रह्म नव्यं धिया स्याम रथ्यः सदासाः ।२१।२४

हम बुद्धिमान स्तोता गौ, अन्न और सुन्दर सन्तान उत्पन्न करने वाली स्त्री की अभिलाषा करते हैं। हम अभीष्ट पूर्ण करने वाले, सन्तान-दात्री भार्याके देने वाले, तथा सदा अक्षय रक्षा करने वाले इन्द्र के मित्र-भाव को उसी प्रकार चाहते हैं जिस प्रकार कूप से जल निकालने की इच्छा करने वाले व्यक्ति जल पात्र को प्राप्त करना चाहते हैं। ।१६। हे इन्द्र ! तुम हमारे रक्षक, देखने वाले, बन्धु, उपदेशकर्त्ता एवं शोभन गुणों से युक्त हो, तुम हमारे पूर्व पुरुषों के भी पिता तुल्य पूज्य, सन्तानों को सुख देने वाले मित्र, ज्ञान और बल देने बाले हो,तुम उत्तम लोकों की अभिलाषा करने वालेको श्रेष्ठ पद देतेहो।१७। हे इन्द्र ! हम तुम्हारा सत्य भाव चाहते हैं। तुम हमारे पालक बनो। तुम्हारी पूजा की जाती है, तुम हमारे मित्र बनो। स्तुति करने वाले यजमानों को अन्न दो। हे इन्द्र ! हमारे श्रेष्ठ कार्यों में विघ्न उपस्थित होने पर हम तुम्हें ही याद करते हैं। तुम हमारे आह्वान पर ध्यान देते हुए हमको जानो ।१८। जब हम उन इन्द्र की स्तुति करते हैं, तब वे अकेले ही बहुतसे दैत्यों को नष्ट कर डालते हैं। उनको विद्वान स्तोता अत्यन्त प्रिय है। उनके शरणमें रहने वालों को देवता या मनुष्य कोई भी नहीं रोक सकता ।१९। हे इन्द्र अत्यन्त धनवान, विधि शब्द वाले, सब प्रजाओं के रक्षक तथा शत्रुओं से शून्य हैं। ने हमारी इस प्रकार की स्तुति को सुनकर हमारी महत्व पूर्ण श्रेष्ठ अभिलाषाओं को पूर्ण करें। हे इन्द्र ! तुम सभी उत्पन्न प्राणियों के स्वामी हो। जिस महिमा वाले सुन्दर यश को स्तुति करने वाला प्राप्त करता है, वह अत्यन्त यश हम को प्रदान करो ।२०। हे इन्द्र ! तुम पूर्वकाल में हुए ऋषियों के द्वारा पूजित हुए हमारे द्वारा भी स्तुत्य होकर, जल द्वारा नदी को पूर्ण करने के समान, अन्न को बढ़ाते हो। हम तुम्हारे निमित्त नवीन स्तोत्र रचते हैं, जिससे हम रथ युक्त हुए सदा तुम्हारी स्तुति एवं पूजा करते रहें ।२१।

(२४)

सूक्त १८

(ऋषि–वामदेवः। देवता इन्द्रादिती। छन्द–त्रिष्टुप्)

जयं पन्था अनुवित्तः पुराणो यतो देवा उदजायन्त विश्वे।
अतश्चिदा जनिषीष्ट प्रवृद्धो मा मातरममुया पत्तवे कः ॥१
नाहमतो निरया दुर्गहैतत् तिरश्चता पार्श्वान्निर्गमाणि।
बहूनि मे अकृता कर्त्वानि युध्यै त्वेन सं त्वेन पृच्छै ॥२
परायतीं मातरमन्वचष्ट न नानु गान्यनु नू गमानि।
त्वष्टुर्गृहे अपिबत् सोममिन्द्रः शतधन्यं चम्वोः सुतस्य ॥३
किं स ऋधक् कृणवद् यं सहस्रं मासो जभार शरदश्च पूर्वीः।
नही न्वस्य प्रतिमानमस्त्यन्तर्जातेषूत ये जनित्वाः ॥४
अवद्यमिव मन्यमाना गुहाकरिन्द्रं माता वीर्येणा न्यृष्टम्।
अथोदस्थात् स्वयमत्कं वसान आ रोदसी अपृणाज्जायमानः॥५।२५

यह मार्ग अनादि काल से चलता आ रहा है, जिसके द्वारा विभिन्न भोगों ओर एक दूसरेको चाहने वाले स्त्री पुरुष,ज्ञानीजन आदि उत्पन्न होते हुए प्रवृद्ध होते हैं। उच्च पद वाले समर्थ व्यक्ति भी इसी परम्परागत मार्ग से ही उत्पन्न होते हैं। हे मनुष्य ! अपनी जनयित्री माताको अपमानित करने की चेष्टा न करे।१। हम पूर्वोक्त योनि मार्ग से बच नहीं सकते। टेढ़े मार्ग से पशु पक्षी के रूप से जन्म लेकर भी जीवन बड़े कष्ट से व्यतीत होता है। मैं चाहता हूँ कि इस फंदे से निकल जाऊँ। मुझे बहुत कष्ट न करने पड़े। परस्पर का विवाद सब झमेला मात्र है। हमको संसार मार्ग के किनारे लगने का ही यत्न करना चाहिए।२। जैसे अपनी माता के मरने पर कोई मनुष्य मोहवश कहता है कि मैं भी इसके पीछे ही चला जाऊँ, अथवा न जाऊँ। कालोपरांत वह ज्ञान, धैर्य आदि से शांत होकर पिता के घर में पुत्र बनकर रहता हुआ जीवन का उपभोग करता है। उसी प्रकार विवेकी होकर त्वष्टा के घर सोमका पान करता है।३। अदिति ने उस बलशाली इन्द्र को मासों और वर्षों तक धारण किया था। उस महान इन्द्र ने अनेक विशिष्ट कार्य किए। उनकी समानता उत्पन्न हुए अथवा

आगे उत्पन्न होने वाले में से कोई नहीं कर सकता ।४। अदिति ने उन इन्द्र को गति देने में समर्थ मानते हुए अदृश्य रूप से धारण किया और फिर वह इन्द्र अपने ही सामर्थ्य में उत्पन्न तेज को धारण करते हुए सर्वोच्च बने और आकाश पृथिवी दोनोंको परिपूर्ण किया ।५। (२५)

एता अर्षन्त्यललाभवन्तीर्ऋतावरीरिव संक्रोशमानाः ।
एता वि पृच्छ किमिदं भनन्ति कमापो अद्रिं परिधिं रुजन्ति ॥६
किमु ष्विदस्मै निविदो भनन्तेन्द्रस्यावद्यं दिधिषन्त आपः ।
ममैतान् पुत्रो महता वधेन वृत्रं जघन्वाँ असृजद् वि सिन्धून्॥७
ममच्चन त्वा युवतिः परास ममच्चन त्वा कुषवा जगार ।
ममच्चिदापः शिशवे ममृड्यु र्ममच्चिदिन्द्रः सहसोदतिष्ठत् ॥८
ममच्चन ते मघवन् व्यंसो निविविध्वाँ अप हनू जघान ।
अधा निविद्ध उत्तरो बभूवाञ्छिरो दासस्य सं पिणग्वधेन ॥९
गृष्टिः ससूव स्थविरं तवागामनाधृष्यं वृषभ तुम्रमिन्द्रम् ।
अरीलहं वत्सं चरथाय माता स्वयं गातुं तन्व इच्छमानम् ॥१०
उत माता महिषमन्ववेनदमी त्वा जहति पुत्र देवाः ।
अथाब्रवीद् वृत्रमिन्द्रो हनिष्यन् त्सखे विष्णो वितरं वि क्रमस्व११
कस्ते मातरं विधवामचक्रच्छयुं कस्त्वामजिघां सच्चरन्तम् ।
कस्ते देवो अधि मार्डीक आसीद् यत् प्राक्षिणाः पितरं पादगृह्य१२
अवर्त्या शुन आन्त्राणि पेचे न देवेषु विविदे मर्डितारम् ।
अपश्यं जायाममहीयमानामधा मे श्येनो मध्वा जभार ।१३।२६

अव्यक्त ध्वनि करती जल से पूर्ण नदियाँ इन्द्र के महत्व को प्रकट करती हुई बहती हैं। हे विज्ञ ! यह नदियाँ क्या कहती हैं, यह इनसे पूछो। क्या यह इन्द्र का यश गान करती हैं ? इन्द्र का यश गान रोकने वाले मेघ को चीर कर जल-वर्षा की थी।।६। वृत्रके नष्ट करने पर इन्द्र को ब्रह्म-हत्या का जो पाप लगा, उस सम्बन्धमे वेद वाणी क्या कहती है ? इन्द्र के उस पाप को जल ने फेन के रूपमें धारण किया। इन्द्र ने अपने महान वज्र द्वारा वृत्र को विदीर्ण कर इन नदियों की

प्रवाहित किया ।७। हे इन्द्र ! अत्यन्त हर्ष वाली युवती अदिति ने मततामय होकर तुम्हें जन्म दिया। "कुषवा" नाम्नी राक्षसी ने तुम्हें अपना ग्रास बनाने की चेष्टा की। तुमको उत्पन्न होते ही जलों ने सुख दिया। तुम अपनी सामर्थ्य से सूतिका गृह में राक्षसी का वध करने को उद्यत हुए ।८। हे ऐश्वर्य के स्वामी इन्द्र ! मद-युक्त होकर "व्यंस" नामक दैत्य ने तुम्हारी ठोड़ी के अर्ध भाग को आघात पहुँचाया, तब तुमने बल से व्यंस के सिर को वज्र से अच्छी प्रकार कुचल डाला ।९। जैसे गौ बलवान बछड़े को उत्पन्न करती है वैसे ही इन्द्र की माता अदिति अपनी इच्छा पर चलने वाले, सर्वशक्ति सम्पन्न सर्व-विजेता इन्द्र को जन्म देती है। वह इन्द्र सबके प्रेरक, अविनाशी, सर्व-व्याप्त अभीष्टों की वर्षा करने वाले एवं कर्मों का फल देने में समर्थ है ।१०। माता अदिति महान ऐश्वर्य वाले तुम इन्द्रकी कामना करती हुई कहती हैकि हे पुत्र इन्द्र ! यह सब विजयाभिलाषी वीर तुम्हें प्राप्त होते हैं। तब इन्द्र ने कहा हे विष्णो ! तुम वृत्र को मारने की इच्छा करते हुए अत्यन्त पराक्रमी बनो ।११। हे इन्द्र ! तुम्हारा कौन सा शत्रु पैरों को पकड़कर तुम्हारे पिता की हत्या करके तुम्हारी माता को विधवा बना सकता है ? तुमको सोते या चलते में कौन मार सकता है ? तुम्हारे सिवाय ऐसा कौन सा देवता है, जो उच्च पद पा सकता है।१२। हमने दरिद्रता वश कुत्ते की अंतड़ियोंको भी पकाया तब हमारे लिए देवताओं में इन्द्र के सिवाय और कोई भी सुख देने वाला नहीं हुआ। जब हमने अपनी भार्या को अपमानित होते हुए देखा. तब इन्द्रने ही हमारी रक्षा की और मधुर रस प्रदान किया ।१३। (२६)

॥ इति पञ्चमोऽध्यायः समाप्तः ॥

सूक्त १९

(ऋषि—वामदेवः। देवता—इन्द्रः। छन्द—त्रिष्टुप्)

एवा त्वामिन्द्र वज्रिन्नत्र विश्वे देवासः सुहवास ऊमाः।

महामुभे रोदसी वृद्धमृष्वं निरेकमिद् वृणते वृत्रहत्ये ॥१
अवासृजन्त जिव्रयो न देवा भुवः सम्रालिन्द्र सत्ययोनिः ।
अहन्नहिं परिशयानमर्णः प्र वर्तनीररदो विश्वधेनाः ॥२
अतृप्णुवन्तं वियतमबुध्यमबुध्यमानं सुषुपाणमिन्द्र ।
सप्त प्रति प्रवत आशयानमहिं वज्रेण वि रिणा अपर्वन् ॥३
अक्षोदयच्छवसा क्षाम बुध्नं व र्ण वातस्तविषीभिरिन्द्रः ।
दृलहान्यौभ्नादुशमान ओजोऽवाभिनत् ककुभः पर्वतानाम् ॥४
अभि प्र दद्रुर्जनयो न गर्भं रथा इव प्र ययुः साकमद्रयः ।
अतर्पयो विसृत उब्ज ऊर्मीन् त्वं वृताँ अरिणा इन्द्र सिन्धून्।५।१

हे वज्रिन् ! इस यज्ञ में सुन्दर आह्वान वाले तथा रक्षा सामर्थ्य वाले सभी देवता और आकाश पृथिवी वृत्र नाश के निमित्त केवल तुमको ही भेजते हैं। तुम स्तुति योग्य एवं गुणों के उत्कर्ष से बढ़े हुए तथा दर्शनीय हो ।१। हे इन्द्र ! जैसे वृद्ध पिता अपने पुत्र को प्रेरणा देता है, वैसे ही देवतागण तुम्हें राक्षसों का संहार करने की प्रेरणा देते हैं। तुम सत्य के विकसित रूप हो। तुम समस्त भुवनों के स्वामी हो। जल को लक्ष्य कर सोते वृत्र का तुमने संहार किया । सबको तृप्त करने वाली नदियों को तुमने बनाया था ।२। हे इन्द्र ! तुमने अतृप्त इच्छा वाले, अज्ञानी, निर्बल, बुरे विचार वाले, सुप्त एवम् शांत जल ढक लेने वाले, सोते हुए वृत्र का बज्र द्वारा वध किया ।३। वायु अपने बल से जैसे जल को क्षुब्ध करती है,वैसे ही परम ऐश्वर्य से युक्त इन्द्र अपने वल से आकाश को सूक्ष्म तेजसे परिपूर्ण कर जल को छिन्न-भिन्न करते हैं। वे जल की कामना करने वाले इन्द्र मेघों और पर्वत को तोड़ डालते हैं ।४। हे इन्द्र ! जैसे माताएँ पुत्र के पास जाती हैं वैसे ही मरुत तुम्हारे पास गये थे। वैसे ही वृत्र वध के निमित्त तुम्हारे निकट रथ पहुँचा था। तुमने नदियों को जल से परिपूर्ण कर डाला। मेघ को विदीर्ण कर वृत्र द्वारा रोके हुए जलको गिरा दिया ।५। (१)

त्वं महीमवनिं विश्वधेनां तुर्वीतये वय्याय क्षरन्तीम् ।

अरमयो नमसैजदर्णः सुतरणाँ अकृणोरिन्द्र सिन्धून् ॥६
प्राग्रुवो नमन्वो न वक्रा ध्वस्रा अपिन्वद् युवतीर्ऋतज्ञाः।
धन्वान्यज्राँ अपृणक् तृषाणाँ अधोगिन्द्रः स्तर्यो दंसुपत्नीः ॥७
पूर्वीरुषसः शरदश्च गूर्ता वृत्रं जघन्वाँ असृजद् वि सिन्धून्।
परिष्ठिता अतृणद् बद्बधानाः सीरा इन्द्रः स्रवितवे पृथिव्या ॥८
वम्रीभिः पुत्रमग्रुवो अदानं निवेशनाद्धरिव आ जभर्थ।
व्यन्धो अख्यदहिमाददानो निर्भूदुखच्छित् समरन्त पर्व ॥९
प्र ते पूर्वाणि करणानि विप्राऽऽविद्वाँ आ विदुषे करांसि।
यथायथा वृष्ण्यानि स्वगूर्ताऽपांसि राजन् नर्याविवेषीः ॥१०
नू ष्टुत इन्द्र नू गृणान इषं जरित्रे नद्यो न पीपेः।

अकारि ते हरिवो ब्रह्म नव्यं धिया स्याम रथ्यः सदासाः ।११।२

हे इन्द्र ! तुमने सबको स्नेह करने वाली 'तुवीति' और राजा 'वय्य' के लिए इच्छित फलदात्री पृथिवी को अन्नसे भर दिया और जल से परिपूर्ण किया था। हे इन्द्र ! तुमने जल को सुविधा-पूर्वक तैरने के योग्य कर दिया।६। शत्रु का नाश करने वाली सेना के सामने इन्द्र ने किनारे के तोड़ने वाली जल से पूर्ण अन्नोत्पादिनी नदियों को परिपूर्ण किया, उन्होंने जल-विहीन शुष्क देशों को वर्षा द्वारा पूर्ण किया और प्यासे पथिकों को शांति दी। जिन गौओं पर राक्षसों ने अधिकार कर लिया था, उन प्रसव से निवृत्त हुई गौओं को इन्द्र ने दुहा था।७। तमिस्रा से ढकी हुई अनेक उषाओं और वर्षों को इन्द्र ने वृत्र का वध करके विमुक्त किया, और वृत्र द्वारा रोकी हुई नदियों को पृथिवी पर प्रवाहित होने के लिए छोड़ा।८। हे श्रेष्ठ घोड़ों के स्वामी इन्द्र ! "उपजिह्वका" द्वारा भक्षण किये 'अग्रुपुत्र' को तुमने दीमक के बिल से निकाला। निकलते समय वह 'अग्रु-पुत्र' अन्धा था तो भी उसने सर्प को भले प्रकार देखा। उपजिह्वा का द्वारा अलग किए गये अङ्गों को इन्द्र ने जोड़ दिया था।९। हे बुद्धिमान इन्द्र ! तुम सब कुछ जानने वाले हो। वर्षा के योग्य और मनुष्यों को सम्पन्न करने वाले

वर्षा सम्बन्धी कर्मों को किस प्रकार तुमने किया था, उन सब कर्मों का वामदेव ने उल्लेख किया है ।१०। हे इन्द्र ! तुम पुरातन ऋषियों द्वारा पूजित हुए और हमारे द्वारा भी स्तुत हुए हो । तुम जल द्वारा नदी को पूर्ण करने के समान स्तुति करने वालों के अन्न को बढ़ाते हो । हे अश्ववान् इन्द्र ! हम तुम्हारे निमित्त नवीन स्तोत्र को करते हैं जिसके द्वारा हम रथवान हुए तुम्हारी स्तुति और परिचर्या करते रहें ।११। (२)

सूक्त २०

(ऋषि—वामदेवः । देवता—इन्द्रः । छन्द—त्रिष्टुप्)

आ न इन्द्रो दूरादा न आसादभिष्टिकृदवसे यासदुग्रः ।
ओजिष्ठेभिर्नृपतिर्वज्रबाहुः संगे समत्सु तुर्वणिः पृतन्यून् ॥१
आ न इन्द्रो हरिभिर्यात्वच्छाऽर्वाचीनोऽवसे राधसे च ।
तिष्ठाति वज्री मघवा विरप्शीमं यज्ञमनु नो वाजसातौ ।
इमं यज्ञं त्वमस्माकमिन्द्र पुरो दधत् सनिष्यसि क्रतुं नः ।
श्वघ्नीव वज्रिन् त्सनये धनानां त्वया वयमर्य आजिं जयेम ॥३
उशन्नु षु णः सुमना उपाके सोमस्य नु सुषुतस्य स्वधावः ।
पा इन्द्र प्रतिभृतस्य मध्वः समन्धसा ममदः पृष्ठ्येन ॥४
वि यो ररप्श ऋषिभिर्नवेभिर्वृक्षो न पक्वः सृण्यो न जेता ।
मर्यो न योषामभि मन्यमानो ऽच्छा विवक्मि पुरुहूतमिन्द्रम् ।५।३

हे इन्द्र ! तुम कामनाओं के देने वाले और तेज से युक्त हो । तुम हमको शरण देने के निमित्त दूर हो, तो भी आओ । पास हो तो भी आकर हमारी रक्षा करो । तुम युद्ध-स्थल में शत्रुओं का संहार करते हो । तुम वज्र धारण करने वाले हो, तुम मनुष्योंका पालन करते और तेजस्वी मरुद्गण से युक्त हो ।१। हमारे सामने आने वाले इन्द्र शरण देने और धन देने के लिए अपने घोड़ों के सहित हमारे पास पधारें । वे इन्द्र वज्रधारी धनैश्वर्यसे युक्त और महान है, संग्रामका अवसर होने पर वे हमारे कार्योंमें सहयोगी हों ।२। हे इन्द्र ! हमारे साथ मैत्री-भाव

रखते हुए हमारे द्वारा किये जाते हुए इस यज्ञ को परिपूर्ण करो। हे वज्रिन् ! हम तुम्हारी स्तुति करते हैं। जैसे शिकारी मृगों का शिकार करता है, वैसे हम तुम्हारे बल से धन प्राप्त करने के लिए संग्राम में विजेता हों।३। हे इन्द्र ! तुम अन्नों के स्वामी हो। तुम हर्ष-युक्त मन से हमारे पास आओ, तथा हमको चाहते हुए उत्तम प्रकारसे सिद्ध किये गये मदकारी सोम-रस को पिओ। दिन के मध्य स्तवन सवन में उज्ज्वल स्तोत्र के साथ हर्ष प्रदायक सोम का पान करो।४। जो इन्द्र पके फल वाले वृक्ष के समान और शस्त्र कुशल विजेता के समान वीर हैं,जो नवीन ऋषियों द्वारा अनेक प्रकार से पूजित होते हैं-उन इन्द्र के निमित्त हम प्रशंसा-युक्त स्तोत्र उच्चारित करते हैं।५।   (३)

गिरिर्न यः स्वतवाँ ऋष्व इन्द्रः सनादेव सहसे जात उग्रः।
आदर्ता वज्रं स्थविरं न भीम उद्नेव कोशं वसुना न्यृष्टम्॥६
न यस्य वर्ता जनुषा न्वस्ति न राधस आमरीता मघस्य।
उद्वावृषाणस्तविषीव उग्राऽस्मभ्यं दद्धि पुरुहूत रायः॥७
ईक्षे रायः क्षयस्य चर्षणीनामुत व्रजमपवर्तासि गोनाम्।
शिक्षानरः समिथेषु प्रहावान् वस्वो राशिमभिनेतासि भूरिम्॥८
कया तच्छृण्वे शच्या शचिष्ठो यया कृणोति मुहु का चिदृष्वः।
पुरु दाशुषे विचयिष्ठो अंहो ऽथा दधाति द्रविणं जरित्रे॥९
मा नो मर्धीरा भरा दद्धि तन्नः प्र दाशुषे दातवे भूरि यत् ते।
नव्ये देष्णे शस्ते अस्मिन् त उक्थे प्र ब्रवाम वयमिन्द्र स्तुवन्तः१०
नू ष्टुत इन्द्र नू गृणान इषं जरित्रे नद्यो न पीपेः।
अकारि ते हरिवो ब्रह्म नव्यं धिया स्याम रथ्यः सदासाः।११।४

जो पर्वत के समान विशाल हैं जो तेज से तेजस्वी हैं जो शत्रुओं को वश में करने के लिये प्राचीन काल में उत्पन्न हुए, वे इन्द्र जल से भरे हुए पात्रके समान अत्यन्त तेजस्वी एवं महान वज्र के धारण करने वाले हैं।६। हे इन्द्र ! तुम्हारे प्राकट्य-काल से ही तुम्हें कोई रोकने वाला नहीं हुआ। यज्ञादि शुभ कर्मों के निमित्त तुम्हारे द्वारा दिये गये

धन का नाश करने वाला भी कोई नही हुआ। हे शक्तिशालिन् ! तुम अत्यन्त तेजस्वी और कामनाओं की वर्षा करने वाले हो। हमारे लिए धन प्रदान करो ।७। हे इन्द्र ! तुम मनुष्यों के धन और घरों के पर्यवेक्षक हो। तुम बाधा देने वाले राक्षसों से गौओं के झुण्डों को मुक्त, करते हो। तुम शैक्षणिक कार्यों में अग्रणी और युद्ध काल में नेतृत्वकर शत्रुओं पर प्रहार करते हो। तुम उत्पन्न धनोंके सम्पन्न-कर्त्ता बनो।८। वह सबसे अधिक बुद्धि वाले इन्द्र किस वाणी, शक्ति और बुद्धि से युक्त है ? किन कर्मों द्वारा वह महान् इन्द्र बारम्बार अनेक कार्यों को करने हैं ? वे मनुष्य के पापों को नष्ट करते हुए स्तुति करने वालों को धनैश्वर्य प्रदान करते हैं ।९। हे इन्द्र ! हमारा विनाश न करो। तुम्हारे निमित्त जो मनुष्य अपने को समर्पित करते हैं, उनकी अपना देने योग्य ऐश्वर्य-प्रदान करो। हम तुम्हारी पूजा करते है ।१०। हे इन्द्र ! तुम पुरातन कालीन ऋषियों एवं अब हमारे द्वारा भी स्तुत हुए हो। तुम नदी के पूर्ण करने वाले जलों के समान हम स्तोताओं के अन्न की वृद्धि करते हो। तुम अश्ववान हो हम तुम्हारे निमित्त नवीन स्तोत्र की रचना करते हैं, जिसके द्वारा हम रथ संयुक्त हुए तुम्हारी स्तुति और परिचर्या करते रहें ।११। (४)

सूक्त २१

(ऋषि—वामदेवः । देवता—इन्द्रः । छन्द—पंक्ति, त्रिष्टुप्)

आ यात्विन्द्रोऽवस उप न इह स्तुतः सधमादस्तु शूरः ।
वावृधानस्तविषीर्यस्य पूर्वीर्द्यौर्न क्षत्रमभिभूति पुष्याद् ॥१
तस्येदिह स्तवथ वृष्ण्यानि तुविद्युम्नस्य तुविराधसो नॄन् ।
यस्य क्रतुर्विदथ्यो न सम्राट् साह्वान् तरुत्रो अभ्यस्ति कृष्टीः ॥२
आ यात्विन्द्रो दिव आ पृथिव्या मक्षू समुद्रादुत वा पुरीषात् ।
स्वर्णरादवसे नो मरुत्वान् परावतो वा सदनादृतस्य ॥३
स्थूरस्य रायो बृहतो य ईशे तमु ष्टवाम विदथेष्विन्द्रम् ।
यो वायुना जयति गोमतीषु प्र धृष्णुया नयति वस्यो अच्छ ॥४

उप यो नमो नमसि स्तभायन्नियर्ति वाचं जनयन् यजध्यै।
ऋञ्जसानः पुरुवार उक्थैरेन्द्रं कृण्वीत सदनेषु होता ।५।५

वीरवर इन्द्र स्तुतियों द्वारा हमारी रक्षा के लिए आवें। वह बुद्धि को प्राप्त हुए हमारी प्रसन्नता से ही प्रसन्नता माने। जो बल, कौशल से सम्पन्न और सूर्यके समान तेजस्वी हैं। वे इन्द्र हमको पराजित करने वाले होकर हमारा पालन करें ।१। हे मनुष्यों ! यज्ञादि शुभ कर्म करने करने वाला समाट् के समान जिनका सबको करने वाला कर्म शत्रुओं की सेना को हराने में समर्थ हैं, तथा हमारी रक्षा करता है,उन यशस्वी और ऐश्वर्य शाली इन्द्र के बल के कारण रूप मरुद्गण का इस यज्ञ स्थान में स्तवन करो ।२। हे इन्द्र ! हमको आश्रय प्रदान करने के लिए स्वर्ग, पृथिवी, अन्तरिक्ष, सूर्य-मंडल, जलस्थान मेघ-मंडल अथवा जिस दूर स्थान में भी हो वहीं से मरुद्गणके साथ यहीं आओ ।३। जो स्थिर और महान ऐश्वर्यों के स्वामी हैं, जो प्राण-रूप शक्तिके शत्रु की सेनाओं को पराजित करते हैं, जो अत्यन्त मेधावी हैं, और स्तुति करने वालों को उत्तम धन प्रदान करते हैं, उन शत्रुहन्ता इन्द्र के निमित्त हम इस यज्ञ-स्थान में स्तुति करते हैं ।४। जो सम्पूर्ण विश्व को स्तम्भित करते हुए गर्जन शब्द को उत्पन्न करने वाले हैं, और हवियाँ ग्रहणकर वर्षा द्वारा अन्न देते हैं,जो उत्तम स्तोत्र द्वारा स्तुति के पात्र हैं, उन इन्द्र को हम यज्ञ-स्थान में बुलाते हैं ।५।

(५)

धिषा यदि धिषण्यन्तः सरण्यान् त्सदन्तो अद्रिमौशिजस्य गोहे।
आ दुरोषाः पास्त्यस्य होता यो नो महान् त्संवरणेषु वह्निः ॥६
सत्रा यदीं भार्वरस्य वृष्णः सिषक्ति शुष्मः स्तुवते भराय।
गुहा यदीमौशिजस्य गोहे प्र यद् धिये प्रायसे मदाय ॥७
वि यद् वरांसि पर्वतस्य वृण्वे पयोभिर्जिन्वे अपां जवांसि।
विदद् गौरस्य गवयस्य गोहे यदी वाजाय सुध्यो वहन्ति ॥८
भद्रा ते हस्ता सुकृतोत पाणी प्रयन्तारा स्तुवते राध इन्द्र।
का ते निषत्तिः किमु नो ममत्सि किं नोदुदु हर्षसे दातवा उ ॥९

एवा वस्व इन्द्रः सत्याः सम्राड्ढन्ता वृत्रं वरिवः पूरवे कः ।
पुरुष्टुत क्रत्वा नः शग्धि रायो भक्षीय तेऽवसो दैव्यस्य ॥१०
नू ष्टुत इन्द्र नू गृणान इषं जरित्रे नद्यो न पीपेः ।
अकारि ते हरिवो ब्रह्म नव्यं धिया स्याम रथ्यः सदासाः।११।६

जब इन्द्र की स्तुति की कामना करने वाले के घर में निवास करते हुए स्तोता गण के इन्द्र के सामने स्तोत्र उपस्थित हो, तब वे इन्द्र आगमन करें । वे संग्राम भूमि में हमारे सहायक हों । वे इन्द्र अत्यन्त तेज वाले तथा यजमानों के होता रूप हैं ।६। प्रजापति के पुत्र, संसार का भरण पोषण करने वाले, कामनाओं की वर्षा करने वाले, इन्द्र की शक्ति स्तोता यजमान की रक्षा करती है । वह शक्ति यजमानों का पालन करने के लिए शरीर के गुफा रूप हृदय में प्रकट होती है । वह शक्ति यजमानों के घरों और कर्मों में व्याप्त होती हुई प्रसन्नता और अभीष्ट प्राप्ति के निमित्त उत्पन्न होती हुई सदा पोषण करती है ।७। इन्द्र ने मेघ के द्वार को खोल डाला । जल के वेग को परिपूर्ण किया । जब उत्तम कर्म वाले यजमान इन्द्र की हवियाँ देते हैं, तब वे गवादि धन भी प्राप्त करते हैं ।८। हे इन्द्र ! तुम्हारे दोनों हाथ कल्याण करते हैं । हे इन्द्र ! तुम्हारे उच्च पद को क्या स्थिति है ? तुम हमको धन प्रदान करने के लिए प्रसन्न क्यों नहीं होते ? ।९। सत्य से युक्त धनों के स्वामी वृत्र का संहार करने वाले इन्द्र की यह स्तुति किये जाने पर वे यजमानों को प्रदान करते हैं । वे इन्द्र ! तुम बहुतों द्वारा पूजित हो । हमारी स्तुति सुनकर हमें धन प्रदान करो,जिससे हम दिव्य ऐश्वर्य का उपभोग कर सकें ।१०। हे इन्द्र ! तुम पूर्वकालीन ऋषियों द्वारा स्तुत हुए । अब हमारे द्वारा स्तुतमान होकर जल द्वारा नदी को पूर्ण करने वाले के समान स्तुति करने वालों के अन्न को बढ़ाते हो । हे अश्ववान् इन्द्र ! हम तुम्हारे लिए नूतन स्तोत्र रचते हैं, जिससे हम उत्तम रथ से युक्त हुए तुम्हारा स्तवन और परिचर्या करते रहें ।११।   (६)

सूक्त २२ (तीसरा अनुवाक)

(ऋषि—विश्वामित्रः । देवता—इन्द्रः । छन्द—त्रिष्टुप्, पंक्तिः)

यन्न इन्द्रो जुजुषे यच्च वष्टि तन्नो महान् करति शुष्म्या चित् ।
ब्रह्म स्तोमं मघवा सोममुक्था यो अश्मानं शवसा बिभ्रदेति ॥१
वृषा वृषन्धि चतुरश्रिमस्यन्नुग्रो बाहुभ्यां नृतमः शचीवान् ।
श्रिये परुष्णीमुषमाण ऊर्णां यस्याः पर्वाणि सख्याय विव्ये ॥२
यो देवो देवतमो जायमानो महो वाजेभिर्महद्भि शुष्मैः ।
दधानो वज्रं बाह्वोरुशन्तं द्याममेन रेजयत् प्र भूम ॥३
विश्वा रोधांसि प्रवतश्च पूर्वीर्द्यौर्ऋष्वाज्जनिमन् रेजत क्षाः ।
आ मातरा भरति शुष्म्या गोर्नृवत् परिजन्मन नोनुवन्त वाताः४
ता तू त इन्द्र महतो महानि विश्वेष्वित् सवनेषु प्रवाच्या ।
यच्छर धृष्णो दधृष्वा नहि वज्रेण शवसाविवेषीः ।५।७

वे महाबली इन्द्र हमारा हव्यरूप अन्न भक्षण करते हैं । वे ऐश्वर्यवान् वज्र धारण कर, शक्तिशाली हुए आते हैं । हविरन्न, स्तुति, सोम तथा स्तोत्रों को ग्रहण करते हैं ।१। वे इन्द्र कामनाओं की वर्षा करने वाले हैं । वे अपनी दोनों भुजाओं से वर्षा करने वाले वज्र को शत्रुओं पर चलाते हैं । वे विकराल कर्म वाले, अग्रणी, कर्म करने वाले होकर "परुष्णी" नदी को शरण देने के लिए पूर्ण करते हैं । उन इन्द्र ने "परुष्णी" नदी के प्रदेशों को मंत्री-कर्म के निमित्त सम्पन्न किया ।२। जो अत्यन्त प्रकाशवान्, श्रेष्ठ दानी, उत्पन्न होते ही अन्न और अत्यन्त शक्ति से युक्त हो गये, वे इन्द्र दोनों भुजाओं में वज्र उठा कर बल से आकाश और पृथिवी को कम्पायमान करते थे ।३। उन महान् इन्द्र के प्राकट्य पर सब पर्वत, सब समुद्र, आकाश और पृथिवी उनके डर से काँप गये । वे शक्तिशाली इन्द्र गतिमान् आदित्यके माता पिता आकाश -पृथिवीं को धारण करते हैं । इन्द्र द्वारा प्रेरणा-प्राप्त वायु मनुष्य के समान शब्दकारी होता है ।४। हे इन्द्र ! तुम महान् हो, तुम्हारा कर्म

महत्वशील है और तुम सभी सवनों में स्तुतियों के पात्र हो तुम अत्यन्त मेधावी एवं वीर हो। तुमने बलपूर्वक अपने वज्रसे अहिका नाश किया था और सब लोकों को धारण किया था।५। (७)

ता तू ते सत्या तुविनृम्ण विश्वा प्र धेनवः सिस्रते वृष्ण ऊध्नः।
अधा ह त्वद् वृषमणो भियानाः प्र सिन्धवो जवसा चक्रमन्त ॥६
अत्राह ते हरिवस्ता उ देवीरवोभिरिन्द्र स्तवन्त स्वसारः।
यत् सीमनु प्र मुचो बद्बधाना दीर्घामनु प्रसितिं स्यन्दयध्यै ॥७
पिपीले अंशुर्मद्यो न सिन्धुरा त्वा शमी शशमानस्य शक्तिः।
अस्मद्र्यक् शुशुचानस्य यम्या आशुर्न रश्मिं तुव्योजसं गोः ॥८
अस्मे वर्षिष्ठा कृणुहि ज्येष्ठा नृम्णानि सत्रा सहुरे सहांसि।
अस्मभ्यं वृत्रा सुहनानि रन्धि जहि वधर्वनुषो मर्त्यस्य ॥९
अस्माकमित् सु शृणुहि त्वमिन्द्राऽस्मभ्यं चित्राँ उप माहि वाजान्
अस्मभ्यं विश्वा इषणः पुरंधीरस्माकं सु मघवन् बोधि गोदाः॥१०
नू ष्टुत इन्द्र नू गृणान इषं जरित्रे नद्यो न पीपेः।
अकारि ते हरिवो ब्रह्म नव्यं धिया स्याम रथ्यः सदासाः।११।८

हे इन्द्र ! तुम अत्यन्त बलशाली हो। तुम्हारे सभी कर्म भय से ओतप्रोत हैं। तुम अभीष्टों की वर्षा करने वाले हो। तुम्हारे डरसे गौएँ दुग्ध की रक्षा करती हैं। नदियाँ तुम्हारे डर से ही बहती है।६। हे अश्ववान् इन्द्र ! जब तुमने वृत्र द्वारा रोकी गई इन नदियों को बहुत कालोपरान्त बहने के लिए छोड़ा, तब उसी समय वे सुन्दर नदियाँ तुम्हारे आश्रय के लिए स्तुति करती थीं।७। हर्षोत्पादक सोम सिद्ध हुआ। वह गतिमान् होकर तुम्हारे पास पहुँचे। द्रुतगामी सवार चलने वाले घोड़े की लगाम पकड़ कर जैसे इसे प्रेरणा देता है, वैसे ही तुम शुद्ध कर्म वाले स्तोता को स्तुतिको प्रेरणा दो।८। हे इन्द्र ! तुम शत्रुओं का सदा पराभव करने वाला, महान्, बल हमको प्रदान करो। मारने के योग्य शत्रुओं को हमारे वश में करो और हिंसा करने वाले विरोधियों के हथियारों का नाश कर दो।९। हे इन्द्र ! हमारी स्तुति को

सुनो। हमको विविध भाँति का अन्नधन आदि प्रदान करो। हमारे निमित्त बुद्धियों को प्रेरणा दो और हमको गौयें प्रदान करो।१०। हे इन्द्र ! तुम पूर्वज ऋषियों द्वारा पूजित हुए। अब हम भी तुम्हारा स्तवन करते हैं। तुम जल द्वारा नदी को पूर्ण करने के समान स्तुति करने वालों के अन्न की वृद्धि करते हो। हे इन्द्र ! तुम अश्वोंके स्वामी हो। हम तुम्हारे निमित्त नूतन स्तोत्रकी रचना करते हैं,जिससे हम रथ वाले होकर तुम्हारी स्तुति और परिचर्या करते रहें।११। (८)

सूक्त २३

(ऋषि—वामदेवः। देवता—इन्द्रः। छन्द—त्रिष्टुप्)

कथा महामवृधत् कस्य होतुर्यज्ञं जुषाणो अभि सोममूधः।
पिबन्नुशानो जुषमाणो अन्धो ववक्ष ऋष्वः शुचते धनाय ॥१
को अस्य वीरः सधमादमाप समानंश सुमतिभिः को अस्य।
कदस्य चित्रं चिकिते कदूती वृधे भुवच्छशमानस्य यज्योः ॥२
कथा शृणोति हूयमानमिन्द्रः कथा शृण्वन्नवसामस्य वेद।
का अस्य पूर्वीरुपमातयो ह कथैनमाहुः पपुरिं जरित्रे ॥३
कथा सबाधः शशमानो अस्य नशदभि द्रविणं दीध्यानः।
देवो भुवन्नवेदा म ऋतानां नमो जगृभ्वाँ अभि यज्जुजोषत् ॥४
कथा कदस्या उषसो व्युष्टौ देवो मर्तस्य सख्यं जुजोष।
कथा कदस्य सख्यं सखिभ्यो ये अस्मिन् कामं सुयुजं ततस्रे।५।९

हमारी स्तुति इन्द्र को किस प्रकार बढ़ायेगी ? वे किस होता के यज्ञ में स्नेह भावसे आते है ? इन्द्र महान् हैं वे सोमरसका स्वाद लेते हुए तथा हविरन्न की इच्छा करते हुए उज्ज्वल धनको किस यजमान के निमित्त धारण करते है ? ।१। इन्द्र के साथ कौन सोम पियेगा ? कौन उनकी कृपा प्राप्त करेगा? उनका अद्भुत धन कब बाँटा जायेगा? अपने स्तोत्र को बढ़ाने के लिए किसकी रक्षा करेंगे ? ।२। हे इन्द्र ! तुम महान् ऐश्वर्य से युक्त होकर होताकी बात कैसे सुनते हो ? तुम स्तोत्रों को सुनकर ही स्तुतिकर्त्ताकी रक्षाको कैसे जानते हो ? तुम्हारे प्राचीन दान

कौन से हैं ? तुम्हारे वे दान स्तोता की इच्छा को पूर्ण करने वाले क्यों कहे जाते हैं ? ।३। जो यजमान कष्टमें पड़कर इन्द्र की स्तुति करते और यज्ञ द्वारा प्रकाश पाते हैं, वे इन्द्र के धन को कैसे प्राप्त करते हैं ? जब प्रकाशवान् इन्द्र हवि सेवन कर हम पर प्रसन्न होते हैं, तब वे हमारे स्तोत्र को ठीक प्रकार जानते हैं ।।४। प्रकाशवान् इन्द्र उषा वेला में कब और किस प्रकार मनुष्यों से बन्धुभाव बनाते हैं ? इन्द्र के निमित्त जो होता सुन्दर हव्य को बढ़ाते हैं । उनके प्रति इन्द्र कब और कैसे अपना बन्धुभाव प्रकाशित करते हैं ? ।५। (६)

किमादमत्रं सख्यं सखिभ्यः कदा नु ते भ्रात्रं प्र ब्रवाम ।
श्रिये सुदृशो वपुरस्य सर्गाः स्वर्ण चित्रतममिष आ गोः ॥६
द्रुहं जिघांसन् ध्वरसमनिन्द्रां तेतिक्ते तिग्मा तुजसे अनीका ।
ऋणा चिद् यत्र ऋणया न उग्रो दूरे अज्ञाता उषसो बवाधे ॥७
ऋणस्य हि शुरुधः सन्ति पूर्वीॠतस्य धीतिर्वृजिनानि हन्ति ।
ऋतस्य श्लोको बधिरा ततर्द कर्णा बुधानः शुचमान आयोः ॥८
ऋतस्य दृलहा धरुणानि सन्ति पुरूणि चन्द्रा वपुषे वपूंषि ।
ऋतेन दीर्घमिषणन्त पृक्षं ऋतेन गाव ऋतमा विवेशुः ॥९
ऋतं येमान ऋतमिद् वनोत्यृतस्य शुष्मस्तुरया उ गव्युः ।
ऋताय पृथ्वी बहुलै गभीरे ऋताय धेनू गरमे दुहाते ॥१०
नू ष्टुत इन्द्र नू गृणान इषं जरित्रे नद्यो न पीपेः ।
अकारि ते हरिवो ब्रह्म नव्यं धिया स्याम रथ्यः सदासाः॥११॥१०

हे इन्द्र ! यजमान, शत्रु को हराने वाले तुम्हारे मित्रभाव को किस प्रकार स्तोताओं से कहेंगे ? कब हम तुम्हारे बन्धुभाव को प्रचारित करेंगे ? उत्तम दर्शन वाले इन्द्र के सभी कर्म स्तुति करने वालों के लिए सुखकारी होते हैं । सूर्य के समान अत्यन्त दर्शनीय इन्द्र के शरीर की सब कामना करते हैं ।६। द्रोह और हिंसा करने वाली, इन्द्र के पराक्रम को न जानने वाली राक्षसी के वध के लिए वे पहले से ही शस्त्रों को तेज करते हैं । जैसे ऋणी सब धनको समाप्त कर देता है, वैसे ही इन्द्र उन उषाओं को पीड़ित करते हैं ।७। ऋतदेव बहुत जल से युक्त हैं ।

उनकी स्तुति पापोंको दूर करती हैं। उनकी ज्ञान देनेवाली स्तुति बहरे मनुष्यों के भी कान में पहुँच जाती है।८। ऋतदेव के अनेक रूप हैं। साधकगण उनसे अन्नकी याचना करते हैं। उनके द्वारा गौएँ दक्षिणाके रूप से यज्ञ में जाती है।६। स्तुति करने वाले ऋतदेव को वशमें करनेके लिए उनका यजन करते हैं। उनका बल जलकी अभिलाषा करता है। पृथिवी ऋतदेव के लिए दूध दुहती है।१०। हे इन्द्र ! तुम पूर्वज जल द्वारा नदी को पूर्ण करने के समान स्तोताओं के अन्न को बढ़ाते हो, ऋषियों द्वारा स्तुत हुए हो। अब हम भी तुम्हारा स्तवन करते हैं। हे इन्द्र ! तुम अश्ववान् हो। हम तुम्हारे लिए नवीन स्तोत्र की रचना करते हैं,जिससे हम रथ वाले होकर तुम्हारी स्तुति और परिचर्या करते हैं।११। (१०)

सूक्त २४

(ऋषि–वामदेवः। देवता–इन्द्रः। छन्द–त्रिष्टुप्, अनुष्टुप्)

का सुष्टुतिः शवसः सूनुमिन्द्रमर्वाचीनं राधस आ ववर्तत्।
ददिर्हि वीरो गृणते वसूनि स गोपतिर्निष्षिधां नो जनासः॥१
स वृत्रहत्ये हव्यः स ईड्यः स सुष्टुत इन्द्रः सत्यराधाः।
स यामन्ना मघवा मर्त्याय ब्रह्मण्यते सुष्वये वरिवो धात्॥२
तमिन्नरो वि ह्वयन्ते समीके रिरिक्वांसस्तन्वः कृण्वत त्राम्।
मिथो यत् त्यागमुभयासो अग्मन् नरस्तोकस्य तनयस्य सातौ॥३
क्रतूयन्ति क्षितयो योग उग्राऽऽशुषाणासो मिथो अर्णसातौ।
सं यद् विशोऽववृत्रन्त युध्मा आदिन्नेम इन्द्रयन्ते अभीके॥४
आदिद्ध नेम इन्द्रियं यजन्त आदित् पक्तिः पुरोलाशं रिरिच्यात्।
आदित् सोमो वि पपृच्यादसुष्वीनादिज्जुजोष वृषभं यजध्यैः॥५॥११

बल के पुत्र इन्द्र को, सुन्दर स्तुति द्वारा धन दने के निमित्त हम किसी प्रकार बुलावें ? हे मनुष्यों ! पशुओंका पालन करने वाले बीर इन्द्र हमको शत्रुओंका धन प्रदान करें। हम उनका स्तवन करते हैं।१। वृत्र के लिए इन्द्र युद्ध में बुलाये जाते हैं। वे स्तुति के पात्र हैं। उत्तम

प्रकार से स्तुति किये जाने पर वे यजमानों को धन देने के लिए सत्य स्वरूप बनते हैं। हे ऐश्वर्यवान इन्द्र स्तोत्र की ओर सोम की कामना वाले, यजमान को धन देते हैं ।२। संग्राम में मनुष्य इन्द्र को आहूत करते हैं। यजमान और स्तोता दोनों मिलकर सन्तति-लाभ के लिए इन्द्र के पास जाते हैं ।३। हे इन्द्र तुम बलवान् हो। चारों दिशाओं में रहने वाले मनुष्य जल के निमित्त इकट्ठे होकर यज्ञ करते हैं। जब युद्ध करने वाले समर भूमि में इकट्ठे होते हैं तब इनमें से कौन इन्द्र की कामना करता है ? ।४। उस समय कोई वीर सशक्त इन्द्र का पूजन करते और कोई पुरोडाश लाकर इन्द्रको देते हैं। उस समय सोम सिद्ध करने वाले यजमान, सोम सिद्ध न करने वाले यजमान को धन-विहीन कर देतें हैं। उस समय कामनाओं की वर्षा करने वाले इन्द्र के लिए कोई यज्ञ करने की इच्छा करते है ।५। (११)

कृणोत्यस्मै वरिवो य इत्थेन्द्राय सोममुशते सुनोति ।
सध्रीचीनेन मनसाविवेनन् तमित् सखायं कृणुते समत्सु ।।६
य इन्द्राय सुनवत् सोममद्य पचात् पक्तीरुत भृज्जाति धानाः ।
प्रति मनायोरुचथानि हर्यन् तस्मिन् दधद् वृषणं शुष्ममिन्द्रः ।।७
यदा समर्यं व्यचेदृघावा दीर्घं यदाजिमभ्यख्यदर्यः ।
अचिक्रदद् वृषणं पत्न्यच्छा दुरोण आ निशितं सोमसुद्भिः ।।८
भूयसा वस्नमचरत् कनीयो ऽविक्रीतो अकानिषं पुनर्यन् ।
स भूयसा कनीयो नारिरेचीद् दीना दक्षा वि दुहन्ति प्र वाणम्।।९
क इमं दशभिर्ममेन्द्र क्रीणाति धेनुभिः ।
यदा वृत्राणि जंघन दथैनं मे पुनर्ददत् ।।१०
नू ष्टुत इन्द्र नू गृणान इषं जरित्रे नद्यो न पीपेः ।
अकारि ते हरिवो ब्रह्म नव्यं धिया स्याम रथ्यः सदासाः।११।१२

दिव्यलोक में निवास करने वाले इन्द्रके लिए जो सोम की कामना वाले उसे सिद्ध करते हैं,इन्द्र उनको धन प्रदान करते हैं। एकाग्र भावसे इन्द्र को चाहने वाले तथा सोम सिद्ध करने वाले यजमान से वे इन्द्र युद्ध क्षेत्र में सख्य भाव स्थापित करते है ।६। आज जो इन्द्र के निमित्त

सोमरस निकालते हैं जो पुरोडाश लाते और भूनने योग्य जौ को भूनते हैं, उस स्तोत्र को ग्रहण करने वाले इन्द्र यजमान की इच्छा पूर्ण करने वाले बल को धारण करते हैं।७। जब वे शत्रु संहारक प्रभु इन्द्र शत्रुओं को जान लेते हैं और जब वे भीषण संग्राम में लगे होते हैं तब उनकी भार्या सोम सिद्ध करने वाले ऋत्विक् द्वारा सोम-पान से हृष्ट और कामनाओं की वर्षा करने वाले इन्द्र का आह्वान करती है।८। कोई पुण्य करके थोड़ा धन पाता है, फिर खरीदने वाले के पास जाकर 'हमने बेचा नहीं ?' ऐसा कहकर शेष धन माँगता है। खरीदने वाला उससे अधिक धन नहीं देता।९। इन्द्र को कौन दस गायों के समान धन से खरीद सकता है ? वह जब बढ़ते हुए शत्रुओं का वध कर डालते हैं, तब वह उसके गवादि धन को मुझे ही सौंप देते हैं,।१०। हे इन्द्र ! तुम पूर्वज ऋषियों द्वारा पूजित हुए। अब हम तुम्हारी स्तुति करते हैं। तुम जल से परिपूर्ण नदी के समान स्तुति करने वालोंके अन्न की वृद्धि करते हो। हे इन्द्र ! तुम अश्ववान् हो। हम तुम्हारे नूतन स्तोत्र रचते हैं, जिससे हम रथ वाले होकर तुम्हारी स्तुति और परिचर्या करते रहें ।११। (१२)

सूक्त २५

(ऋषि—वामदेवः। देवता—इन्द्रः। छन्द—त्रिष्टुप्)

को अद्य नर्यो देवकाम उशन्निन्द्रस्य सख्यं जुजोष।
को वा महेऽवसे पार्याय समिद्धे अग्नौ सुतसोम ईट्टे ॥१
को नानाम वचसा सोम्याय मनायुर्वा भवति वस्त उस्राः।
क इन्द्रस्य युज्यं कः सखित्वं को भ्रात्रं वष्टि कवये क ऊती ॥२
को देवानामवो अद्या वृणीते क आदित्याँ अदितिं ज्योतिरीट्टे।
कस्याश्विनाविन्द्रो अग्निः सुतस्यांऽशोः पिबन्ति मनसाविवेनम्३
तस्मा अग्निर्भारतः शर्म यंसज्ज्योक् पश्यात् सूर्यमुच्चरन्तम्।
य इन्द्राय सुनवामेत्याह नरे नर्याय नृतमाय नृणाम् ॥४
न तं जिनन्ति बहवो न दभ्रा उर्वस्मा अदितिः शर्म यंसत्।

प्रियः सुकृत् प्रिय इन्द्रे मनायुः प्रियः सुप्रावीः प्रियो अस्य
सोमी ।५।१३

हितकारी, देवताओं की कामना वाला कौन सा मनुष्य आज इन्द्रसे मित्रता स्थापित करना चाहता है ? सोमका अभिषव करने वाला ऐसा कौन व्यक्ति है जो अग्नि प्रदीप्त होने पर इन्द्र की रक्षा करने वाले आश्रय की कामना से उनका स्तवन करता है ।१। कौन सा यजमान इन्द्र के सामने स्तुति करता हुआ नत-मस्तक होता है ? कौन इन्द्र की स्तुतिकी रक्षा करता है ? इन्द्रको दी हुई गौओंको कौन लेता है ? इन्द्र की सहायता कौन चाहता है ? कौन उनसे मित्रता करने का अभिलाषी है ? कौन उनसे बन्धुत्व भाव करना आहता है ? कौन उन तेजस्वी इन्द्र के आश्रय की याचना करता है ।२। कौन यजमान इन्द्र आदि देवताओं से रक्षा के लिए निवेदन करता है ? आदित्य, अदिति और उदक की स्तुति कौन करता है ? अश्विनीकुमार, इन्द्र और अग्नि किस यजमान के स्तोत्र ले प्रसन्न होकर छने हुए सोमरस को इच्छानुसार पीते हैं ? ।३। जो यजमान मनुष्यों के सखा, श्रेष्ठ नेतृत्व वाले इन्द्रके निमित्त सोम सिद्ध करने का संकल्प करते हैं,ऐसे यजमानों को हवियोंके स्वामी अग्नि सुखी करें और सदा उदय होने वाले सूर्य के दर्शन करने वाला बनावें ।४। अदिति उनको बनावें, सुन्दर यज्ञादि शुभ कर्म करने वाले यजमानों को इन्द्र स्नेह करें । इन्द्र की स्तुति करने के इच्छुक उनके स्नेह भाजन हों । जो शील स्वभाव वाले एवं प्रिय सोमकी सिद्धि करते हैं, वे इन्द्र के स्नेही बनें ।५।　　　　(१३)

सुप्राव्यः प्राशुषालेष वीरः सुष्वेः पक्ति कृणुते केवलेन्द्रः ।
नासुष्वेरापिर्न सखा न जामिदुष्प्राव्योऽवहन्तेदवाचः ।।६
न रेवता पणिना सख्यमिन्द्रो ऽसुन्वता सुतपाः सं गृणीते ।
आस्य वेदः खिदन्ति हन्ति नग्नं वि सुष्वये पक्तये केवलो भूत्।।७
इन्द्रं परेऽवरे मध्यमास इन्द्रं यान्तोऽवसितास इन्द्रम् ।
इन्द्रं क्षियन्त उत युध्यमाना इन्द्रं नरो वाजयन्तो हवन्ते ।८।१४

इन्द्र के निकट जाने वाले और सोम सिद्ध करने वाले यजमान के पाप-कर्मको वीर इन्द्र अस्वीकार करते हैं। सोम का अभिषव न करने वाले यजमानके लिए इन्द्र व्याप्त नहींहोते। वे उससे सख्य और बंधुत्व नहीं रखते। इन्द्र के समीप न जाने वाला, उनकी स्तुति न करने वाला उनके द्वारा हिंसित किया जाता है।६। सिद्ध सोम को पीने वाले इन्द्र सोम सिद्ध करने वाले कर्म से विहीन धनिक एवं लोलुप के साथ सख्य भाव नहीं बनाते। वे उनके किसी काम न आने वाले धनका नाश कर देते हैं। वे सोमाभिषवकर्त्ता तथा हविरन्न के पाक-कर्त्ता यजमान से अत्यन्त बन्धुत्व स्थापित करते हैं।७। ऊँच, नीच, मध्यम सभी प्रकार के मनुष्य इन्द्र को आहूत करते हैं। गमनशील, उपविष्ट, घरो में रहने वाले, समरभूमि में जाने वाले तथा अन्न की कामना वाले सभी जीव इन्द्र का जाह्वान करते हैं।८। (१४)

सूक्त २६

(ऋषि—वामदेवः। देवता—इन्द्रः। छन्द—त्रिष्टुप्)

अहं मनुरभवं सूर्यश्चाऽहं कक्षीवाँ ऋषिरस्मि विप्रः।
अहं कुत्समार्जुनेयं न्यृञ्जेऽहं कविरुशना पश्यता मा ॥१
अहं भूमिमददामार्यायाऽहं वृष्टिं दाशुषे मर्त्याय।
अहमपो अनयं वावशाना मम देवासो अनु केतमायन् ॥२
अहं पुरो मन्दसानो व्यैरं नव साकं नवतीः शम्बरस्य।
शततमं वेश्यं सर्वताता दिवोदासमतिथिग्वं यदावम् ॥३
प्र सु ष विभ्यो मरुतो विरस्तु प्र श्येनः श्येनेभ्य आशुपत्वा।
अचक्रया यत् स्वधया सुपर्णो हव्यं भरन्मनवे देवजुष्टम् ॥४
भरद् यदि विरतो वेविजानः पथोरुणा मनोजवा असर्जि।
तूयं ययौ मधुना सोम्येनोत श्रवो विविदे श्येनो अत्र ॥५
ऋजीपी श्येनो ददमानो अंशुं परावतः शकुनो मन्द्रं मदम्।
सोमं भरद् दादृहाणो देवावान् दिवो अमुष्मादुत्तरादादाय ॥६
आदाय श्येनो अभरत् सोमं सहस्रं सवाँ अयुतं च साकम्।

अत्रा पुरंधिरजहादरातीर्मदे सोमस्य मूरा अमूरः ।७।१५

हम प्रजापति, सबको प्रेरणा देने वाले एवं हम ही 'दीर्घतमा" के विद्वान् पुत्र "कक्षीवान्" ऋषि हैं। हम कवि 'उशना' हमने ही 'अर्जुनो. के पुत्र 'कुत्स' को भले प्रकार प्रशंसित किया था हे मनुष्यों ! हम ही क्रांतदशी और सर्वप्रिय हैं।१। मैंने ही शब्द को भूमि दी। मैंने ही सत्य की वृद्धि के लिए सृष्टि की। मैंनेहीं शब्द करते हुए जल को प्रेरित किया। मेरी इच्छा पर सभी देवता चलते हैं।२। सोम पीकर हृष्ट हुए मैंनै 'शम्बर' के निन्यान्नवे नगरों का एकही समय में विध्वंस कर डाला। जब मैं यज्ञ में 'राजर्षि' की रक्षा कर रहा था, तब मैंने उनके निवास के लिए सौ नगर प्रदान किए थे।३। हे मरुतो! तुम बाज पक्षियों में प्रधानत्व-प्राप्त हो। दूसरों की अपेक्षा तुम शीघ्र-गामी हो। देवताओं द्वारा सेवन जाने वाले सोमरूप हव्यों को सुवर्णने बिना पहियेके रथ द्वारा दिव्यलोक से लाकर मनुष्यों को दिया था।४। जब श्येन डरकर आकाश से सोम लाया तब वह विशाल अन्तरिक्ष के पथ में मन के समान वेग वाला होकर उड़ा। समरूप मधु के सहित वह शीघ्र गया और सोम लाने से उसका यश फैल गया।५। द्रुतगामी और यशस्वी श्येन देवताओं के साथ दूर से सोम को उठाकर स्तुत एवं हर्षदायक सोम को ऊँचे आकाशसे लेकर दृढ़ता-पूर्वक पृथिवीपर चला आया।६। श्तेन ने हजारों लाखों यज्ञ-कर्मों द्वारा सोम को पाया और वह उस को ले आया। सोम के लाने पर बहुकर्मा एवम् मेधावी इन्द्रने सोम से उत्पन्न शक्ति से अज्ञानी शत्रुओं का संहार किया।७। (१५)

सूक्त २७

(ऋषि—वामदेवः। देवता—इन्द्रः। छन्द—त्रिष्टुप् शक्वरी)

गर्भे नु सन्नन्वेषामवेदमहं देवानां जनिमानि विश्वा।
शतं मा पुर आयसीरक्षन्नध श्येनो जवसा निरदीयम् ।।१
न घा स मामप जोषं जभाराऽभीमास त्वक्षसा वीर्येण।

ईर्मा पुरंधिरजहादरातीरुत वाताँ अतरच्छूशुवानः ॥२
अव यच्छ्येनो अस्वनीदध द्योर्वि यद् यदि वात ऊहुः पुरंधिम्।
सृजद् यदस्मा अव ह क्षिपज्ज्यां कृशानुरस्ता मनसा भुरण्यन्।३
ऋजिप्य ईमिन्द्रावतो न भुज्युं श्येनो जभार बृहतो अधि ष्णोः।
अन्तः पतत् पतत्र्यस्य पर्णमध यामनि प्रसितस्य तद् वेः ॥४
अध श्वेतं कलशं गोभिरक्तमापिप्यानं मघवा शुक्रमन्धः।
अध्वर्युभिः प्रयतं मध्वो अग्रमिन्द्रो मदाय प्रति धत्
पिबध्यै शूरो मदाय प्रति धत् पिबध्यै ।५।१६

गर्भ में रहते हुये ही हमने इन्द्रादि सब देवताओं के प्राकट्य को उत्तमता से जान लिया था। लौह की बनी हुई दृढ़ नगरियों में हमारा पालन हुआ था। हम ज्ञान से युक्त हो बाज के समान बड़े वेग से उड़ जाने वाले आत्मा को जानते हुए देह-बन्धन से निकल जाते हैं।१। उस गर्भ में रहते हुए भी हमको मोह ने नहीं घेरा। हमने गर्भके दुःखों को ज्ञान के बल से जीत लिया। सबकी प्रेरणा देने वाले प्रभु ने गर्भ में स्थित शत्रु-रूप कीटाणुओंको नष्ट किया ओंर वृद्धिको प्राप्त होकर क्लेश पहुँचाने वाली वायु का शमन किया।२। सोम लाते समय जब बाज ने आकाश के नीचे की ओर मुख करके शब्द किया, जब सोम के रक्षकोने श्येन से सोम को छीन लिया, जब सोम रक्षक शूशुवान ने मन के वेगसे जाने वाले के लिये धनुष पर प्रत्यञ्चा चढ़ाई और श्येन की ओर वाण चलाया, तब श्येन सोम को लेकर आया।३। जैसे अश्विनीकुमारों ने इन्द्र के स्वामित्व वाले देश से राजा भुज्यु का अपहरण किया था, उसी प्रकार इन्द्र से रक्षित महान् आकाश से ऋजुगामी में सोम को लेकर आया। उस समय कृशनु से लड़ने के कारण उस गमनशील श्येन का एक पंख बाण से बिंध जाने के कारण गिर पड़ा।४। महा पराक्रमी इन्द्र पवित्र पात्र में सुरक्षित, गव्य-मिश्रित, तृप्तिदायक, सार रूप सोम के अध्वर्युओं द्वारा दिये जाने पर उसके हर्षप्रदायक रस का इस समय पान करें।५। (१६)

सूक्त २८

(ऋषि—वामदेवः । देवता—इन्द्रः । छन्द—त्रिष्टुप्)

त्वा युजा तव तत् सोम सख्य इन्द्रो अपो मनवे सस्त्रुतस्कः ।
अहन्नहिमरिणात् सप्त सिन्धूनपावृणोदपिहितेव खानि ॥१
त्वा युजा नि खिदत् सूर्यस्येन्द्रश्चक्रं सहसा सद्य इन्दो ।
अधि ष्णुना बृहता वर्तमानं महोद्रुहो अप विश्वायु धायि ॥२
अहन्निन्द्रो अदहग्निरिन्दो पुरा दस्यून् मध्यंदिनादभीके ।
दुर्गे दुरोणे क्रत्वा न यातां पुरू सहस्रा शर्वा नि बर्हीत् ॥३
विश्वस्मात् सीमधमाँ इन्द्र दस्यून् विशो दासीरकृणोरप्रशस्ताः ।
अबाधेथाममृणतं नि शत्रूनविन्देथामपचितिं वधत्रैः ॥४
एवा सत्यं मघवाना युवं तदिन्द्रश्च सोमोर्वमश्व्यं गोः ।
आदर्दृतमपिहितान्यश्ना रिरिचथुः क्षाश्चित् ततृदाना ।५।१७

हे सोम! जब इन्द्र तुम्हारे मित्रहुए तब तुम्हारी सहायतासे उन्होंने मनुष्योंके निमित्त जलको बहाया और वृत्रका संहार किया। वृत्र द्वारा रोके हुए द्वारको खोलकर जलका प्रेरण किया।१। हे सोम ! तुम्हारी सहायता से ही इन्द्रने सूर्यके रथके ऊपर स्थित दो चक्रोंवाले रथके एक चक्रको क्षणभरमें छिन्न कर किया। सूर्यके सर्वत्र गतिमान चक्रको स्पर्धा के कारण इन्द्रने ले लिया।२। हे सोम ! तुमको पीकर पराक्रमी इन्द्रने मध्याह्न कालसे पूर्वही शत्रुओंको युद्धमें नष्टकर दिया और अग्निने भी अनेक शत्रुओंको भस्मकिया। जैसे अरक्षित मार्गसे जाने वाले धनिकको चोर मार देताहै, वैसेही असंख्य शत्रु सेनाओं को इन्द्र ने मार डाला।३। हे इन्द्र ! तुम सब दुष्टों को सद्‌गुणों से विहीन करते हो।३। तुम उन वस्तुओंको निन्दाके योग्य करते हो। हे इन्द्र और सोम ! तुम दोनों ही शत्रुओंके आक्रमण-कार्य में बाधक बनते हुए उनका संहार करो, उनका वध करने के लिए की जाने वाली स्तुतियों को स्वीकार करो।४। हे सोम ! तुम और इन्द्र ने विशाल अश्वों और गौओं के झुण्ड को दान दिया था। हे इन्द्र और सोम ! तुम दोनोंही अत्यन्त ऐश्वर्यशालो हो।

तुम दोनों शत्रुओं का संहार करने में समर्थ हो। तुम दोनों जो कर्म करते हो, वह सब सत्य है।५। (१७)

सूक्त २६

(ऋषि—वामदेवः । देवता—इन्द्रः । छन्द—त्रिष्टुप्)

आ नः स्तुत उप वाजेभिरूती इन्द्र याहि हरिभिर्मन्दसानः ।
तिरश्चिदर्यः सवना पुरूण्याङ्गूषेभिर्गृणानः सत्यराधाः ॥१
आ हि ष्मा याति नर्यश्चिकित्वान् हूयमानः सोतृभिरुप यज्ञम् ।
स्वश्वो अभीरुर्मन्यमानः सुष्वाणेभिर्मदति सं ह वीरैः ॥२
श्रावयेदस्य कर्णा वाजयध्यै जुष्टामनु प्र दिशं मन्दयध्यै ।
उद्वावृषाणो राधसे तुविष्मान् करन्न इन्द्रः सुतीर्थाभयं च ॥३
अच्छा यो गन्ता नाधमानमूती इत्था विप्रं हयमानं गृणन्तम् ।
उप त्मनि दधानो धुर्याशून् सहस्राणि शतानि वज्रबाहुः ॥४
त्वोतासो मघवन्निन्द्र विप्रा वयं ते स्याम सूरयो गृणन्तः ।
भेजानासो बृहद्दिवस्य राय आकाय्यस्य दावने पुरुक्षोः ।५।१८

हे इन्द्र हमारे द्वारा स्तवन करने पर हमारी रक्षा के निमित्त हविरन्नयुक्त हमारे यज्ञोंमें अश्वोंके सहित पधारो । तुम प्रसन्न मन वाले, स्तोत्रों द्वारा पूजित, सत्य स्वरूप एवं सबके स्वामी हो । १ । मनुष्यों का कल्याण करने वाले, सर्व ज्ञानों के जानने वाले इन्द्र सोम सिद्ध करने वालों द्वारा बुलाये जाने पर यज्ञ के लिए आवें । वे इन्द्र शोभित अश्वों वाले, निडर, स्तुत तथा वीर मरुद्गण के साथ पुष्टि को प्राप्त करते हैं । २ । हे मनुष्यों ! इन्द्र की बल-वृद्धि के लिए तथा उन्हें हर प्रकार से पुष्ट करने के लिए उनके दोनों कालों में स्तोत्र को श्रवण कराओ । सोम रस से नीचे गये पराक्रमी इन्द्र हमारे धनके लिए उत्तम स्थानों को भयसे मुक्त करें ।३। भुजाओं में वज्र धारण करने वाले इन्द्र अपने बहुसंख्यक घोड़ों को रथ में चलने के लिये जोड़ते हैं और रक्षा करने के लिए बुद्धिमान, प्रसंन करने वाले, स्तवन करते हुए याचक यजमान के पास जाते हैं । हम स्तोता विद्वान् तुम्हारे पास रक्षित हैं । तुम दीप्तमान्, अन्नवान् और

स्तुतियों के पात्र हों। धन देने वाले समय में हम तुम्हारा यजन करें ।४-५। (१८)

सूक्त ३०

(ऋषि–वामदेवः । देवता–इन्द्रः । छंद–गायत्री, अनुष्टुप्)

नकिरिन्द्र त्वदुत्तरो न ज्यायाँ अस्ति वृत्रहन् ।
नकिरेवा यथा त्वम् ॥१
सत्रा ते अनु कृष्टयो विश्वा चक्रेव वावृतुः ।
सत्रा महाँ असि श्रुतः ॥२
विश्वे चनेदना त्वा देवास इन्द्र युयुधुः । यदहा नक्तमातिरः ॥३
यत्रोत बाधितेभ्यश्चक्रं कुत्साय युध्यते । मुषाय इन्द्र सूर्यम् ॥४
यत्र देवाँ ऋघायतो विश्वाँ अयुध्य एक इत् । त्वमिन्द्र वनूँरहन् ।५।१९

हे इन्द्र ! तुम वृत्र का नाश करने वाले हो । इस संसार में तुमसे बढ़कर कोई श्रेष्ठ नही । तुमसे बढ़कर बड़ा भी कोई नहीं है । तुम संसार में जितने प्रसिद्ध हो उतना प्रसिद्ध कोई नहीं ।१। हे इन्द्र ! सर्वव्यापी पहिया जैसे गाड़ी के पीछे चलता है वैसे ही प्रजानन भी तुम्हारे पीछे चलते हैं । तुम सत्य ही मेधावी हो । तुम अपने गुणों द्वारा देवताओं में प्रसिद्ध हो ।२। हे इन्द्र ! विजय कामना वाले मेंब देवताओं ने बलके रूप में तुम्हारी सहायता पाकर राक्षसों से संग्राम किया था । तब तुमने रात-दिन शत्रुओंका संहार किया था ।३। हे इन्द्र! उस संग्राम में तुमने युद्ध-रत "कुत्स" और उसके सहायकों के निमित्त सूर्यपर चक्र को घुमाया और अपने जनों की रक्षा की थी ।४। हे इन्द्र ! संग्राम में तुमने अकेले ही हिंसा करने वाले तथा सभी देवताओं को बाधा देने वाले असुरों से युद्ध किया था, उसमें उसमें उन सभी का संहार किया था ।५। (१९)

यत्रोत मर्त्याय कमरिणा इन्द्र सूर्यम् । प्रावः शचीभिरेतशम्॥६
किमादुतासि वृत्रहन् मघवन् मन्युमत्तमः। अत्राह दानुमातिरः॥७

एतद् घेदुत वीर्यमिन्द्र चकर्थ पौंस्यम् ।
स्त्रियं यद् दुर्हणायुवं वधीर्दुहितरं दिवः ॥८
दिवश्चिद् घा दुहितरं महान् महीयमानाम् ।
उषासमिन्द्र सं पिणक् ॥९
अपोषा अनसः सरत् संपिष्टादह बिभ्युषी ।
नि यत् सीं शिश्नथद् वृषा ।१०।२०

हे इन्द्र ! तुमने जिस युद्ध में "एतश" के निमित्त सूर्य पर भी आक्रमण किया था, उस समय घोर संग्राम-द्वारा तुमने एतश ऋषि को भली प्रकार से रक्षा की थी ।६। हे वृत्ररूप आवरणकारी अन्धकार का दूर करने वाले इन्द्र ! और तो क्या. तुम दुष्टों पर अत्यंत क्रोध करने वाले हो । तुम प्रजाओं को छिन्न-भिन्न करने वाले असुर का वध करो ।७। हे इन्द्र ! तुम पुरुषोचित वीर कर्मों को करने वाले हो । जैसे सूर्य अपने आकाश से उषा का नाशकर देता है,वैसे ही हम तुम एकत्रित हुई शत्रु-सेना को नष्ट करो ।८। हे इन्द्र ! सूर्य जैसे प्रकाश का दोहन करने वाली उषा को छिन्न-भिन्न कर देता है, वैसे ही तुम विजय की कामना करने वाली शत्रु-सेना को पीस डालो ।९। कामनाओं के वर्षक इन्द्र ने जब उषा के रथ को छिन्न-भिन्न किया था, तब उषा डरकर इन्द्र द्वारा तोड़े हुये रथ के ऊपर से प्रकट हुई थी ।१०। (२०)

एतदस्या अनः शये सुसंपिष्टं विपाश्या । ससार सीं परावतः ।११
उत सिन्धुं दिबाल्यं वितस्थानामधि क्षमि । परि ष्ठा इन्द्र मायया ॥१२
उत शुष्णस्य धृष्णुया प्र मृक्षो अभि वेदनम् पुरो । यदस्य संपिणक् ॥१३
उत दासं कौलितरं बृहतः पर्वतादधि । अवाहन्निन्द्र शम्बरम्१४
उत दासस्य वर्चिनः सहस्राणि शतावधीः ।
अधि पञ्च प्रधीरिव ।१५।२१

इन्द्र द्वारा तोड़ा गया वह उषा का रथ विपाशा नदी के किनारे जा पड़ा। रथ के भग्न होने पर, उषा दूर देशमें अचेत होकर जा पड़ी ।११। हे इन्द्र ! तुमने सभी जलों को तथा तिष्ठमाना नदी को इस भू-मण्डल पर अपनी बुद्धिके बल से प्रकट किया था ।१२। इन्द्र ! तुम वृष्टि करने वाले हो। जब तुमने "शुष्ण" के नगरों को नष्ट किया था, तब तुमने उसके धन को भी लूटा था।१३। हे इन्द्र ! तुमने 'कौलितर' के पुत्र 'शम्बर' नामक असुर को पर्वत से नीचे गिरा कर मार डाला ।१४। हे इन्द्र ! चक्र के चारों ओर स्थित शंकु के समान 'र्चि' नामक दस्यु के चारों ओर स्थित पाँच सौ सहस्र संख्यक दासों का तुमने वध किया था ।१५। (२१)

उत त्यं पुत्रमग्रुवः परावृक्तं शतक्रतुः । उक्थेष्विन्द्र आभजत्१६
उत त्या तुर्वशायदू अस्नातारा शचीपतिः ।
इन्द्रो विद्वाँ अपारतत् ॥१७
उत त्या सद्य आर्या सरयोरिन्द्र पारतः । अर्णाचित्ररथावधीः१८
अनु द्वा जहिता नयो ऽन्धं श्रोणं च वृत्रहन् ।
न तत् ते सुम्नमष्टवे ॥१९
शतमश्मन्मयीनां पुरामिन्द्रो व्यास्यत् । दिवोदासाय दाशुषे२०।२२

हे इन्द्र ! तुमने प्रशंसनीय कार्यों में भी उन "अग्रु" पुत्रों को दुःखों से बचाकर यश-भागी बनाया ।१६। शचीपति इन्द्र ने 'ययाति' के शाप से च्युत राजा "यदु" और 'तुर्वश' को सङ्कट से पार किया। ।१७। हे इन्द्र! तुमने तत्क्षण 'सरयू'के पार रहने वाले 'अर्ण'और 'चित्र-रथ' नामक राजा का संहार किया ।१८। हे वृत्र-नाशक इन्द्र ! तुमने बन्धुओं द्वारा त्यागे गये अन्धे और लँगड़े पर कृपा की थी। तुम्हारे द्वारा दिये सुख को नष्ट करने में कोई भी समर्थ नहीं है ।१९। इन्द्र ने हविदान करने वाले यजमान 'दिवोदास' को 'शम्बर' के पाषाण से बने सौ नगर दिये ।२०। (२२)

अस्वापयद् दभीतये सहस्रा त्रिंशतं हथैः ।
दासानामिन्द्रो मायया ॥२१

स घेदुतासि वृत्रहन् त्समान इन्द्र गोपतिः ।
यस्ता विश्वानि चिच्युषे ॥२२
उत नूनं यदिन्द्रियं करिष्या इन्द्र पौंस्यम्
अद्या नकिष्टदा मिनत् ॥२३
वामंवामं त आदुरे देवो ददात्वर्यमा ।
वामं पूषा वामं भगो वामं देवः करूलती ।२४।२३

इन्द्र ने अपनी माया से दस्युओं की तीन सौ सहस्र सेना को नष्ट करने के लिए हनन करने वाले अस्त्रों से पृथिवी पर सुला दिया ।२१। हे इन्द्र ! तुम वृत्र के हननकर्त्ता हो । तुमने सभी शत्रु सेनाओं को रण क्षेत्र में विचलित कर दिया । तुम गौओंके पालन कर्त्ता हो । तुम जिस सामर्थ्य और ऐश्वर्य को धारण करते हो, उसकी हिंसा आज भी कोई व्यक्ति करने में समर्थ नहीं है ।२२-२३। हे इन्द्र ! तुम शत्रुओं का नाश करने वाले हो, अर्यमा सुन्दर धन दें । दन्तविहीन पूषा और भग भी रमणीय धन प्रदान करें ।२४। (२३)

सूक्त ३१

(ऋषि–वामदेवः । देवता–इन्द्रः । छन्द–गायत्री)

कया नश्चित्र आ भुवदूती सदावृधः सखा । कया शचिष्ठया वृता१
कस्त्वा सत्यो मदानां मंहिष्ठो मत्सदन्धसः। दृलहा चिदारुजे वसु२
अभी षु णः सखीनामविता जरितॄणाम् । शतं भवास्यूतिभिः॥३
अभी न आ ववृत्स्व चक्रं न वृत्तमर्वतः। नियुद्भिश्चर्षणीनाम् ॥४
प्रवता हि क्रतूनामा हा पदेव गच्छसि । अभक्षि सूर्ये सचा।५।२४

वे सदा बढ़ने वाले, पूजा के पात्र मित्र रूप इन्द्र किस पूजा द्वारा हमारे सामने आवेंगे ? किस बुद्धिमान् के श्रेष्ठ कर्म से प्रभावित हुए वे हमारे सामने पधारेंगे ? ।१। हे इन्द्र ! सत्य रूप और प्रसन्न करने वाले सोम रसों के बींच, शत्रुओं के धन का नाश करने के लिए तुम्हें

कौन-सा सोम रस पुष्ट करेगा ।२। हे इन्द्र ! तुम मित्र रूप स्तुति करने वालों की रक्षा करते हो, अपने विभिन्न रक्षा साधनों सहित हमारे सामने आओ ।३। हे इन्द्र ! हम तुम्हारे मार्ग पर चलने वाले हैं । हम मनुष्यों की स्तुतियों से प्रसन्न होते हुए तुम हमारे सामने वृत्ताकार चक्र के समान आओ ।४। हे इन्द्र ! तुम यज्ञ में अपने स्थान को जानते हुए यहाँ पधारो । सूर्यके साथ हम तुम्हारा यजन करते हैं ।५।   (२४)

सं यत् त इन्द्र मन्यवः सं चक्राणि दधन्विरे । अध त्वे अध सूर्ये।६
उत स्मा हि त्वामाहुरिन्मघवानं शचीपते। दातारमविदीधयुम्।७
उत स्मा सद्य इत् परि शशमानाय सुन्वते । पुरू चिन्मंहसे वसु।८
नहि ष्मा ते शतं चन राधो वरन्त आमुरः ।
न च्यौत्नानि करिष्यतः ।।९
अस्माँ अवन्तु ते शतमस्मान् त्सहस्रमूतयः ।
अस्मान् विश्वा अभिष्टयः ।१०।२५

हे इन्द्र ! तुम्हारे निमित्त सम्पादन की गई स्तुति तथा कर्म जब एक साथ ऊपर उठते हैं, तब वे प्रथम तुम्हारे और फिर सूर्य के होते हैं ।६। हे इन्द्र ! तुम कर्मों के रक्षक हो । तुमको धनवान और स्तोता की इच्छा पूर्ण करने वाला तथा तपस्वी कहा आता है ।७। हे इन्द्र ! सोम सिद्ध करने वाले तथा स्तुति करने वाले यजमानको तुम तुरन्तही बहुत सा धन देते हो ।८। हे इन्द्र ! बाधा देने वाले दैत्य भी तुम्हारे सैकड़ों ऐश्वर्योंको रोक नहीं सकते । विभिन्न पराक्रमवाले वीरकर्मा भी तुम्हारे बलों को रोक नहीं सकते ।९। हे इन्द्र ! तुम्हारे सैकड़ों रक्षा-साधन हमारी रक्षा करें । तुम्हारे हजारों रक्षा-साधन हमारी रक्षा करें, तुम्हारी समस्त प्रेरणायें रक्षा में सहायक हों ।१०।   (२५)

अस्माँ इहा वृणीष्व सख्याय स्वस्तये । महो राये दिवित्मते ।।११
अस्माँ अविड्ढि विश्वहेन्द्र राया परीणसा ।
अस्मान् विश्वाभिरूतिभिः ।।१२
अस्मभ्यं ताँ अपा वृधि व्रजाँ अस्तेव गोमतः ।
नवाभिरिन्द्रोतिभिः ।।१३

अस्माकं धृष्णुया रथो द्युमाँ इन्द्रानपच्युतः। गव्युरश्वयुरीयते।१४
अस्माकमुत्तमं कृधि श्रवो देवेषु सूर्य। वर्षिष्ठं द्यामिवोपरि१५।२६

हे इन्द्र ! हम यजमानों को इस यज्ञ में मित्र रूप, कभी नष्ट न होने वाला तथा प्रकाश से युक्त धन का अधिकारी बनाओ ।११। हे इन्द्र ! नित्य प्रति अपने महान धन द्वारा हमारी रक्षा करो ।१२। हे इन्द्र ! वीरके समान अपने नवीन रक्षा साधन द्वारा हमारे लिए गौओं के निवास स्थान को पुष्ट करो ।१३। हे इन्द्र ! तुम हमारे शत्रुओं को रगड़ने वाले, अत्यन्त तेजस्वी, अविनाशी, गौओं से युक्त, अश्वों वाले रथ में सब ओर जाने वाले हो। तुम उस रथ के सहित हमारी रक्षा करने वाले होओ ।१४। हे सूर्य ! तुम सबको प्रेरणा देने वाले हो। तुमने वर्षा करने मे समर्थ आकाश को जैसे ऊपर स्थापित किया है वैसे ही देवताओं के मध्य हमारे यज्ञ को बढ़ाओ ।१५। (२६)

सूक्त ३२

(ऋषि-वामदेवः । देवता–इन्द्राश्वौ । छन्द–गायत्री)

आ तू न इन्द्र वृत्रहन्नस्माकमर्धमा गहि ।महान् महीभिरूतिभिः१
भृमिश्चिद् घासि तूतुजिरा चित्र चित्रिणीष्वा। चित्रं कृणोष्यूतये२
दभ्रेभिश्चिच्छशीयांसं हंसि व्राधन्तमोजसा। सखिभिर्ये त्वे सचा३
वयमिन्द्र त्वे सचा वयं त्वाभि नोनुमः । अस्माँअस्माँ इदुदव ।।४
स नश्चित्राभिरद्रिवोऽनवद्याभिरूतिभिः
अनाधृष्टाभिरा गहि ।५।२७

हे इन्द्र ! तुम शत्रुओं के हननकर्त्ता हो। तुम शीघ्र हमारे सामने आओ। तुम महान्‌हो। अपनी महान् रक्षाओं सहित हमारे निकट पधारो ।१। हे इन्द्र ! तुम पूजा के योग्य हो। तुम भ्रमणशील हो। तुम हमको इच्छित फल प्रदान करते हो अद्‌भुत कर्म वाली प्रजा को तुम पोषण के निमित्त धन प्रदान करते हो ।२। हे इन्द्र जो ! यजमान तुम्हारे अनुकूल होते हैं, उन थोड़े यजमानों को साथ लेकर तुम उच्छृंखल, बड़े हुए शत्रुओं को अपने महान् पराक्रम से नष्ट करते हो ।३। हे इन्द्र ! हम यजमान तुम्हारे द्वारा सुसंगत हुये है। हम तुम्हारी अत्यन्त स्तुति

करते हैं। तुम हमारा विशेष रूप से पालन करो ।४। हे वज्रिन् ! आनन्दित ! अद्भुत शत्रुओं द्वारा पराजित न होने वाले, तुम अपनी समृद्ध रक्षाओं सहित हमारे पास आओ ।५। (२७)

भूयामो षु त्वावतः सखाय इन्द्र गोमतः । युजो वाजाय घृष्वये।६
त्वं ह्येकषु ईशिष इन्द्र वाजस्य गोमतः। स नोयन्धि महीमिषम्७
न त्वा वरन्ते अन्यथा यद् दित्ससि स्तुतो मधम्।
स्तोतृभ्य इन्द्र गिर्वणः ॥८
अभि त्वा गोतमा गिराऽनूषत प्र दावने । इन्द्र वाजाय घृष्वये ।९
प्र ते वोचाम वीर्या या मन्दसान आरुजः ।
पुरो दासीरभीत्य ।१०।२८

हे इन्द्र ! हम तुम्हारे समान गौ युक्त पुरुषके सहयोगी हैं हम श्रेष्ठ धन के निमित्त तुम्हारी सहायता चाहते हैं। हे इन्द्र ! हम अकेले ही गौ, घोड़े आदिके स्वाभी हैं। हमको बहुतसा अन्नादि धन प्रदान करो ।६-७। हे इन्द्र ! तुम स्तुति के पात्र हो। स्तुति करने वालोंको धन देने की इच्छा करतेहो तब तुम्हारे उस दानकी रोकने की किसी में सामर्थ्य नहीं है ।८। हे इन्द्र ! तुम्हारे उद्देश्य से गौतम वशंज ऋषि अन्न के निमित्त स्तोत्र द्वारा तुम्हारा स्तवन करते हैं ।९। हे इन्द्र ! तुम सोम पीकर पराक्रमी हुए 'क्षेपक' राक्षसों के सब नगरोंमें जाकर ध्वस्त करते हो ।१०। (२८)

ता ते गृणन्ति वेधसो यानि चकर्थ पौंस्या । सुतेष्विन्द्र गिर्वणः।११
अविवृधन्त गोतमा इन्द्र त्वे स्तोमवाहसः ।
ऐषु धा वीरवद् यशः ॥१२
यच्चिद्धि शश्वतामसीन्द्र साधारणस्त्वम्। तं त्वा वयं हवामहे१३
अर्वाचीनो वसो भवाऽस्मे सु मत्स्वान्धसः ।
सोमानामिन्द्र सोमपाः ॥१४
अस्माकं त्वा मतीनामा स्तोम इन्द्र यच्छतु। अर्वागा वर्तया हरी१५
पुरोडाशं च न घसो जोषयासे गिरश्च नः ।
वधूयुरिव योषणाम् ।१६।२९

हे इन्द्र ! तुम स्तुतिके पात्र हो । तुम जिन बलोंको प्रकट करतेहो तुम्हारे उन्हीं बलोंका मेधावी जन सोम के सिद्ध होने पर कथन करतेहैं ।११। हे इन्द्र ! स्तोत्रों को वहन करने वाले गौतम वंशज स्तोत्र से तुम्हें बढ़ाते हैं तुम उन्हें पुत्रादि से युक्त अन्न दो ।१२। हे इन्द्र ! तुम साथ यजमानोंके प्रसिद्ध देवताहो । हम स्तुति करने वाले तुम्हें बुलाते हैं ।१३। हे इन्द्र तुम उत्तम निवास देते हो । तुम हम यजमानों के सामने आओ । हे सोम-पान करने वाले इन्द्र तुम सोम-रूप अन्न से पुष्टि को प्राप्त होओ ।१४। हे इन्द्र ! हम तुम्हारी स्तुति करने वालेहैं हमारा स्तोत्र तुम्हें हमारे पास लावे। तुम अपने दोनों घोड़ोंको हमारे सामने मोड़ो ।१५। हे इन्द्र ! तुम हमारे पुरोडाश को खाओ । जैसे पुरुष स्त्रियों के वचनों को सुनता है, उसी प्रकार तुम हमारे वचनोंको ध्यान से सुनो ।१६। (२९)

सहस्रं व्यतीनां युक्तानामिन्द्रमीमहे । शतं सोमस्य खार्यः ॥१७
सहस्रा ये शता वयं गवामा च्यावयामसि ।
अस्मत्रा राध एतु ते ।१८
दश ते कलशानां हिरण्यानामधीमहि । मूरिदा असि वृत्रहन् ।१९
भूरिदा भूरि देहि नो मा दभ्रं भूर्या भर ।
भूरि घेदिन्द्र दित्ससि ॥२०
भूरिदा ह्यसि श्रुतः पुरुत्रा शूर वृत्रहन् ।
आ नो भजस्व राधसि ॥२१
प्र ते बभ्रू विचक्षण शंसाभि गोषणो नपात् ।
माभ्यां गा अनु शिश्रथः ॥२२
कनीनकेव विद्रधे नवे द्रुपदे अर्भके । बभ्रू यामेषु शोभते ॥२३
अरं म उस्रयाम्णे ऽरमनुस्रयाम्णे । बभ्रू यामेष्वस्रिधा॥२४।३०

हम स्तुति करने वाले इन्द्र के समीप सीखे हुए, शीघ्र चलने वाले सहस्रों घोड़ों को माँगते हैं और सैकड़ों सोम कलशों की याचना करतेहैं ।१७। हे इन्द्र ! हम तुम्हारी सैकड़ों अथवा हजारों गौओं को अपने सामने प्राप्त करें हमारा धन तुम्हारे पास से यहां आवे ।१८। हे इन्द्र!

हम तुम्हारे द्वारा दस कलसोंमें सुवर्ण धारण करें। हे वृत्रके हननकर्त्ता इन्द्र ! तुम अपरिमित दान करने वाले हो ।१६। हे इन्द्र तुम हमको बहुत सा धन देने की इच्छा करते हो। तुम बहुत धन दाता होकर हम को अत्यन्त धन दों। स्वल्प धन मत दो। बहुत-२ ऐश्वर्य प्रदान करो ।२०। हे वृत्रके हनन करने वाले वीर इन्द्र। तुम बहुत देने वाले के रूप में यजमानोंमें प्रसिद्ध हो। तुम हमको धनका अधिकारी बनाओ ।२१। है मेधावी इन्द्र ! हम तुम्हारे लाल रङ्ग वाले दोनों घोड़ों की स्तुति करते हैं। तुम गौओं के देने वाले हो। तुम स्तुति करने वालों को नष्ट नहीं करते। तुम अपने दोनों अश्वों द्वारा हमारी गौओंको पीड़ित न करना ।२२। हे इन्द्र ! जाने योग्य मार्ग में जैसे लाल रङ्ग के दो अश्व शोभा पाते है, उसी प्रकार दृढ़ नवीन खूँटे के समान कर्मों में स्थिर स्त्री पुरुष रूप यजमान सुशोभित होते हैं ।२३। हे इन्द्र ! जब हम बैलों में जुते रथ में बैठकर चलें अथवा पद यात्रा करें तब तुम्हारे हिंसा रहित लाल वर्ण वाले दोनों घोड़े हमारे लिए कल्याणकारी हों ।२४। (३०)

।- इति षष्ठोऽध्यायः समाप्तः ॥

सूक्त ३३ (चौथा अनुवाक)

(ऋषि–वामदेवः। देवता–ऋभवः ' छन्द- त्रिष्टुप्)

प्र ऋभुभ्यो दूतमिव वाचमिष्य उपस्तिरे श्वैतरीं धेनुमीले।
ये वातजूतास्तरणिभिरेवैः परि द्यां सद्यो अपसो बभूवुः ॥१
यदारमक्रन्नृभवः पितृभ्यां परिविष्टी वेषणा दंसनाभिः।
आदिद देवानामुप सख्यमायन् धीरासः पुष्टिमवहन् मनायै ॥२
पुनर्ये चक्रु पितरा युवाना सना यूपेव जरणा शयाना।
ते वाजो विभ्वाँ ऋभुरिन्द्रवन्तो मधुप्सरसो नोऽवन्तु यज्ञम् ॥३
यत् संवत्समृभवो गामरक्षन् यत् संवत्समृभवो मा अपिंशन्।
यत् सवत्समभरन् मासो अस्यास्ताभिः शमीभिरमृतत्वमाशुः ॥४
ज्येष्ठ आह चमसा द्वा करेति कनीयान् त्रीन् कृणवामेत्याह।

कनिष्ठ आह चतुरस्करेति त्वष्ट ऋभवस्तत् पनयद् वचो वः॥५॥१

हम यजमान ऋभुगण के निमित्त दूत के समान स्तुति रूप वाणी को प्रेरित करते हैं। हम उनके समीप सोव उपस्थित करने के लिए दूध वाली गायकी याचना करते हैं। ऋभुगण वायुके समान चलने वाले हैं तथा संसारका उपकार करने वाले कर्मोंको करते हैं। वे अपने वेगवान् अश्वों से क्षण भर में अन्तरिक्ष को व्याप्त करते हैं।१। जब ऋभुगण ने अपनी माता का युवावस्था दी और चमस बनाने आदि कार्यों को करते हुए यशवान् हुए तब उसी समय उनकी मित्रता इन्द्रादि देवताओं के साथ हो गई। वे मनस्वी और धैर्यवान् हैं तथा यजमान के निमित्त बल धारण करते हैं।२। ऋभुओं ने यह धूप के समान जीर्ण और लुढ़के पड़तेहुए माता-पिताको तरुणता दी। वे बलवान् विभु और ऋभु इन्द्र के साथ सोम पीते हुए हमारे यज्ञ के रक्षक हो।३। ऋभुगण ने एक वर्ष तक मरी हुई धेनु की सेवा की। उन्होंने उस गाय के देह को अवयवोंसे सम्पन्न किया और वर्ष भर उसको रक्षाकी। अपने इन कार्यों से वे देवत्व को प्राप्त कर सके।४। बड़े ऋभु ने एक चमस को दो करने की इच्छा प्रकट की। बीच के ऋभुने तीन करने को और छोटे ऋभु ने चार करने को कहा। हे ऋभुगण ! तुम्हारे गुरु त्वष्टा ने इस तुम्हारो 'चार करने' वाली बात को स्वीकार कर लिया।५। (१)

सत्यमूचुर्नर एवा हि चक्रुरनु स्वधामृभवो जग्मुरेताम्।
विभ्राजमानांश्चमसाँ अहेवाऽवेनत् त्वष्टा चतुरो ददृश्वान् ॥६
द्वादश द्यून् यदगोह्यस्याऽऽतिथ्ये रणन्नृभवः ससन्तः।
सुक्षेत्राकृण्वन्नयन्त सिन्धून् धन्वातिष्ठन्नोषधीर्निम्नमापः ॥७
रथं ये चक्रुः सुवृतं नरेष्ठां ये धेनुं विश्वजुवं विश्वरूपाम्।
त आ तक्षन्त्वृभवो रयिं नः स्ववसः स्वपसः सुहस्ताः ॥८
अपो ह्येषामजुषन्त देवा अभि क्रत्वा मनसा दीध्यानाः।
वाजो देवानामभवत् सुकर्मेन्द्रस्य ऋभुक्षा वरुणस्य विभ्वा ॥९
ये हरी मेधयोक्था मदन्त इन्द्राय चक्रुः सुयुजा ये अश्वा।

ते रायस्पोषं द्रविणान्यस्मे धत्त ऋभवः क्षेमयन्तो न मित्रम् ॥१०
इदाह्नः पीतिमुत वो मदं धुर्न ऋते श्रान्तस्य सख्याय देवाः ।
ते नूनमस्मे ऋभवो वसूनि तृतीये अस्मिन् त्सवने दधात ।११।२

उन मनुष्य रूपवाले ऋभुओंने जो कहा वही किया । उनका कथन सत्य हुआ । फिर वे ऋभुगण तीसरे सवन में स्वधा के अधिकारी हुए । दिनके समान प्रकाशवान् चार चमसों को देखकर त्वष्टाने उनकी इच्छा करते हुए ग्रहण किया ।६। प्रत्यक्ष प्रकाशवान् सूर्य के लोक में जब वे ऋभुगण आर्द्रा से वर्षाकारक बारह नक्षत्रों तक अतिथि रूपमें रहते हैं, तब वे वर्षा द्वारा कृषि को धान्य पूर्ण करते और नदियों को प्रवाहवान् बनाते हैं । जल से रहित स्थान में औषधियाँ उत्पन्न होतीं और निचले स्थानों में जल भरा रहता है ।७। जिन्होंने सुन्दर पहिये वाले रथ को बनाया था जिन्होंने संसार को प्रेरणा देने वाली तथा अनेक रूपिणी गौ को प्रकट किया था,वे उत्तम कर्म वाले,सुन्दर अन्नवास और सिद्ध हस्त ऋभुगण हमारे धन का सम्पादन करें ।८। इन्द्रादि देवताओं ने वर देने जैसे कर्म द्वारा यथा प्रसन्न मन से तेजस्वी होकर ऋभुगण के घोड़े, रथ आदि निर्माण कार्य को स्वीकार किया । उत्तम कर्म वाले छोटे बड़े ऋभु इन्द्रसे सम्बन्धित हुए ।९। जिन ऋभुओंने दो घोड़ों को वृद्धि और प्रशंसा द्वारा पुष्ट किया, जिन ऋभुओं ने उन दोनों घोड़ों को इन्द्र के रथ मे जुतने योग्य किया, वे ऋभुगण हमारे निमित्त कल्याणकारी मित्र के समान धन, जल, गवादि और समस्त सुख प्रदान करें ।१०। चमस आदि के बनाने के पश्चात् देवताओं ते तीसरे सवन में तुम्हारे लिए सोम-पान से उत्पन्न हर्ष प्रदान किया था । देवगण तपस्वी के सिवाय किसी अन्य के मित्र नहीं बनते । हे ऋभुओं ! इस तीसरे सवन में तुम हमारे लिए अवश्य ही फल दो ।११।　　　　(२)

सूक्त ३४

(ऋषि–वामदेवः । देवता–ऋभवः : । छन्द–त्रिष्टुप्)

ऋभुर्विभ्वा वाज इन्द्रो नो अच्छेमं यज्ञं रत्नधेयोप यात ।

इदा हि वो धिषणा देव्यह्नामधात् पीतिं सं मदा अग्मता वः॥१
विदानासो जन्मनो वाजरत्ना उत ऋतुभिर्ऋभवो मादयध्वम्।
सं वो मदा अग्मत सं पुरंधिः सुवीरामस्मे रयिमेरयध्वम्॥२
अयं वो यज्ञ ऋभवोऽकारि यमा मनुष्वत् प्रदिवो दधिध्वे।
प्र वोऽच्छा जुजुषाणासो अस्थुरभूत विश्वे अग्रियोत वाजाः॥३
अभूदु वो विधते रत्नधेयमिदा नरो दाशुषे मर्त्याय।
पिबत वाजा ऋभवो ददे वो महि तृतीयं सवनं मदाय॥४
आ वाजा यातोप न ऋभुक्षा महो नरो द्रविणसो गृणानाः।
आ वः पीतयोऽभिपित्वे अह्नामिमा अस्तं नवस्व इव ग्मन्।५।३

हे ऋभु,, विभु बाज और इन्द्र ! धन-दौलतके लिए हमारे इस यज्ञ में पधारो ! अभी दिवस में वाणी रूप स्तुति तुम्हारे निमित्त सोम सिद्ध करने सम्बन्धी प्रीति देती है। सोम से उत्पन्न हर्ष तुम्हारे साथ सुसंगत हो।१। हे ऋभुओं। तुम अन्न द्वारा सुशोभित हो। पूर्व में तुम मनुष्य थे, अब देवता हुए हो। इस बात को ध्यान करते हुए देवताओं के पास पुष्टिको प्राप्त होओ। हर्षकारी सोम और स्तोत्र तुम्हारे निमित्त सुसंगत हुए है। तुम हमारे लिए पुत्र पौत्रादि से मुक्त धन भेजो।२। हे ऋभुगण ! यह यज्ञ तुम्हारे निमित्त किया गया है। तुम इसे मनुष्य के समान दीप्तिमान् होकर करो। सेवाकारी सोम तुम्हारे समीप उपस्थित है। तुम हमारे मुख्य साध्य हो।३। हे अग्रगण्य ऋभुओं ! हविदाता यजमान के लिए इस तीसरे सवन में तुम्हारी कृपा से दान योग्य रत्न प्राप्त हों। हम तुम्हारे निमित्त पुष्टिदायक सोम प्रदान करते हैं, तुम उसका पानकरो।४। नेतृ-श्रेष्ठ ऋभुगण ! महान् ऐश्वर्य की प्रशंसा करते हुए तुम हमारे समीप जाओ। दिनकी समाप्तिमें जैसे नव प्रसूता गौएँ अपने स्थान को लौटती हैं, उसी प्रकार यह सोमरस तुम्हारे पीने के निमित्त तुम्हारी ओर आता है।५। (३)

आ नपातः शवसो यातनोपेमं यज्ञं नमसा हूयमानाः।
सजोषसः सूरयो यस्य च स्थ मध्वः पात रत्नधा इन्द्रवन्तः।६

सजोषा इन्द्र वरुणेन सोमं सजोषाः पाहि गिर्वणो मरुद्भिः ।
अग्रेपाभिर्ऋतुपाभिः सजोषा ग्नास्पत्नीभी रत्नधाभिः सजोषाः ७
सजोषस आदित्यैर्मादयध्वं सजोषस ऋभवः पर्वतेभिः ।
सजोषसो दैव्येना सवित्रा सजोषसः सिन्धुभी रत्नधेभिः ॥८
ये अश्विना ये पितरा य ऊती धेनुं ततक्षुर्ऋभवो ये अश्वा ।
ये अंसत्रा य ऋधग्रोदसी ये विभ्वो नरः स्वपत्यानि चक्रुः ॥९
ये गोमन्तं वाजवन्तं सुवीरं रयिं धत्थ वसुमन्तं पुरुक्षुम् ।
ते अग्रेपा ऋभवो न्यदसाना अस्मे धत्त ये च रातिं गृणन्ति॥१०
नापाभूत न वोऽतीतृषामाऽनिःशस्ता ऋभवो यज्ञे अस्मिन् ।
समिन्द्रेण मदथ सं मरुद्भिः सं राजभी रत्नधेयाय देवाः॥११।४

हे बल से युक्त ऋभुओं ! स्तोत्र द्वारा बुलाये जानेपर तुम इस यज्ञ में आओ । तुम इन्द्र के सखा रूप ओर बुद्धिमान हो, क्योंकि तुम इन्द्र सम्बन्धी हो । तुम मधुर सोमरस को इन्द्र के साथ पीते हुए रत्नादि धन प्रदान करो ।६। हे इन्द्र ! वरुण के साथ सम्यक् दीप्तिमान् होकर सोम-पान करो । तुम स्तुति के पात्र हो । मरुद्गण के साथ मिलकर सोम को पीओ । प्रथम पीने वाले ऋभुओं, देवाङ्गनाओं, तथा रत्न-दात्री सामर्थ्यों के साथ सोम पान करो ।७। हे ऋभुओं ! आदित्यों के साथ मिलकर हर्ष को प्राप्त होओ उपासनीय देवों के साथ मिलकर हर्ष प्राप्त करो । सवितादेवके साथ सुसंगसे होकर हर्षको प्राप्त करो । पर्वतके समान अचल एवं रत्नदाता देवताओंके साथ मिलकर हृष्ट-पुष्ट होओ ।८। जिन्होंने अश्विनीकुमारों को बनाने आदि कार्यों से अपने प्रति स्नेही बनाया, जिन्होंने जीर्ण माता-पिताको तारुण्य दिया, जिन्होंने गौ और अश्व को बनाया, जिन्होंने देवताओं के लिए अंसत्रा कवच बनाया, सिन्होंने आकाश पृथिवीको पृथक् किया, जिन्होंने सुन्दर संतान उत्पन्न करने वाला कार्य किया और जो सबके नेता रूप हैं वे ऋभु मध्यम पान करने वाले हैं ।९। गौ अन्न, सन्तान तथा निवास योग्य ही वह व्यक्त हैं जो बहुत अन्न वाले, धनों के पालक हैं जो धनों की प्रशंसा करने वाले हैं, वे ऋभुगण प्रथम सोम-पान द्वारा हृष्ट होकर

हम धनैश्वर्य दे ।१०। हे ऋभुगण ! हमसे दूर मत जाना । हम तुमको अधिक समय तृषित नहीं रहने देंगे । तुम सुन्दर धन देने के मिमित्त इन्द्र के साथ इस यज्ञ में हर्ष को प्राप्त होओ । मरुद्गण तथा अन्य तेजस्वी देवताओं के साथ पुष्ट होओ ।११।   (४)

सूक्त ३५

(ऋषि–वामदेवः । देवता–ऋभवः । छन्द–त्रिष्टुप्)

इहोप यात शवसो नपातः सौधन्वना ऋभवो माप भूत ।
अस्मिन् हि वः सवने रत्नधेयं गमन्त्विन्द्रमनु वो मदासः ॥१
आगन्नृभूणामिह रत्नधेयमभूत् सोमस्य सुषुतस्य पीतिः ।
सुकृत्यया यत् स्वपस्यया चं एकं विचक्र चमसं चतुर्धा ॥२
व्यकृणोत चमसं चतुर्धा सखे वि शिक्षेत्यब्रवीत ।
अथैत वाजा अमृतस्य पन्थां गणं देवानामृभवः सुहस्ताः ॥३
किमयः स्विच्चमस एष आस यं काव्येन चतुरो विचक्र ।
अथा सुनुध्वं सवनं मदाय पात ऋभवो मधुनः सोम्यस्य ॥४
शच्याकर्त पितरा युवाना शच्याकर्त चमसं देवपानम् ।
शच्या हरी धनुतरावतष्टेन्द्रवाहावृभवो वाजरत्नाः ।५।५

हे, सुधन्वा के बलवान् पुत्रो ! इस तृतीय सवन में यहाँ आओ कहीं अन्यत्र गमन मत करो । हृष्टिकारक सोम इस सवन में, रत्नदान करने वाले इन्द्र के पश्चात् तुम्हारे निकट पहुँचे ।१। ऋभुओं द्वारा दिये जाने वाले रत्नों का दान इन तीसरे सबन में मेरे पास आवे । हे ऋभुगण ! तुमने अपनी हस्तकला द्वारा ही एक चमस के चार बना दिये थे । और सुसिद्ध सोम का पान किया था ।२। हे ऋभुगण ! तुमने एक चमस के चार करते हुए कहा था–हे मित्र रूप अग्ने ! कृपा करो ।' तब अग्नि ने उत्तर दिया था–हे ऋभुओं ! तुम हस्त व्यापार में कुशल हो । तुम अमरत्व प्राप्ति के मार्ग पर जाओ ।३। जिस चमस के चतुरता पूर्वक चार बनाये, गये, बह चमस कैसा था ? ऋत्विजो आनन्द के निमित्त सोम को सिद्ध करो । हे ऋभुओ ! तूम मधुर-सोम

को पीओ ।४। हे उत्तम सोम-युक्त ऋभुगण ! तुमने कला द्वारा अपने माता-पिता को तारुण्य प्रदान किया, एक चमस के चार बनाये और इन्द्र के शीघ्र चलने वाले दोनों घोड़ों को प्रकट किया ।५।　(५)

यो वः सुनोष्यभिपित्वे अह्नां तीव्रं वाजासः सवनं मदाय ।
तस्मै रयिमृभवः सर्ववीरमा तक्षत वृषणो मन्दसानाः ॥६
प्रातः सुतमपिबो हर्यश्व माध्यंदिनं सवनं केवलं ते ।
समृभूभिः पिबस्व रत्नधेभिः सखीर्यां इन्द्र चकृषे सुकृत्या ॥७
ये देवासो अभवता सुकृत्या श्येना इवेदधि दिवि निषेद ।
ते रत्नं धात शवसो नपातः सौधन्वना अभवतामृतासः ॥८
यत् तृतीयं सवनं रत्नधेयमकृणुध्वं स्वपस्या सुहस्ताः ।
तदृभवः परिषिक्तं व एतत् सं मदेभिरिन्द्रियेभिः पिबध्वम् ॥६

हे ऋभुगण ! तुम अन्नके स्वामीहो । जो यजमान तुम्हारे आनन्द के निमित्त दिन के अन्तिम काल में सोम को छानता है उस यजमान के लिए तुम उत्तम अभीष्टवर्षी होते हुए अनेक सन्तानयुक्त धन के देने वाले होओ ।६। हे अश्ववान् इन्द्र ! तुम सुसिद्ध सोम को प्राप्त सवनमें पीओ । दिनके मध्यकाल वाला सवन केवल तुम्हारे निमित्त ही है ! हे इन्द्र ! अपने उत्तम कार्य द्वारा तुमने जिनके साथ मित्रता स्थापित की, उन रत्न-दान करने वाले ऋभुगण सहित तीसरे सवनमें सोम-पान करो ।७। हे ऋभुगण ! तुमने अपने उत्तम कर्मों से देवत्व प्राप्त किया । तुम श्येन के समान आकाश में प्राप्त हो । रे सुधन्वा पुत्रो ! तुम अमरत्व प्राप्त कर चुके हो, हमको धन प्रदान करो ।८। हे ऋभुओ ! तुम श्रेष्ठ हस्तकला से युक्त हो । तुम सुन्दर सोमयुक्त तीसरे सवन की श्रेष्ठ कर्मों की कामना से सुसिद्ध करते हो । अतः, तुम प्रसंन मन सोम को पीजो ।६।　(६)

सूक्त ३६

(ऋषि—वामदेवः । देवता—ऋभवः । छन्द—त्रिष्टुप्, जगती)

अनश्वो जातो अनभीशुरुक्थ्यो रथस्त्रिचक्रः परि वर्तते रजः ।

महत् तद् वो देव्यस्य प्रवाचनं द्यामृभव: पृथिवीं यच्च पुष्यथ॥१
रथं ये चक्रु: सुवृतं सुचेतसो ऽविह्वरन्तं मनसस्परि ध्यया ।
ताँ ऊ न्वस्य सवनस्य पीतय आ वो वाजा ऋभवो वेदयामसि२
तद् वो वाजा ऋभव: सुप्रवाचनं देवेषु विभ्वो अभवन्महित्वनम्।
जिव्री यत् सन्ता पितरा सनाजुरा पुनर्युवाना चरथाय तक्षथ।३
एकं वि चक्र चमसं चतुर्वयं निश्चर्मणो गामरिणीत धीतिभि: ।
अथा देवेष्वमृतत्वमानश श्रुष्टी वाजा ऋभवस्तद् व उक्थ्यम्।४
ऋभुतो रयि: प्रथमश्रवस्तमो वाजश्रुतासो यमजीजनन् नर: ।
विभ्वतष्टो विदथेषु प्रवाच्यो यं देवासोऽवथा स विचर्षणि: ।५।७

हे ऋभुओं ! तुम्हारे द्वारा किये जाने वाले कार्य प्रशंसा के योग्य हैं। तम्हारे द्वारा दिया अश्विनीकुमारों का तीन पहिए वाला रथ घोड़े के विना ही अन्तरिक्ष में घूमता है। जिसके द्वारा तुम आकाश और पृथिवी का पालन करते हो, रथ बनाने वाला महान कार्य तुम्हारे देवत्व का साक्ष्य-रूप है । हे उत्तम हृदय वाले मरुद्गण ! तुमने अपने आन्तरिक ध्यान से सुन्दर चाल वाला, पहिये से युक्त रथ बनाया था। हम साधकगण तुम्हें सोमपान के लिए बुलाते हैं।२। हे ऋभुओं ! तुम तीनों ने अपने वृद्ध माता-पिता को तारुण्य देकर चलने के योग्य बनाया था, तुम्हारा वह महान कर्म देवताओं में प्रसिद्ध है।३। हे ऋभुओं तुमने एक चमस के चार भाग किये। अपने उत्तम कर्म से गौ को चमड़े से ढका। इसलिए तुमने देवताओं का अविनाशी पद प्राप्त किया। तुम्हारे सभी कर्म स्तुति का योग्य हैं।४। ऋभुगणने जिस धन को प्रकट किया था, वह अन्नयुक्त मुख्य धन ऋभुओं के पास आवे। यज्ञ स्थान के ऋभुगण द्वारा निमित्त रथ प्रशंसा करने योग्य है। हे दीप्तिमान् ऋभुओ! तुम जिसके रक्षक होतेहो वह साधक देखने योग्य होता हैं।५। (७)

स वाज्यर्वा स ऋषिर्वचस्यया स शूरो अस्ता पृतनासु दुष्टर: ।
स रायस्पोषं स सुवीर्यं दधे यं वाजो विभ्वाँ ऋभवो यमाविषु:६

श्रेष्ठं वः पेशो अधि धायि दर्शतं स्तोमो वाजा ऋभवस्तं जुजुष्टन
धीरासो हिष्ठा कवयो विपश्चितस्तान् व एना ब्रह्मणा वेदयामसि
।।७

यूयमस्मभ्यं धिषणाभ्यस्परि विद्वांसो विश्वा नर्याणि भोजना ।
द्यु मन्तं वाजं वृषशुष्ममुत्तममा नो रयिमृभवस्तक्षता वयः ।।८
इह प्रजामिह रयिं रराणा इह श्रवो वीरवत् तक्षता नः ।
येन वयं चितयेमात्यन्यान् तं वाजं चित्रमृभवो ददा नः ।।९।८

जिस व्यक्ति की ऋभुगण रक्षा करते हैं, वह व्यक्ति पराक्रमी एवं युद्ध कौशल में चतुर होता है। वह ऋषि होता हुआ स्तुतियों से संपन्न होता है। वह वीर शत्रुओं को हराकर संग्राम में ऊँचा उठता है तथा धनवान सन्तानवान् और बलवान होता है।६। हे ऋभुओ! तुम अत्यन्त उत्कृष्ट और दर्शन के योग्य स्वरूप वाले हो। हमने यह सुन्दर स्तोत्र तुम्हारे लिए ही रचा है। तुम इसे श्रवण करो। तुम मेधावी ज्ञानी और कवि हो। स्तोत्र द्वारा हम तुम्हारी प्रार्थना करते हैं।७। हे ऋभुओ! हमारी स्तुति के निमित्त मनुष्यों का हित करने वाली सब भोग्य सामग्री को तुम ग्रहण करो और हमारे निमित्त अत्यन्त तेजस्वी तथा बल उत्पन्न करने वाला, शत्रुओं का पोषण करने वाला अन्न-धन प्राप्त कराओ।८। ऋभुगण! तुम हमारे यश में प्रीतिमान् होकर पुत्र-पुत्रादि तथा धन, भृत्यादि से युक्त यश प्राप्त कराओ। हम जिस धन से दूसरों पर विजय पास के वह सुन्दर धन हमको प्रदान करो।२।
(७)

सूक्त ३७

(ऋषि–वामदेवः। देवता–ऋभवः। छन्द–त्रिष्टुप्, अनुष्टुप्)

उप नो वाजा अध्वरमृभुक्षा देवा यात पथिभिर्देवयानैः ।
यथा यज्ञं मनुषो विक्ष्वासु दधिध्वे रण्याः सुदिनेष्वह्नाम् ।।१
ते वो हृदे मवसे सन्तु यज्ञा जुष्टासो अद्य घृतनिर्णिजो गुः ।
प्र वः सुतासो हरपूयन्त पर्णाः क्रत्वे दक्षाय हर्षयन्त पीताः ।।२

ऽयुदायं देवहितं यथा वः स्तोमो वाजा ऋभुक्षणो ददे वः।
जुह्वे मनुष्यदुपरासु विक्षु युष्मे सचा बृहद्दिवेषु सोमम् ॥३
पीवोअश्वाः शुचद्रथा हि भूताऽयःशिप्रा वाजिनः सुनिष्काः।
इन्द्रस्य सूनो शवसो नपातो ऽनु वश्चेत्यग्रियं मदाय ॥४
ऋभुमृभुक्षणो रयिं वाजे वाजिन्तमं युजम्।
इन्द्रस्वन्तं हवामहे सदासातममश्विनम् ।५।९

ऋभुगण ! तुम जैसे दिनों को श्रेष्ठ दिन बनाने के लिए मनुष्योंके यज्ञ का पालन करते हो वैसे ही तुम देवताओं के श्रेष्ठ मार्ग से हमारे यज्ञ में आओ ।१। आज सब यज्ञ तुम्हारे अन्तःकरण को स्नेह प्रदान करें। घृत मिश्रित सोमरस पर्याप्त मात्रा में तुम्हारे हृदय में प्रवेश करे। चमस में रखा हुआ सोम तुम्हारी इच्छा करता है, वह स्नेहमय होकर तुम्हें उत्तम कर्मों की प्रेरणा दे ।२। हे ऋभुओ ! जो व्यक्ति तीनों सवनों में तुम्हारे निमित्त देवताओं का हित करने वाले सोम को धारण करते हैं, उनमें हम अत्यन्त मनस्वी हुए तुम्हारे लिए सोम रस देते हैं ।३। हे ऋभुओं ! तुम्हारे घोड़े हृष्टपुष्ट हैं, तुम्हारे रथ देदीप्यमान हैं। तुम्हारी ठोड़ी लोहे के समान दृढ़ है। तुम अन्नों के स्वामी तथा उत्तम दान वाले हो। हे बलवानो ! तुम्हारी पुष्टि के निमित्त हम इस प्रथम सवन में अनुष्ठान करते हैं, ।४। हे ऋभुओ ! हम महाने बढ़े हुए धन की याचना करते हैं। युद्धकाल उपस्थित होने पर अत्यन्त शक्तिशाली रक्षक को बुलाते हैं तथा सदा दानशील अश्वों के स्वामी तुम्हारे गणों को हम बुलाते हैं ।५।

(६)

सेदृभवो यमवथ यूयमिन्द्रश्च मर्त्यम्।
स धीभिरस्तु सनिता मेधसाता सो अर्वता ॥६
वि नो वाजा ऋभुक्षणः पथश्चितन यष्टवे।
अस्मभ्यं सूरयः स्तुता विश्वा आशास्तरीषणि ॥७
तं नो वाजा ऋभुक्षण इन्द्र नासत्य रयिम्।
समश्वं चर्षणिभ्य आ पुरु शस्त मघत्तये ।८।१०

हे ऋभुओं ! तुम और इन्द्र जिसके रक्षक होते हों, वह मनुष्य सब में श्रेष्ठ होता है। वह अपने कार्य द्वारा धन भाग प्राप्त करे तथा यज्ञ में घोड़ों से युक्त हो ।६। हे ऋभुओ ! हमको यज्ञ मार्गगामी बनाओ। तुम मेधावी हो। तुम पूजित हमारे लिए सब दिशाओं में सफल होने की सामर्थ्य बाँटने वाले होओ ।७। हे ऋभुओं ! हे इन्द्र ! हे अश्विनी कुमारो ! हम स्तोताओं को तुम धन-दान के निमित्त श्रेष्ठ धन और घोड़ों के दान की प्रेरणा करो ।८। (१०)

सूक्त ३८

(ऋषि–वामदेवः देवता–द्यावापृथिव्यौ, दधिका । छन्द–त्रिष्टुप्)

उतो हि वाँ दात्रा सन्ति पूर्वा या पूरुभ्यस्त्रसदस्युर्नितोशे ।
क्षेत्रासां ददथुरुर्वरासां घनं दस्युभ्यो अभिभूतिमुग्रम् ॥१
उत वाजिनं पुरुनिष्षिध्वानं दधिक्रामु ददथुर्विश्वकृष्टिम् ।
ऋजिप्यं श्येनं प्रुषितप्सुमाशुं चर्कृत्यमर्यो नृपतिं न शूरम् ॥२
यं सीमनु प्रवतेव द्रवन्तं विश्वः पूरुर्मदति हर्षमाणः ।
पड्भिर्गृध्यन्तं मेधयुं न शूरं रथतुरं वातमिव ध्रजन्तम् ॥३
यः स्मारुन्धानो गध्या समत्सु सनुतरश्चरति गोषु गच्छन् ।
आविर्ऋजीको विदथा निचिक्यत् तिरो अरतिं पर्याप आयोः ।४
उत स्मैनं वस्त्रमथिं न तायुमनु क्रोशन्ति क्षितयो भरेषु ।
नीचायमानं जसुरिं न श्येनं श्रवश्चाच्छा पशुमच्च यूथम् ।५।११

हे आकाश पृथिवी ! 'त्रसदस्यु' नामक दानी राजा ने तुमसे बहुत धन पाकर पाँकर माँगने वालोंको दिया। तुमने उसको घोड़ा और पुत्र प्रदान किया था तथा राक्षसों का संहार करने के लिए विपक्षियों को हराने वाला तीक्ष्ण अस्त्र दिया था ।१। अनेक शत्रुओं को रोकने वाले, सभी मनुष्योंकी रक्षा करने वाले सुन्दर चाल वाले, विशेष प्रकाश वाले दुतगामी, पराक्रमी, भूमिपति के समान शत्रुओं का नाश करने वाले दधिक्रादेव (अश्व–रूप–अग्नि) को तुम दोनों धारण करने वाली हो । २ । सब मनुष्य प्रसन्न होकर जिस

दधिक्रा की पूजा करते हैं, वे नीचे जाने वालेके समान गमन करने वाले वीर के समान पैरों से दिशाओं को उलांघने वाले, रथ में चलने वाले तथा वायु समान शीघ्र चाल वाले हैं ।३। जो युद्ध में एकत्र हुए पदार्थों को रोकते हुए सब दिशाओं में जाते हुए वेग से चलते हैं जिनकी शक्ति स्वयं प्रकट होती हैं, वे जाने योग्य कर्मों के ज्ञाता, स्तोता यजमानों के शत्रुओंको यशस्वी नहीं होने देते ।४। जैसे लोग वस्त्र चुराने वाले चोर को देखकर चिल्लाते हैं वैसे ही युद्ध-भूमि में दधिक्रादेव को देखकर शत्रुगण चीखते हैं । जैसे नीचे की ओर आते हुए भूखे बाज को देखकर पक्षी नहीं ठहरते वैसे ही मनुष्य अन्न और पशुओं के निमित्त जाते हुए दधिक्रा को देखकर चीखते है ।५। (११)

उत स्मासु प्रथमः सरिष्यन् नि वेवेति श्रेणिभी रथानाम् ।
स्रजं कृण्वानो जन्यो न शुभ्वा रेणुं रेरिहत् किरणं ददश्वान् ॥६
उत स्य वाजी सहुरिर्ऋतावा शुश्रूषमाणस्तन्वा समर्ये ।
तुरं यतीषु तुरयन्नृजिप्यो ऽधि भ्रुवोः किरते रेणुमृञ्जन् ॥७
उत स्मास्य तन्यतोरिव द्योर्ऋघायतो अभियुजो भयन्ते ।
यदा सहस्रमभि षीमयोधीद् दुर्वर्तुः स्मा भवति भीम ऋञ्जन् ॥८
उत स्मास्य पनयन्ति जना जूतिं कृष्टिप्रो अभिभूतिमाशोः ।
उतैनमाहुः समिथे वियन्तः परा दधिक्रा असरत् सहस्रैः ॥९
आ दधिक्राः शवसा पञ्च कृष्टीः सूर्य इव ज्योतिषापस्ततान ।
सहस्रसाः शतसा वाज्यर्वा पृणक्तु मध्वा समिमा वचांसि१०।१२

वे राक्षस सेनाओं में जाने की इच्छा से रथों की पंक्ति के समान गमन करते हैं । वे सुशोभित हैं और मनुष्योंका हित करने वाले घोड़ेके समान सुन्दर लगते हैं । वे मुख में पड़ी लगाम को चबाते और पाँव से उड़ती हुई धूल को चाटते हैं ।६। इस प्रकार वह घोड़ा अन्नवान सहनशील और अपने देह द्वारा युद्ध कार्यको सिद्ध करता है । वह वेगसे चलने वाला शत्रुओं की सेनाओं में वेग से दौड़ता है । वह धूल को पाँव से उड़ाकर अपनी भौंहों में धारण करता हे । युद्ध की कामना करने

वाले व्यक्ति निनाद करने वाले उज्ज्वल वज्र के समान घातक दधिक्रा से डरते हैं। जब वे सब ओर प्रहार करते हैं, तब वे महा पराक्रमी हो जाते हैं। उस समय उन्हें कोई रोक नहीं सकता ।८। मनुष्यों की इच्छा पूर्ण करने वाले, अत्यन्त वेग से युक्त दधिक्रादेव के विजसोल्लास युक्त वेत की स्तोता स्तुति करते हुए कहते हैं कि 'शत्रु हारेंगे' । दधिक्रादेव हजार संख्यक सैन्य बल के साथ युद्ध में जाते हैं ।९। सूर्य अपने तेजसे जैसे जल वृद्धि करते हैं । वैसे ही दधिक्रादेव जल द्वारा पञ्चकृष्टि, की वृद्धि करते हैं। सैकड़ों तथा हजारों फलों के देने वाले दधिक्रादेव हमारे स्तुति-रूप वचनों को अभीष्ट फल देते हुए सम्पादन करें ।१०।
(१२)

सूक्त ३९

(ऋषि–वामदेवः । देवता–दधिक्राः । छन्द–त्रिष्टुप्, अनुष्टुप्)

आशुं दधिक्रां तमु नु ष्टवाम दिवस्पृथिव्या उत चर्किराम ।
उच्छन्तीर्मामुषसः सूदयन्त्वति विश्वानि दुरितानि पर्षन् ॥१
महश्चर्कर्म्यर्वतः क्रतुप्रा दधिक्राव्णः पुरुवारस्य वृष्णः ।
यं पूरुभ्यो दीदिवांसं नाग्निं ददथुर्मित्रावरुणा ततुरिम् ॥२
यो अश्वस्य दधिक्राव्णो अकारीत् समिद्धे अग्ना उषसो व्युष्टौ ।
अनागसं तमदितिः कृणोतु स मित्रेण वरुणेना सजोषाः ॥३
दधिक्राव्ण इष ऊर्जो महो यदमन्महि मरुतां नाम भद्रम् ।
स्वस्तये वरुणं मित्रमग्निं हवामह इन्द्रं वज्रबाहुम् ॥४
इन्द्रमिवेदुभये वि ह्वयन्त उदीराणा यज्ञमुपप्रयन्तः ।
दधिक्रामु सूदनं मर्त्याय ददथुर्मित्रावरुणा नो अश्वम् ॥५
दधिक्राव्णो अकारिषं जिष्णोरश्वस्य वाजिनः ।
सुरभि नो मुखा करत् प्र ण आयूंषि तारिषत् ।६।१३

उन शीघ्रगामी दधिक्रादेव की हम मनुष्य शीघ्र ही पूजा करेंगे। आकाश पृथिवी के निकट से उनके सामने घास डालेंगे । अन्धकार को दूर करने वाली उषा हमारी रक्षिका हो और वह सभी सङ्कटसे हमको

पार लगावे ।१। हम यज्ञ कार्य के सम्पादनकर्त्ता है । बहुतों द्वारा वरण किये जाने वाले, कामनाओं की वर्षा करने वाले दधिक्रादेव का हम स्तवन करेंगे । हे मित्र वरुण ! तुम देदीप्यमान अग्नि के समान दुःखों से तारने वाले दधिक्रा को मनुष्यों के हितार्थ धारण करने वाले हो ।२। जो यजमान उषा काल में अग्नि के प्रज्वलित होनेपर अश्व रूप दधिक्रा का स्तवन करते हैं, उनको मित्र, वरुण, अदिति और दधिक्रा पापों ने बचावें ।३। अन्नका साधन करने वाले, बल सम्पादन करने वाले,स्तुति करने वालों का मङ्गल करने वाले महान् दधिक्रादेव का नाम सङ्कीर्तन करते हैं । सुख प्राप्ति के निमित्त हम मित्र. वरुण, अग्नि और बाँह में वज्र धारण करने वाले इन्द्र को बुलाते हैं ।४। जो युद्धको तैयार करये हैं और जो यज्ञ कर्म करते हैं, वह दोनों ही इन्द्र के समान दधिक्रादेव को बुलाते हैं । हे मित्रावरुण ! तुम मनुष्यों को प्रेरणा देने वाले, घोड़े के रूप वाले दधिक्रादेव को हमारे निमित्त धारण करो ।५। विजय से युक्त, व्यापक और वेग वाले दधिक्रा का हम स्तवन करते हैं वे हमारी नेत्रादि मुख-इन्द्रियों को सुरभित करें और हमारी आयु को बढ़ावें ।६।
(१३)

सूक्त ४०

(ऋषि–वातदेवः । देवता–दधिक्रावाः सूर्यः । छन्द–जगती, त्रिष्टुप्)

दधिक्राव्ण इदु नु चर्किराम विश्वा इन्मामुषसः सूदयन्तु ।
अपामग्नेरुषसः सूर्यस्य बृहस्पतेराङ्गिरसस्य जिष्णोः ॥१
सत्वा भरियो गविषो दुवन्यसच्छ्रवस्यादिष उषसस्तुरण्यसत् ।
सत्यो द्रवो द्रवरः पतङ्गरो दधिक्रावेवमूर्जं स्वर्जनत् ॥२
उत स्मास्य द्रवतस्तुरण्यतः पर्णं न वेरनु वाति प्रगर्धिनः ।
श्येनस्येव ध्रजतो अङ्कसं परि दधिक्राव्णः सहोर्जा तरित्रतः ॥३
उत स्य वाजी क्षिपणिं तुरण्यति ग्रीवायां बद्धो अपिकक्ष आसनि।
क्रतुं दधिक्रा अनु संतवीत्वत् पथामङ्कांस्यन्वापनीफणत् ॥४
हंसः शुचिषद् वसुरन्तरिक्षसद्धोता वेदिषदतिथिर्दुरोणसत् ।

नृषद् वरसदृतसद् व्योमसदब्जा गोजा ऋतजा अद्रिजा ऋतम् ।
५।१४

उन दनिक्रादेव का हम बारम्बार पूजन करेंगे । सभी उषायें हमको कर्मों में लगायें । जल, अग्नि, उषा सूर्य वृहस्पति और अङ्गिरा वंशज विष्णु का हम स्तवन करेंगे ।१ भरण-पोषण कार्य, चतुर, गमनशील गौओंको प्रेरणा देने वाले, परिचारकोंके साथ रहने वाले दधिक्रा इच्छा करने योग्य उषा वेलामें अन्न की कामना करें । वे वेगवान् शीघ्र चलने वाले दधिक्रा अन्न बल ओर दिव्य-गुणों के प्रकट करने वाले हों ।२। जैसे सभी पक्षी, पक्षियों की परम्परागत चाल पर चलतें हैं वैसे ही सब वेगवान जीव शीघ्रता से युक्त एवं कामना वाले दधिक्रा की चाल पर चलते हैं । श्येन के समान शीघ्रगामी एवं रक्षा करने वाले दधिक्रा के सब ओर एकत्र होकर सभी अन्न के निमित्त जाते हैं ।३। यह देवता घोड़े के रूप वाले हैं । यह कण्ठ कक्ष और मुखमें बँधे हुए होते हैं और पैदलही तेजीसे चलते हैं । वे दधिका अत्यन्त पराक्रमी होकर टेढ़े मार्गों को भी पार करते हुए यज्ञ के सामने मुख करके सब ओर जाते हैं ।४। आदित्य आकाश में, वायु अन्तरिक्ष में और होता यज्ञादि वेदी पर अवस्थित होते हैं । अदिति के समान पूजनीय होकर घर में वास करते हैं । ऋतु मनुष्यों में वरणीय स्थान तथा यज्ञ स्थलमें रहते हैं । वे जल, रश्मि, सत्य और पर्वतोंमें उत्पन्न हुए हैं ।५। (१४)

सूक्त ४१

(ऋषि—वामदेवः । देवता—इन्द्रावरुणौ । छन्द – त्रिष्टुप्)

इन्द्रा को वां वरुणा सुम्नमाप स्तोमो हविष्माँ अमृतो न होता ।
यो वां हृदि क्रतुमाँ अस्मदुक्तः पस्पर्शदिन्द्रावरुणा नमस्वान् ॥१
इन्द्रा ह यो वरुणा चक्र आपी देवौ मर्तः सख्याय प्रयस्वान् ।
स हन्ति वृत्रा समिथेषु शत्रूनवोभिर्वा महद्भिः स प्र शृण्वे ॥२
इन्द्रा ह रत्नं वरुणा धेष्ठेत्था नृभ्यः शशमानेभ्यस्ता ।
यदी सखाया सख्याय सोमैः सुतेभिः सुप्रयसा मादयैते ॥३
इन्द्रा युवं वरुणा दिद्युमस्मिन्नोजिष्ठमुग्रा नि वधिष्टं वज्रम् ।

यो नो दुरेवो वृकतिर्दभीतिस्तस्मिन् मिमाथामभिभूत्योज: ।।४
इन्द्रा युवं वरुणा भूतमस्या धियः प्रेतारा वृषमेव धेनोः ।
सा नो दुहीयद् यवसेव गत्वी सहस्रधारा पयसा मही गौः ।५।१५

हे इन्द्र! हे वरुण ! हे अमरत्व प्राप्त होता ! अग्निके समान हवि-युक्त कौन-सा स्तोत्र तुम दोनों की कृपा प्राप्तकर सकता है ? वह स्तोत्र हमारे द्वारा अर्पित हुआ हवियों से युक्त होकर तुम दोनों के अन्तःकरण में घुस जाए ।१। हे इन्द्रावरुण ! तुम दोनों प्रसिद्ध हो । जो मनुष्य पापों को नष्ट करने में समर्थ है । वह युद्ध में शत्रु का संहार करता है और विशाल रक्षा साधनों द्वारा प्रसिद्धि प्राप्त करता है ।२। हे प्रख्यात इन्द्र और वरुण ! तुम दोनों देवता हम स्तोताओं को सुन्दर धन प्रदान करने वाले बनो । यदि तुम यजमान के सखा रूप हो तो मित्र भाव निमित्त सिद्ध किये गये इस सोमरस से पुष्टि को प्राप्त होओ और धन देने वाले बनो ।३। हे इन्द्र और वरुण ! तुम दोनों विकराल कर्म वाले हो । इस शत्रुपर तुम दोनों ही अत्यन्त तेज वाले वज्रका प्रहार करो । जो शत्रु अदानशील, हिंसक तथा हमारे द्वारा दमन किये जाने योग्य नहीं है, उस शत्रु के विरुद्ध तुम दोनों उसे हराने वाली शक्तिसे हराओ ।४। हे इन्द्र और वरुण ! जैसे बैल को प्रेम करता है वैसे ही तुम दोनों स्तुतियों को प्रेम करने वाले हों । तृणादि को खाकर जैसे धेनु दूध देती है, वैसे ही तुम्हारी स्तुति रूप धेनु हमारी कामनाओं को सदा देती रहे ।५। (१५)

तोके हिते तनय उर्वरासु सूरो दृशीके वृषणश्च पौंस्ये ।
इन्द्रा नो अत्र वरुणा स्यातामवोभिर्दस्मा परितक्म्यायाम् ।।६
युवःमिद्धचवसे पूर्व्याय परि प्रभूती गविषः स्वापी ।
वृणीमहे सख्याय प्रियाय शूरा मंहिष्ठा पितरेव शंभू ।।७
ता वां धियोऽवसे वाजयन्तीराजिं न जग्मुर्युवयुः सुदानू ।
श्रिये न गाव उप सोममस्थुरिन्द्रं गिरो वरुणं मे मनीषाः ।।८
इमा इन्द्रं वरुणं मे मनीषा अग्मन्नुप द्रविणमिच्छमानाः ।

उपेमस्थुर्जोष्टार इव वस्वो रघ्वीरिव श्रवसो भिक्षमाणाः ॥९
अश्व्यस्य त्मना रथ्यस्य पुष्टेर्नित्यस्य रायः पतयः स्याम ।
ता चक्राणा ऊतिभिर्नव्यसीभिरस्मत्रा रायो नियुतः सचन्ताम्।१०
आ नो बृहन्ता बृहतीभिरूती इन्द्र यातं वरुण वाजसातौ ।
यद् दिद्यवः पृतनासु प्रक्रीलान् तस्य वां स्याम सनितार आजेः ।
।११।१६

हे इन्द्र और वरुण ! रात्रिकाल से तुम दोनों अपने रक्षा-साधनों से पूर्ण होकर शत्रुओं का संहार करने के लिए चल दो, जिससे हम सन्तानादि धन एवं उर्वरा पृथ्वी को पा सकें और वायु पर्यन्त सूर्य के दर्शन करते रहें ।६। हे इन्द्र वरुण ! गायकी कामना करने वाले हम तुमसे, हमारे प्राचीन काले से चले आ रहे पोषण-सामर्थ्य की याचना करते हैं । तुम दोनों ही सब कार्यों के करने में समर्थ, मित्र रूप और अत्यन्त पूजनीय हो । तुम दोनोंसे हम पुत्रको देने वाले पिता के समान अत्यन्त स्नेह प्रदान करने की याचना करते हैं ।७। हे इन्द्रावरुण तुम दोनों देवता सुन्दर फल प्रदान करने वाले हो । जैसे वीर पुरुष युद्ध की इच्छा करते रहते हैं, वैसेही हमारी स्तुतियाँ रत्नादि धनकी अभिलाषा से रक्षा प्राप्ति के निमित्त तुम्हारे पास जाती हैं । जैसे गौऐं दूध, दही आदि सुन्दर पदार्थों के निमित्त सोम के पास रहती हैं, वैसे ही हमारी हार्दिक प्रार्थनाएं इन्द्र के पास पहुँचती हैं ।८। जैसे सेवक गण धन के निमित्त धनिकों की सेवा करनेको जाते हैं वैसे ही हमारी स्तुतियाँ धन की कामना करती हुई इन्द्र और वरुण के पास लावें । स्तुतियाँ अन्न की भीख मागने वाले भिखारियों के समान इन्द्र के पास पहुँचे ।९। वे इन्द्र और वरुण दोनों देवता गमनशील हैं । अपने अभिनव रक्षा साधनों सहित हमारे सानने अश्वादि पशु एवं मन सम्पादित करें तब हम बिना प्रयत्न किये ही घोड़ों, रथों, बैलों और स्थित धनों के अधीश्वर होंगे । ।१०। हे इन्द्रावरुण ! तुम महान् हो । तुम अपने महान् रक्षा साधनों सहित आओ । अन्न प्राप्तिके जिस संग्राममें शत्रु-सेनाके हथियार आघात

करते हैं, उस संग्राम में हम साधकगण तुम दोनों देवताओं की कृपा से विजय प्राप्त करें ।११। (१६)

सूक्त ४२

(ऋषि—त्रसदस्युः, पौरुकुत्स्यः। देवता—आत्मा, इन्द्रावरुणौ। छन्द—त्रिष्टुप्)

मम द्विता राष्ट्रं क्षत्रियस्य विश्वायोर्विश्वे अमृता यथा नः।
क्रतुं सचन्ते वरुणस्य देवा राजाभि कृष्टेरुपमस्य वव्रेः ॥१
अहं राजा वरुणो मह्यं तान्यसुर्याणि प्रथमा धारयन्त।
क्रतुं सचन्ते वरुणस्य देवा राजाभि कृष्टेरुपमस्य वव्रेः ॥२
अहमिन्द्रो वरुणस्ते महित्वोर्वी गभीरे रजसी सुमेके।
त्वष्टेव विश्वा भुवनानि विद्वान् त्समैरयं रोदसी धारयं च ॥३
अहमपो अपिन्वमुक्षमाणा धारयं दिवं सदन ऋतस्य।
ऋतेन पुत्रो अदितेर्ऋतावोतत्रिधातु प्रथयद् वि भूम ॥४
मां नरः स्वश्वा वाजयन्तो मां वृताः समरणे हवन्ते।
कृणोम्याजिं मघवाहमिन्द्र इयर्मि रेणुमभिभूत्योजाः ।५।१७

हम क्षत्रिय हैं। सब मनुष्यों के हम स्वामी हैं। हमारा राष्ट्र दो प्रकार का है। जैसे सब देवता हमारे हैं, वैसे ही सम्पूर्ण प्रजाजन हमारे ही हैं। हम सुन्दर रूप वाले एवं वरुण के समान यशस्वी हैं। देवता हमारे यज्ञ की रक्षा करते हैं।१। हम वरुण तेजस्वी राजा हैं। देवता हमारे निमित्त ही राक्षसों का संहार करने वाला पराक्रम धारण करते हैं। हम सुन्दर रूप वाले वरुण के अन्तकस्थ हैं। हमारे यज्ञ की देवता रक्षा करते हैं और हम मनुष्यों के स्वामी हैं।२। हम इन्द्र और वरुण हैं। महत्व के कारण विशालता को प्राप्त, सुन्दर रूप वाले आकाश और पृथ्वी भी हम हैं। हम प्राणीमात्र को प्रजापति के समान प्रेरणा देने वाले हैं। हम आकाश और पृथ्वी के धारण करने वाले तथा प्रज्ञावान् हैं। हमने ही वृष्टि रूप जल को सींचा है। सूर्य के आश्रित स्थान आकाश को हमने ही धारण किया है। हम अदिति पुत्र जल के निमित्त यज्ञवान् हुए हैं। हमने ही व्यापक आकाश को तीन लोकों के रूप में परिवर्तित किया है।३-४। युद्ध में नेतृत्व करने वाले,

सुन्दर अश्ववान वीर हमारे पीछे चलते हैं। वे सब संकल्पवान हुए युद्ध में हमको ही बुलाते हैं। हम ऐश्वर्यशाली इन्द्र के रूप में यज्ञ करते हैं हम शत्रु को हराने वाले बल से परिपूर्ण हैं। हमारे प्रबल वेग से युद्ध स्थल में धूल उड़कर आकाश में छा जाती है।५। (१७)

अहं ता विश्वा चकरं नकिर्मा दैव्यं सहो वरते अप्रतीतम्।
यन्मा सोमासो ममदन्यदुक्थोमे भयेते रजसी अपारे ॥६
विदुष्टे विश्वा भुवनानि तस्य ता प्र ब्रवीषि वरुणाय वेधः।
त्वं वृत्राणि शृण्विषे जघन्वान् त्वं वृताँ अरिणा इन्द्र सिन्धून् ॥७
अस्माकमत्र पितरस्त आसन् त्सप्त ऋषयो दौर्गहे बध्यमाने।
त आयजन्त त्रसदस्युमस्या इन्द्रं न वृत्रतुरमर्धदेवम् ॥८
पुरुकुत्सानी हि वामदाशद्धव्येभिरिन्द्रावरुणा नमोभिः।
अथा राजानं त्रसदस्युमस्या वृत्रहणं ददथुरर्धदेवम् ॥९
राया वयं ससवांसो मदेम हव्येन देवा यवसेन गावः।
तां धेनुमिन्द्रावरुणा युवं नो विश्वाहा धत्तमनपस्फुरन्तीम्१०।१८

हम दिव्य बल से परिपूर्ण हैं। हमको हमारे कार्यों से कोई नहीं रोक सकता है। हमने इन सब कार्यों को पूर्ण किया है। जब सोमरस और स्तोत्र हमको पुष्ट करते हैं तब हमारे बल को देखकर विशाल आकाश और भू-मण्डल दोनों ही चलायमान हो जाते है।६। हे वरुण! तुम्हारे कार्य को सभी प्राणी जानते हैं। हे स्तुति करने वालो! वरुण की स्तुति करो। हे इन्द्र! तुमने शत्रुओं का संहार किया है—तुम्हारे इस कर्म को सभी जानते हैं। तुमने रुकी हुई नदियों को भी छोड़ा—प्रवाहित किया है।७। 'पुरुकुत्स' के बन्धन में पड़ने पर सप्तर्षि ने इस पृथिवी का पालन किया था। उन्होंने इन्द्रावरुण की कृपा से पुरुकुत्स की पत्नी के निमित्त यज्ञ किया और 'त्रसदस्यु' को प्राप्त किया था। वह त्रसदस्यु इन्द्र के समान शत्रुओं का नाशक हुआ और वह अर्द्ध देवत्व का भी अधिकारी हुआ।८। हे इन्द्रावरुण! ऋषि की प्रेरणा से "पुरुकुत्स" की भार्या ने तुम दोनों हविरत्न और स्तुतियों द्वारा प्रसन्न किया। फिर तुम दोनों ने उसे अर्द्ध देवत्व प्राप्त शत्रुओं का नाश

करने वाले त्रसदस्यु को प्रदान किया ।६। तुम दोनोंकी स्तुति करके हम धन प्राप्तकर सन्तुष्ट होंगे । देवता हविरन्न से तथा गायें तृणादि से तृप्ति को प्राप्त होती हैं । हे इन्द्रावरुण ! तुम दोनों विश्व की उत्पत्ति और संहारकर्त्ता हो हमको स्थिर धन प्रदान करो ।१०। (१८)

सूक्त ४३

(ऋषि-पुरुमीलहाजमीलहौ सौहोत्रौ । देवता-अश्विनौ । छन्द-त्रिष्टुप्)

क उ श्रवत् कतमो यज्ञियानां वन्दारु देवः कतमो जुषाते ।
कस्येमां देवीममृतेषु प्रेष्ठां हृदि श्रेषाम सुष्टुतिं सुहव्याम् ।१
को मृलाति कतम आगमिष्ठो देवानामु कतमः शंभविष्ठः ।
रथं कमाहुर्द्रवदश्वमाशुं यं सूर्यस्य दुहितावृणीत ।।२
मक्षू हि ष्मा गाच्छथ ईषतो द्यून्निन्द्रो न शक्तिं परितक्म्यायाम् ।
दिव आजाता दिव्या सुपर्णा कया शचीनां भवथः शचिष्ठा ।।३
का वां भूदुपमातिः कया न आश्विना गमथो हूयमाना ।
को वां महश्चित् त्यजसो अभीक उरुष्यतं माध्वी दस्रा न ऊती।४
उरु वां रथः परि नक्षति द्यामा यत् समुद्रादभि वर्तते वाम् ।
मध्वा माध्वी मधु वां प्रुषायन् यत् सीं वां पृक्षो भुरजन्त पक्वाः५
सिन्धुर्ह वां रसया सिञ्चदश्वान् घृणा वयोऽरुषासः परि ग्मन् ।
तदू षु वामजिरं चेति यानं येन पती भवथः सूर्यायाः ।।६
इहेह यद् वां समना पपृक्षे सेयमस्मे सुमतिर्वाजरत्ना ।
उरुष्यतं जरितारं युवं ह श्रितः कामो नासत्या युवद्रिक् ।७।१९

यज्ञ के देवताओं में कौन से देवता इस स्तुति को सुनेंगे ? कौन से देवता इस पूजा के योग्य स्तोत्रको ग्रहण करेंगे ? देवताओं में ऐसे किस देवता को हम नपनी स्नेहमयी, उज्ज्वल, हविरन्न वाली सुन्दर स्तुति को सुनावें जो इसके अधिकारी हों ।१। हमको कौन से देवता सुखप्रदान करेंगे ? हमारे यज्ञ में कौन से देवता सर्वाधिक आते हैं ? देवताओं में कौन से देवता हमको कल्याणकारी होंगे । किसका रथ सुन्दर घोड़ों से युक्त और अधिक वेगवान् है, जिसका सूर्य की पुत्री सूर्या ने आदर

किया था ? उपर्युक्त कार्यों के करने वाले अश्विनीकुमार ही हैं ।२। हे अश्विनी कुमारो ! रात्रि के अवसान होने पर इन्द्र जैसे अपना पराक्रम दिखाते हैं, वैसे ही तुम दोनों सोमाभिषव के समय आओ । तुम दोनों आकाश मार्ग से आते हो । तुम सुन्दर गति वाले तथा दिव्य गुण वाले हो । तुम्हारे कार्यों में कौन सा कार्य सबसे अधिक उत्तम है ? ।३। तुम दोनों के उपयुक्त कौन-सी स्तुति है ? तुम किस स्तोत्र द्वारा बुलाये जाने पर आओगे ? तुम दोनों के विकराल क्रोध को सहन करने की सामर्थ्य किस में है ? हे मीटे जल के उत्पन्न करने वालो ! तुम शत्रुओं का नाश करने वाले हो, तुम अपना आश्रय प्रदान करके हमारी रक्षा करो ।४। हे अश्विनीकुमारो ! तुम्हारा रथ आकाश से चतुर्दिक अधि-काधिक गमनशील है । समुद्र में भी चलता है । तुम्हारे निमित्त परि-पक्व जौ के समान सोमरस मिश्रित हुआ हे । तुम मधुर जल के उत्पन्न करने वाले हो और शत्रुओं का नाश करने में समर्थ हो । यह अध्वर्यु तुम्हारे निमित्त सोमरस में दूध मिला रहे हैं ।५। मेघ द्वारा तुम्हारे अश्वों को अभिषिक्त किया है । दीप्ति से प्रकाशवान् ये तुम्हारे अश्व पक्षियों के समान चलते हैं । जिस रथ द्वारा तुम दोनोंने सूर्या को रक्षा की थी तुम दोनों का वह प्रसिद्धि प्राप्त रथ शीघ्रता से चलने वाला हैं ।६। हे अश्विनीकुमारो ! तुम दोनों एक समान हो । इस यज्ञ में हम स्तुति द्वारा तुम दोनों को समान मानते हुए एकत्र आहूत करते हैं । यह सुन्दर स्तुति हमको उत्तम जल देने वाली हो । हे अश्विद्वय ! तुम शोभन अन्नसे युक्त हो । हम स्तोताओंके रक्षक होओ । हमारी कामना तुम्हारे पास पहुँचते ही पूर्ण हो जाती है ।७। (१६)

सूक्त ४४

(ऋषि–पुरुमीलहाजमीलहौ, सौहौत्रौ । देवता–अश्वानौ । छन्द-त्रिष्टुप्)

तं वां रथं वयमद्या हुवेम पृथुज्रयमश्विना संगतिं गोः ।
यः सूर्यां वहति वन्धुरायुर्गिर्वाहसं पुरुतमं वसूयुम् ।।१
युवं श्रियमश्विना देवता तां दिवो नपाता वनथः शचीभिः ।

युवोर्वपुरभि पृक्षः सचन्ते वहन्ति यत् ककुहासो रथे वाम् ॥२
को वामद्या करते रातहव्य ऊतये वा सुतपेयाय वार्कैः ।
ऋतस्य या वनुषे पूर्व्याय नमो येमानो अश्विना ववर्तत् ॥३
हिरण्ययेन पुरुभू रथेनेमं यज्ञं नासत्योप यातम् ।
पिबाथ इन्मधुनः सोमस्य दधथो रत्नं विधते जनाय ॥४
आ नो यातं दिवो अच्छा पृथिव्या हिरण्ययेन सुवृता रथेन ।
मा वामन्ये नि यमन् देवयन्तः सं यद् ददे नाभिः पूर्व्या वाम् ॥५
नू नो रयिं पुरुवीरं बृहन्तं दस्रा मिमाथामुभयेष्वस्मे ।
नरो यद् वामश्विना स्तोममावन् त्सधस्तुतिमाजमीलहासो
अग्मन् ॥६

इहेह यद् यां समना पपृक्षे सेयमस्मे सुमतिर्वाजरत्ना ।
उरुष्यतं जरितारं युवं ह श्रितः कामो नासत्या युवद्रिक् ।७।२०

हे अश्विद्वय ! हम तुम्हारे गोदाता एवं प्रसिद्ध वेगवान् रथ को बुलाते हैं । वह रथ सूर्या को आश्रय दे चुके हैं । उसमें बैठने का स्थान काठ का बना है तुम्हारा वह रथ स्तुतियों को वहन करने वाला तथा अन्न धन से युक्त परमैश्वर्य वाला है ।१। हे अश्विनीकुमारो ! तुम दोनों ही देवता हो । तुम दोनों हीं अपने उत्तम कर्म द्वारा सुशोभित होते हो । तुम दोनों के शरीर में सोमरस व्याप्त होता है । तुम्हारे रथ को उत्तमअश्व ढोते हैं ।२। हे अश्विद्वय! सोम प्रदान करने वाला कौन-सा यजमान सोमपान के निमित्त और अपनी रक्षा-कामना करता हुआ तुम्हारा स्तवन करता है ? कौन-सा नमस्कार कर्त्ता यजमान तुम दोनों को यज्ञ की ओर बुलाता है ? ।३। अश्विनीकुमारो ! तुम दोनों अनेक कर्म वाले हो । तुम अपना स्वर्ण युक्त रथ सहित इस यज्ञ में आओ और मधुर सोमरसको पीओ । हम साधकोंको सुन्दर धन प्रदान करो । ।४। हे अश्विद्वय ! तुम जपने स्वर्णिम रथ से आकाश से हमारे पास आओ । तुम्हें आहूत करने वाले अन्य यजमान तुम्हें यहां आने से कहीं रोक लें, इसलिए हमने अपनी स्तुतियों को पहिले ही निवेदन कर

दिया है ।५। हे अश्विनीकुमारो ! तुम दोनों हमको बहुत संतानयुक्त धन दो । मुअ 'पुरमीह्ण', के ऋत्विकों ने अपने स्तोत्रकी शक्तिसे तुम्हें यहाँ बुलाया और 'अजमीह्ण' के ऋत्विकों ने जो स्तोत्र प्रस्तुत किया है, उसकी शक्ति भी इसी के साथ मिली हुई है ।६। हे जश्विनीकुमारो ! तुम दोनों इस यज्ञ में समान मन वाले होओ । हम जिस स्तोत्र द्वारा तुम दोनों को एक करते हैं उस सुन्दर स्तोत्र द्वारा हमारे निमित्त फल वाले होओ । तुम दोनों श्रेष्ठ अन्न वाले हो । मुझ स्तुति करने वाले के तुम रक्षक बनो । हमारी तुम्हारे पास पहुँचने से पूरी हो जाती है । ।७।   (२०)

सूक्त ४५

(ऋषि—वामदेव: । देवता—अश्विनौ । छन्द—जगती, त्रिष्टुप्)

एष स्य भानुरुदियर्ति युज्यते रथ: परिज्मा दिवो अस्य सानवि।
पृक्षासो अस्मिन् मिथुना अधि त्रयो दृतिस्तुरीयो मधुनो
वि रप्शते ।१

उद् वां पृक्षासो मधुमन्त ईरते रथा अश्वास उषसो व्युष्टिषु ।
अपोर्णुवन्तस्तम आ परीवृतं स्वर्ण शुक्रं तन्वन्त आ रज: ।।२
मध्व: पिबतं मधुपेभिरासभिरुत प्रियं मधुने युञ्जाथां रथम् ।
आ वर्तनिं मधुना जिन्वथस्पथो दृतिं वहेथे मधुमन्तमश्विना ।।३
हंसासो ये वां मधुमन्तो अस्रिधो हिरण्यपर्णा उहुव उषर्बुध: ।
उदप्रुतो मन्दिनो मन्दिनिस्पृशो मध्वो न मक्ष: सवनानिगच्छथ:४
स्वध्वरासो मधुमन्तो अग्नय उस्रा जरन्ते प्रति वस्तोरश्विना ।
यन्निक्तहस्तस्तरणिर्विचक्षण: सोमं सुषाव मधुमन्तमद्रिभि: ।।५
आकेनिपासो अहभिर्दविध्वत: स्वर्ण शुक्रं तन्वन्त आ रज: ।
सूरश्चिदश्वान् युयुजान ईयते विश्वाँ अनु स्वधया चेतथस्पथ: ।।६
प्र वामवोचमश्विना धियंधा रथ: स्वश्वो अजरो यो अस्ति ।
येन सद्य: परि रजांसि याथो हविष्मन्तं तरणिं भोजमच्छ ७।२१

प्रकाशवान सूर्य उदय हो रहे हैं । अश्विनी कुमारों का श्रेष्ठ रथ

सब ओर गमन करता है । वह तेजस्वी रथ से जुड़ा हुआ है । इस रथ के ऊपरकी ओर विविध अन्न हैं तथा सोमरससे भरा हुआ चमस चतुर्थ रूपसे सुशोभित है ।१। हे अश्विद्वय ! उषारम्भमें तुम्हारा सुन्दर विविध अन्न और सोम से युक्त रथ तब और व्याप्त अन्धेरे को मिटाता हुआ सूर्य के समान उज्ज्वल प्रकाश को फैलाता हुआ ऊपर की ओर उड़ताहै ।२। हे अश्विद्वय ! तुम अपने सोम पीने के अभ्यस्त मुख द्वारा सोम-रस पीओ । सोम रस पीने के लिए अपने रथ को छोड़कर यजमान के घर में लाओ । अपने गमय मार्ग को सोम की कामना करते हुए शीघ्र पूरा कर लो और सोम पूर्ण पात्र को ग्रहण करो ।३। हे अश्विद्वय ! तुम्हारे पास तेज चाल वाले, मधुरिमा से युक्त, द्वेष से शून्य, सुवर्ण के समान तेज वाले, पंख से युक्त, उषाकाल में चैतन्य होने वाले, जलों को प्रेरित करने वाले एवं सोम को स्पर्श करने की इच्छा वाले सुन्दर अश्व हैं, जिनके द्वारा तुम मधु मक्खी के मधु के पास जाने के समान हमारे यज्ञों में आगमन करते हो ।४। कर्मवान् अध्वर्यु अब अभिमंत्रित जल द्वारा हाथ धोकर पाषाणसे मधुर सोम कूटते हैं । तब यज्ञके साधन रूप गार्हपत्यादि अग्नि अश्विनीकुमारो का स्तवन करते हैं ।५। पास में ही पड़ती हुई किरणें दिनके द्वारा अँधेरे को नष्ट करती और सूर्यके समान प्रकाश को फैलाती हैं । उस समय सूर्य अपने घोड़ों पर चढ़कर चलते हैं । हे अश्विनीकुमारो ! तुम दोनों सोम-रस सहित उनके चलते हुए सम्पूर्ण मार्ग को पूरा करो ।६। हे अश्विद्वय ! हम याज्ञिकगण तुम दोनों का स्तवन करते हैं । जो तुम्हारा सुन्दर घोड़े से युक्त नित्य नवीन रथ है तब जिस रथ द्वारा तुम दोनों लोकों का भ्रमण करते हो, अपने उसी पथ के सहित तुम हविरन्न वाले हमारे यज्ञ में आओ ।७। (२१)

सूक्त ४६ (पाँचवां अनुवाक)

(ऋषि—वामदेवः । देवता—इन्द्रवायू । छन्द—गायत्री)

अग्रं पिबा मधूनां सुतं वायो दिविष्टिषु । त्वं हि पूर्वपा असि ।।१

शतेना नो अभिष्टिभिर्नियुत्वाँ इन्द्रसारथिः। वायो सुतस्य तृम्पतम्२

आ वां सहस्रं हरय इन्द्रवायू अभि प्रयः । वहन्तु सोमपीतये ॥३
रथं हिरण्यवन्धुरमिन्द्रवायू स्वध्वरम् ।
आ हि स्थाथो दिविस्पृशम् ॥४
रथेन पृथुपाजसा दाश्वांसमुप गच्छतम् । इन्द्रवायू इहा गतम्॥५
इन्द्रवायू अयं सुतस्तं देवेभिः सजोषसा । पिबतं दाशुषो गृहे ॥६
इह प्रयाणमस्तु वामिन्द्रवायू विमोचनम्। इह वां सोमपीतये७।२२

हे वायो ! स्वर्ग में स्थान बनाने वाले यज्ञमे इस अभिषुत सोमरस को आकर पीओ, क्योंकि तुव सबसे पहले सोमरस का पान करने वाले हो ।१। हे वायो ! हे इन्द्र ! तुम दोनों सोम-पान द्वारा तृप्ति की प्राप्त होओ । हे वायो ! तुम लोक के कल्याणकारी कर्म में नियुक्त हुए हो । तुम इन्द्र के सारथि होकर हमारी बलवती इच्छाओं को पूर्ण करने के लिए यहाँ आगमन करो ।२। हे इन्द्र और वायो ! तुम दोनों को हजारों घोड़े शीघ्रतापूर्वक सोमपान के निमित्त यहाँ ले आवें ।३। हे इन्द्र और वायो ! तुम दोनों सुवर्ण के उज्ज्वल काठ से आधार वाले तथा आकाश को स्पर्श करते रहने वाले सुन्दर रथ पर चढ़ो । हे इन्द्र और बायो ! तुम दोनों ही श्रेष्ठ शक्ति वाले रथ से ही हवि देने वाले यजमान के समीप आओ । तुम दोनों यजमान के लिए ही इस श्रेष्ठ यज्ञ में पधारो ।४-५। हे इन्द्र ! हे वायो ! यह सुसिद्ध सोम रखा है । तुम दोनों समान प्रीति वाले होकर हविदाता यजमान के यज्ञ-स्थान में आकर सोमरस का पान करो ।६। हे इन्द्र हे वायो ! इस यज्ञमें तुमको सोमपान कराने के निमित्त *अश्व खोल दिये* जावें । तुम दोनों इस यज्ञ स्थान में आओ ।७। (२२)

सूक्त ४७

(ऋषि–वामदेवः । देवता–इन्द्रवायू । छन्द–अनुष्टुप्)

वायो शुक्रो अयामि ते मध्वो अग्रं दिविष्टिषु।
आ याहि सोमपीतये स्पार्हो देव नियुत्वता ॥१
इन्द्रश्च वायवेषां सोमानां पीतिमर्हथः ।

युवां हि यन्तीन्दवो निम्नमापो न सध्र्यक् ॥२
वायविन्द्रश्च शुष्मिणा सरथं शवसस्पती ।
नियुत्वन्ता न ऊतय आ यातं सोमपीतये ॥३
या वां सन्ति पुरुस्पृहो नियुतो दाशुषे नरा ।
अस्मे ता यज्ञवाहसेन्द्रवायू नि यच्छतम् ।४।२३

हे वायो ! श्रेष्ठकर्मानुष्ठानों, द्वारा पवित्र हुए हम दिव्यलोक प्राप्ति कामना करते हुए पहिले तुम्हारे लिए ही सोमरस को लाते हैं। तुम कामना के योग्य हो। अपने वाहन सहित, सोम पीने के निमित्त उन स्थान में पधारो ।१। हे वायो ! उस ग्रहण किये गये सोम पीने के पात्र तुम हो और इन्द्र हैं। जैसे जल गड्ढे की ओर जाता है, वैसे ही सब प्रकार के सोम तुम्हारे पास जाते हैं। इस प्रकार तुम दोनों ही शक्ति के अधिपति हो, तुम दोनों अत्यन्त पराक्रम वाले एवं घोड़ों से युक्त हो। तुम दोनों एक ही रथ पर बैठकर सोम पीओ तथा हमको शरण देनेके निमित्त यहाँ आगमन करो ।२-३। हे इन्द्र और वायो ! तुम दोनों ही यज्ञ हनन करने वाले एवं सब देवताओं में अग्रणी हो। हम तुमको हविरन्न प्रदान करने वाले यजमान हैं। तुम्हारे पास कामना के योग्य जो अश्व हैं, वह हमको प्रदान करो ।४। (२३)

सूक्त ४८

(ऋषि—वामदेवः । देवता—वायुः । छन्द—अनुष्टुप्)

विहि होत्रा अवीता विपो न रायो अर्यः ।
वायवा चन्द्रेण रथेन याहि सुतस्य पीतये ॥१
निर्युवाणो अशस्तीर्नियुत्वाँ इन्द्रसारथिः ।
वायवा चन्द्रेण रथेन याहि सुतस्य पीतये ॥२
अनु कृष्णे वसुधिती येमाते विश्वपेशसा ।
वायवा चन्द्रेण रथेन याहि सुतस्य पीतये ॥३
वहन्तु त्वा मनोयुजो युक्तासो नवतिर्नव ।

वायवा चन्द्रेण रथेन याहि सुतस्य पीतये ॥४
वायो शतं हरीणां युवस्य पोष्याणाम् ।
उत वा ते सहस्त्रिणो रथ आ यातु पाजजा ।५।२४

हे वायो ! शत्रुओं को कम्पायमान करने वाले राजा के समान तुम अन्य के द्वारा न पिये गये सीमरस को पहिले ही पी लो और स्तुति करने वालों के लिए धनों को प्राप्त कराओ । तुम अपने कल्याणकारी रथ द्वारा सोम को पीने के लिये यहाँ आओ ।१। हे वायो ! तुम इन्द्र के साथ ही सारथि रूप में सुवर्णमय रथ द्वारा अश्वादि से युक्त होकर सौम्य होकर स्वभाव वाले बलवान व्यक्तियों में युक्त तथा अनेक दुष्ट व्यक्तियों से रहित हो । तुम हर्षकारी सोम का पान करने के लिए यहाँ पधारो ।२। हे वायो ! काले वर्ण वाली, वसुओं को धारण करने वाली विश्वरूपा आकाश पृथिवी तुम्हारे पद चिन्हों पर चलती है । तुम अपने प्रसन्नतादायक रथ के द्वारा सोम को पीने के लिए यहाँ आओ ।३। हे वायो ! मन के समान वेगवान् परस्पर मिले हुए निन्यानवे अश्व तुम्हें यहाँ लाते हैं । तुम सोम पीने के निमित्त सुन्दर प्रसन्नताप्रद रथ पर पधारो ।४। हे वायो तुम सैकड़ों घोड़ों को रथ में जोड़ो ओर उनके सहित यहाँ आगमन करो ।५। (२४)

सूक्त ४९

(ऋषि–वामदेवः । देइता–इन्द्रः, बृहस्पतिः । छन्द–गायत्री)

इदं वामास्ये हविः प्रियमिन्द्राबृहस्पती । उक्थं मदश्च शस्यते।१
अयं वां परि षिच्यते सोम इन्द्राबृहस्पती । चारुर्मदाय पीतये।२
आ न इन्द्राबृहस्पती गृहमिन्द्रश्च गच्छतम्। सोमपा सोमपींतये।३
अस्मे इन्द्राबृहस्पती रयिंधत्त शतग्विनम्। अश्वावन्तं सहस्त्रिणम्४
इन्द्राबृहस्पती वयं सुते गीर्भिर्हवामहे । अस्य सोमस्य पीतये ।५
सोममिन्द्राबृहस्पती पिब्रतं दाशुषो गृहेः मादयेथां तदोकसा।६।२५

हे इन्द्र और बृहस्पति हम परम प्रिय सोमरूप हविरन्न को तुम दोनों के मुख में डालते हैं । तुम दोनों को हम हर्षकारी सोम रस प्रदान

करते हैं ।१। हे इन्द्र और बृहस्पति ! तुम दोनों की हृष्टिके निमित्त तथा पीने के लिए वह सुस्वादु सोम-रस हम तुम्हारे मुख में डालते हैं ।२। हे इन्द्र और बृहस्पति ! आप दोनों सोमपान करने वाले हो । आप दोनों हमारे यज्ञ गृह में सोमपीने के लिए आओ ।३। हे इन्द्र और बृहस्पति ! आप दोनों ही हमको सैकड़ों गायों और हजारों घोड़ोंसे युक्त धन प्रदान करो ।४। हे इन्द्र और बृहस्पते ! सोमके सिद्ध किये जाने पर हम दोनों अपने स्तोत्र द्वारा आप दोनों को सोम रस पीने के लिए बुलाते हैं ।५। हे इन्द्र और बृहस्पते ! हवि देने वाले यजमान के घर में निवास करते हुए आप दोनों सोमपीकर हृष्ट होओ ।६। (२५)

सूक्त ५०

(ऋषि-वामदेवः । देवता-बृहस्पतिः, इन्द्राबृहस्पती । छन्द-त्रिष्टुप्,जगती)

यस्तस्तम्भ सहसा वि ज्मो अन्तान् बृहस्पतिस्त्रिषधस्थो रवेण ।
तं प्रत्नास ऋषयो दीध्यानाः पुरो विप्रा दधिरे मन्द्रजिह्वम् ॥१
धुनेतयः सुप्रकेतं मदन्तो बृहस्पते अभि ये नस्ततस्रे ।
पृषन्तं सृप्रमदब्धमूर्वं बृहस्पते रक्षतादस्य योनिम् ॥२
बृहस्पते या परमा परावदत आ त ऋतस्पृशो नि षेदुः ।
तुभ्यं खाता अवता अद्रिदुग्धा मध्वः श्चोतन्त्यभितो विरप्शम्॥३
बृहस्पतिः प्रथमं जायमानो महो ज्योतिषः परमे व्योमन् ।
सप्तास्यस्तुविजातो रवेण वि सप्तरश्मिरधमत् तमांसि ॥४
स सुष्टुभा स ऋक्वता गणेन वलं रुरोज फलिगं रवेण ।
बृहस्पतिरुस्रिया हव्यसूदः कनिक्रदद् वावशतीरुदाजत् ।५।२६

वेद रक्षक बृहस्पति ने अपने बल से पृथ्वी की दसों दिशाओं को अपने वशमें किया । वे शब्द द्वारा तीनों लोकोंमें व्याप्त हैं । उन विशिष्ट जिह्वा वाले, प्रसन्नता देने वाले बृहस्पति को प्राचीन ऋषियों ने पुरोहित पदपर स्थापित किया ।१। हे मेधावी बृहस्पतिदेव ! तुम्हारी चाल से शत्रुगण काँपने लगते हैं । जो आपको पुष्ट करनेके निमित्त स्तुति करते

हैं,तुम उनके लिए फलदायक बढ़ाने वाले,तथा हिंसा रहित होते हो,और तुम उनके महान् यज्ञके पालन करने वाले हो ।२। हो बृहस्पतिदेव ! जो दूरस्थ दिव्य लोक हैं, वह अत्यन्त उत्कृष्ट हैं । वहाँ से तुम्हारे घोड़े इस यज्ञ में आते हैं । जैसे खादसे भरे हुए कुँए के चारों ओर जल उबलता है, वैसेही पाषाण द्वारा निष्पन्न मधुर सोम रस स्तुतियों के द्वारा तुम्हें चारों ओर सींचता है ।३। जब वे मंत्रज्ञ बृहस्पति सूर्य मंडल में प्रथम बार प्रकट हुए, तब मुख से सप्त छन्दोमय तथा शब्द से युक्त होकर उन गमनशील बृहस्पति ने अपने तेज से अँधेरे को नष्ट किया ।४। उन बृहस्पति ने स्तुति करती हुई अङ्गिराओं के साथ घोर शब्द द्वारा 'बल' नामक दैत्य का नाश किया । उन्होंने शब्द से ही उत्तम दूध देने वाली गौओं को गुफा से निकाला था ।५। (२६)

एवा पित्रे विश्वदेवाय वृष्णे यज्ञैर्विधेम नमसा हविर्भिः ।
बृहस्पते सुप्रजा वीरवन्तो वयं स्याम पतयो रयीणाम् ॥६
स इद् राजा प्रतिजन्यानि विश्वा शुष्मेण वस्थावभि वीर्येण ।
बृहस्पतिं यः सुभृतं बिभर्ति वल्गूयति वन्दते पूर्वभाजम् ॥७
स इत् क्षेति सुधित ओकसि स्वे तस्मा इला पिन्वते विश्वदानीम् ।
तस्मै विशः स्वयमेवा नमन्ते यस्मिन् ब्रह्मा राजनि पूर्व एति ।८
अप्रतीतो जयति स धनानि प्रतिजन्यान्युत या सजन्या ।
अवस्यवे यो वरिवः कृणोति ब्रह्मणे राजा तमवन्ति देवाः ॥९
इन्द्रश्च सोमं पिबतं बृहस्पते ऽस्मिन् यज्ञे मन्दसाना वृषण्वसू ।
आ वां विशन्त्विन्दवः स्वाभुवो ऽस्मे रयिं सर्ववीरं नि यच्छतम्१०
बृहस्पत इन्द्र वर्धतं नः सचा सा वां सुमतिर्भूत्वस्मे ।
अविष्टं धियो जिगृतं पुरंधीर्जजस्तमर्यो वनुषामरातीः ।११।१७

वे बृहस्पति सबके देवता-स्वरूप, पालन करने वाले, कामनाओं की वर्षा करने वाले हैं, हम यज्ञ में हविरन्न द्वारा स्तुति हुए उनकी पूजा करेंगे, जिससे हम संतान तथा बल-युक्त ऐश्वर्य का स्वामित्व प्राप्त कर

सकें ।६। जो राजा बृहस्पति की भले प्रकार रक्षा करता है, तथा प्रथम हव्य ग्रहण करने वाला मानकर उनको हवि देता हुआ नमस्कार युक्त स्तुति करता है, वह राजा अपनी शक्तिसे शत्रुओंकी शक्ति को निरर्थक करता हुआ उसे हर देता है ।७। जिसके पास बृहस्पति सबसे पहले जाते हैं, वह राजा सन्तुष्ट होकर अपने स्थान में रहता है - उसके लिये पृथ्वी भी हर ऋतु में फल देने वाली होती है । उसकी प्रजा उसके सामने सदा सिर झुकायें रहती है ।८। जो राजा रक्षा चाहने वाले धन हीन विद्वान को धन देता है, वह शत्रुओंके धन का विजेता होता है । देवता सदा उसके रक्षक रहते हैं ।६। हे बृहस्पते ! तुम और इन्द्र दोनों ही इस यज्ञ में प्रसन्न होकर यजमानों कों धन दो यह सोम रस सर्वव्यापक है, यह तुम्हारे शरीरों में प्रविष्ट हो तुम दोनों ही हमारे निमित्त सन्तानसे युक्त रमणीय धन प्रदान करो ।१०। हे बृहस्पते ! हे इन्द्र ! तुम दोनों ही हमको हर प्रकार से बढ़ाओ । हमारे प्रति तुम दोनों की कृपा एक साथ ही प्रेरित हो हमारे इस यज्ञ की तुम दोनो ही रक्षा करो । स्तुति करने वालोंके शत्रुओंसे युद्ध करो । तुम दोनों ही हमारी स्तुति से चैतन्य को प्राप्त हो जाओ ।११।

(२७)

॥ इति सप्तमोऽध्यायः समाप्तः ॥

सूक्त ५१

(ऋषि–वामदेवः । देवता–उषाः । छन्द–त्रिष्टुप्,)

इदमु त्यत् पुरुतमं पुरस्ताज्ज्योतिस्तमसो वयुनावदस्थात् ।
नूनं दिवो दुहितरो विभातीर्गातुं कृणवन्नुषसो जनाय ॥१
अस्थुरु चित्रा उषसः पुरस्तान्मिता इव स्वरवोऽध्वरेषु ।
व्यू व्रजस्य तमसो द्वारोच्छन्तीरव्रञ्छुचयः पावकाः ॥२
उच्छन्तीरद्य चितयन्त भोजान् राधोदेयायोषसो मघोनीः ।
अचित्रे अन्तः पणयः समन्त्वबुध्यमानास्तमसो विमध्ये ॥३
कुवित् स देवीः सनयो नवो वा यामो बभूयादुषसो वो अद्य ।
येना नवग्वे अङ्गिरे दशग्वे सप्तास्ये रेवती रेवदूष ॥४

यूयं हि देवीर्ऋतयुग्भिरश्वैः परिप्रयाथ भुवनानि सद्यः ।
प्रबोधयन्तीरुषसः ससन्तं द्विपाच्चतुष्पाच्चरथाय जीवम् ।५।१

जो तेज हमारे द्वारा स्तुत है,वह सर्व विख्यात अत्यन्त प्रकाशवान तेज अन्धकार को चीरता हुआ पूर्व दिशा में प्रकट होता है । सूर्य की पुत्री, प्रकाश से पूर्ण उषा यजमानों के चलने के कार्य में सहायता देनेमें सर्वथा समर्थ है ।१। जैसे यज्ञ में गड़े हुए यूपांश स्थिर होते हैं, वैसे ही सुशोभित उषाएँ पूर्व दिशा में व्याप्त होती हैं, वे बाधा देने वाले अन्धकार को खोल कर पवित्र उज्ज्वल हुई प्रकाश देती हैं ।२। अन्धकार को मिटाने वाली, ऐश्वर्यसे युक्त उशाएँ हवि देने वाले यजमानको सोमादि अन्न के निमित्त प्रेरित करती हैं । उसी प्रकार श्रीसम्पन्न गृहस्थियाँ अपने गुणों को प्रकट करती हुई प्रगाढ़ अन्धकार के अन्त होने पर अपने पतियों को सचेत करती हैं ।३। हे प्रकाशवान् उषाओ ! जिस रथ से तुमने नवग्व अर्थात् सदा तरुण और दशग्व अर्थात् दशों इन्द्रियों को जीतने वाले अङ्गिराओं को तेजस्वी बनाया था, अपना वही प्राचीन रथ हमारे इस यज्ञ स्थानमें आकर प्राप्त हो ।४। हे प्रकाशवान् उषाओ! तुम सोते हुए चौपायोंको अपने चलने फिरने आदि कर्मोंसे प्रेरित करती हुई अपने गतिमान् अश्व द्वारा घरों के चारों ओर क्षण-भर में घूमती हो ।५। (१)

क्व स्विदासां कतमा पुराणी यया विधाना विदधुर्ऋभूणाम् ।
शुभं यच्छुभ्रा उषसश्चरन्ति न वि ज्ञायन्ते सदृशीरजुर्याः ॥६
ता घा ता भद्रा उषसः पुरासुरभिष्टिद्युम्ना ऋतजातसत्याः ।
यास्वीजानः शशमान उक्थैः स्तुवञ्छंसन् द्रविणं सद्य आप ॥७
ता आ चरन्ति समना पुरस्तात् समानतः समना पप्रथानाः ।
ऋतस्य देवीः सदसो बुधाना गवां न सर्गा उषसो जरन्ते ॥८
ता इन्न्वेव समना समानीरमीतवर्णा उषसश्चरन्ति ।
गूहन्तीरभ्वमसितं रुशद्भिः शुक्रास्तनूभिः शुचयो रुचानाः ॥९
रयिं दिवो दुहितरो विभातीः प्रजावन्तं यच्छतास्मासु देवीः ।

स्योनादा वः प्रतिबुध्यमानाः सुवीर्यस्य पतयः स्याम ॥१०
तद् वो दिवो दुहितरो विभातीरुप ब्रु व उषसो यज्ञकेतुः ।
वयं स्याम यशसो जनेषु तद् द्यौश्च धत्तां पृथिवी च देवी ।११।२

ऋभुगण ने जिन उषाओं के निमित्त चमस आदि बनाये थे, वे प्राचीन उषाएँ अब कहाँ हैं ? प्रकाशवान्,नवीन सुन्दर रूपवाली उषाएँ जब उज्ज्वल प्रकाश करती है, तब वे एक रूप रहती हैं । उस समय वे प्राचीन हैं, या नवीन, यह बात पहचानने में नही आती ।६। यज्ञ करने वाले यजमान जिन उषाओं का स्तोत्रों द्वारा पूजन करते हुए धन प्राप्त करते हैं, वे उषाएँ कल्याण करने वाली हैं । वे प्राचीन काल से आने वाली उषाएँ यजमान को धन दें । वे यज्ञ के निमित्त प्रकट हुई हैं । वे उषाएँ सत्य फल प्रदान करने वाली हैं।७। एकरूप वाली समान उषाएँ अन्तरिक्ष से पूर्व दिशा में अवतरित होती हुई सर्वत्र जाती हैं । प्रकाश से पूर्ण उषाएं यज्ञ स्थान को लक्ष्य करती हुई किरणों के समान पूजी जाती हैं ।८। वे उषाएँ एक रूप वाली,समान सुन्दर वर्णवाली उज्ज्वल तथा कान्तिमयी हैं । अपने शरीर द्वारा प्रकाशवान् हैं, और अन्धकार को छिपाकर सर्वत्र घूमती हैं ।९। हे प्रकाशवान् सूर्य की पुत्रियो ! तुम हमको सन्तान और धन से परिपूर्ण करो । हम अपने सुख के निमित्त तुमसे निवेदन करते हैं, जिससे हम सन्तान से युक्त ऐश्वर्य के अधिपति हो सकें ।१०। हे प्रकाशवान् सूर्यकी पुत्रियो ! हम याज्ञिक तुमसे प्रार्थना करते हैं कि हम सब मनुष्यों के मध्य में यशस्वी और ऐश्वर्यवान् बनें, आकाश और कान्ति से परिपूर्ण पृथ्वी हमारे निमित्त सुख को धारण करने वाली हो ।११। (२)

सूक्त ५२

(ऋषि–वामदेवः । देवता–उषाः । छन्द–गायत्री)

प्रति ष्या सूनरी जनी व्युच्छन्ती परि स्वसुः ।
दिवो अदर्शि दुहिता ॥१
अश्वेव चित्रारुषी माता गवामृतावरी । सखाभूदश्विनोरुषाः ॥२

उत सखास्यश्विनोरुत माता गवामसि । उतोषो वस्व ईशिषे॥३
यावयेद्द्वेषसं त्वा चिकित्वित् सूनृतावरि। प्रतिस्तोमैरभुत्स्महि॥४
प्रति भद्रा अदृक्षत गवां सर्गा न रश्मयः। ओषा अप्रा उरु ज्रय॥५
आपप्रुषी विभावरि व्यावर्ज्योतिषा तमः। उषो अनु स्वधामव॥६
आ द्यां तनोषि रश्मिभिरान्तरिक्षमुरु प्रियम् ।
उषः शुक्रेण शोचिषा ।७।३

वह सूर्यकी पुत्री उषा दिखाई देती है । यह स्तुतिके योग्य प्राणियों का नेतृत्व करने वाली और सुन्दर फलों को उत्पन्न करने वाली है यह अपनी बहिन स्वरूप रात्रि की समाप्तिपर अँधेरे को नष्ट करती है ।१। घोड़ेके समान सुन्दर दिखाने वाली, प्रकाशमयी, किरणोंकी माता और यज्ञको सम्पन्न करने वाली उषा अश्विनीकुमारों से बन्धुत्व रखने वाली होती हैं ।२। हे उषे ! तुम अश्विनीकुमारों से बन्धुत्व रखने वाली और किरणों की जननी हो । ऐश्वर्य की अधीश्वरी हो ।३। हे सत्य वचन वाली उषे ! तुम शत्रुओं को भगा दो । तुम हमको ज्ञान प्रदान करो । हम स्तुतियों से तुमको नमस्कार करते हैं ।४। वर्षा की धारा के समान महान तेज वाली उषा ने संसार को परिपूर्ण किया है । स्तुति के योग्य किरणें दर्शनीय होती हैं ।५। हे उषे ! तुम सुन्दर प्रकाश वाली हो,अपने तेज से अन्धकार को नष्ट करती हुई संसार को सम्पन्न बनाओ । तुम इस हविरन्नका पालन करो ।६। हे उषे ! तुम अपने प्रकाशवान् तेज से परिपूर्ण होकर किरणों द्वारा आकाश और विस्तृत अन्तरिक्ष में व्याप्त होओ ।७। (३)

सूक्त ५३

(ऋषि—वामदेवः । देवता—सविता । छन्द—जगती)

तद् देवस्य सवितुर्वार्यं महद् वृणीमहे असुरस्य प्रचेतसः ।
छर्दिर्येन दाशुषे यच्छति त्मना तन्नो महाँ उदयान् देवो अक्तुभिः ॥१
दिवो धर्ता भुवनस्य प्रजापतिः पिशङ्गं द्रापिं प्रति मुञ्चते कविः

विचक्षण: प्रथयन्नापृणन्नुर्वजीजनत् सविता सुम्नमुक्थ्यम् ॥२
आप्रा रजांसि दिव्यानि पार्थिवा श्लोकं देव: कृणुते स्वाय धर्मणे।
प्र बाहू अस्राक् सविता सवीमनि निवेशयन् प्रसुवन्नक्तुभिर्जगत् ३
अदाभ्यो भुवनानि प्रचाकशद् व्रतानि देव: सविताभि रक्षते ।
प्रास्राग्बाहू भुवनस्य प्रजाभ्यो धृतव्रतो महो अज्मस्य राजति॥४
त्रिरन्तरिक्षं सविता महित्वना त्री रजांसि परिभूस्त्रीणि रोचना।
तिस्रो दिव: पृथिवीस्तिस्र इन्वति त्रिभिर्व्रतैरभि नो रक्षति त्मना ॥५
बृहत्सुम्न: प्रसवीता निवेशनो जगत: स्थातुरुभयस्य यो वशी ।
स नो देव: सविता शर्म यच्छत्वस्मे क्षयाय त्रिवरूथमंहस: ॥६
आगन् देव ऋतुभिर्वर्धतु क्षयं दधातु न: सविता सुप्रजामिषम् ।
स न: क्षपाभिरहभिश्च जिन्वतु प्रजावन्तं रयिमस्मे समिन्वतु७।४

सवितादेव बलवान् एवं मेधावी है। हम उनसे वरण करने योग्य और पूजनीय धन की याचना करते हैं, उस धन को वे हविदान करने वाले यजमान को अपनी इच्छा से प्रदान करें।१। आकाश तथा सभी लोकों को धारण करने वाले प्राणियों को प्रकाश और वर्षा आदि द्वारा पालन करने वाले मेधावी सवितादेव सुवर्ण कवच को धारण करते हुए अपने तेज से संसार को भली प्रकार परिपूर्ण करते और प्रशंसाके योग्य श्रेष्ठ सुख प्रकट करते हैं।२। वे सवितादेव अपने तेज से आकाश और पृथिवी को परिपूर्ण करते हुए अपने उत्तम कार्यों द्वारा प्रशंसा को प्राप्त करते हैं। वे नित्य प्रति संसार को कार्य की ओर प्रेरित करते तथा सृष्टि के निर्माण कार्य के लिए भुजा फैलाते हैं।३। वे सवितादेव अहिंसा भावना सहित लोकोंको प्रकाशित करते हैं और सङ्कल्पोंका पालन करते हैं। वे सब लोकों में रहने वाले प्राणियों की रक्षा के लिए अपनी भुजा फैलाते हैं। वे व्रतों को धारण करने वाले हैं, और इस विशाल संसार के स्वामी हैं।४। अपनी महिमा द्वारा सवितादेव तीनों अन्तरिक्षों को व्याप्त करते हैं। वे लोकत्रय में भी व्याप्त हैं। वे प्रकाशवान् सवितादेव

अग्नि, वायु आदित्य को तथा तीनों आकाशों और तीनों पृथ्वियो को व्याप्त करते हैं। तीनों व्रतों द्वारा हमारी कृपा पूर्वक रक्षा करें।५। जो कर्मों को निर्धारित करते हैं, जिनके पास महान् ऐश्वर्य है, जो सबके जानने योग्य तथा सब प्राणियों को वश मे रखने वाले हैं वे सवितादेव हमारे पापों को नष्ट करें और तीनों लोकों में स्थित महान् सुखके प्रदान करने वाले हों।६। वे प्रकाशवान सवितादेव ऋतुओं द्वारा संसार का पालन करें, हमारे ऐश्वर्य को बढ़ावें, हमको सन्तान युक्त धन प्रदान करें। वे दिन में तथा रात्रि में हमपर स्नेह करें। वे हमको पुत्र पौत्रादि से युक्त ऐश्वर्य प्रदान करने वाले हों।७। (४)

सूक्त ५४

(ऋषि–वामदेवः । देवता–सविता । छन्द–जगती, त्रिष्टुप्)

अभूद् देवः सविता वन्द्यो नु न इदानीमह्न उपवाच्यो नृभिः ।
वि यो रत्ना भजति मानवेभ्यः श्रेष्ठं नो अत्र द्रविणं यथा दधत्१
देवेभ्यो हि प्रथमं यज्ञियेभ्यो ऽमृतत्वं सुवसि भागमुत्तमम् ।
आदिद् दामानं सवितर्व्यूर्णुषे ऽनूचीना जीविता मानुषेभ्यः ॥२
अचित्ती यच्चकृमा दैव्ये जने दीनैर्दक्षैः प्रभूती पूरुषत्वता ।
देवेषु च सवितर्मानुषेषु च त्वं नो अत्र सुवतादनागसः ॥३
न प्रमिये सवितुर्दैव्यस्य तद् यथा विश्वं भुवनं धारयिष्यति ।
यत् पृथिव्या वरिमन्ना स्वङ्गुरिर्वर्ष्मन् दिवः सुवति सत्यमस्य तत् ॥४
इन्द्रज्येष्ठान् बृहद्भ्यः पर्वतेभ्यः क्षयाँ एभ्यः सुवसि पस्त्यावतः ।
यथायथा पतयन्तो वियेमिर एवैव तस्थुः सवितः सवाय ते ॥५
ये ते त्रिरहन्त्सवितः सवासो दिवेदिवे सौभगमासुवन्ति ।
इन्द्रो द्यावापृथिवी सिन्धुरद्भिरादित्यैर्नो अदितिः शर्म यंसत्६।५

सवितादेव प्रकट हो गये। हम शीघ्र ही उनको नमस्कार करेंगे। तीसरे सवन में होताओं द्वारा उनकी स्तुति की जाए। जो मनुष्यों को रत्नादि धन प्रदान करते हैं वे इस यज्ञमें हमारे लिये उत्तम धन प्रदाता

हों ।१। तुम पहिले यज्ञ में श्रेष्ठ साधन रूप अमरत्व सोम के श्रेष्ठ भाग को प्रकट करो । हे सवितादेव ! आप हविदाता यजमान को प्रकाश से युक्त करो, और पिता, पुत्र-पौत्रादि के क्रम से मनुष्यों को दीर्घ आयु प्रदान करो ।२। हे सवितादेव ! अज्ञानवश अथवा धन के मद में प्रमादी होकर या बल और कुटुम्ब के अहङ्कार से हमने आपका या अन्य देवताओं और विद्वान मनुष्यों कोई अपराध किया हो, तो आप हमको इस यज्ञ में उसके पाप से मुक्त करो ।३। वे सवितादेव संसारके धारण करने वाले हैं । उनके सभी कर्म अहिंसनीय है । उनका वह कर्म किसी के द्वारा नष्ट नहीं किया जा सकता ।४। हे सवितादेव ! महान् ऐश्वर्य-शाली इन्द्र हम से पूजित होते हैं । आप हमको पर्वतों से भी अधिक उन्नत करो। इन सब यजमानों को घरों से युक्त निवास स्थान दो । आप अपने द्वारा नियत सभी गमना-गमन कालों को नियमित करो ।५। हे सवितादेव ! तुम्हारी प्रीति से जो यजमान तीनों सवनों में आपके निमित्त शोभनीय सोम को सिद्ध करते हैं, उन यजमानों को आकाश-पृथ्वी महान् एवं गम्भीर सिन्धु देवता और आदित्यों के साथ अदिति श्रेष्ठ सुख प्रदान करें, और हमको भी सुखी बनावें । ।६। (५)

सूक्त ५५

(ऋषि–वामदेवः । देवता–ऋभवः । छन्द–त्रिष्टुप् गायत्री)

को वस्त्राता वसवः को वरूता द्यावाभूमी अदिते त्रासीथां नः ।
सहीयसो वरुण मित्र मर्तात् को वोऽध्वरे वरिवो धाति देवाः॥१
प्र ये धामानि पूर्व्याण्यर्चान् वि यदुच्छान् वियोतारो अमूराः ।
विधातारो वि ते दधुरजस्रा ऋतधीतयो रुरुचन्त दस्माः ॥२
प्र पस्त्यामदितिं सिन्धुमर्कैः स्वस्तिमीळे सख्याय देवीम् ।
उभे यथा नो अहनी निपात उषासानक्ता करतामदब्धे ॥३
व्यर्यमा वरुणश्चेति पन्थामिषस्पतिः सुवितं गातुमग्निः ।
इन्द्राविष्णू नृवदु षु स्तवाना शर्म नो यन्तममवद् वरूथम् ।।४

आ पर्वतस्य मरुतामवांसि देवस्य त्रातुरव्रि भगस्य।
पात् पतिर्जन्यादंहसो नो मित्रो मित्रियादुत न उरुष्येत् ।५।६

हे वसुओ ! तुममें कौन दुःखों से छुड़ाने वाला है ? कौन रक्षा करने वाला है ? आकाश व पृथ्वी, तुम भी खण्ड होने योग्य नहीं हो। हमारी रक्षा करो। हे मित्रावरुण ! हमारे रक्षक बनो। हे देवताओ ! तुममेंसे कौनसा देवता यज्ञमें धन प्रदान करने वाला है? ।१। जो देवगण स्तुति करने वालों को प्राचीन स्थान देते हैं, जो दुःखो को हटाते हैं, यजमान और अन्धेरे को नष्ट करने वाले हैं, वही देवता मनुष्यों के कर्मों के विधायक एवं कामनाओं की पूर्ति करने वाले हैं। वे सत्य कर्मों से युक्त एवं सुन्दर और सुशोभित हैं ।२। सबके लिये स्नेह वाली माता अदिति की हम सुख एवं कल्याण प्राप्ति के लिए स्तुति करते हैं जिससे आकाश और पृथ्वी दोनों ही हमारी रक्षा करें। दिवस, रात्रि और उषा हमारी कामनाओं को सम्पादन करने वाली हो ।३। अर्यमा और वरुण उचित मार्ग दिखाते हैं। हविरन्न के स्वामी अग्निदेव ने कल्याणकारी यज्ञ-मार्ग को दिखाया। इन्द्र और विष्णु सुशोभि
हमारे द्वारा पूजित होने पर सन्तान, बल और रमणीय धन-युक्त सुख प्रदान करें ।४। इन्द्र के मित्र मरुद्गण, पर्वत और भगदेवता से हम रक्षा की याचना करते हैं। वरुणदेव हमको पाप से बचावें और मित्र देवता हमारे सखा होते हुए हमारा पालन करें ।५। (६)

नू रोदसी अहिना बुध्न्येन स्तुवीत देवी अप्येभिरिष्टैः।
समुद्रं न संचरणे सनिष्यवो धर्मस्वरसो नद्यो अप व्रन् ।।६
देवैर्नो देव्यदितिर्नि पातु देवस्त्राता त्रायतामप्रयुच्छन्।
नहि मित्रस्य वरुणस्य धासिमर्हामसि प्रमियं सान्त्वग्नेः ।।७
अग्निरीशे वसव्यस्याऽग्निर्महः सौभगस्य। तान्यस्मभ्यं रासते।।८
उषो मघोन्या वह सूनृते वार्या पुरु। अस्मभ्यं वाजिनीवति ।।९
तत् सु नः सविता भगो वरुणो मित्रो अर्यमा। इन्द्रो नो राधसा गमत् ।१०।७

हे आकाश पृथिवी रूपी देवियों ! जैसे धनकी कामना वाला मनुष्य समुद्र यात्रामें जाने के लिए समुद्र का स्तवन करता है, वैसे ही हम भी अपने इच्छित कार्य के लिए तुम दोनों की स्तुति करते है ।६। देवमाता अदिति अन्य देवताओं के साथ हमारी रक्षा करें । दुःखों से छुड़ाने वाले इन्द्र हमारे रक्षक हों । मित्र, वरुण और सोम रूप अन्न को हम रोक नहीं सकते, बल्कि यज्ञानुष्ठान द्वारा इन्हें प्रवृद्ध कर सकते हैं ।७। अग्निदेव धन और महान सौभाग्य के स्वामी हैं । इसलिए वे हमको श्रेष्ठ धन और सौभाग्य से सम्पन्न करें ।८। हे सत्य वाणी रूपिणी, धन और अन्न की स्वामिनी उषादेवी ! हमको अत्यन्त शोभा युक्त धन प्रदान करो ।९। सवितादेव, भगदेवता, वरुण व मित्र सहित इन्द्र यज्ञस्थान में आते हैं, वे अपने धन को हमारे लिए दान करें ।१०। (७)

सूक्त ५६

(ऋषि–वामदेवः । देवता–द्यावापृथिव्यौ । छन्द–त्रिष्टुप्, गायत्री)

मही द्यावापृथिवी इह ज्येष्ठे रुचा भवतां शुचयद्भिरर्कैः ।
यत् सीं वरिष्ठे बृहती विमिन्वन् रुवद्धोक्षा पप्रथानेभिरेवैः ॥१
देवी देवेभिर्यजते यजत्रै रमिनती तस्थतुरुक्षमाणे ।
ऋतावरी अद्रुहा देवपुत्रे यज्ञस्य नेत्री शुचयद्भिरर्कैः ॥२
स इत् स्वपा भुवनेष्वास य इमे द्यावापृथिवी जजान ।
उर्वी गभीरे रजसी सुमेके अवंशे धीरः शच्या समैरत् ॥३
नू रोदसी बृहद्भिर्नो वरुथैः पत्नीवद्भिरिषयन्ती सजोषाः ।
उरूची विश्वे यजते नि पातं धिया स्याम रथ्यः सदासाः ॥४
प्र वां महि द्यवी अभ्युपस्तुतिं भरामहे । शुची उप प्रशस्तये ॥५
पुनाने तन्वा मिथः स्वेन दक्षेण राजथः । ऊह्याथे सनादृतम् ॥६
मही मित्रस्य साधथस्तरन्ती पिप्रती ऋतम् । परि यज्ञं नि षेदथुः ।७।८

सुश्रेष्ठ महत्ववती आकाश-पृथ्वी इस शोभन स्तोत्र और सोम रस से परिपूर्ण होकर प्रकाश से युक्त हो । इस कार्य के निमित्त सिंचन कर्म

में समर्थ पर्जन्य विस्तृत और महत्ववती आकाश-पृथ्वी की स्थापना करते हुए मरुद्गण के साथ विशेष शब्द करते हैं ।१। यज्ञ के योग्य कामनाओं के वर्षक, हिंसासे शून्य, द्रोहसे शून्य, सत्य से युक्त, देवताओं के अभिभूत कर्त्ता, यज्ञ सम्पादक, आकाश पृथ्वी रूप दोनों देव अन्य देवताओं से सुसङ्गत हविरन्नों से परिपूर्ण हो ।२। जिन्होंने इस आकाश पृथ्वी को बनाया, जो इस विस्तृत, अविचलित, सुन्दर रूप वाली, आधार से शून्य आकाश पृथ्वी को समान रूप से सुन्दर ढङ्ग से चला रहा है, वे समस्त लोकों के मध्य में शोभा पाने वाले हैं ।३। हे आकाश पृथ्वी ! तुम दोनों ही हमको अन्न प्रदान करने की कामना करती हो, तथा परस्पर सुसङ्गत हो, तुम व्याप्त, और यज्ञ के योग्य होती हुई हमको गृहिणी युक्त घर प्रदान करो, और हमारीं रक्षा प्राप्त करो हम अपने श्रेष्ठ कर्मों द्वारा रथ युक्त सेवकों को प्राप्त करें ।४। हे आकाश-पृथ्वी ! तुम कान्तिमयी हो । हम तुम्हारे निमित्त इस महान् स्तोत्र को प्राप्त करते हैं । तुम दोनों ही पवित्र हो, हम तुम्हारी स्तुति के लिये तुम्हारे पास आते हैं ।५। हे देवियो ! तुम दोनों अपने तेज और बल से परस्पर एक दूसरी को पवित्र करती हुई सुशोभित होओ ओर सदा ही यज्ञ को वहन करने वाली बनो ।६। हे आकाश पृथ्वी ! तुम मित्र रूप स्तुति करने वाले की सहायक बनो । तुम अन्नादि धनों को धारण करती हुई, यज्ञ स्थान की परिक्रमा करती हुई विराजमान होओ ।७।

(७)

सूक्त ५७

(ऋषि-वामदेवः। देवता-क्षेत्रपति आदि । छन्द-अनुष्टुप्,त्रिष्टुप् उष्णिक्)

क्षेत्रस्य पतिना वयं हितेनेव जयमसि ।
गामश्वं पोषयित्न्वा स नो मृलातीदृशे ॥१
क्षेत्रस्य पते मधुमन्तमूर्मि धेनुरिव पयो अस्मासु धुक्ष्व ।
मधुश्चुतं घृतमिव सुपूतमृतस्य नः पतयो मृलयन्तु ॥२
मधुमतीरोषधीर्द्याव आपो मधुमन्नो भवत्वन्तरिक्षम् ।

क्षेत्रस्य पतिर्मधुमान् नो अस्त्वरिष्यन्तो अन्वेनं चरेम् ॥३
शुनं वाहाः शुनं नरः शुनं कृषतु लाङ्गलम्।
शुनं वरत्रा बध्यन्तां शुनमष्ट्रामुदिङ्गय ॥४
शुनासीराविमां वाचं जुषेथां यद् दिवि चक्रथुः पयः।
तेनेमामुप सिञ्चतम् ॥५
अर्वाची सुभगे भव सीते वन्दामहे त्वा।
यथा नः सुभगासिसि यथा नः सुफलासिसि ॥६
इन्द्रः सीतां नि गृह्णातु तां पूषानु यच्छतु।
सा नः पयस्वती दुहामुत्तरामुत्तरां समाम् ॥७
शुनं नः फाला वि कृषन्तु भूमिं शुनं कीनाशा अभि यन्तु वाहैः।
शुनं पर्जन्यो मधुना पयोभिः शुनासीरा शुनमस्मासु धत्तम् ।८।८

बन्धु के समान क्षेत्रपतिके साथ हम यजमान गण क्षेत्रको जीतेंगे। वे क्षेत्रपति हमारी गौओं ओर घोड़ोंको पुष्ट करें। वे हमको देने योग्य धन देकर हमारा कल्याण करें।१। हे क्षेत्रपते ! जैसे गौ दूध देती है जैसे ही तुम मीठा शुद्ध, घृत के समान सुस्वादु जल हमको दो। तुम जलों के स्वामी हमको हर प्रकारसे सुखी बनाओ।२। औषधियाँ हमारे लिए मधुर गुण वाली हों, पृथिवी अन्नों से युक्त हो। नदियाँ मीठे जल वाली हों। अन्तरिक्ष मधुर जल-वर्षक हों। क्षेत्रपति मधुर अन्नसे युक्त हो। हम किसी की हिंसा न करते हुए उनके अनुकूल रहें।३। हल चलाने वाले सुखी हों। मनुष्य भी सुख पूर्वक हल चलावें। हलभी सुख से खेत को खोदें। रस्सियाँ सुख से पशुओं को बाँधें। चाबुक को भी सुखपूर्वक चलाया जावे।४। हे अन्नपति और स्वामिन् ! तुम दोनों ही हमारी स्तुतियों को सुनो। तुमने आकाश में जिस जल की रचना की है, उसके द्वारा ही इस पृथिवी को सींचो।५। हे सीते तुम सौभाग्यवती हो। तुम पृथिवी के नीचे जाने वाली हो। तुम्हारे गणों की हम प्रशंसा करते हैं, क्योंकि तुम सुन्दर सौभाग्य को प्रदान करती हो। तुम सुन्दर फल देने में समर्थ हो (सीता हल के अग्र भाग अर्थात् फाली को

कहते हैं) ।६। इन्द्रदेव सीता को ग्रहण करें। पूषा उसे भली प्रकार पकड़ें, जिससे जल और अन्न से सम्पन्न होकर उत्तरोत्तर समृद्धि को प्राप्त हो ।७। वह जल की फाली सुख-पूर्वक भूमि को खोदे। कृषक जन सुख पूर्वक बैलोंको चलावें। मेघ मधुर जलकी सृष्टि करता हुआ पृथिवी को जल से परिपूर्ण करे। हे अन्न और क्षेत्र के अधिपतियो ! हमको सुखी करो ।८।   (६)

सूक्त ५८

(ऋषि–वामदेवः । देवता–अग्निः, सूर्यो, वाऽपो, गावो वा घृतस्तुतिर्वा । छन्द–त्रिष्टुप्, जगती)

समुद्रादूर्मिर्मधुमाँ उदारदुपांशुना सममृतत्वमानट् ।
घृतस्य नाम गुह्यं यदस्ति जिह्वा देवानाममृतस्य नाभिः ॥१
वयं नाम प्र ब्रवामा घृतस्याऽस्मिन् यज्ञे धारयामा नमोभिः ।
उप ब्रह्मा शृणवच्छस्यमानं चतुःशृङ्गोऽवमीद् गौर एतत् ॥२
चत्वारि शृङ्गा त्रयो अस्य पादा द्वे शीर्षे सप्त हस्तासो अस्य ।
त्रिधा बद्धो वृषभो रोरवीति महो देवो मर्त्यां आ विवेश ॥३
त्रिधा हितं पणिभिर्गुह्यमानं गवि देवासो घृतमन्वविन्दन् ।
इन्द्र एकं सूर्य एकं जजान वेनादेकं स्वधया निष्टतक्षुः ॥४
एता अर्षन्ति हृद्यात् समुद्राच्छतव्रजा रिपुणा नावचक्षे ।
घृतस्य धारा अभि चाकशीमि हिरण्ययो वेतसो मध्य आसाम् ।
।५।१०

समुद्र से मधुमयी किरणें आविर्भूत हुई हैं। मनुष्य उनके द्वारा अमृतत्व प्राप्त करते हैं। घृत का जो व्यापक रूप है, वह देवताओं की जिह्वा और अमृत का आश्रय रूप है ।१। हम यजमान घृत की प्रशंसा करते हुए उसे नमस्कार पूर्वक इस यज्ञ में ग्रहण करते हैं। ब्रह्मा इस वाक्य को श्रवण करें। चार सींग वाले मृग के समान चारों वेदों का ज्ञाता विज्ञान वेद वाणी का निर्वाह करने वाला है ।२। यज्ञात्मक अग्नि के चार सींग, सवन रूप तीन पाद, ब्रह्मोदन और प्रवर्ग्य रूप दो सिर

तथा छन्द रूप सात हाथ है। वह सब कामनाओं के वर्षक हैं। यह मन्त्र, कल्प और ब्राह्मण द्वारा तीन प्रकारसे बंधे हुए अत्यन्त शब्द करते हैं, वे देव रूपसे मरण-धर्मा मनुष्यों के बीच विद्यमान हैं।३। पक्षियों ने गौओं के मध्य दुग्ध, दधि और घृत इन तीन पदार्थों को रखा देवताओं ने उन्हें ढूढ़कर प्राप्त किया। इन्द्र ने पदार्थ क्षीर को तथा सूर्य ने एक पदार्थ को उत्पन्न किया। देवताओं ने दीप्तिमान के पास से अन्त के द्वारा एक पदार्थ को घृतको प्राप्त किया था।४। अपार गति वाला यह जल अन्तरिक्ष से नीचे गिरता है। शत्रु उसे देखने में समर्थ नहीं है। उस सम्पूर्ण धृत-धारा को देखने में हम समर्थ हैं, तथा इसके मण्डप में हम अग्नि को भी देख सकते हैं।५। (१०)

सम्यक् स्रवन्ति सरितो न धेना अन्तर्हृदा मनसा पूयमानाः।
एते अर्षन्त्यूर्मयो घृतस्य मृगा इव क्षिपणोरीषमाणाः ॥६
सिन्धोरिव प्राध्वने शूघनासो वातप्रमियः पतयन्ति यह्वाः।
घृतस्य धारा अरुषो न वाजी काष्ठा भिन्दन्नूर्मिभिः पिन्वमानः७
अभि प्रवन्त समनेव योषाः कल्याण्यः स्मयमानासो अग्निम्।
घृतस्य धाराः समिधो नसन्त ता जुषाणो हर्यति जातवेदाः।८
कन्या इव वहतुमेतवा उ अञ्ज्यञ्जाना अभि चाकशीमि।
यत्र सोमः सूयते यत्र यज्ञो घृतस्य धारा अभि तत् पवन्ते ॥९
अभ्यर्षत सुष्टुतिं गव्यमाजिमस्मासु भद्रा द्रविणानि धत्त।
इमं यज्ञं नयत देवता नो घृतस्य धारा मधुमत् पवन्ते ॥१०
धामन् ते विश्वं भुवनमधि श्रितमन्तः समुद्रे हृद्यन्तरायुषि।
अपामनीके समिधे य आभृतस्तमश्याम मधुमन्तं त ऊर्मिम्॥११।११

स्नेह-दायिनी नदीके समान यह घृत-धाराएँ अथवा वाणियाँ अन्तःकरण में चित्त द्वारा पवित्र होती हुई बाहर आती हैं, जल की तरङ्ग के समान यह वेग पूर्वक दौड़ती हैं जैसे व्याघ्र के डर से मृग दौड़ते हैं ।६। जैसे नदी का जल नीचे स्थान की ओर वेगपूर्वक जाता है, वैसे ही घृत की धार भी वेग पूर्वक निकलती हुई जाती है, यह घृत राशि

सीमाओं को पार करती हुइ तरङ्गित होती हुई बढ़ती है, जैसे स्वाभिमानी अश्व तरङ्ग में बढ़ता जाता है।७। जैसे श्रेष्ठ आचरण वाली, मङ्गलमयी प्रसन्न वन्दना नारी एक चित्त से पति से ही प्रेम करती है, वैसे ही घृत की धारा अग्नि से प्रेम करती हुई उनकी ओर जाती हैं और समान रूपसे प्रदीप्ति युक्त होकर मिल जातीं है। वे मेधावी अग्नि उन घृत धाराओं की सदा इच्छा करते हैं।८। जैसे कन्या अपने सुन्दर रूप और वेश विन्यास को प्रकट करती हुई पतिको प्राप्त करने के लिये जाती है, वैसे ही घृत धारायें गमन करती हैं। जहाँ सोम-याग होता है वहां कान्तिमय एवं उज्ज्वल घृत धारायें अग्निको प्राप्त होती हैं।९। हे ऋत्विजो ! गौओं के समीप जाओ और उनकी स्तुति करो। हम यजमानों के निमित्त वे स्तुतियाँ ऐश्वर्य धारण करने वाली हों और हमारे यज्ञ को देवताओं के पास पहुँचावें। घृत-धारायें माधुर्य-मयी होती हुई गमन करें।१०। हे अग्ने ! सम्पूर्ण विश्व तुम्हारे आश्रय पर टिका है। तुम्हारा महान बल समुद्र में, हृदय में, प्राण में, जलों के मन्थन रूप विद्युत में, जीवन-शुद्ध में, प्रकट होता है। हम तुम्हारे उस मधुर रस को प्राप्त करने में समर्थ हो।११।   (११)

॥ इति चतुर्थ मण्डलम् ॥

॥ अथ पञ्चममंडलम् ॥

सूक्त १ [प्रथम अनुवाक]

(ऋषि—बुधगविष्ठिरावात्रेयौ। देवता—अग्निः। छन्द त्रिष्टुप्)

अबोध्यग्निः समिधा जनानां प्रति धेनुमिवायतीमुषासम्।
यह्वा इव प्र वयामुज्जिहानाः प्र भानवः सिस्रते नाकमच्छ ॥१
अबोधि होता यजथाय देवानूर्ध्वो अग्निः सुमनाः प्रातरस्थात्।
समिद्धस्य रुशददर्शि पाजो महान् देवस्तमसो निरमोचि ॥२
यदीं गणस्य रशनामजीगः शुचिरङ्क्ते शुचिभिर्गोभिरग्निः।
आद् दक्षिणा युज्यते वाजयन्त्युत्तानामूर्ध्वो अधयज्जुहूभिः ॥३

अग्निमच्छा देवयतां मनांसि चक्षूंषीव सूर्ये सं चरन्ति ।
यदीं सुवाते उषसा विरूपे श्वेतो वाजी जायते अग्रे अह्नाम् ।४
जनिष्ट हि जेन्यो अग्रे अह्नां हितो हितेष्वरुषो वनेषु ।
दमेदमे सप्त रत्ना दधानो ऽग्निर्होता नि षसादा यजीयान् ।।५
अग्निर्होता न्यसीदद् यजीयानुपस्थे मातुः सुरभा उ लोके ।
युवा कविः पुरुनिःष्ठ ऋतावा धर्ता कृष्टीनामुत मध्य इद्धः ।६।१२

गौ के समान आने वाली उषा के प्रकट होने पर अग्नि अध्वर्युओं के काष्ठ से प्रदीप्त होते हुए बढ़ते हैं । उनकी शिखायें ऊँची फैलती हुई विस्तृत वृक्ष के समान अन्तरिक्ष की ओर बढ़ती है ।१। होता रूप अग्निदेव देवताओं के यजन के निमित्त बढ़ते हैं । वे उषाकाल में प्रसन्न चित्त से उंचे की ओर उठते हैं । समृद्ध हुए अग्नि का प्रकाशित बल दिखाई देता है । वे महान् देवता अन्धकार से स्वयं मुक्त होते हुए अन्य को भी मुक्त करते हैं ।२। जब वे अग्नि विश्वके अन्धकार को दूर करते हैं, तब प्रदीप्त होकर अपनी किरणों द्वारा संसार को प्रकाश देते हैं । फिर वे बढ़ी हुई एवं कामनायुक्त घृत-धाराओं से युक्त हुए ऊंचे उठकर उन घृत-धाराओं का पान करते हैं ।३। प्रकाशयुक्त किरणों की कामना करने वाले मनुष्य के नेत्र जैसे सूर्य के दर्शन के लिए बढ़ते हैं । वैसे ही यजमानों के हृदय अग्नि के सामने बढ़ते हैं । जब विभिन्न रूप वाली आकाश-पृथिवी उषाकाल में अग्नि को प्रकट करती हैं, तब वे उज्ज्वल वर्ण वाले एवं युक्त बल अग्नि उत्पन्न होते हैं ।४। प्रादुर्भाव होने के सामर्थ्य से युक्त अग्नि उदयकाल में प्रकट होते हैं । ये दीप्तिसे युक्त हुए वनोंमें अवस्थित रहते हैं । वे सप्त ज्वालायें धारण करें यज्ञ के योग्य होता होकर यज्ञ स्थान में विराजमान होते हैं ।५। यज्ञ योग्य होता होकर माता पृथिवी की गोद में सुन्दर वेदी पर अग्नि देवता प्रतिष्ठित होते हैं । वे युवा, विद्वान् निष्ठावान्, जलोंके माध्य स्थिर सबका पालन करते हैं ।६। (१२)

प्र णु त्यं विप्रमध्वरेषु साधुमग्निं होतारमीलते नमोभिः ।
आ यस्ततान रोदसी ऋतेन नित्यं मृजन्ति वाजिनं घृतेन ।।७

मार्जाल्यो मृज्यते स्वे दमूनाः कविप्रशस्तो अतिथिः शिवो नः ।
सहस्रशृङ्गो वृषभस्तदोजा विश्वाँ अग्ने सहसा प्रास्यन्यान् ॥८
प्र सद्यो अग्ने अत्येष्यन्यानाविर्यस्मै चारुतमो बभूथ ।
ईलेन्यो वपुष्यो विभावा प्रियो विशामतिथिर्मानुषीणाम् ॥९
तुभ्यं भरन्ति क्षितयो यविष्ठ बलिमग्ने अन्तित ओत दूरात् ।
आ भन्दिष्ठस्य सुमतिं चिकिद्धि बृहत् ते अग्ने महि शर्म भद्रम्१०
आद्य रथं भानुमो भानुमन्तमग्ने तिष्ठ यजतेभिः समन्तम् ।
विद्वान् पथीनामुर्वन्तरिक्षमेह देवान् हविरद्याय वक्षि ॥११
अवोचाम कवये मेध्याय वचो वन्दारु वृषभाय वृष्णे ।
गविष्ठिरो नमसा स्तोममग्नौ दिवीव रुक्ममुरुव्यञ्चमश्रेत्१२।१३

जो आकाश पृथ्वी को परिपूर्ण करते हैं उन ज्ञानी यज्ञ के फल को सिद्ध करने वाले, होता रूप अग्निका स्तोत्र द्वारा यजमान स्तवन करते हैं। यजमान उस अन्न के स्वामी अग्नि को घृत सिंचन द्वारा नित्यप्रति पूजा करते हैं ।७। सबको पवित्र करने वाले अग्निदेव अपने स्थानमें पूजे जाते हैं। वे ज्ञानी हैं। पितृजन उनका स्तवन करते हैं। उनकी हम अतिथि के समान पूजा करते हुए सुख पाते हैं। उनकी शिखाएं सीमा रहित हैं। वे विश्वविदित बल वाले एवं कामनाओं की वर्षा से तृप्त करने वाले हैं। हे अग्निदेव ! तुम सबको अपनी शक्ति से परिपूर्ण करते हो ।८। हे अग्ने ! तुम यज्ञ को प्राप्त करते हुए अत्यन्त सुन्दर रूप से प्रकट होते हो। तुम शीघ्र ही अन्यों को पार कर उनसे बढ़ते और अग्रसर होते हो। तुम स्तुतिके पात्र, प्रकाश देने वाले वाले एवं प्रकाशवान् हो। तुम सभी प्राणियोंके लिए पूजनीय तथा अतिथि रूप हो ।९। हे अत्यन्त युवा अग्निदेव ! साधकगण पाससे तथा दूरसे तुम्हारी परिचर्या करते हैं। अधिक स्तुति करने वाले उपासक की स्तुतियों को तुम ग्रहण करते हो। तुम्हारा दिया हुआ सुख सदा स्थित रहने वाला तथा प्रशंसनीय होता है ।१०। हे अग्ने ! तुम अत्यन्त प्रकाशवान् हो। तुम सर्वाङ्ग सुन्दर रथपर देवताओं के साथ सवार होओ। तुम विभिन्न मार्गों को जानकर उन्हें अतिक्रमण करने में समर्थ हो तथा देवगण को हविग्रहण करने के निमित्त यज्ञ स्थान में लाते हो ।११। हम मेधावीजन

कामनाओं की वर्षा करने वाले, पवित्र अग्नि के लिए स्तुति योग्य श्रेष्ठ स्तोत्र को कहते हैं। स्थिर चित्त वाले ऋषिजन आकाशस्थ गतिमान् प्रकाशवान् और विस्तीर्ण सूर्य रूप अग्नि के लिए नमस्कार युक्त स्तुति करते हैं।१२। (१३)

सूक्त २

(ऋषि–कुमार आत्रेयो वृशोवा । देवता–अग्निः । छन्द–त्रिष्टुप्, शक्वरी)

कुमारं माता युवतिः समुब्धं गुहा बिभर्ति न ददाति पित्रे ।
अनीकमस्य न मिनज्जनासः पुरः पश्यन्ति निहितमरतौ ।।१
कमेतं त्वं युवते कुमारं पेषी बिभर्षि महिषी जजान ।
पूर्वीर्हि गर्भः शरदो ववर्धाऽपश्यं जातं यदसूत माता ।।२
हिरण्यदन्तं शुचिवर्णमारात् क्षेत्रादपश्यमायुधा मिमानम् ।
ददानो अस्मा अमृतं विपृक्वत् किं मामनिन्द्राः कृणवन्ननुक्थाः।।३
क्षेत्रादपश्यं सनुतश्चरन्तं सुमद् यूथं न पुरु शोभमानम् ।
न ता अगृभ्रन्नजनिष्ट हि षः पलिक्नीरिद् युवतयो भवन्ति ।।४
के मे मर्यकं वि यवन्त गोभिर्न येषां गोपा अरणश्चिदास ।
य ईं जगृभुरव ते सृजन्त्वाजाति पश्व उप नश्चिकित्वान् ।।५
वसां राजानं वसतिं जनानामरातयो नि दधुर्मर्त्येषु ।
ब्रह्माण्यत्रेरव तं सृजन्तु निन्दितारो निन्द्यासो भवन्तु ।६।१४

बालकको जन्म देनेवाली माता गर्भमें धारण करती है और उत्पन्न होने पर स्वयं पालती है और उसके पिता को नहीं देती। उस सुरक्षित बालक को द्वेषी जन विनष्ट नहीं कर सकते और उसके अराण स्थानमें स्थिर होने पर देखते हैं।१। हे रमणी ! तुम बालकों को गर्भमें धारण करती और फिर उनका पोषण करती हो। तब उस उत्पन्न हुए बालक को सभी जान जाते हैं। वह बालक प्रारम्भिक वर्षों में बढ़ता है। उसी प्रकार माता रूप अरणि जिस बालकको उत्पन्न करती है, उसे हम देखते हैं।२। हमने निकटवर्ती स्थान से सुवर्ण के समान ज्वाला वाले, प्रदीप्त अग्निदेव को देखा। हमने उन्हें सर्वत्र व्याप्त तथा अमरत्व से युक्त

स्तोत्र निवेदन किया । जो व्यक्ति इन्द्र को आराध्य नहीं मानते अथवा उनका पूसन नहीं करते वे हमारा क्या बिगाड़ सकते हैं ।३। गौओं के झुण्ड के समान निश्चय भावसे वनमें विचरते हुए तथा विभिन्न प्रकार से सुशोभित एवं प्रकाशवान् अग्नि के हमने दर्शन किए । उनकी ज्वालायें प्रदीप्त होती हुई युवतियोंके वालक जनते २ वृद्धा हो जाने के समान ही निर्वीर्य होने लगती हैं, तब हविरन्न प्राप्त करती हुई वे वृद्धाओं के समान निर्बल वाला भी युवतियो के समानहृष्ट-पुष्ट हो जाती है ।४। जो सदाचारी पुरुष नहीं होते, वे सम्पत्तियों से हीन होते हैं । जिनमें कोई नायक या स्वामी नहीं हैं,वे कौन मुझ राष्ट्रवाली के रक्षक को भूमिहीन कर सकता है ? उसे पकड़ने वाले शत्रु, उसे मुक्त करें । वे अग्नि हमारे पशुओं का रक्षक होते हुए हमारे निकट रहें ।५। अग्नि-देव सब जीवों के ईश्वर तथा आश्रयदाता है । शत्रु लोग मरण-धर्माओं में उसको छिपा देते हैं । अत्रि वंशियों की स्तुति उन्हें बन्धनसे छुड़ावें । निन्दा करने वालों की निन्दा हो ।६। (१४)

शुनश्चिच्छेपं निदितं सहस्राद् यूपादमुञ्चो अशमिष्ट हि षः ।
एवास्मदग्ने वि मुमुग्धि पाशान् होतश्चिकित्व इह तू निषद्य ॥७
हृणीयमानो अप हि मदैयेः प्र मे देवानां व्रतपा उवाच ।
इन्द्रो विद्वाँ अनु हि त्वा चचक्ष तेनाहमग्ने अनुशिष्ट आगाम् ॥८
वि ज्योतिषा बृहता भात्यग्निराविर्विश्वानि कृणुते महित्वा ।
प्रादेवीर्मायाः सहते दुरेवाः शिशीते शृङ्गे रक्षसे विनिक्षे ॥९
उत स्वानासो दिवि षन्त्वग्नेस्तिग्मायुधा रक्षसे हन्तवा उ ।
मदे चिदस्य प्र रुजन्ति भामा न वरन्ते परिबाधो अदेवीः ॥१०
एतं ते स्तोमं तुविजात विप्रो रथं न धीरः स्वपा अतक्षम् ।
यदीदग्ने प्रति त्वं देव हर्याः स्वर्वतीरप एना जयेम ॥११
तुविग्रीवो वृषभो वावृधानो ऽशत्र्वर्यः समजाति वेदः ।
इतीममग्निमवृता अवोचन् बर्हिष्मते मनवे शर्म
यंसद्धविष्मते मनवे शर्म यंसत् ॥१२।१५

हे अग्ने ! तुमने शुनः शेष को सहस्र रूपसे छुड़ाया, क्योंकि उन्होंने तुम्हारी स्तुति की थी । हे होतारूप अग्निदेव ! तुम मेधावी हो । इस वेदी पर प्रतिष्ठित होओ । हम सबको भी बन्धन से छुड़ाने की कृपा करो ।७। हे अग्ने ! जब तुम क्रोधित होते हो,तब हमसे दूर चले जाते हो । देवताओं के कार्यों को सिद्ध करने वाले इन्द्र ने मुझे उपदेश किया था । वे मेधावी हैं, उन्होंने तुम्हें प्रेरित किया था । उनके द्वारा अनुशासित होने वाले हम तुम्हारे समक्ष उपस्थित होते हैं ।८। वे अग्निदेव अपने महान् तेज द्वारा अत्यन्त प्रकाशवान् होते । वे अपनी महानता से ही सब पदार्थों को प्रकट करते हैं । वे अग्निदेवता बुद्धि पाकर असुरों की कष्टकर योजना को विनष्ट करते हैं । असुरों का नाश करने के लिए वे अपनी ज्वालाओं को दीप्ति विशिष्ट करते हैं ।९। अग्नि की शब्दमयी ज्वाला तेज धार वाले हथियार के समान असुरों का नाश करने के लिए आकाश में प्रकट होती हैं । वे तुष्ट होकर विकराल रूप धारण करते हैं, तब उनका क्रोध दुष्टों को सन्तापजनक होता है । दुष्टों की सेनायें उनके किसी कार्य में बाधक नहीं हो सकती ।१०। हे बहुकर्मा अग्निदेव ! हम तुम्हारी स्तुति करने वाले साधक हैं । जैसे चतुर व्यक्ति रथ को बनाता है, वैसे ही हम तुम्हारे उद्देश्य से स्तोत्र को बनाते हैं । हे अग्ने ! हमारे स्तोत्र को स्वीकार करो जिससे हम विजय प्राप्त कर सकें ।११। बहुत ज्वालाओं वाले, कामनाओं के वर्षक, प्रवृद्ध अग्निदेव निर्बाध रूप से शत्रुओं के धन को छीनकर देते हैं । इसी कारण देवगण तुम्हें अग्नि कहते हैं । वे याज्ञिकोंको सुख दें । तथा हविदाता यजमान को भी सुख प्रदान करें ।१२। (१५)

सूक्त ३

(ऋषि–वसुश्रुत आत्रेय। । देवता–अग्निः । छन्द–विराट्, त्रिष्टुप्)

त्वमग्ने वरुणो जायसे यत् त्वं मित्रो भवसि यत् समिद्धः ।
त्वे विश्वे सहसस्पुत्र देवास्त्वमिन्द्रो दाशुषे मर्त्याय ॥१
त्वमर्यमा भवसि यत् कनीनां नाम स्वधावन् गुह्यं बिभर्षि ।

अञ्जन्ति मित्रं सुधितं न गोभिर्यद् दम्पती समनसा कृणोषि ॥२
तव श्रिये मरुतो मर्जयन्त रुद्र यत् ते जनिम चारु चित्रम् ।
पदं यद् विष्णोरुपमं निधायि तेन पासि गुह्यं नाम गोनाम् ॥३
तव श्रिया सुदृशो देव देवाः पुरू दधाना अमृतं सपन्त ।
होतारमग्निं मनुषो नि षेदुर्दशस्यन्त उशिजः शंसमायोः ॥४
न त्वद्धोता पूर्वो अग्ने यजीयान् न काव्यैः परो अस्ति स्वधावः ।
विशश्च यस्या अतिथिर्भवासि स यज्ञेन वनवद् देव मर्तान् ॥५
वयमग्ने वनुयाम त्वोता वसूयवो हविषा बुध्यमानाः ।
वयं समर्ये विदथेष्वह्नां वयं राया सहसस्पुत्र मर्तान् ।६।१६

हे अग्ने तुम प्रकट होते ही वरुण के समान होते हो । समृद्ध होकर मित्र के समान होते हो । सब देवता तुम्हारे पद चिन्हों पर चलते हैं । हे बल के पुत्र अग्निदेव ! तुम हविदाता यजमान के लिए इन्द्रके समान ही पूजनीय हो ।१। हे अग्ने ! तुम कन्याओं के अर्यमा अर्थात् विधान-कर्त्ताके तुल्य हो । गोपनीय नाम धारण करने वाले हो । तुत जब पति-पत्नी को समान मन वाला बनाते हो, तब तुम्हें घृत, दुग्ध द्वारा बन्धु के समान सींचते हैं ।२। हे अग्ने ! मरुद्गण तुम्हारे आश्रय हेतु अन्तरिक्ष का शोधन करते हैं । हे रुद्र ! विष्णु का व्यापक पद तुम्हारे निमित्त अवस्थित हुआ है, उसके द्वारा तुम प्रजाओं के बल का पालन करो ।३। हे अग्ने ! इन्द्रादि देवता भी तुम्हारे समृद्ध होने पर ही दर्शनोय होते हैं । वे देवता लोग तुमसे अनन्य स्नेह करते हुए अमृतको प्राप्त करते हैं । फल की कामना करने वाले यजमानके निमित्त ऋत्वि-जगण हवियाँ देते हुए होता रूप अग्नि की सेवा करते हैं ।४। हे अग्ने ! तुम्हारे सिवाय अन्य कोई होता नहीं है । कोई यज्ञ करने वाला भी तुम्हारे समान प्राचीन नहीं । हे अन्नवान् अग्ने ! भविष्य में तुम्हारे सिवाय कोई अन्य स्तुति का पात्र नहीं होगा । तुम जिसके अतिथि रूप होते हो, वह ऋत्विक् यज्ञ कर्म द्वारा अपने शत्रुओं का नाश करने में समर्थ होता है ।५। हे अग्ने ! हम जब तुम्हारा आश्रय प्राप्त कर लेंगे

तब शत्रुओं को पीड़ित करेंगे। हम धन की इच्छा करते हैं। हम तुम्हें हविरन्न द्वारा बढ़ाते हैं। हम युद्ध में विजय प्राप्त करें और नित्यप्रति यज्ञ द्वारा बल लाभ करें। हे बल के पुत्र अग्ने! हम धन तथा सन्तान प्राप्त करें।६।   (१६)

यो न आगो अभ्येनो भरात्यधीदघमघशंसे दधात।
जही चिकित्वो अभिशस्तिमेतामग्ने यो नो मर्चयति द्वयेन॥७
त्वामस्या व्युषि देव पूर्वे दूतं कृण्वाना अयजन्त हव्यैः।
संस्थे यदग्न ईयसे रयीणां देवो मर्तैर्वसुभिरिध्यमानः॥८
अव स्पृधि पितरं योधि विद्वान् पुत्रो यस्ते सहसः सून ऊहे।
कदा चिकित्वो अभि चक्षसे नोऽग्ने कदाँ ऋतचिद् यातयासे॥९
भूरि नाम वन्दमानो दधाति पिता वसो यदि तज्जोषयासे।
कुविद् देवस्य सहसा चकानः सुम्नमग्निर्वनते वावृधानः॥१०
त्वमङ्ग जरितारं यविष्ठ विश्वान्यग्ने दुरिताति पर्षि।
स्तेना अदृश्रन् रिपवो जनासोऽज्ञातकेता वृजिना अभूवन्॥११
इमे यामासस्त्वद्रिगभूवन् वसवे वा तदिदागो अवाचि।
नाहायमग्निरभिशस्तये नो न रीषते वावृधानः परा दात्॥१२॥१७

जो मनुष्य हमारा अपराध करता है या हमारे प्रति पाप व्यवहार करता है, उस पापी मनुष्य के प्रति अग्निदेव पाप-पुण्य के व्यवहार को न देखें। हे अग्ने! तुम मेधावी हो जो हमको पाप कर्म अथवा अपराध द्वारा शुभ कर्मोंसे रोके, उसे नष्ट करदो।७। हे अग्ने! प्राचीन यजमान उषाकाल मेंयज्ञ करते हुए तुम्हें देवदूत बनाते हैं। तुम हवि ग्रहण करने के पश्चात् यजमानों द्वारा प्रवृद्ध होते हुए चलते हो।८। हे बलके पुत्र! तुम सबके पिता समान हो। जो मेधावी पुत्र तुमको हविर्दान करता है तुम उसे सङ्कटसे पार करते हुए पापसे हटाते हो। हे अग्ने! तुम हमको कब देखोगे और कब श्रेष्ठ मार्ग पर प्रेरित करोगे?।९। हे अग्ने! तुम उत्तम वास देने वाले हो। तुम पालनकर्त्ता हो। तुम्हारे नाम की स्तुति करने पर दी जाने वाली हवियों को तुम भक्षण करते हो। यजमान

उससे पुत्रवान् होता है। यजमान के बहुत हविरन्न के इच्छुक तथा बढ़ाने वाले अग्निदेव शक्तिशाली होकर सुख देते हैं।१०।हे अत्यन्त युवा अग्निदेव शक्तिशाली होकर सुख देते हैं।१०। हे अत्यन्त युवा अग्नि-तुम स्वामी हो। तुम स्तुति करने वालों पर कृपा करने के लिए सभी विघ्नों को बचाते हो। चोर और शत्रु रूप मनुष्य सब हमारे द्वारा रोके जाते हैं।११। यह स्तोत्र तुम्हारे सामने पहुँचाते हैं। हम अपने अपराधों को तुम्हारे सम्मुख निवेदन करते हैं। हमारी स्तुति से प्रवृद्ध हुए अग्निदेव हमको हिंसकों के साथ जाने से बचावें।१२। (१७)

सूक्त ४

(ऋषि–वसुश्रुत आत्रेयः। देवता–अग्निः। छन्द–त्रिष्टुप्)

त्वामग्ने वसुपतिं वसूनामभि प्र मन्दे अध्वरेषु राजन्।
त्वया वाजं वाजयन्तो जयेमाऽभि ष्याम पृत्सुतीर्मर्त्यानाम्॥१
हव्यवाडग्निरजरः पिता नो विभुर्विभावा सुदृशीको अस्मे।
सुगार्हपत्याः समिषो दिदीह्यस्मद्र्यक् मिमीहि श्रवांसि॥२
विशां कविं विश्पतिं मानुषीणां शुचिं पावकं घृतपृष्ठमग्निम्।
नि होतारं विश्वविदं दधिध्वे स देवेषु वनते वार्याणि॥३
जुषस्वाग्न इलया सजोषा यतमानो रश्मिभिः सूर्यस्य।
जुषस्व नः समिधं जातवेद आ च देवान् हविरद्याय वक्षि॥४
जुष्टो दमूना अतिथिर्दुरोण इमं नो यज्ञमुप याहि विद्वान्।
विश्वा अग्ने अभियुजो विहत्या शत्रूयतामा भरा भोजनानि॥
।५।१८

हे अग्निदेव! तुम धनों के स्वामी हो। इस यज्ञ में हम तुम्हारी स्तुति करते हैं। हम अन्न की कामना करने वाले हैं, तुम्हारे अनुकूल होने से हमको अन्नका लाभ होगा और हम शत्रु सेनाको भगा सकेंगे।।१। हवियों को वहन करने वाले अग्नि हमारी रक्षा करें। वे हमारे सामने सर्वव्यापक रूप से तथा प्रकाश युक्त होते हुए श्रेष्ठ दर्शन करने वाले हों। हे अग्ने! तुम सुन्दर अन्नको प्रकट करो, हमको प्रचुर अन्न प्रदान करो २। हे ऋत्विजो! तुम मनुष्यों के ईश्वर, पवित्र तथा

मेधावी मनुष्य को पवित्र करने वाले यज्ञ सम्पादन, सर्वज्ञानी और घृत की कामना करने वाले अग्नि को धारण करो। वे अग्नि हमारे बीच एकत्रित धन को हमारे लिए समान भाव से बाँटते है।३। हे अग्नि ! इला के प्रतिमान हुए तुम सूर्य की किरणों द्वारा क्रियावान् होते हुए स्तुति को ग्रहण करो, हमारी समिधा को ग्रहण करते हुए हविर्भक्षण के निमित्त देवताओं को बुलाओ तथा हवियों के वहन करने वाले होओ।४। हे अग्ने ! तुम विद्वान् हो। तुम घर आये हुए अतिथि के समान पूजनीय होकर हमारे यज्ञ स्थान में आओ। तुम सब शत्रुओं का नाश करते हुए शत्रुता का व्यवहार करने वाले सब मनुष्यों के धन को छीन लो।५। (१८)

वधेन दस्युं प्र हि चातयस्व वयः कृण्वानस्तन्वे स्वायै।
पिपर्षि यत् सहसस्पुत्र देवान् त्सो अग्ने पाहि नृतम वाजे अस्मान् ॥६

वयं ते अग्न उक्थैर्विधेम वयं हव्यैः पावक भद्रशोचे।
अस्मे रयिं विश्ववारं समिन्वास्मे विश्वानि द्रविणानि धेहि ॥७
अस्माकमग्ने अध्वरं जुषस्व सहसः सूनो त्रिषधस्थ हव्यम्।
वयं देवेषु सुकृतः स्याम शर्मणा नस्त्रिवरूथेन पाहि ॥८
विश्वानि नो दुर्गहा जातवेदः सिन्धुं न नावा दुरितातिपर्षि।
अग्ने अत्रिवन्नमसा गृणानोऽस्माकं बोध्यविता तनूनाम् ॥९
यस्त्वा हृदा कीरिणा मन्यमानोऽमर्त्यं मर्त्यो जोहवीमि।
जातवेदो यशो अस्मासु धेहि प्रजाभिरग्ने अमृतत्वमश्याम् ॥१०
यस्मै त्वं सुकृते जातवेद उ लोकमग्ने कृणवः स्योनम्।
अश्विनं स पुत्रिणं वीरवन्तं गोमन्तं रयिं नशते स्वस्ति ॥११॥१९

हे अग्ने ! तुम अपने पुत्र स्वरूप यजमान को अन्न देते और शस्त्रों द्वारा असुरों का नाश करते हो। तुम बल के पुत्र हो जिस कारण देवताओं को बढ़ाते हो, हे श्रेष्ठदेव ! उसी कारण हम साधकों की रण-भूमि में रक्षा करो।६। हे अग्ने ! हम श्रेष्ठ वचनों द्वारा तुम्हारी स्तुति करेंगे। हे कल्याणकारी एवं तेजसे अत्यन्त युक्त अग्निदेव ! तुम हमको

सबको वरण करने योग्य ऐश्वर्य प्राप्त कराओ। हमको सब प्रकार के धन प्रदान करो।७। हे अग्ने ! हमारे यज्ञ स्थानमें रक्षक पद को ग्रहण करो। जल, स्थल, पर्वत इन तीनों में निवास करने वाले तुम हमारे हविरन्न का सेवन करो। हम देवताओं के मिमित्त श्रेष्ठ कर्मों के करने वाले बनें। तुम हमारी तीनों तापों से रक्षा करो। सुन्दर आवास युक्त घर देकर हमारा पोषण करो।८। हे सम्पूर्ण ऐश्वर्यों के स्वामी अग्नि-देव ! जैसे मल्लाह नाव द्वारा सबको नदी के पार लगाता है, वैसे ही तुम हमको समस्त बाधाओं से पार लगाओ। तुम अत्रि के समान हमारे स्तोत्र द्वारा नमस्कृत होकर शरीरो की रक्षा करने वाले बनो।९। हे अमर अग्ने ! हम मनुष्य मरणधर्मा हैं। हम स्तुतियों से परिपूर्ण हृदय द्वारा नमस्कार करते हुए बारम्बार तुम्हारा आह्वान करते हैं। हे ऐश्वर्यों के स्वामिन् ! हमको अन्न और यश प्रदान करो। हे अग्ने ! हम तुम्हारे अविनाशी स्वरूप का ध्यान करते हुए सन्तानसे युक्त होकर सदा स्थिर मन वाले रहें।१०। हे ऐश्वर्यो के उत्पन्न करने वाले अग्नि-देव ! जिस उत्तम कर्म करने वाले यजमान पर तुम कल्याणमय कृपा करते हो, वह यजमान अश्व, सन्तान, बल, गौ तथा ऐश्वर्य को प्राप्त करता है।११। (१९)

सूक्त ५

(ऋषि—वसुश्रुत आत्रेयः। देवता—आप्रीसूक्तम्। छन्द—गायत्री)

सुसमिद्धाय शोचिषे घृतं तीव्रं जुहोतन। अग्नये जातवेदसे ॥१

नराशंसः सुषूदतीमं यज्ञमदाभ्यः। कविर्हि मधुहस्त्यः ॥१

ईलितो अग्न आ वहेन्द्रं चित्रमिह त्रियम्। सुखै रथेभिरूतये॥३

ऊर्णम्रदा वि प्रथस्वाऽभ्यर्का अनूषत। भया नः शुभ्र सातये ॥४

देवीर्द्वारो वि श्रयध्वं सुप्रायणा न ऊतये। प्रप्रयज्ञं पृणीतन५।२०

हे ऋत्विजो ! ऐश्वर्योपादक, तेजस्वी एवं प्रकाशवान् अग्नि के निमित्त घृतयुक्त अन्न से यज्ञ करो।१। सब मनुष्यों से प्रशंसा के योग्य अग्नि हमारे इस यज्ञ को प्रज्वलित करे वे अग्नि, कर्म-कुशल, विद्वान्

तथा कभी भी पीड़ित न होने वाले हैं ।२। हे अग्ने तुम स्तुति के पात्र हो । तुम इस लोक में हमारी रक्षा के निमित्त अद्भुत एवं सबके प्रिय इन्द्र को सुखकारी रथ द्वारा इस यज्ञ स्थान में ले आओ ।३। हे अग्ने ! तुम उनके समान मृदु एवं सुखकारक होते हुए रक्षक वनो । हे शुभ्र ! हम स्तोतागण ! तुम्हारा स्तवन करते हैं तुम विविध प्रकार से वृद्धि को प्राप्त होते हुए हमको धनैश्वर्य प्राप्त कराओ ।४। हे हवियो ! तुम उत्तम गतिवाली, यज्ञ द्वार की रक्षिका एवं श्रेष्ठ कर्म वाली हो तुम सब हमारी रक्षा के निमित्त अपने विविध कार्यों द्वारा यज्ञकी परिचर्या करो ।५।　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　(२०)

सुप्रतीके वयोवृधा यह्वी ऋतस्य मातरा। दोषामुषासमीमहे ॥६
वातस्य पत्मन्नीलिता दैव्या होतारा मनुषः ।
इमं नो यज्ञमा गतम् ॥७
इला सरस्वती मही तिस्रो देवीर्मयोभुवः । बर्हिः सीदन्त्वस्रिधः॥८
शिवस्त्वष्टरिहा गहि विभुः पोष उत त्मना । यज्ञेयज्ञे न उदव॥९
यत्र वेत्थ वनस्पते देवानां गुह्या नामानि। तत्रहव्यानि गामय॥१०
स्वाहाग्नये वरुणाय स्वाहेन्द्राय मरुद्भ्यः । स्वाहा देवेभ्यो हविः ॥११॥२१

सुन्दर रूप वाली, अन्नों को बढ़ाने वाली, महान् कर्मों के करने में सामर्थ्यवती जल की निर्मात्री रात्रि और उषा देवियों की हम उत्तम स्तुति द्वारा पूजा करते हैं ।६। हे अग्नि आदित्य रूप दो होताओ ! तुम दोनों हमारे द्वारा पूजित हुए वायु-मार्ग से चलते हो । तुम दोनों हमारे इस यज्ञ स्थान को प्राप्त होओ ।७। इला, सरस्वती, मही तीनों देवियाँ सुख सम्पन्न करने वाली हों और वे हिंसा आदि कर्मोंको न करती हुई, बुद्धिपूर्वक हमारे यज्ञ स्थानमें स्थापित हों ।८। त्वष्टादेव ! तुम व्यापक सामर्थ्य वाले, कल्याणकारी और सर्वपोषक होकर यहाँ आगमन करो और हमारे श्रेष्ठ यज्ञादि कर्मों में उत्तम पद पर प्रतिष्ठित होकर हमारे रक्षक बनो ।९। हे वनस्पते ! तुम जहाँ कहीं भी हो देवताओं के गुप्त

चिह्नों को बुद्धि पूर्वक जानते हो, हव्यादि यज्ञ साधनों को प्राप्त कराओ ।१०। यह स्वाहाकार युक्त हवि अग्नि और वरुण की दी हुई है । यह हवि स्वाहा रूप से मरुद्गण के निमित्त दी गई है । स्वाहाकार युक्त हवि देवताओं को दी गई है ।११। (२१)

सूक्त ६

(ऋषि–वसुश्रुत आत्रेयः । देवता–अग्निः । छन्द–,पंक्तिः)

अग्निं तं मन्ये यो वसुरस्तं यं यन्ति धेनव ।
अस्तमर्वन्त आशवो ऽस्तं नित्यासो वाजिन इषंस्तोतृभ्य आ भर
सो अग्निर्यो वसुर्गृणे सं यमायन्ति धेनवः ।
समर्वन्तो रघुद्रुवः सं सुजातासः सूरय इषं स्तोतृभ्य आ भर ।।२
अग्निर्हि वाजिनं विशे ददाति विश्वचर्षणिः ।
अग्नी राये स्वाभुवं स प्रीतो याति वार्यमिषं स्तोतृभ्य आ भर।३
आ ते अग्न इधीमहि द्युमन्तं देवाजरम् ।
यद्ध स्य पनीयसी समिद् दीदयति द्यवीषं स्तोतृभ्य आ भर ।।४
आ ते अग्न ऋचा हविः शुक्रस्य शोचिषस्पते ।
सुश्चन्द्र दस्म विश्पते हव्यवाट् तुभ्यं स्तोतृभ्य आ भर ।५।२२

जो उत्तम निवास देने वाले हैं जो सबको घर के समान आश्रय रूप हैं, जिन्हें गायें, द्रुतगामी अश्व तथा प्रतिदिन हवि देने वाले यजमान आहूत करते हैं उन अग्नि की हम पूजा करते हैं । हे अग्ने ! स्तोताओं के लिए तुम अन्न और कामना योग्य धन प्राप्त कराओ ।१। जो अग्नि निवासदाता के रूप में आहूत होते हैं जिनके समीप गौएँ और शीघ्रगामी अश्व एकत्र होकर आते हैं, जिनके सत्संग के निमित्त विद्वज्जन भी उपस्थित होते हैं, वे देवता अग्नि ही है । हे अग्ने ! तुमस्तुति करने वालो को अभिलषित अन्नादि प्राप्त कराओ ।२। सबके कर्मों के देखने वाले अग्नि मनुष्यों को अन्न सन्तान देते हैं । वे प्रसन्न होकर सबके द्वारा ग्रहण करने योग्य धन प्रदान करने के लिए प्रस्थान करते हैं । हे अग्ने ! स्तुतिकर्त्ताके लिए अभिलषित अन्नादि पदार्थ प्राप्त

कराओ ।३। हे अग्ने तुम अजर एवं प्रकाश से पूर्ण हो । हम तुम्हें सभी श्रेष्ठ भावों द्वारा प्रज्वलित करते हैं । तुम्हारा प्रकाश पूजनीय है। वह आकाश में प्रकाशित होता है । हे अग्ने ! स्तुति करने वालोंको इच्छित धनादि पदार्थ प्राप्त कराओ ।४। हे अग्ने ! तुम तेज पुंजों के अधीश्वर हो । तुम शत्रुओं को नष्ट करने वाले, प्रजाओंके पालनकर्त्ता, प्रसन्नता-प्रद हवियों के वहन करने वाले तथा प्रकाशवान् हो । तुम्हारे निमित्त मंत्रों द्वारा हवियांदी जाती हैं । हे अग्ने ! तुम स्तुति करने वाले श्रेष्ठ जनों को अभिलषित अन्न धन प्राप्त कराओ ।५। (२२)

ओ त्ये अग्नयोऽग्निषु विश्वं पुष्यन्ति वार्यम् ।
ते हिन्विरे त इन्विरे त इषण्यन्त्यानुषगिषं स्तोतृभ्य आ भर॥६
त्व त्ये अग्ने अर्चयो महि व्राधन्त वाजिनः ।
ये पत्वभिः शफानां व्रजा भुरन्त गोनामिषं स्तोतृभ्य आ भर ॥७
नवा नो अग्न आ भर स्तोतृभ्यः सुक्षितीरिषः ।
ते स्याम य आनृचुस्त्वादूतासो दमेदम इषं स्तोतृभ्य आ भर ॥८
उभे सुश्चन्द्र सर्पिषो दर्वी श्रीणीष आसनि ।
उतो न उत् पुपूर्या उक्थेषु शवसस्पत इषं स्तोतृभ्य आ भर ॥९
एवाँ अग्निमजुर्यमुर्गीर्भिर्यज्ञेभिरानुषक् ।
दधदस्मे सुवीर्यमुत त्यदाश्वश्व्यमिषं स्तोतृभ्य आ भर ।१०।२३

यह लौकिक अग्नि गार्हपात्यादि अग्नि में सभी वरण करने योग्य धनों को पुष्ट करते हैं । यह अग्नि प्रीति पूर्वक सब ओर व्याप्त होते हैं और हविरन्न की कामना करते हैं । हे अग्ने ! स्तुति करने वालों को अभिलषित अन्नादि प्राप्त कराओ।६। हे अग्ने! तुम्हारी किरणें अन्नवान् होकर बढ़ें । तुम्हारी किरणें हबन की अभिलाषा करने वाली हों । हे अग्ने ! तुम स्तुति साधकोंके लिए अभिलषित अन्नादि प्राप्त कराओ।७। हे अग्ने ! हम तुम्हारी स्तुति करने वाले हैं । तुम हमको अन्न युक्त नवीन घर प्रदान करो, जिससे हम सभी यज्ञों में पूजा करे और दूत रूप से तुम्हें प्राप्त करें । हे अग्ने ! स्तुति साधकों को अभिलषित

धनादि प्राप्त कराने वाले होओ ।८। हे अग्ने ! तुम प्रसन्नता प्रदान करते हो । तुम शत्रुओं का नाश करने के लिए दर्वीद्वय को मुख में रखते हो । तुम बल के रक्षक हो । इस यज्ञमें हमको फल देते हुए परिपूर्ण करो । हे अग्ने ! स्तुति साधनों के लिए इच्छित अन्न-धन लाभ कराओ ।९। इस प्रकार विद्वान् उत्तम वाणियों द्वारा अग्नि के समक्ष उपस्थित होकर उन्हे प्रतिष्ठित करते हैं । वे अग्नि हम साधकों को सुन्दर सन्तान और द्रुतगामी वाले अश्व प्रदान करें । हे अग्ने ! स्तुति वालों को तुम अभिलषित धन प्राप्त कराओ ।१०। (२३)

सूक्त ७

(ऋषि–इषः । देवता–अग्निः । छन्द–अनुष्टुप्, पंक्तिः)

सखायः सं वः सम्यञ्चमिषं स्तोमं चाग्नये ।
वर्षिष्ठाय क्षितीनामूर्जो नप्त्रे सहस्वते ॥१
कुत्रा चिद् यस्य समृतौ रण्वा नरो नृषदने ।
अर्हन्तश्चिद् यमिन्धते संजनयन्ति जन्तवः ॥२
सं यदिषो वनामहे सं हव्या मानुषाणाम् ।
उत द्युम्नस्य शवस ऋतस्य रश्मिमा ददे ॥३
सः स्मा कृणोति केतुमा नक्तं चिद् दूर आ सते ।
पावको यद् वनस्पतीन् प्र स्मा मिनात्यजरः ॥४
अव स्म यस्य वेषणे स्वेदं पथिषु जुह्वति ।
अभीमह स्वजेन्यं भूमा पृष्ठेव रुरुहुः ॥५॥२४

हे समान भाव वाले मित्रो ! तुम यजमानके लिए अत्यन्त बढ़े हुये, शक्तिशाली, बलके पुत्र अग्नि को, पूजन योग्य हविरन्न देते हुए उनकी स्तुति करो ।१। जिन्हें पाकर ऋत्विग्गण प्रसन्न होते हैं, जिन्हें यज्ञ गृह में पूजते हुये प्रज्वलित करते हैं, जिन्हें सर्वजन मिलकर प्रधान कर्म वाले मानते हैं, वे अग्नि हैं ।२। जब हम अग्नि के निमित्त हव्य देते हैं और जब वे हमारे हव्य को भक्षण करते हैं, तब वे प्रकाशवान् अग्नि अन्न के बल से रश्मियों को ग्रहण करते हैं ।३। जब अजर और पवित्र

अन्य वनस्पतियों को भस्म करते हैं, तब वे रात्रि के समय भी अन्धकार को दूर करते हुए सब ओर प्रकाश को फैलाते हैं । अग्नि की परिचर्या में सींचे जाने वाले घृत को अध्वर्यु गण ज्वालाओं में अवस्थित करते हैं । वैसे पुत्र पिता के अङ्क को प्राप्त होता है, वैसे ही घृतधारा अग्नि की गोद में गिरती है ।४-५। (१४)

यं मर्त्यः पुरुस्पृहं विदद् विश्वस्य धायसे ।
प्र स्वादनं पितूनामस्यतातिं चिदायवे ॥६
स हि ष्मा धन्वाक्षितं दाता न दात्या पशुः ।
हिरिश्मश्रुः शुचिदन्नृभुरनिभृष्टतविषिः ॥७
शुचिः ष्म यस्मा अत्रिवत् प्र स्वधितीव रीयते ।
सुषूरसूत माता क्राणा यदानशे भगम् ॥८
आ यस्ते सर्पिरासुतेऽग्ने शमस्ति धायसे ।
ऐषु द्युम्नमुत श्रव आ चित्तं मर्त्येषु धाः ॥९
इति चिन्मन्युमध्रिजस्त्वादातमा पशुं ददे ।
आदग्ने अपृणतोऽत्रिः सासह्याद् दस्यूनिषः सासह्यान्नॄन् ॥१०।२५

अग्निदेव अनेकों द्वारा कामना के योग्य, सबके धारण करने वाले, अन्नों को चखने वाले एवं यजमानों को सुन्दर निवास देने वाले हैं । यजमान उनके गुणों को भली प्रकार जानते हैं ।६। तृणों को उखाड़ने वाले पशुओं के समान अग्नि जलसे रहित तथा तिनके और काठसे परिपूर्ण प्रदेश को पृथक् करते हैं । वे सुवर्ण वर्ण की मूछों वाले, उज्ज्वल दाँतों वाले महान् है । उनका बल किसी के सामने भी फीका नहीं पड़ता ।७। जो कुल्हाड़े के समान वृक्षादि को विनष्ट कर दते हैं, जिनके निकट लोग अत्रि के समान जाते हैं, वे अग्नि हैं । वे दीप्तिमान् अग्नि हविरत्न को ग्रहण करते तथा संसारका कल्याण करने वाले हैं । माता रूप अरणि ने उन्हीं अग्नि को उत्पन्न किया था ।८। हे अग्ने ! तुम हवि भक्षण करने वालेहो । तुम सबके धारणकर्त्ता हो । हमारी स्तुतियां तुमको प्रसन्न करने वालीहों । तुम स्तुति करनेवालों

को मन, अन्न और हार्दिक स्नेह प्रदान करो ।९। हे अग्ने ! अन्नों द्वारा न किये गये स्तोत्रोंको उच्चारण करने वाले ऋषिगण तुमसे पशु प्राप्त करते हैं जो अग्नि को हवियाँ नहीं देता उस दुष्ट को अत्रि अपने वश करे तथा अन्य विद्वेषियों को भी वशीभूत करलें ।१०। (२५)

सूक्त ८

(ऋषि—इष आत्रेयः । देवता—अग्निः । छन्द—जगती)

त्वामग्न ऋतायवः समीधिरे प्रत्नं प्रत्नास ऊतये सहस्कृत ।
पुरुश्चन्द्रं यजतं विश्वधायसं दमूनसं गृहपतिं वरेण्यम् ॥१
त्वामग्ने अतिथिं पूर्व्यं विशः शोचिष्केशं गृहपतिं नि षेदिरे ।
बृहत्केतुं पुरुरूपं धनस्पृतं सुशर्माणं स्ववसं जरद्विषम् ॥२
त्वामग्ने मानुषीरीलते विशो होत्राविदं विविचिं रत्नधातमम् ।
गुहा सन्तं सुभग विश्वदर्शतं तुविष्वणसं सुयजं घृतश्रियम् ॥३
त्वामग्ने धर्णसिं विश्वधा वयं गीर्भिर्गृणन्तो नमसोप सेदिम ।
स नो जुषस्व समिधानो अङ्गिरो देवो मर्तस्य यशसा सुदीतिभिः४
त्वमग्ने पुरुरूपो विशेविशे वयो दधासि प्रत्नथा पुरुष्टुत ।
पुरूण्यन्ना सहसा विराजसि त्विषिः सा ते तित्विषाणस्य नाधृषे५
त्वामग्ने समिधानं यविष्ठ्य देवा दूतं चक्रिरे हव्यवाहनम् ।
उरुज्रयसं घृतयोनिमाहुतं त्वेषं चक्षुर्दधिरे चोदयन्मति ॥६
त्वामग्ने प्रदिव आहुतं घृतैः सुम्नायवः सुषमिधा समीधिरे ।
स वावृधान ओषधीभिरुक्षितो ऽभि जयांसि पार्थिवा वि तिष्ठसे
।७।२६

हे अग्ने ! तुम प्राचीन हो । तुम बलवान हो, प्राचीन यज्ञ करने वाले तुम्हारा आश्रय प्राप्त करनेके निमित्त तुम्हें भलेप्रकार प्रज्वलित करतेहैं । तुम अत्यन्त स्नेह देनेवाले. यज्ञके योग्य वरण करने योग्यअन्न-वान् गृह स्वामी हो ।१। हे अग्ने ! यजमानों ने गृहपति रूप से स्थापित किया है । तुम अतिथिके समान पूजनीय हो । तुम दीप्तयुक्त शिखावाले प्राचीन, ज्वालामय, धन देनेवाले, वसुरूप, सुखदेने वाले, मनुष्योंके रक्षक

एवं जीर्ण वृक्षों को भस्म करने वाले हो ।२। हे अग्ने ! तुम शोधन धन के स्वामी हो । मनुष्य तुम्हारी पूजा करते हैं । तुम यज्ञ कर्म के ज्ञाता रत्न-दान करने वालों में श्रेष्ठ, गुफा में अवस्थित, प्रच्छन्न रहने वाले सबके लिए दर्शनीय, शब्द-युक्त यज्ञ करने वाले तथा घृत के ग्रहण करने वाले हो ।३। हे अग्ने ! तुम सबके धारण-कर्त्ता हो । हम बहुत स्तोत्र और नमस्कार द्वारा पूजन करते हुए तुम्हारे समक्ष उपस्थित होते हैं तुम हमको धन देते हुए प्रसन्न होओ । हे अग्ने ! तुम भले प्रकार प्रज्वलित होते हुए यजमानों की हवियों से प्रीति करने वाले होओ ।४। हे अग्ने ! तुम विभिन्न रूप वाले होकर सभी यजमानों को पहलेके समान अन्न देते हो । तुम बहुत बार पूजित हो । तुम अपने बलसे बहुत अन्नों के अधीश्वर हो । तुम प्रकाश से युक्त हो तथा तुम्हारे प्रकाश को कोई रोक नहीं सकता ।५। हे अग्ने ! तुम अत्यन्त युवा हो । तुम समान रूप से प्रज्वलित होते हो । देवताओंने तुम्हें हवि वहन करनेवाला बनाया । देवताओं ने तथा मनुष्यों ने अत्यन्त वेगवान अग्नि को दर्शनीय प्रदीप्त एवं बुद्धि का प्रेरक मानकर स्थापित किया ।६। हे अग्ने ! घृताहुति द्वारा सुखके इच्छुक यजमान तुम्हें प्रदीप्त करते हैं । सुन्दर काष्ठों द्वारा तुम्हें बढ़ाते हैं । तुम औषधियों द्वारा सींचे जाकर पृथ्वी पर अन्नों में व्याप्त होते हुए विविध बल-युक्त कर्मों को करते हो ।७। (२६)

।। तृतीयोऽष्टकः समाप्तः ।।

चतुर्थ अष्टक

(प्रथम अध्याय)

सूक्त ९

(ऋषि—गय आत्रेयः । देवता— अग्निः । छन्द—अनुष्टुप्, पंक्तिः)

त्वामग्ने हविष्मो देवं मर्तास ईलते ।
मन्ये त्वा जातवेदसं स हव्या वक्ष्यानुषक् ।।१

अग्निर्होता दास्वतः क्षयस्य वृक्तबर्हिषः ।
सं यज्ञासश्चरन्ति यं सं वाजासः श्रवस्यवः ॥२
उत स्म यं शिशुं यथा नवं जनिष्टारणी ।
धर्तारं मानुषीणां विशामग्निं स्वध्वरम् ॥३
उत स्म दुर्गृभीयसे पुत्रो न ह्वार्याणाम् ।
पुरू यो दग्धासि वना ऽग्ने पशुर्न यवसे ॥४
अध स्म यस्यार्चयः सम्यक् संयन्ति धूमिनः ।
यदीमह त्रितो दिव्युप ध्मातेव धमति शिशीते ध्मातरी यथा ॥५
तवाहमग्न ऊतिभिर्मित्रस्य च प्रशस्तिभिः ।
द्वेषोयुतो न दुरिता तुर्याम मर्त्यानाम् ॥६
तं नो अग्ने अभी नरो रयिं सहस्व आ भर ।
स क्षेपयत् स पोषयद् भुवद् वाजस्य सातय उतैधि पृत्सु नो वृधे ॥७।१

हे अग्ने ! तुम देवता हो । तुम प्रकाशवान हो । यज्ञ साधन करने वाले पदार्थों से युक्त हुए मनुष्य तुम्हारा स्तवन करते हैं । तुम जीव-मात्र के जानने वाले हो । हम तुम्हारी स्तुति करते हैं। तुम यज्ञ साधक हवियों के वहन करने वाले हो ।१। सभी यज्ञ अग्नि का अनुगमन करते हैं, यजमान के यज्ञ का सम्पादन करने वाले हव्य जिन अग्नि को प्राप्त होते हैं, वह अग्नि कुश उखाड़ने वाले यजमान यज्ञ के निमित्त देवताओं को बुलाने वाले बनते हैं ।२। भोजनादि को पकाकर मनुष्योंका पोषण करने वाले यज्ञ को सुशोभित करने वाले अग्नि को दो अरणियाँ शिशु के समान उत्पन्न करती हैं । हे अग्ने तुम टेढ़ी चाल वाले सर्प या अश्व के बालक के समान कठिनाई से धारण किये जाते हो । जैसे घास के ढेर पर छोड़ा हुआ पशु घास को खाता है, वैसे ही वनमें छोड़े जाने पर तुम वन को भक्षण करते हो ।४। अग्नि को शिखाएँ धूम्र-युक्त होती हैं । वे सुन्दर रूपवाली सब ओर व्यापतीहैं । सर्वत्र व्याप्त अग्नि अपनी ज्वालाओं को अन्तरिक्ष की ओर उठाते हैं । जैसे कर्मकार भट्टी

में अग्नि को बढ़ाते हैं, वैसे ही कर्मकार द्वारा प्रकट किए गये अग्नि के समान अग्निदेव स्वयं अपनेको तीक्ष्ण करते हैं ।५। हे अग्ने ! तुम सबसे मैत्री भाव रखते हो । स्तुति करने पर तुम्हारे आश्रय द्वारा हम शत्रु भाव रखने वाले व्यक्तियों के पार षड्यन्त्रों पर विजय प्राप्त करें। तुम्हारे रक्षा से धनों से बल पर हम बाहरी और भीतरी शत्रुओं को जीतें ।६। हे अग्ने ! तुम हवियों के वहन करने वाले एवं सशक्त हो । तुम हमारे पास प्रसिद्ध धनों को ले आओ । हमारे शत्रुओं को हराकर हमारा पालन करो । युद्ध में हमारी समृद्धि के साधन उपलब्ध करते हुए हमको शोभन अन्न प्रदान करो ।७। (१)

सूक्त १०

(ऋषि–गय आत्रेयः । देवता–अग्निः । छन्द–अनुष्टुप्,
उष्णिक्, पंक्तिः)

अग्न ओजिष्ठमा भर द्युम्नमस्मभ्यमध्रिगो ।
प्र नो राया परीणसा रत्सि वाजाय पन्थाम् ।।१
त्वं नो अग्ने अद्भुत क्रत्वा दक्षस्य मंहना ।
त्वे असुर्यमारुहत् क्राणा मित्रो न यज्ञियः ।।२
त्व नो अग्न एषां गयं पुष्टिं च वर्धय ।
ये स्तोमेभिः प्र सूरयो नरो मघान्यानशुः ।।३
ये अग्ने चन्द्र ते गिरः शुम्भन्त्यश्वराधसः ।
शुष्मेभिः शुष्मिणो नरो दिवश्चिद् येषां बृहत् सुकीर्तिर्बोधति
त्मना ।।४
तव त्ये अग्ने अर्चयो भ्राजन्तो यन्ति धृष्णुया ।
परिज्मानो न विद्युतः स्वानो रथो न वाजयुः ।।५
नू नो अग्न ऊतये सबाधसश्च रातये ।
अस्माकासश्च सूरयो विश्वा आशास्तरीषणि ।।६
त्वं नो अग्ने अङ्गिरः स्तुतः स्तवान आ भर ।
होतर्विभ्वासह रयिं स्तोतृभ्यः स्तवसे च न
उतैधि पृत्सु नो वृधे ।।७।२

हे अग्ने ! हमारे लिए अत्यन्त श्रेष्ठ धन लेकर आओ। तुम्हारी गति कभी मन्द नहीं होती। तुम हमको सब जगह उपलब्ध होने वाले धन से परिपूर्ण करो। अन्न प्राप्त करानेके लिए हमारे लिए उत्तममार्ग बनाओ ।१। हे अग्ने ! तुम सबसे अद्भुत हो। तुम हमारे यज्ञादि श्रेष्ठ कर्मों से प्रसन्न होते हुए हमको श्रेष्ठ धन प्रदान करो। तुम्हारा बल राक्षसों का संहार करने में समर्थ है। तुम आदित्य के समान उत्तम कर्म को नित्य पूर्ण करते हो ।२। हे अग्ने ! प्रसिद्ध स्तोत्र द्वारा तुम्हारी पूजा करने वाले साधकगण तुम्हारी स्तुति द्वारा उत्तमधन प्राप्त करते हैं इसलिये हमारे निमित्त भी धन की वृद्धि करते हुए हमारा पोषण करो। हे अग्ने ! हम साधक भी तुम्हारी स्तुति करते हैं ।३। हे अग्ने ! तुम सुखदाता हो। जो साधक तुम्हारी स्तुतियों का उच्चारण करते हैं, वे अश्व-युक्त ऐश्वर्य लाभ करते हैं। वे साधक अत्यन्त शक्ति शाली होकर अपनी शक्ति से शत्रुओं को मारते हैं। उन्हें स्वर्ग से भी अधिक यश प्राप्त होता हैं। हे अग्ने! तुमको गय नामक ऋषिने चैतन्य किया था ।४। हे अग्ने ! तुम्हारी चञ्चल गति वाली ज्वालाएँ भवंत्र स्थित विद्युत् के समान तथा शब्द करते हुए रथ के समान एवं अन्नकी कामना से गमन करने वाले मनुष्यों के साथ सर्वत्र जाती हैं ।५। हे अग्ने ! तुम हमारी शीघ्र रक्षा करो। हमको धन देकर हमारे दारिद्र्य को दूर करो। हमारे पुत्रादि एवं बान्धवादि तुम्हारी स्तुति करते हुये अपनी कामनाओं को प्राप्त हो ।६। हे अग्ने ! प्राचीन ऋषियों ने तुम्हारा स्तवन किया है, और अब के ऋषिगण भी तुम्हारा स्तवन करते हैं। जो धन ऐश्वर्यशाली व्यक्तियों को महान् बनाता है, वह धन हमारे लिये प्राप्त कराओ। तुम देवताओं को बुलाने वाले हो। हमको स्तुति करने में समर्थ करो। हम तुम्हारी पूजा करते हैं। तुम हमको समृद्ध बनाओ ।७। (२)

सूक्त ११

(ऋषि—सुतम्भर आत्रेयः। देवता—अग्निः। छन्द—जगती।)

जनस्य गोपा अजनिष्ट जागृविरग्निः सुदक्षः सुविताय नव्यसे ।
घृतप्रतीको बृहता दिविस्पृशा द्युमद् वि भाति भरतेभ्यः शुचिः १
यज्ञस्य केतुं प्रथमं पुरोहितमग्निं नरस्त्रिषधस्थे समीधिरे ।
इन्द्रेण देवैः सरथं स बर्हिषि सीदन्नि होता यज्ञथाय सुक्रतुः ॥२
असंमृष्टो जायसे मात्रोः शुचिर्मन्द्रः कविरुदतिष्ठो विवस्वतः ।
घृतेन त्वावर्धयन्नग्न आहुत धूमस्ते केतुरभवद् दिवि श्रितः ॥३
अग्निर्नो यज्ञमुप वेतु साधुया ऽग्निं नरो वि भरन्ते गृहेगृहे ।
अग्निर्दूतो अभवद्धव्यवाहनो ऽग्निं वृणाना वृणते कविक्रतुम् ॥४
तुभ्येदमग्ने मधुमत्तमं वचस्तुभ्यं मनीषा इयमस्तु शं हृदे ।
त्वां गिरः सिन्धुमिवावनीमहीरा पृणन्ति शवसा वर्धयन्ति च ॥५
त्वामग्ने अङ्गिरसो गुहा हितमन्वविन्दञ्छिश्रियाणं वनेवने ।
स जायसे मथ्यमानः सहो महत् त्वामाहुः सहसस्पुत्रमङ्गिरः ।
।६।३

बलशाली अग्नि सदा प्रबुद्ध रहते हैं । सबकी रक्षा करने वाले हैं, वे जन-कल्याण के निमित्त प्रादुर्भूत हुए हैं । घृत द्वारा प्रज्वलित होने पर वे तेज से युक्त होते हैं तथा ऋत्विजों के लिये पवित्र दीप्तिसे प्रकाशवान हैं ।१। अग्नि यजमानों द्वारा स्थापित होते हैं । वे यज्ञ के ध्वज रूप हैं । वे इन्द्रादि देवताओं के समान ही प्रभुता सम्पन्न है । ऋत्विजों ने तीन स्थानों में उन्हें स्थापित किया था । वे देवताओं को बुलाने वाले तथा शुभ कर्मों के कर्त्ता हैं । वे यज्ञ कर्म के लिए कुश पर स्थापित किये जाते हैं ।२। हे अग्ने ! माता रूप दो अरणियों के तुम जन्म लेते हो । तुम विद्वान् एवं पवित्र-कर्मा हो । तुम यजमानों द्वारा प्रज्वलित किये जाते हो । तुम्हें प्राचीन कालीन ऋषियों ने भी घृत द्वारा प्रवृद्ध किया था । तुम हवियों के वहन करने वाले हो । अन्तरिक्ष तक जाने वाला तुम्हारा धूम्र-ध्वज के समान महत्वशील हैं ।३। यज्ञ-स्थान में मनुष्य अग्नि की स्थापना करते हैं, वे सब कार्यों को सिद्ध करने वाले हमारे यज्ञ में पधारें । वे हवियों के वहन करने वाले देव-

ताओं के दूत स्वरूप हैं। स्तोता-गण उन्हें यज्ञ का सम्पादन करने वाले मानते हैं।४। हे अग्ने ! यह मधुर वचन तुम्हारे निमित्त प्रयुक्त है। यह स्तोत्र तुम्हारे हृदयको सुखी करें। जैसे समुद्रको नदियाँ परिपूर्ण करती हैं, वैसे ही हमारी स्तुतियाँ उन्हें बलवान बनाती हुई परिर्णपू करती हैं।५। हे अग्ने ! तुम गुफा में रहते हुए वन के आश्रय में अवस्थान करते हो, तुम्हें अङ्गिराओं ने प्रकट किया था। तुम मन्थन द्वारा महान् बल सहित प्रकट होते हो, इसी कारण तुम बल के पुत्र कहे आते हो।६। (३)

सूक्त १२

(ऋषि–सुतम्भर आत्रेयः। देवता—अग्निः। छन्द–त्रिष्टुप्)

प्राग्नये बृहते यज्ञियाय ऋतस्य वृष्णे असुराय मन्म।
घृतं न यज्ञ आस्ये सुपूतं गिरं भरे वृषभाय प्रतीचीम् ॥१
ऋतं चिकित्व ऋताभिश्चिकिद्धय्तस्य धारा अनु तृन्धि पूर्वीः।
नाहं यातुं सहसा न द्वयेन ऋतं सपाम्यरुषस्य वृष्णः ॥२
कया नो अग्न ऋतयन्नृतेन भुवो नवेदा उचथस्य नव्यः।
वेदा मे देव ऋतुपा ऋतूनां नाहं पतिं सनितुरस्य रायः ॥३
के ते अग्ने रिपवे वन्धनासः के पायवः सनिषन्त द्युमन्तः।
के धासिमग्ने अनृतस्य पान्ति क आसतो वचसः सन्ति गोपाः ।४
सखायस्ते विषुणा अग्न एते शिवासः सन्तो अशिवा अभूवन्।
अधूर्षत स्वयमेते वचोभिर्ऋजूयते वृजिनानि ब्रुवन्तः ॥५
यस्ते अग्ने नमसा यज्ञमीट्ट ऋतं स पात्यरुषस्य वृष्णः।
तस्य क्षयः पृथुरा साधुरेतु प्रसर्स्राणस्य नहुषस्य शेषः ।६।४

अग्निदेव अपने सामर्थ्य से अत्यन्त महान् कामनाओ के पूर्ण करने वाले वृष्टि करने में कारण-भूत तथा यज्ञके योग्य हैं। यज्ञ में डाले गये पवित्र घी के समान हमारी स्तुतियाँ भी अग्नि को प्रसन्न करने वाली हो।१। हे अग्ने ! हमारी स्तुतियों को जानो, और इन्हें ग्रहण करो। तुम प्रचुर जल-वर्षा के लिए हमारे अनुकूल होओ। हम यज्ञ में विघ्न

उपस्थित करने वाला कोई कार्य नहीं करते और न विधान के विरुद्ध ही कोई कार्य करते हैं। हे अग्ने ! तुम अभीष्ट-पूरक एवं प्रकाशवान हो। हम तुम्हारा स्तवन करते हैं।२। हे अग्ने ! तुम जल वर्षा करने वाले हो, तुम स्तुति के पात्र हो, तुम हमारे किस श्रेष्ठ अनुष्ठान द्वारा हमारी स्तुतियों को जानोगे ? तुम ऋषियों की रक्षा करने वाले हो। हमको जानने वाले होओ, हम तुम्हारा यजन करते हैं। क्या हम पशु आदि धनों के रक्षक अग्नि को नहीं जानते।३। हे अग्ने ! लोकों की रक्षा करने वाले कौन है ? शत्रुओंको बाँधने वाला कौन है? प्रकाश का प्रदाता कौन है ? असत्य व्यवहार करने वाले वे रक्षक कौन हैं ? अर्थात् इसका विवेचन करते हुए शुभाचरण करने वाले की रक्षा करो।४। हे अग्ने ! तुम्हारे मित्रजन पहिले तुम्हारी स्तुति नहीं करते थे, इसलिये दुःख पाते थे,फिर तुम्हारी उपासना करके हृष्ट-पुष्ट सुखीहुये। हम सर्वदा सत्य आचरण करने में तत्पर रहते हैं। फिर जो भी व्यक्ति अपने अविवेकसे हमको बुरा कहें, वे स्वयं अपनेही वचनों द्वारा विनष्ट हो जाँय।५। हे अग्ने ! तुम प्रकाशवान हो, तुम इच्छाओं की पूर्ति करने वाले हो। जो साधक अन्तःकरण द्वारा तुम्हारे यज्ञ का पालन करता हुआ तुम्हें पूजता है, उसका घर सम्पन्नहो जाता है जो तुम्हारी भली प्रकार सेवा कर रहा है, वह यजमान अभीष्ट सिद्ध करने वाला पुत्र रत्न प्राप्त करता है।६। (४)

सूक्त १३

(ऋषि—सुतम्भर आत्रेयः। देवता—अग्निः। छन्द—गायत्री)

अर्चन्तस्त्वा हवामहे ऽर्चन्तः समिधीमहि। अग्ने अर्चन्त ऊतये।१
अग्नेः स्तोमं मनामहे सिध्रमद्य दिविस्पृशः। देवस्य द्रविणस्यवः ॥२
अग्निर्जुषत नो गिरो होता यो मानुषेष्वा।
स यक्षद् दैव्यं जनम् ॥३
त्वमग्ने सप्रथा असि जुष्टो होता वरेण्यः। त्वया यज्ञं वि तन्वते।४

त्वामग्ने वाजसातमं विप्रा वर्धन्ति सुष्टुतम् ।
स नो रास्व सुवीर्यम् ॥५

अग्ने नेमिरराँ इव देवाँस्त्वं परिभूरसि । आ राधश्चित्रमृञ्जसे॥६॥५

हे अग्नि ! हम तुम्हारा पूजन करते हुए तुम्हें बुलाते हैं तथा स्तुति करते हुए साधक अपनी रक्षा के निमित्त तुम्हें चैतन्य करते हैं ।१। हम धन के इच्छुक होकर आकाश को छूने वाले एवं प्रकाशवान् अग्नि की बल-प्रदात्री स्तुति का उच्चारण करते हैं ।२। मनुष्यों के मध्य स्थापित हुए जो अग्नि देवताओं को आहूत करते हैं, वे अग्नि हमारे स्तोत्रों को स्वीकार करें । वे अग्नि यज्ञ साधक द्रव्यों के ज्ञाता देवताओं के पास हमारी स्तुतियों को पहुँचावें ।३। हे अग्ने ! तुम यशस्वी और महान् हो । तुम स्तुतिके पात्र एवं अन्न प्रदान करने वाले हो । स्तुति करने वाले विद्वान् तुम्हें सुन्दर स्तोत्र द्वारा बढ़ाते हैं । हे अग्ने ! तुम हमको श्रेष्ठ पराक्रमके प्रदाता होओ ।४-५। हे अग्ने ! जिस प्रकार परिधि चक्र के आरों से सब ओर लगी रहती है, उसी प्रकार तुम देवताओं के पालक हो । तुम हमको सब प्रकार के अद्भुत ऐश्वर्य को, प्रदान करो ।६। (५)

सूक्त १४

(ऋषि—सुतम्भरः, आत्रेयः । देवता—अग्निः । छन्द—गायत्री)

अग्निं स्तोमेन बोधय समिधानो अमर्त्यम्। हव्या देवेषु नो दधत् ।१

तमध्वरेष्वीलते देवं मर्ता अमर्त्यम् । यजिष्ठं मानुषे जने ॥२

तं हि शश्वन्त ईलते स्रुचा देवं घृतश्चुता ।
अग्निं हव्याय वोलहवे ॥३

अग्निर्जातो अरोचत घ्नन् दस्यूञ्ज्योतिषा तमः ।
अविन्दद् गा अपः स्वः ॥४

अग्निमीलेन्यं कविं घृतपृष्ठं सपर्यत । वेतु मे शृणवद्धवम् ।५

अग्निं घृतेन वावृधुः स्तोमेभिर्विश्वचर्षणिम् ।
स्वाधीभिर्वचस्युभिः ।६।६

हे मनुष्यों ! अविनाशी गुण वाले अग्निको स्तोत्र द्वारा चैतन्यकरो, प्रज्वलित होने पर वे दिव्य पदार्थों के धारण करने वाले होते हैं। वे हमारे लिए हव्य वहन करते हैं।१। प्रकाशवान्, अविनाशी, मनुष्यों में आराधना करने योग्य अग्नि की साधक गण यज्ञ स्थान में स्तुति करते हैं।२। अनेक स्तुति करने वाले साधक घृत-युक्त स्रुक सहित देवताओं को हवियाँ पहुँचाने के निमित्त प्रकाशवान अग्नि का स्तवन करते हैं।३। अग्नि अरणियों के मन्थन से आविर्भूत होते हैं। वे अपने प्रकाश से अंधेरे को दूर करते हैं, तथा यज्ञ में अनिष्ट करने वाले राक्षसों का नाश करते हुए प्रदीप्त होते हैं। किरण, जल और आकाश अग्नि के द्वारा ही प्रकट हुए हैं।४। हे साधको ! उन मेधावी तथा आराधना करने के योग्य देव का पूजन करो। वे घृत की आहुति से प्रदीप्त होते हुए उठते हैं। वे अग्नि हमारे स्तुति वचनों को श्रवण करें।५। घृत तथा स्तोत्र द्वारा ऋत्विग्गण स्तुतियों की कामना वाले सबके द्रष्टा अग्नि को संवर्द्धित करें।६।   (६)

सूक्त १५ [दूसरा अनुवाक]

(ऋषि–धरुण आङ्गिरसः । देवता—अग्निः ।
छन्द—त्रिष्टुप्)

प्र वेधसे कवये वेद्याय गिरं भरे यशसे पूर्व्याय ।
घृतप्रसत्तो असुरः सुशेवो रायो धर्ता धरुणो वस्वो अग्निः ॥१
ऋतेन ऋतं धरुणं धारयन्त यज्ञस्य शाके परमे व्योमन् ।
दिवो धर्मन् धरुणे सेदुषो नॄञ्जातैरजातां अभि ये ननक्षुः ॥२
अहोयुवस्तन्वस्तन्वते वि वयो महद् दुष्टरं पूर्व्याय ।
स संवतो नवजातस्तुतुर्यात् सिंहं न क्रुद्धमभितः परि ष्ठुः ॥३
मातेव यद् भरसे पप्रथानो जनंजनं धायसे चक्षसे च ।
वयोवयो जरसे यद् दधानः परि त्मना विषुरूपो जिगासि ॥४
वाजो नु ते शवसस्पात्वन्तमुरुं दोघं धरुणं देव रायः ।
पदं न तायुर्गुहा दधानो महो राये चितयन्नत्रिमस्पः ॥५।७

घृतरूप हविसे अग्नि प्रसन्न होते हैं। वे अत्यन्त बलशाली कल्याण रूप, धनों के स्वामी, निवासप्रद, हवियों के वहन करने वाले, स्तुतियों के पात्र, उज्ज्वल-दर्शी, श्रेष्ठ एवं तेजस्वी हैं। उन अग्निदेव के निमित्त हम स्तोत्र रचते हैं।१। जो यजमान आकाश के धारण करने वाले, यज्ञ स्थान में स्थापित होने वाले,नेता रूप देवगण को ऋत्विजों द्वारा आहूत करते हैं, वे यजमान यज्ञ के धारण करने वाले, सत्य स्वरूप अग्नि को यज्ञ स्थान में श्रेष्ठ पद पर स्थापित करते है।२। जो यजमान दैत्यों द्वारा दुष्प्राप्य हव्य अग्नि के लिये देते हैं, वे यजमान पवित्र होते हैं। नवोत्पन्न अग्नि क्रोधित सिंह के समान शत्रुओं को भगावें। जो शत्रु मेरे चारों ओर वर्तमान हैं, वे मुझसे दूर चले जाँय।३। अग्नि सर्वत्र प्रसिद्ध हैं। वे प्राणी-मात्र को माता के समान पालन करते हैं। उनकी रक्षा तथा दर्शन के लिए सभी उनकी स्तुति करते हैं। जब वे धारण करमे में समर्थ होते हैं, तब अन्नों को जीर्ण करते हैं। वे हर प्रकार के बल को पुष्ट करते हैं।४। हे अग्ने! तुम प्रकाशवान हो। कामनाओं की पूर्ति करने वाले तथा धन के धारण करने वाले हविरन्न तुम्हारे बल को पुष्ट करें। जैसे कोई अपहृत धन को छिपाकर उसकी रक्षा करता है, वैसे ही प्रचुर परिमाण में धन प्राप्त कराने के लिए सुन्दर मार्ग दिखाओ।५। (७)

सूक्त १६

(ऋषि—पूरुरात्रेयः। देवता—अग्निः। छन्द—अनुष्टुप्, पंक्तिः)

बृहद् वयो हि भानवे ऽर्चा देवायाग्नये।
यं मित्रं न प्रशस्तिर्मर्भितांसो दधिरे पुरः ॥१
स हि द्युभिर्जनानां होता दक्षस्य बाह्वोः।
वि हव्यमग्निरानुषग्भगो न वारमृण्वति ॥२
अस्य स्तोमे मघोनः सख्ये वृद्धशोचिषः।
विश्वा यस्मिन् तुविष्वणि समर्ये शुष्ममादधुः ॥३

अधा ह्यग्न एषां सुवीर्यस्य मंहना ।
तमिद् यह्वं न रोदसी परि श्रयो बभूवतुः ॥४
नू न एहि वार्यमग्ने गृणान आ भर।
ये वय वे च सूरयः स्वस्ति धामहे सचोतैधि पृत्सु नो वृधे ।५।८

जिन मित्रभूत अग्नि की उत्तम स्तुतियों द्वारा साधकगण स्तुति करते हैं, और उन्हें वेदी में स्थापित करने हैं, उन प्रकाशवान् अग्नि के लिये हवियाँ दी जाती हैं ।१। जो अग्नि अपने भुजबल के तेज से युक्त हैं, तथा जो देवताओं के लिये हवि वहन करते हैं, वे यज्ञ में यजमानों के लिये देवताओं को बुलाते हैं ।२ वे साधकों को सूर्य के समान वरण करने योग्य धनों को प्रदान करते हैं।३। सभी ऋत्विक हवि और स्तुतियों के द्वारा शब्द करने वाले अग्नि की भले प्रकार पुष्ट करते हैं, उन्हीं बढ़े हुए तेज वाले ऐश्वर्य सम्पन्न अग्नि की हम स्तुति करते हैं । उस अग्नि के साथ हम सख्य भाव रखते हैं ।४। हे अग्ने ! सबके द्वारा कामना किया हुआ धन यजमानों को दो । जैसे महान् सूर्य पर पृथ्वी और आकाश आश्रित हैं, वैसे ही तुम महान् के आश्रय से, हम अन्न और धन प्राप्त करते हैं । हमारे यज्ञ में तुम शीघ्र आगमन करो । हमारे लिए वरण करने योग्य धनों को प्राप्त कराओ । हम यजमान स्तोताओं को तुम युद्ध क्षेत्र में रक्षा साधनों से सम्पन्न करो । हम तुम्हारी स्तुति करते हैं ।५। (८)

सूक्त १७

(ऋषि—पूरुरात्रेयः । देवता—अग्निः । छन्द—अनुष्टुप्, पंक्तिः)

आ यज्ञैर्देव मर्त्य इत्था तव्यांसमूतये ।
अग्निं कृते स्वध्वरे पूरुरीलीतावसे ॥१
अस्य हि स्वयशस्तर आसा विधर्मन् मन्यसे ।
तं नाकं चित्रशोचिषं मन्द्रं परो मनीषया ॥२
अस्य वासा उ अर्चिषा य आयुक्त तुजा गिरा ।
दिवो न यस्य रेतसा बृहच्छोचन्त्यर्चयः ॥३

अस्य क्रत्वा विचेतसो दस्मस्य वसु रथ आ।
अधा विश्वासु हव्यो ऽग्निर्विक्षु प्र शस्यते ॥४
नू न इद्धि वार्यमासा सचन्त सूरयः।
ऊर्जो नपादभिष्टये पाहि शग्धि स्वस्तय
उतैधि पृत्सु नो वृधे ।५।६

हे देव ! मनुष्यगण रक्षा और ज्ञान के निमित्त उत्तम बल वाले अग्निदेव की स्तुति करते हैं, और ऋत्विज्-गण अपने तेज से प्रवृद्ध अग्नि को स्तुतियों से सन्तुष्ट करने के लिए यज्ञमें बुल ते हैं ।१। हे धर्म का अनुष्ठान करने वाले स्तोता-गण ! तुम्हारा यज्ञ कार्य श्रेष्ठ है, जिन अग्नि का अद्भुत तेज है जो स्तुति के योग्य हैं, तथा जो सदा दुःखों से दूर रहते हैं, उन अग्नि की अपनी श्रेष्ठ वुद्धि और सुन्दर वचन द्वारा स्तुति करते हो ।२। जो संसार की रक्षा करने वाले बल से परिपूर्ण हैं, जो सूर्य के समान प्रकाशवान हैं, जिनकी प्रदीप्ति संसार में व्याप्त हैं, जिन अग्नि की कान्ति संसार में प्रकाशित होती है, उन अग्नि के तेज से ही सूर्य भी प्रकाशमय होते हैं ।३। श्रेष्ठ बुद्धि वाले ऋत्विजगण उन तेजस्वी अग्नि का ही पूजन करते हुए, रथ युक्त धन-लाभ करते हैं। यज्ञ के लिए आहूत किये जाने वाले अग्नि आविर्भूत होते ही सब मनुष्यों द्वारा पूजित होते हैं ।४। हे अग्नि ! जिस घर को साधक-गण तुम्हारी पूजा करते हुए प्राप्त करते हैं, वह वरणीय धन को हमको भी शीघ्र प्रदान करो। हमको कामना किया हुआ अन्न दो। हमारी रक्षा करो। कल्याणकारी सुन्दर पशुओं की हम तुमसे कामना करते हैं। हे अग्ने ! युद्ध-भूमिमें उपस्थित रहते हुए तुम हमारी रक्षा करो ।५। (६)

सूक्त १८

(ऋषि—द्वितो मुक्तवाहा आत्रेयः। देवता—अग्निः। छन्द-अनुष्टुप् पंक्तिः)

प्रातरग्निः पुरुप्रियो विशः स्तवेतातिथिः।
विश्वानि यो अमर्त्यो हव्या मर्तेषु रण्यति ॥१
द्विताय मृक्तवाहसे स्वस्य दक्षस्य मंहना।

इन्दुं स धत्त आनुषक् स्तोता चित् ते अमर्त्य ॥२
तं वो दीर्घायुशोचिष गिरा हुवे मघोनाम् ।
अरिष्टो येषां रथो व्यश्वदावन्नीयते ॥३
चित्रा वा येषु दीधितिरासन्नुक्था पान्ति ये ।
स्तीर्णं बर्हिः स्वर्णरे श्रवांसि दधिरे परि ॥४
ये मे पञ्चाशतं ददुरश्वानां सधस्तुति ।
द्युमदग्ने महि श्रवो बृहत् कृधि मघोनां नृवदमृत नृणाम् ।५।१०

हे अग्ने ! तुम बहुतों के प्रिय हो। यजमानों को धन देने के लिए उनके घरों में जाते हो। इस अग्नि को प्रातः सवन में प्रज्वलित किया जाता है। अमरत्व गुण वाले अग्नि यजमानों में प्रतिष्ठित होकर हवि-रत्न की इच्छा करते हैं।१। हे अग्ने ! अत्रि पुत्र द्वित तुम्हारे लिए पवित्र हवि पहुँचाते हैं। तुम उनको अपने समान बल दो। क्योंकि वे सदैव ही तुम्हारे लिए सोमरस लेकर उपस्थित होते और तुम्हारी पूजा करते हैं।२। हे अग्ने तुम अश्व देने वाले, लम्बी चाल वाले, तथा तेजस्वी हो। हम अपने सम्पन्न यजमानों के लिये तुम्हें स्तोत्र द्वारा बुलाते हैं, जिससे उन यजमानों का रथ अहिंसित होता हुआ रणक्षेत्र में बढ़ता चला जाय।३। जो ऋत्विक् अनेक यज्ञ कार्यों को सम्पन्न करते हैं। जो स्तोत्रों का उच्चारण करते हुए उनकी रक्षा करते हैं, (अर्थात् उन्हें भूलते नहीं) उन ऋत्विजों द्वारा यजमानों को स्वर्ग प्राप्त कराने वाले यज्ञ में कुश के आसनों पर श्रेष्ठ हविरन्न स्थापित किया जाता है।४। हे अग्ने ! तुम अविनाशी हो। तुम्हारी स्तुति के पश्चात् जो यजमान मुझ स्तोता को पचास घोड़े दान स्वरूप दे, तुम उस दानी मनुष्य को दानादि से युक्त यशस्वी अन्न-धन दो।५। (१०)

सूक्त १६

(ऋषि-वव्रिरात्रेयः। देवता-अग्निः। छन्द-गायत्री, अनुष्टुप् विराड्रूपा)

अभ्यवस्थाः प्र जायन्ते प्र वव्रेर्वव्रिश्चिकेत ।
उपस्थे मातुर्वि चष्टे ॥१

जुहुरे वि चितयन्तो ऽनिमिषं नृम्णं पान्ति
आ दृलहां पुरं विविशुः ॥२
आ श्वैत्रयस्य जन्तवो द्यु मद् वर्धन्त कृष्टयः ।
निष्कग्रीवो बृहदुक्थ एना मध्वा न वाजयुः ॥३
प्रियं दुग्धं न काम्यमजामि जाम्योः सचा ।
धर्मो न वाजजठरो ऽदब्धः शश्वतो दभः ॥४
क्रीडन् नो रश्म आ भुवः सं भस्मना वायुना वेविदानः ।
ता अस्य सन् धृषजो न तिग्माः सुसंशिता वक्ष्यो वक्षणेस्थाः।५।११

पृथिवी रूप माता के निकट अवस्थित होकर जो अग्नि पदार्थ मात्र को देखते हैं, वे अग्नि वव्रि ऋषि की सङ्कटमय दशा को जानते हुये उनकी हवियाँ ग्रहण करें, और उन पर कृपा करें ।१। हे अग्ने ! जो साधक तुम्हारे प्रभाव को जानकर यज्ञ के लिए तुम्हें बुलाते हैं एवं जो साधक हविरन्न देते हुए स्तुतियो द्वारा तुम्हारे बल को पुष्ट करते हैं, वे शत्रुओं के दुर्गम दुर्गों में निशङ्क घुस जाते हैं ।२। स्तोत्र रचयिता मेधावीजन, अग्नि की साधना करने वाले काष्ठ में स्वर्ण रत्नादि के अलङ्कार धारण करने वाले, जन्म लेने वाले विद्वान मनुष्य अन्तरिक्ष में स्थिर विद्युत रूप अग्नि की शक्ति को स्तोत्र द्वारा बढ़ाते हैं ।३। दूध मिश्रित हविरन्न को जठरस्थ करने वाले अग्नि शत्रुओं द्वारा अहिंसित हैं, और शत्रुओं की हिंसा करने में समर्थ हैं । आकाश पृथ्वीके सहायक वे अग्नि दूधके समान उज्ज्वल और दोष रहित होते हुए हमारी स्तुति श्रवण करें ।४ हे अग्ने! तुम प्रदीप्तिमय हो तुम अपने भस्म वाले गुण से वन में क्रीड़ा करते हो । तुम वायु की प्रेरणा से प्रवृद्ध होकर हमारे सामने प्रतिष्ठित होओ । तुम्हारी जो ज्वालायें शत्रु का नाश करने वाली हैं,वे हम यजमानों के लिए शीतल हों ।५। (११)

सूक्त २०

(ऋषि-प्रयस्वन्त आत्रेयाः । देवता—अग्निः । छन्द—अनुष्टुप्, पंक्तिः)

यमग्ने वाजसातम त्वं चिन् मन्यसे रयिम् ।
तं नो गीर्भिः श्रवाय्य देवत्रा पनया युजम् ॥१
ये अग्ने नेरयन्ति ते वृद्धा उगस्य शवसः ।
अप द्वेषो अप ह्वरो ऽन्यव्रतस्य सश्चिरे ॥२
होतारं त्वा वृणीमहे ऽग्ने दक्षस्य साधनम् ।
यज्ञेषु पूर्व्यं गिरा प्रयस्वन्तो हवामहे ॥३
इत्था यथा त ऊतये सहसावन् दिवेदिवे ।
राय ऋताय गोभिः ष्याम सधमादो वीरैः स्याम सधमादः४।१२

हे अग्ने ! तुम अत्यन्त अन्न दान करने वालेहो । हमारा दिया जो हयिरन्न तुम्हारे पास है, उसे हमारी स्तुतियों सहित देवताओं के पास ले जाओ ।१। हे अग्ने ! जो व्यक्ति पशु आदि धन से सम्पन्न होकर भी तुमको हवि नहीं देता, वह अन्न और बल से विहीन होता है । जो व्यक्ति वेद विरुद्ध कार्य करता है, वह तुम्हारा विरोधी बनकर तुम्हारे द्वारा विनष्ट हो जाता है ।२। हे अग्ने ! तुम बल का साधन करने वाले तथा देवताओं को बुलाने वाले हो । हम अन्न से सम्पन्न हुए मनुष्य तुम्हारा वरण करते हैं । हम अपने यज्ञ कर्ममें तुम श्रेष्ठ अग्निदेव की स्तोत्रों द्वारा स्तुति करते हैं ।३। हे अग्ने ! तुम शक्तिशाली हो । जिस कार्य द्वारा हम नित्य प्रति तुम्हारा आश्रय प्राप्त करते रहें, वही कार्य करो । हे सुन्दर कर्म वाले अग्निदेव ! जिससे हम यज्ञ कर सकें और धन लाभ करें, वह कार्य करो । हम गौ तथा वीर पुत्रों को प्राप्त करें, ऐसी कृपा करो ।४। (१२)

सूक्त २१

(ऋषि—सस आत्रेयः । देवता—अग्निः । छन्द—अनुष्टुप्, पंक्तिः)

मनुष्वत् त्वा नि धीमहि मनुष्वत् समिधीमहि ।
अग्ने मनुष्वदङ्गिरो देवान् देवयते यज ॥१
त्वं हि मानुषे जने ऽग्ने सुप्रीत इध्यसे ।
स्रुचस्त्वा यन्त्यानुषक् सुजात सर्पिरासुते ॥२

त्वां विश्वे सजोषसो देवासो दूतमक्रत ।
सपर्यन्तस्त्वा कवे यज्ञेषु देवमीलते ।।३
देवं वो देवयज्यया ऽग्निमीलीत मर्त्यः ।
समिद्धः शुक्र दीदिह्यृतस्य योनिमासदः ससस्य योनिमासदः४.१३

हे अग्ने ! हम तुम्हें मनु के समान स्थापित करते हुये प्रज्वलित करते हैं । तुम देवताओं की कामना करने वाले मनुष्योंके निमित्त देव-यज्ञ को सम्पन्न करो ।१। हे अग्ने ! तुम स्तोत्रों द्वारा प्रज्वलित होते हुये मनुष्य के लिये तेजस्वी बनते हो घृत से युक्त हवियों तथा घृतयुक्त पात्र तुमको निरन्तर पुष्ट करते हैं ।२। हे अग्निदेव ! तुम सुन्दर कांति वालेहो । सब देवताओंने प्रसन्नता-पूर्वक तुम्हें अपना दूत नियुक्त किया था, इसलिये अनुष्ठान करने वाले साधक देवताओं का आह्वान करने के लिए तुम्हारा यज्ञ करते हैं ।३। हे अग्ने ! तुम प्रकाशवान हो । देवताओं के यज्ञ में तुम्हारी स्तुति की जाती है । तुम हव्य द्वारा बढ़-कर प्रदीप्ति युक्त होओ । 'सम' ऋषि के स्वर्ण कामना वाले यज्ञमें तुम प्रतिष्ठित होओ ।४। (१३)

सूक्त २२

(ऋषि— विश्वसामा आत्रेयः । देवता—अग्निः ।
छन्द–अनुष्टुप्, पंक्तिः ।

प्र विश्वसामन्नत्रिव दर्चा पावकशोचिषे ।
यो अध्वरेष्वीड्यो होता मन्द्रतमो विशि ।।१
न्यग्निं जातवेदसं दधाता देवमृत्विजम् ।
प्र यज्ञ एत्वानुषगद्या देवव्यचस्तमः ।।२
चिकित्विन्मनसं त्वा देवं मर्तास ऊतये ।
वरेण्यस्य तेऽवस इयानासो अमन्महि ।।३
अग्ने चिकिद्ध्यस्य न इदं वचः सहस्य ।
तं त्वा सुशिप्र दंपते स्तोमैर्वर्धन्त्यत्रयो गीर्भिः शुम्भन्त्यत्रयः ४।१४

हे विश्व-भर के साम के ज्ञाता ऋषि ! तुम अत्रि के समान पवित्र

अग्नि का पूजन करो । ये सब ऋषियों द्वारा यज्ञ में स्तुति के पात्र हैं । वे देवताओं को बुलाने वाले तथा पूजनीय हैं ।१। हे मनुष्यो ! सब ज्ञानोंके ज्ञाता, तेजस्वी यज्ञकर्त्ता अग्नि का वरण करो,जिससे, देवताओं के लिए प्रिय तथा यज्ञके साधन रूप हव्य को हम अग्नि के लिए प्रदान करें । हे अग्ने ! तुम तेजस्वी हो । तुम ज्ञान से युक्त हों, हम तुम्हारी रक्षा याचना के लिए उपस्थित हैं । हम तुम्हें सन्तुष्ट करने के लिए तुम्हारी पूजा करते हैं ।२-३। हे अग्ने ! तुम बलीहो । तुम हमारी सेवा रूप स्तोत्र को जानो हम सुन्दर ठोड़ी, नासिका से युक्त हों । तुम गृह-पति के समान हो तुम्हें अत्रि वंशज स्तोत्रों ने बढ़ाते और वाणी से विभूषित करते हैं ।४। (१४)

सूक्त २३

(ऋषि–द्यु म्नो: विश्वचर्षणि । देवता–अग्नि: । छन्द–अनुष्टुप् पंक्ति:)

अग्ने सहन्तमा भर द्यु म्नस्य प्रासहा रयिम् ।
विश्वा यश्चर्षणीरभ्यासा वाजेषु सासहत् ॥१
तमग्ने पृतनाषहं रयिं सहस्व आ भर ।
त्वं हि सत्यो अद्भुतो दाता वाजस्य गोमतः ॥२
विश्वे हि त्वा सुजोषसो जनासो वृक्तबर्हिषः ।
होतारं सद्मसु प्रियं व्यन्ति वार्या पुरु ॥३
स हि ष्मा विश्वचर्षणिरभिमाति सहो दधे ।
अग्न एषु क्षयेष्वा रेवन्नः शुक्र दीदिहि द्यु मत् पावक दीदिहि ।
।४।१५

हे अग्ने ! मुझ 'द्यु म्न' ऋषि को शत्रुओं को जीतने वाला एक वीर पुत्र प्रदान करो । वह पुत्र स्तुतियोंसे पूर्ण होकर रणक्षेत्रमें समस्त शत्रुओंको वशीभूत करें । हे अग्ने ! तुम शक्तिशालिनी हो । तुम सत्यके कारण रूप तथा गवादियुक्त धनों के देने वाले हो । तुम ऐसा एक पुत्र दो जी सभी सेनाओं को वश में कर सके ।२। हे अग्ने ! तुम देवताओं का आह्वान करने वाले तथा सब का कल्याण करने वाले हो । कुशको 'उखाड़ने' वाले, समान प्रीति वाले ऋत्विक् यज्ञ स्थान में तुमसे वरण

करने योग्य धन माँगते हैं ।३। हे अग्ने ! बिश्वचर्षिणी ऋषि शत्रुओं का संहार करने वाले बलको धारण करें । हे तेजस्विन् ! तुम हमारे घरमें धन से सम्पन्न तेज फैलाओ । हे अग्ने ! तुम पापों का नाश करने वाले हो । तुम तेज और यश से युक्त हुए सर्वत्र प्रकाशित होओ ।४। (१५)

सूक्त २४

(ऋषि—बन्धुः सुबन्धुः । देवता—अग्निः । छन्द—बृहती)

अग्ने त्वं नो अन्तम उत त्राता शिवो भवा वरूथ्यः ॥१
वसुरग्निर्वसुश्रवा अच्छा नक्षि द्युमत्तमं रयिं दाः ॥२
स नो बोधि श्रुधी हवमुरुष्या णो अघायतः समस्मात् ॥३
तं त्वा शोचिष्ठ दीदिवः सुम्नाय नूनमीमहे सखिभ्यः ।४।१६

हे अग्ने ! तुम हमारे समीप रहने वाले होओ । तुम सम्भजनीय, हमारी रक्षा करने वाले तथा हमारा कल्याण करने वाले हो । हे अग्ने! तुम उत्तम घर और अन्न के देने वाले हो । तुम हमारे अनुकूल होओ । तुम अत्यन्त उज्ज्वल एवं पशु युक्त सुन्दर धन हमको दो ।१-२। हे अग्ने हमको जानने वाले होओ । हमारे आह्वान को सुनो । सब पापाचार करने वाले दुष्टों से हमारी रक्षा करो । हे अग्ने ! तुम अपने तेज से प्रकाशवान् हो । हम अपने सुख के लिए तथा सुन्दर पुत्र के लिए तुम से याचना करते हैं ।३-४। (१६)

सूक्त २५

(ऋषि—वसूयव आत्रेयाः । देवता—अग्निः । छन्द—अनुष्टुप्)

अच्छा वो अग्निमवसे देवं गासि स नो वसुः ।
रासत् पुत्र ऋषूणामृतावा पर्षति द्विषः ॥१
स हि सत्यो यं पूर्वे चिद् देवासश्चिद् यमीधिरे ।
होतारं मन्द्रजिह्वमित् सुदीतिभिर्विभावसुम् ॥२

स नो धीती वरिष्ठया श्रेष्ठया च सुमत्या ।
अग्ने रायो दिदीहि नः सुवृक्तिभिर्वरेण्य ॥३
अग्निर्देवेषु राजत्यग्निर्मर्तेष्वाविशन् ।
अग्निर्नो हव्यवाहनो ऽग्निं धीभिः सपर्यत ॥४
अग्निस्तुविश्रवस्तमं तुविब्रह्माणमुत्तमम् ।
अतूर्तं श्रावयत्पतिं पुत्रं ददाति दाशुषे ।५।१७

हे ऋषियो ! आश्रय प्राप्ति के लिए अग्नि की स्तुति करो । यज्ञके लिए यजमानों के गृह में निवास करने वाली अग्नि हमारी अभिलाषा पूरी करें । सत्यसे युक्त अग्निदेव शत्रुओंसे हमारी रक्षा करें ।१।प्राचीन कालीन ऋषियों और देवताओं ने जिन अग्नि को प्रज्वलित किया था, जो अग्नि मोदन-जिह्वा, अत्यन्त आभा वाले, शोभायमान प्रकाश वाले तथा देवताओं के बुलाने वाले हैं वे अग्नि सत्य सङ्कल्पसे परिपूर्ण हैं ।२। हे अग्ने ! तुम स्तोत्रों द्वारा स्तुत तथा वरण करने योग्यहो । तुम हमारे अनुष्ठानादि श्रेष्ठ कर्म ओर स्तोत्रसे प्रसन्न होतेहुए हमको ऐश्वर्य प्रदान करो ।३। जो अग्नि देवताओंमें देव-रूप से प्रकाशित होते हैं,जो मनुष्यों में आहूत होकर जातेहैं तथा जो हमारे यज्ञोंमें देवताओंको हवि पहुँचाते हैं,उन अग्निकी स्तुति द्वारा पूजा करनी चाहिये ।४। वे अग्नि हविदाता यजमानों को ऐसा पुत्र दें, जो विभिन्न अन्नों से युक्त, बहुत स्तोत्रों का कर्त्ता, शत्रुओं के द्वारा हिंसित न होने वाला तथा अपने श्रेष्ठ कर्म से पितृजनों के यश को फैलाने वाला हो ।५। (१७)

अग्निर्ददाति सत्पतिं सासाह यो युधा नृभिः ।
अग्निरत्यं रघुष्यदं जेतारमपराजितम् ॥६
यद् वाहिष्ठं तदग्नये बृहदर्च विभावसो ।
महिषीव त्वद् रयिस्त्वद् वाजा उदीरते ॥७
तव द्युमन्तो अर्चयो ग्रावेवोच्यते बृहत् ।
उतो ते तन्यतुर्यथा स्वानो अर्त त्मना दिवः ॥८
एवाँ अग्निं वसूयवः सहसानं ववन्दिम ।

स नो विश्वा अति द्विषः पर्षन्नावेव सुक्रतुः ।६।१८

अग्नि हमको सत्य-पालक, शत्रुओं को वशीभूत करने वाला तथा कुटुम्बियोंका साथ निभानेवाला एक पुत्रदें और शत्रुओंको जीतने वाला शीघ्रगामी एक अश्व भी प्रदान करें ।६। अग्नि के निमित्त सर्वश्रेष्ठ स्तोत्रही निवेदन किया जाता है। हे अग्ने! तुम तेजोमय ऐश्वर्यसे युक्त हो। हमको प्रचुर धनदो, क्योंकि समस्त धन और अन्न तुम्हारे द्वाराही उत्पन्न हुए हैं ।७। तुम्हारी शिखायें प्रदीप्ति से युक्त हैं। तुम शत्रुओं को शिला के ममान चूर्ण करने में समर्थ हो। तुम प्रकांश से पूर्ण हो। तुम्हारा शब्द मेघ के समान गर्जनशील है ।८। धन की कामना करने वाले हम मनुष्य बलशाली शग्नि की भली प्रकार स्तुति करते हैं। सुन्दर कर्म वाले अग्नि हमको सब शत्रुओं से बचावें, जैसे नदी से नाव पार करती है ।९। (१८)

सूक्त २६

(ऋरि—वसूश्रव आत्रेयाः। देवता—अग्निः, विश्वेदेवाः। छन्द—गायत्री)

अग्ने पावक रोचिषा मन्द्रया देव जिह्वया। आ देवान् वक्षि यक्षि च ॥१

तं त्वा घृतस्नवीमहे चित्रभानो स्वर्दृशन्। देवाँ आ वीतये वह२

वीतिहोत्रं त्वा कवे द्युमन्तं समिधीमहि। अग्ने वृहन्तमध्वरे ।३

अग्ने विश्वेभिरा गहि देवेभिर्हव्यदातये। होतारं त्वा वृणीमहे४

यजमानाय सुन्वत आग्ने सुवीर्यं वह। देवैरा सत्सि बर्हिषि५।१९

हे अग्ने ! तुम पवित्र करने वाले प्रदीप्तिमान् हो। तुम देवताओंको पुष्टकरने वाली जिह्वा और अपनी प्रदीप्ति सहित प्रकाशवान् होते हुए देवताओं को यज्ञमें लाओ तथा उनके निमित्त यज्ञ करो ।१। हे अग्ने ! तुम घृतसे प्रदीप्त होने वाली किरणोंसे युक्त हो। तुम सबके देखने वाले हो। हव्य ग्रहण करनेके लिये देवताओंको बुलानेको हम तुम्हारी स्तुति करते हैं ।२। हे अग्ने ! तुम ज्ञान के समान हवियों को भक्षण करने वाले, प्रदीप्तियुक्त एवं महान हो। हम तुम्हें अपने यज्ञ स्थान में उत्तम

प्रकारसे प्रज्वलित करते हैं ।३। हे अग्ने ! तुम हविदाता साधक के यज्ञ में सब देवताओं के साथ पधारो । तुम देवताओंको बुलाने में समर्थ हो, इसलिए हम तुमसे देवाह्वान की याचना करते हैं ।४। हे अग्ने तुम यज्ञ करने वाले यजमानके लिए श्रेष्ठ पराक्रमको धारणकरो और विद्वज्जनों के मध्य श्रेष्ठ आसन पर आदर पूर्वक विराजमान होओ ।५। (१९)

समिधानः सहस्रजिदग्ने धर्माणि पुष्यसि । देवानां दूत उक्थ्यः।६
न्यग्निं जातवेदसं होत्रवाहं यविष्ठ्यम् । दधाता देवमृत्विजम् ॥७
प्र यज्ञ एत्वानुषागद्या देवव्यचस्तमः । स्तृणीत बर्हिरासदे ॥८
एदं मरुतो अश्विना मित्रः सीदन्तु वरुणः । देवासः सर्वया विशा ।९।२०

हे अग्ने ! तुम सहस्रों को पराजित करने में समर्थ हो । हव्य द्वारा प्रदीप्त और प्रवृद्ध होकर तथा देवताओंके दूत होते हुए तुमहमारे यज्ञानुष्ठान को सम्पुष्ट करने वाले हो ।६। हे यजमानो ! अग्निकी स्थापना करो । वे जीवमात्रके ज्ञाता, यज्ञके साधनभूत तथा युवा पुरुषोंमें श्रेष्ठ, अत्यन्त तेजस्वी है ।७। स्तोताओं द्वारा दी जाने वाली हविर्यां आज देवताओं के पास पहुँचे । हे ऋत्विग्गण ! तुम उन अग्निदेव के विराजमान होनेके लिए पवित्र कुशको बिछाओ ।८। मरुद्गण,अश्विद्वय, मित्र, वरुण इस श्रेष्ठ आसन पर प्रतिष्ठित हों और सभी देवता अपने परिजनों सहित यहां आकर विराजमान हों ।९। (२०)

सूक्त २७

(ऋषि–त्र्यरुणः, पौरकुत्सः, अश्वमेधः । देवता–अग्निः, इन्द्राग्नी ।
छन्द–त्रिष्टुप्, अनुष्टुप्)

अनस्वन्ता सत्पतिर्मामहे मे गावा चेतिष्ठो असुरो मघोनः ।
त्रैवृष्णो अग्ने दशभिः सहस्रैर्वैश्वानर त्र्यरुणश्चिकेत ॥१
यो मे शता च विंशतिं च गोनां हरी च युक्ता सुधुरा ददाति ।
वैश्वानर सुष्टुतो वावृधानो ऽग्ने यच्छ त्र्यरुणाय शर्म ॥२
एवा ते अग्ने सुमतिं चकानो नविष्ठाय नवमं त्रसदस्युः।

यो मे गिरस्तुविजातस्य पूर्वीर्युवतेनाभि त्र्यरुणो गृणाति ॥३
यो म इति प्रवोचत्यश्वमेधाय सूरये ।
ददद्दचा सनिं यते ददन्मेधामृतायते ॥४
यस्य मा परुषाः शतमुद्धर्षयन्त्युक्षणः ।
अश्वमेधस्य दानाः सोमा इव त्र्याशिरः ॥५
इन्द्राग्नी शतादाव्यश्वमेधे सुवीर्यम् ।
क्षत्रं धारयतं बृहद् दिवि सूर्यमिवाजरम् ।६।२१

हे मनुष्यों में अग्र पुरुष अग्ने ! तुम सज्जनों के पालन कर्त्ता, ज्ञानवान्, बलवान् और ऐश्वर्यवान हो। 'विवृष्ण' के पुत्र 'त्र्यरुण' नामक ऋषि ने दो बैलों की जुड़ी गाड़ी में दस हजार सुवर्ण मुद्रा रखकर मुझे दी थी। इससे वे सब लोगों में प्रसिद्ध हो गये थे ।१। हे अग्ने ! मुझे जिस 'त्र्यरुण' ने शत सुवर्ण बीस धेनु और रथ संयुक्त दो सुन्दर अश्व प्रदान किये थे उनके लिए तुम हमारी स्तुति से प्रसन्न होकर हव्य द्वारा बढ़ते हुए सुख प्रदान करो ।२। हे अग्ने ! हम अधिक सन्तान वालों को स्तुतियों से प्रसन्न हुए त्र्यरुण ने हमको यह ले लो, वह ले ली, कहा था, उसी प्रकार तुम्हारी स्तुति की इच्छा करने वाले 'त्रसदस्यु' ने भी 'यह ले लो, 'वह ले लो' कहते हुए दान ग्रहण करने की प्रार्थना की थी ।३। हे अग्ने ! जब कोई भिक्षा माँगने वाला तुम्हारा स्तोत्र पढ़ता हुआ धन देने वाले राजर्षि अश्वमेध से धन माँगता है, तभी वे उसे धन प्रदान करते हैं। हे अग्ने ! यज्ञ की कामना करने वाले अश्वमेध को तुम यज्ञ कर्म में प्रेरित करो ।४। राजर्षि अश्वमेध द्वारा दिये हुए सौ बैलो को पाकर हम प्रसन्न हो गये। हे अग्ने ! दही सत्तू और दुग्धादि तीनों द्रव्यों से युक्त सोम के समान वे बैल उपभोग करने के योग्य हों ।५। हे इन्द्र ! हे अग्ने ! माँगने वाले असीमित धन प्रदान करने वाले राजर्षि अश्वमेध को अन्तरिक्ष में अवस्थित आदित्य के समान सुन्दर, पराक्रम, उज्ज्वल यज्ञ और कभी भी क्षीण न होने वाला धन देकर महान् बनाओ ।६। (२१)

सूक्त २८

(ऋषि—विश्ववाराात्रेयी। देवता—अग्निः। छन्द—त्रिष्टुबादीनि)

समिद्धो अग्निर्दिवि शोचिरश्रेत् प्रत्यङ्ङुषसमुर्विया वि भाति।
एति प्राची विश्ववारा नमोभिर्देवाँ ईलाना हविषा घृताची ॥१
समिध्यमानो अमृतस्य राजसि हविष्कृण्वन्तं सचसे स्वस्तये।
विश्वं स धत्ते द्रविणं यमिन्वस्यातिथ्यमग्ने नि च धत्त इत् पुरः२
अग्ने शर्ध महते सौभगाय तव द्युम्नान्युत्तमानि सन्तु।
सं जास्पत्यं सुयममा कृणुष्व शत्रूयतामभि तिष्ठा महांसि ॥३
समिद्धस्य प्रमहसो ऽग्ने वन्दे तव श्रियम्।
वृषभो द्युम्नवाँ असि समध्वरेष्विध्यसे ॥४
समिद्धो अग्न आहुत देवान् यक्षि स्वध्वर। त्वं हि हव्यवाडसि ५
आ जुहोता दुवस्यताऽग्निं प्रयत्यध्वरे। वृणीध्वं हव्यवाहनम् ६।२२

भले प्रकार प्रकाशित हुए अग्निदेव उज्ज्वल अन्तरिक्षमें अपने तेज से प्रकाश फैलाते हैं और उषाके सामने ही बढ़ते हुए अत्यन्त सुशोभित होते हैं। इन्द्रादि देवताओं को नमन करती हुई पुरोडाश आदि से युक्त घृतादि पदार्थ को देह पर मलने के समान जाभायुक्त उषा ऐश्वर्य से युक्त हुई प्राची की ओर से झाँकती हुई निकलती है।१। हे अग्ने ! तुम भले प्रकार प्रदीप्त होकर अमृत पर प्रभुत्व करने वाले हाते हो। तुम हवि प्रदान करने वाले यजमान के द्वारा सुखकारी कार्यों की इच्छा से बुलाये जाते हो। तुम जिस यजमान पर अनुग्रह करते हो, उसके लिए पशु आदि से युक्त धन के धारण करने वाले हो। हे अग्ने ! तुम्हारे सत्कार के योग्य हविरन्न को यजमान तुम्हारे लिए अर्पित करता है।२। हे अग्ने ! तुम हमारे धन और ऐश्वर्य की रक्षा के लिए शत्रुओं को पराजित करो, तुम्हारा तेज अत्यन्त उत्कृष्ट है। हे अग्ने ! तुम स्त्री पुरुषों के दाम्पत्य-सम्बन्ध को सुदृढ़ करने के लिए श्रेष्ठ संस्कार करो तुम शत्रुओं के तेज को पराभूत करो।३। हे अग्ने ! जब तुम प्रज्वलित होकर तेजोमय होते हो तब मैं तुम्हारे उस तेज की सुन्दर स्तुति

करती हूँ। तुम बलवान् एवं प्रजाओं के निमित्त सुखों की वर्षा करने वालेहो। तुम हमारे यज्ञानुष्ठानमें अत्यन्त प्रकाशित होओ।४। हे अग्ने! तुम यजमानों द्वारा बुलाये जाते हो, तुम श्रेष्ठ यज्ञों के साधक हो। तुम भले प्रकार प्रदीप्त होकर इन्द्रादि देवताओं के निमित्त यज्ञ करो, तुम हव्य वहन करने में समर्थ हो।५। हे ऋत्विजो ! तुम हमारे यज्ञ कार्य में लगाकर हवि वहन करने वाले अग्नि के लिए यज्ञ करो, और उनकी सेवा करते हुए स्तुति करो। देवताओं को हवि पहुँचाने के लिए उन्हें वरण करो।६। (२२)

सूक्त २९

(ऋषि-गौरिवीतिः। देवता-इन्द्रः, उशना। छन्द-त्रिष्टुप्)

त्र्यर्यमा मनुषो देवताता त्री रोचना दिव्या धारयन्त।
अर्चन्ति त्वा मरुतः पूतदक्षास्त्वमेषामृषिरिन्द्रासि धीरः ॥१
अनु यदीं मरुतो मन्दसानमार्चन्निन्द्रं पपिवांसं सुतस्य।
आदत्त वज्रमभि यदहिं हन्नपो यह्वीरसृजत् सर्तवा उ ॥२
उत ब्रह्माणो मरुतो मे अस्येन्द्रः सोमस्य सुषुतस्य पेयाः।
तद्धि हव्यं मनुषे गा अविन्ददहन्नहिं पपिवाँ इन्द्रो अस्य ॥३
आद् रोदसी वितरं वि ष्कभायत् संविव्यानश्चिद्भियसे मृगं कः।
जिगर्तिमिन्द्रो अपजर्गुराणः प्रति श्वसन्तमव दानवं हन् ॥४
अध क्रत्वा मघवन् तुभ्यं देवा अनु विश्वे अददुः सोमपेयम्।
यत् सूर्यस्य हरितः पतन्तीः पुरः सतीरुपरा एतशे कः।५।२३

हे इन्द्र ! सुन्दर बाल वाले मरुद्‌गण तुम्हारा स्तवन करते हैं। तुम मेधावी हो। मनु-सम्बन्धी यज्ञ में जो तीन गुण और तीन साधन हैं, उनको देवताओं के कार्य में धारण करें।१। वे इन्द्र जब सुसिद्ध सोम को पीकर तृप्त हो गए तब मरुद्‌गण ने उनकी स्तुति की। फिर इन्द्र ने वज्र उठाकर वृत्र का संहार किया और उसके द्वारा रोके गये महान् जल-समूह को स्वेच्छा से प्रवाहित होने के लिये छोड़ दिया।२। हे महान् मरुद्‌गण ! तुम सब और इन्द्र

हमारे इस स्वच्छ सोमरस को भले प्रकार पान करो । तुम इस सोम-युक्त हवि का सेवन करते हुए यजमानों को गौएँ प्राप्त कराओ । इस सोमरस का पान करके हृष्ट हुए इन्द्र ने वृत्र का संहार किया था ।३। सोम पीने के पश्चात् ही इन्द्र ने आकाश और पृथ्वी को अचल किया इन्द्र ने मृग के समान भागते हुए वृत्रको डराया । उस समय वह छिपा हुआ, भयभीत होकर श्वास छोड़ रहा था । तब इन्द्र ने उसे माया रहित करके मार डाला ।४। हे ऐश्वर्यशाली इन्द्र ! तुम्हारे कार्य से प्रसन्न हुए देवताओंने तुम्हें पीनेको सोमरस प्रदान किया । तुमने एतश' के लिए सामने आये हुये सूर्य के घोड़ोंका चलना रोक दिया ।५। (२३)

नव यदस्य नवतिं च भोगान् त्साकं वज्रेण मघवा विवृश्चत् ।
अर्चन्तीन्द्रं मरुतः सधस्थे त्रैष्टुभेन वचसा बाधत द्याम् ॥६
सखा सख्ये अपचत् तूयमग्निरस्य क्रत्वा महिषा त्री शतानि ।
त्री साकमिन्द्रो मनुषः सरांसि सुतं पिबद् वृत्रहत्याय सोमम् ॥७
त्री यच्छता महिषाणामधो मास्त्री सरांसि मघवा सोम्यापाः ।
कारं न विश्वे अह्वन्त देवा भरमिन्द्राय यदहिं जघान ॥८
उशना यत् सहस्यैरयातं गृहमिन्द्र जूजुवानेभिरश्वैः ।
वन्वानो अत्र सरथं ययाथ कुत्सेन देवैरवनोर्ह शुष्णम् ॥९
प्रान्यच्चक्रमवृहः सूर्यस्य कुत्सायान्यद् वरिवो यातवेऽकः ।
अनासो दस्यूँरमृणो वधेन नि दुर्योण आवृणङ् मृध्रवाचः ।१०।२४

जब महान् पराक्रमी इन्द्र ने 'शम्बर' के निन्यानवे पुरों को एक समय में ही ध्वंस कर डाला, तब रणक्षेत्र में ही मरुद्गण ने त्रिष्टुप् छन्द में इन्द्र की स्तुति की । इस प्रकार मरुद्गण के स्तोत्र द्वारा पूजित होने पर इन्द्रने 'शम्बर' को वशीभूत किया ।६। इन्द्रके सखा रूप अग्नि ने तीन सौ शक्तिशाली महिषों को कार्यक्षम बनाया और परम ऐश्वर्य-वान इन्द्र ने वृत्र-नाश के लिए मनुष्यों द्वारा तीन पात्रोंमें रखे हुए सोम रस को एक समय में ही पान कर लिया ।७। हे इन्द्र ! जब तुमने तीन सौ महिषों को स्वीकार किया और पराक्रम से युक्त होकर तीन पात्रों

का पान किया, तब तुमने वृत्र का हनन किया । उस समय जब देवताओं ने सोम पान से हृष्ट हुये इन्द्र को युद्ध के लिए बुलाया, जैसे स्वामी अपने कार्यकर्त्ता को बुलाते हैं ।८। हे इन्द्र ! तुम और 'उशना' दोनों ही जब द्रुतगामी घोड़ो पर चढ़कर 'कुत्स' के घर गये थे, तब तुमने शत्रुओं को मारा और 'कुत्स' तथा देवताजों के साथ एक रथ पर चढ़े थे । इन्द्र ! तुमने ही दैत्य 'शुष्ण' हनन किया था। ।६। हे इन्द्र ! तुमने ही प्रथम सूर्य के रथ के दो पहियों में से एक को अलग किया और दूसरे पहिए को धन प्राप्ति के निमित्त 'कुत्स' को प्रदान किया । तुमने चुपचाप खड़े हुए हतप्रभ राक्षसों को युद्ध क्षेत्र में अपने वज्र से मार डाला ।१०। (२४)

स्तोमासस्त्वा गौरिवीतेरवर्धन्नरन्धयो वैदथिनाय पिप्रुम् ।
आ त्वामृजिश्वा सख्याय चक्रे पचन् पक्तीरपिबः सोममस्य॥११
नवग्वास सुतसोमास इन्द्रं दशग्वासो अभ्यर्चन्त्यर्कैः ।
गव्यं चिदूर्वमपिधानवन्तं तं चिन्नरः शशमाना अप व्रन् ॥१२
कथो नु ते परि चराणि विद्वान् वीर्या मघवन् या चकर्थ ।
या चो नु नव्या कृणवः शविष्ठ प्रेदु ता ते विदथेषु ब्रवाम ॥१३
एता विश्वा चकृवाँ इन्द्र भूर्यपरीतो जनुषा वीर्येण ।
या चिन्नु वज्रिन् कृणवो दधृष्वान् न ते वर्ता तविष्या अस्ति तस्याः ॥१४
इन्द्र ब्रह्म क्रियमाणा जुषस्व या ते शविष्ठ नव्या अकर्म ।
वस्त्रेव भद्रा सुकृता वसूयू रथं न धीरः स्वपा अतक्षम् ।१५।२५

हे इन्द्र ! 'गौरिवीति' ऋषि के स्तोंत्र से तुम बढ़ो, तुमने विदथि पुत्र 'ऋजिश्वा' के लिए 'विभु' नामक दैत्य को हराया । 'ऋजिश्वा' ने तुम्हारी मित्रता के लिये पुरोडाश परिपक्व कर उपस्थित किया था और तुमने 'ऋजिश्वा' द्वारा समर्पित सोम का पान किया था ।११। नौ अथवा दस महीनोंमें सम्पूर्ण होने वाले यज्ञके करने वाले अङ्गिरा ऋषि सोम सिद्ध करके पूजन के योग्य स्तोत्र से इन्द्र का स्तवन करते हैं ।

स्तवन करते हुए अङ्गिराओं ने असुरों द्वारा छिपाई हुई गौओं को छुड़ाया था।१२। हे इन्द्र तुम ऐश्वर्यशाली हो। तुमने जिस पराक्रमको प्रकट किया था, उसे जानते हुए भी हम किस वाणी से कहें? तुम जिस नवीन बल को प्रकट करोगे, उसका कीर्तन हम अपने यज्ञ में करेंगे। ।१३। हे इन्द्र! तुम शत्रुओं द्वारा नहीं रोके जा सकते। तुमने अपनी शक्ति से लोकों को दृश्यमान किया है। तुम वज्रधारी हो। शत्रुओं का नाश करते हुए जिस बल को दिखाते हो उस बल का निवारण करने में कोई समर्थ नहीं है।१४। हे अत्यन्त पराक्रमी इन्द्र! हमने आज तुम्हारे जिन नवीन स्तोत्रों की रचना की है, उन सब स्तोत्रों को स्वीकार करो। हम सुन्दर कर्म वाले स्तोता धन की अभिलाषा करते हैं। हम वस्त्र और रथ की तरह अपने सुन्दर स्तोत्रों को तुम्हारे निमित्त समर्पित करते हैं।१५। (२५)

सूक्त ३०

(ऋषि—बभ्रु रात्रेयः। देवता—इन्द्रः- ऋणंचयेन्द्रौ। छन्द—त्रिष्टुप्)

क्वस्य वीरः को अपश्यदिन्द्रं सुखरथमीयमानं हरिभ्याम्।
यो राया वज्री सुतसोममिच्छन् तदोको गन्ता पुरुहूत ऊती ॥१
अवाचचक्षं पदमस्य सस्वरुग्रं निधातुरन्वायमिच्छन्।
अपृच्छमन्याँ उत ते म आहुरिन्द्रं नरो बुबुधाना अशेम ॥२
प्र नु वयं सुते या ते कृतानीन्द्र ब्रवाम यानि नो जुजोषः।
वेददविद्वाञ्छृणवच्च विद्वान् वहतेऽयं मघवा सर्वसेनः ॥३
स्थिरं मनश्चकृषे जात इन्द्र वेषीदेको युधये भूयसश्चित्।
अश्मानं चिच्छवसा दिद्युतो वि विदो गवामूर्वमुस्रियाणाम् ॥४
परो यत् त्वं परम आजनिष्ठाः परावति श्रुत्यं नाम बिभ्रत्।
अतश्चिदिन्द्रादभयन्त देवा विश्वा अपो अजयद् दासपत्नीः॥५।२६

बहुतों द्वारा बुलाये जानेवाले वज्रधारी इन्द्र देने योग्य धनोंके साथ सोमसिद्ध करने वाले यजमानकी कामना करते हुए, रक्षा-साधनों सहित उसके घरमें जाते हैं। बलवान इन्द्र कहाँ है? अपने दोनों अश्वोंको रथ

में जोड़कर जाने वाले इन्द्र को कौन देखता है ? ।१। हमने इन्द्र के सब स्थानों को देखा है। खोज करते हुए हम आश्रय रूप इन्द्र के स्थान में पहुँचे। हमने इन्द्र के सम्बन्ध में अन्य विद्वानों से भी जानकारी प्राप्त की। ज्ञान की कामना करने वाले याज्ञिकों ने बतलाया कि हमने इन्द्र को प्राप्तकर लिया है ।२। हे इन्द्र ! तुमने जिन कार्यों को किया, उनका वर्णन सोम सिद्ध करने पर स्तुति करने वाले करते हैं। तुमने हमारे निमित्त जिन कामों को किया है, उन कर्मों को भी सभी जान लें। जो जानते हैं, वह अनजान व्यक्तियों को श्रवण करावें। सब देवताओं से परिपूर्ण हुए इन्द्र उन जानने वाले तथा सुनने वाले मनुष्योंके पास अश्व पर चढ़कर पहुँचे ।३। हे इन्द्र ! तुमने प्रकट होते ही शत्रुओं को विजय करने का दृढ़ सङ्कल्प किया और तुम अकेले असंख्य असुरों से संग्राम करने के लिए गये। गौओं को ढकने वाले पर्वत को तुमने अपने बलसे चीर डाला और दुग्ध देनें वाली गौओं को प्राप्त किया ।४। हे इन्द्र ! तुम सबमें मुख्य और श्रेष्ठ हो। जब तुम सुनने योग्य नाम को धारण कर प्रकट हुए तब अग्नि आदि देव भी भयभीत हो गये। वृत्र द्वारा रक्षित जल को तुमने अधिकार में किया था ।५। (२६)

तुभ्येदेते मरुतः सुशेवा अर्चन्त्यर्कं सुन्वन्त्यन्धः ।
अहिमोहानमप आशयानं प्र मायाभिर्मायिनं सक्षदिन्द्रः ॥६
वि षू मृधो जनुषा दानमिन्वन्नहन् गवा मघवन् त्संचकान् ।
अत्रा दासस्य नमुचेः शिरो यदवर्तयो मनवे गातुमिच्छन ॥७
युजं हि मामकृथा आदिदिन्द्र शिरो दासस्य नमुचेर्मथायन् ।
अश्मानं चित् स्वर्यं वर्तमानं प्र चक्रियेव रोदसी मरुद्भ्यः ॥८
स्त्रियो हि दास आयुधानि चक्रे किं मा करन्नबला अस्य सेनाः।
अन्तर्ह्यख्यदुभे अस्य धेने अथोप प्रैद् युधये दस्युमिन्द्रः ॥६
समत्र गावोऽभितोऽनवन्तेहेह वत्सैर्वियुता यदासन् ।
सं ता इन्द्रो असृजदस्य शाकैर्यदीं सोमासः सुषुता अमन्दन्।१०।२७
यह स्तुति करने वाले मरुद्गण स्तोत्र पाठ करते हुए तुम्हें सुखी करते

हैं। हे इन्द्र यह तुम्हारी ही स्तुति करते हैं और सोम युक्त अन्न देते हैं। जो वृत्र समस्त जल राशि को छिपाकर सो रहा था, उस कपटी और देवताओं के कार्य में बाधक को इन्द्र ने अपनी शक्ति से वशीभूत किया था ।६। हे ऐश्वर्यशाली इन्द्र ! हम तुम्हारी स्तुति करते हैं। तुम देवताओं को दुःख देने वाले वृत्र को वज्र से दुःखी करो। तुमने उत्पन्न होते ही शत्रुओं का हनन किया था। इन संग्राम में हमारे कल्याण के लिए तुमने 'नमुचि' नामक दस्यु के शोण को चुर्ण कर डाला ।७। हे इन्द्र ! तुम गर्जन करते हुए गतिशाली मेघ के समाम 'नमुचि' के शीश को चूर्णकर हमार साथ मैत्रीभाव प्रदर्शित किया था,उस समय आकाश पृथ्वी मरुद्गण के प्रभाव से चक्र के समान घूमने लगी ।८। 'नमुचि' ने स्त्रियों को साधन बनाया। इन्द्र ने सोचा असुर की यह स्त्री सेना मेरा क्या बिगाड़ सकेगी ? और मेधावी के बीच से दो स्त्रियों को पकड़कर बन्दी बनाया और तब 'नमुचि' से युद्ध करने के लिए चल पड़े ।९। जब गौओं को 'नमुचि' ने चुराया, तब वे बछड़ों से बिछड़ी हुई गायें इधर-उधर भटकने लगीं। 'बभ्रु' ऋषि प्रदत्त सोमरस से जब इन्द्र पुष्ट हुए तब उन्होंने मरुतों की सहायता से 'बभ्रु'की गायोंको उनके बछड़ों से मिलाया ।१०। (२७)

यदीं सोमा बभ्रुधूता अमन्दन्नरोरवीद् वृषभः सादनेषु।
पुरंदरः पपिवाँ इन्द्रो अस्व पुनर्गवामददादुस्रियाणाम् ॥११
भद्रमिदं रुशमा अग्ने अक्रन् गवां चत्वारि ददतः सहस्रा।
ऋणंचयस्य प्रयता मघानि प्रत्यग्रभीष्म नृतमस्य नृणाम् ॥१२
सुपेशसं भाव सृजन्त्यस्तं गवां सहस्रै रुशमासो अग्ने।
तीव्रा इन्द्रममन्दुः सुतासो ऽक्तोर्व्युष्टौ परितक्म्यायाः ॥१३
औच्छत् सा रात्री परितक्म्या याँ ऋणंचये राजनि रुशमानाम्।
अत्यो न वाजी रघुरज्यमानो बभ्रुश्चत्वार्यसनत् सहस्रा ॥१४
चतुःसहस्र गव्यस्य पश्वः प्रत्यग्रभीष्म रुशमेष्वग्ने।
घर्मश्चित् तप्तः प्रवृजे य आसीदयस्मयस्तस्वादाम विप्राः॥१५॥२८

जब 'वभ्रु' के सोमरस द्वारा इन्द्र हृष्ट हो गये, तब उन्होंने रण-क्षेत्र में घोर गर्जन किया । पुरन्दर इन्द्र ने सोमपान के पश्चात् 'वभ्रु' को दुग्ध देने वाली गायें पुनः लाकर दी ।११। हे अग्ने ! 'ऋणञ्चय' नामक राजा के सेवक 'रुशम' देश वालों ने मुझे चार हजार गौएँ देकर कल्याणकारी कार्य किया था । अग्रगण्यों में भी अग्रणी 'ऋणञ्चय' राजा द्वारा दिये गये गौ रूप धन कों मैंने प्राप्त किया था ।१२। हे अग्ने ! 'ऋणञ्चय' राजा के तेवक 'रुशम' देश वालोंने मुझे वस्त्रालङ्कार आदि से सजा हुआ घर तथा सहस्र धेनु प्रदान की हैं । रात्रि के अवसान काल में मधुर रस मिश्रत सोंम द्वारा इन्द्र कौ प्रसन्न किया गया ।१३। 'रुशम' देश के नरेश 'ऋणञ्चय' के पास ही सर्वत्र जाने वाली रात्रि प्रदीप्त हो गई । बुलाये जाने पर 'वभ्रु' ऋषि ने वेग वाले अश्व के समान चार सहस्र द्रुतगामिनी धेंनुओंको पाया ।१४। हे अग्ने ! हम मेधावी हैं । हमने रुशम देश वालों से चार हजार धेनु प्राप्त की हैं । हमने सुन्दर सुवर्णमय कलश को रुशम देश वालों से यज्ञ कर्म में दूध दुहने के तिमित्त प्राप्त किया ।१५। (२८)

सूक्त ३१

(ऋषि–अवस्युरात्रेयः । देवता–इन्द्रः कुत्सो वा । छन्द–त्रिष्टुप्)

इन्द्रो रथाय प्रवतं कृणोति यमध्यस्थान्मघवा वाजयन्तम् ।
यूथेव पश्वो व्युनोति गोपा अरिष्टो याति प्रथमः सिषासन् ॥१
आ प्र द्रव हरिवो मा वि वेनः पिशङ्गराते अभि नः सचस्व ।
नहि त्वदिन्द्र वस्यो अन्यदस्त्यमेनाँश्चिज्जनिवतश्चकर्थ ॥२
उद्यत् सहः सहस आजनिष्ट देदिष्ट इन्द्रियाणि विश्वा ।
प्राचोदयत् सुदुघा वव्रे अन्तर्वि ज्योतिषा संववृत्वत् तमोऽवः ॥३
अनवस्ते रथमश्वाय तक्षन् त्वष्टा वज्रं पुरुहूत द्युमन्तम् ।
ब्रह्माण इन्द्रं महयन्तो अर्कैरवर्धयन्नहये हन्तवा उ ॥४
वृष्णे यत् ते वृषणो अर्कमर्चानिन्द्र ग्रावाणो अदितिः सजोषाः ।
अनश्वासो ये पवयोऽरथा इन्द्रेषिता अभ्यवर्तन्त दस्यून् ।५।२६

इन्द्र ऐश्वर्यशाली हैं। वे रथ पर बैठते हैं,उसे चलाते भी हैं। गौओं को जानने वाले जैसे पशुओं को प्रेरणा देते हैं, वैसे ही इन्द्र सेनाओं को प्रेरणा देते हैं। देवताओं में उत्कृष्ट इन्द्र शत्रुओं द्वारा कभी भी हिंसित न होते हुए शत्रुओं के धन की इच्छासे जाते हैं।१। हे अश्ववान् इन्द्र! तुम हमारे सामने से निकलो। परन्तु हमारे लिए मनोरथ से रहित मत बनो। तुम विविध ऐश्वर्य वाले हो हमारी सेवाओं को स्वीकार करो। तुम भार्याहीनोंकी भार्या प्रदान करते हो। तुमसे श्रेष्ठ अन्य कोई नहीं है।२। उषा के प्रकाश में आदित्य का प्रकाश बढ़ जाता हे तब यजमानों को सभी धन देते हैं। वे छिपाने वाले पर्वत के बीच से दूध देने वाली गायों को निकालते और अपने तेजसे सर्वत्र व्याप्त अन्धकार को हटाते हैं।३। हे इन्द्र ! तुम बहुतों द्वारा बुलाये जाते हो। तुम्हारे रथ को अश्वों से युक्त होने योग्य ऋभुओं ने किया है। त्वष्टा ने तुम्हारे वज्र को तीक्ष्णता दी है। इन्द्र के पूजक मरुद्गणने वृत्र का नाश करने के लिए इन्द्र को स्तोत्रों द्वारा बढ़ाया है।४। हे इन्द्र ! तुम कामनाओं को पूर्ण करने वाले हो। सेवन कर्म वाले मरुद्गणवे जब तुम्हारा स्तवन किया था तब सोम कूटने वाले पाषाण भी प्रसन्नता से मिल गये थे। इन्द्र द्वारा भेजे जाने पर और रथ से विहीन मरुद्गण ने जाकर शत्रुओं को वशीभूत किया था।५। (२६)

प्र ते पूर्वाणि करणानि वोचं प्र नूतना मघवन् या चकर्थ।
शक्तीवो यद् विभरा रोदसी उभे जयन्नपो मनवे दानुचित्राः ॥६
तदिन्नु ते करणं दस्म विप्राऽहि यद् घ्नन्नोजो अत्रामिमीथाः।
शुष्णस्य चित् परि माया अगृम्णाः प्रपित्वं यन्नप दस्यूँरसेधः।७
त्वमपो यदवे तुर्वशायाऽरमयः सुदघाः पार इन्द्र।
उग्रमयातमवहो ह कुत्सं सं ह यद् वामुशनारन्त देवाः।८
इन्द्राकुत्सा वहमाना रथेनाऽऽवामत्या अपि कर्णे वहन्तु।
निः षीमद्भ्यो धमथो निः षधस्थान् मघोनो हृदो वरथस्तमांसि
वातस्य युक्तान् त्सुयुजश्चिदश्वान् कविश्चिदेषो अजगन्नवस्युः।
विश्वे ते अत्र मरुतः सखाय इन्द्र ब्रह्माणि तविषीमवर्धन्।१०।३०

हे इन्द्र ! हम तुम्हारे प्राचीन या नवीन कर्मोंका कीर्तन करते हैं। हे ऐश्वर्यशाली इन्द्र ! तुमने जो कार्य किये हैं, हम उनका बखान करते हैं। हे वज्रिन् ! तुम आकाश और पृथ्वी को अपने वश में रखते हुए मनुष्यों के निमित्त अद्भुत जलों को धारण करते हो ।६। हे इन्द्र ! तुम मेधावी एवं दर्शनीय हो। तुमने वृत्र का हननकर जो बल इस लोकको दिखाया है, वह तुम्हारे लिए ही सम्भव था। तुमने 'शुष्ण' की युवती स्त्री को बन्दी बनाया और रणक्षेत्र में जाकर राक्षसों को नष्ट किया ।७। हे इन्द्र ! 'पशु' और 'तुर्वश' राजाओं को तुमने नदी किनारे अवस्थित होकर वनस्पतियों की वृद्धि करने वाला जल प्रदान किया था। 'कुत्स' पर आक्रमण करने वाले विकराल असुर 'शुष्ण' को हनन करके 'कुत्स'को उसका गृह प्राप्त कराया। तब 'उशना' और सब देवताओंने तुम्हारी स्तुति की ।८। हे इन्द्र ! कुत्स ! तुम दोनों एक रथ पर सवार होओ और तुम्हें घोड़े यजमानों के समीप पहुँचा दें। तुम दोनों ने 'शुष्ण' का उसके आश्रय रूप जल से पृथक् किया। तुम दोनों ने धनिक यजमानों के अन्धकार युक्त अन्तःकरण को शुद्ध किया था ।९। मेधावी 'अवस्यु' ऋषि ने अथ उत्तम प्रकार से जोड़ने के योग्य तथा वायु के समान वेग वाले घोड़ों को प्राप्त किया। हे इन्द्र ! 'अवस्यु' के सखा सभी स्तुति करने वालों ने अपने सुन्दर स्तोत्रों द्वारा तुम्हारे पराक्रमको बढ़ाया ।१०।　　　　(३०)

सूरश्चिद् रथं परितक्म्यायां पूर्वं करदुपरं जूजुवांसम् ।
भरच्चक्रमेतशः सं रिणाति पुरो दधत् सनिष्यति क्रतुं नः ॥११
आयं जना अभिचक्षे जगामेन्द्रः सखायं सुतसोममिच्छन् ।
वदन् ग्रावाव वेदिं भ्रियाते यस्य जीरमध्वर्यवश्चरन्ति ॥१२
ये चाकनन्त चाकनन्त नू ते मर्ता अमृत मो ते अंह आरन् ।
वावन्धि यज्यूँरुत तेषु धेह्योजो जनेषु येषु ते स्याम ।१३।३१

प्राचीन कालमें जब 'एतश' ऋषिके साथ सूर्यका युद्ध हुआ था, तब सूर्यके वेगवान् रथकी गति को इन्द्रने रोक दिया। उस रथके दो पहियों

में से एक पहिये को इन्द्र ने ले लिया । उसी पहियेके द्वारा इन्द्र शत्रुओं का संहार करते हैं । हमपर प्रसन्न होने वाले इन्द्र हमारे यज्ञ की कामना करें ।११। हे मनुष्यो ! सोम सिद्ध करने वाले सखा के समान यजमानों की कामना करते हुए इन्द्र तुमको दर्शन देनेके लिए पधारेहैं । अध्वर्यु लोग जिस प्रस्तर को उठाते हैं- वह सोम कूटने वाला प्रस्तर शब्द करता हुआ वेदीपर चढ़ता है ।१२। हे इन्द्र ! तुम अविनाशी हो । जो तुमको चाहता है शीघ्रतासे तुम्हारी कामना करताहै उस मरणकर्म वाले मनुष्य का कोई अनिष्ट न हो । तुम यजमानों पर प्रसन्न होते हुए उनकी कामना करो । जिन मनुष्यों के मध्य हम स्तुति करने वाले बैठे हैं वे सब मनुष्य यजमान तुम्हारे ही हैं । तुम उनको बल प्रदान करो ।१३। (३१)

सूक्त ३२

(ऋषि-गातुरात्रेयः । देवता—इन्द्रः । छन्द-त्रिष्टुप्)

अदर्दरुत्समसृजो वि खानि त्वमर्णवान् बद्बधानाँ अरम्णाः ।
महान्तमिन्द्र पर्वतं वि यद् वः सृजो वि धारा अव दानवं हन् ॥१
त्वमुत्साँ ऋतुभिर्बद्बधानाँ अरंह ऊधः पर्वतस्य वज्रिन् ।
अहिं चिदुग्र प्रयुतं शयानं जघन्वाँ इन्द्र तविषीमधत्थाः ॥२
त्यस्य चिन्महतो निर्मृगस्य वधर्जघान तविषीभिरिन्द्रः ।
य एक इदप्रतिर्मन्यमान आदस्मादन्यो अजनिष्ट तव्यान् ॥३
त्यं चिदेषां स्वधया मदन्तं मिहो नपातं सुवृधं तमोगाम् ।
वृषप्रभर्मा दानवस्य भामं वज्रेण वज्री नि जघान शुष्णम् ॥४
त्यं चिदस्य क्रतुभिर्निषत्तममर्मणो विददिदस्य मर्म ।
यदीं सुक्षत्र प्रभृता मदस्य युयुत्सन्तं तमसि हर्म्ये धाः ॥५
त्यं चिदित्था कत्पयं शयानमसूर्ये तमसि वावृधानम् ।
तं चिन्मन्दानो वृषभः सुतस्योच्चैरिन्द्रो अपगूर्या जघान ।६।३२

हे इन्द्र ! तुमने वर्षा करने वाले मेघ को चीरकर उसमें अवस्थित जलके द्वार को बताया है । हे इन्द्र ! तुमने मेघको खोलकर जल वृष्टि

की और वृत्र का हनन किया ।१। हे वज्रिन् ! वर्षा ऋतु में रुके हुए मेघों को छोड़ो । उनकी शक्तिको बढ़ाओ । तुम विशाल कर्म वाले हो । तुमने जल में सोने वाले वृत्रका हनन करके अपने बल की प्रसिद्धि की है । ।२। इन्द्र का कोई प्रतिद्वन्द्वी सहीं है । वृत्र के देह से एक अत्यन्त बलवान दैत्य प्रकट हुआ ।३। मेघ पर वज्र प्रकार करने वाले इन्द्र ने वज्र द्वारा पराक्रमी शुष्ण का संहार किया । वृत्रासुर के क्रोध से उत्पन्न हुआ 'शुष्ण' अँधेरे में घूमाता हुआ मेघकी रक्षा करता था । वह असुर सभी प्राणियों के खाद्यान्न का स्वयं भक्षणकर पुष्ट हो जाता था ।४। हे पराक्रमी इन्द्र ! हर्षकारी सोमरस को पाकर हृष्ट हुए तुमने युद्ध की इच्छा वाले वृत्र को अँधेरे में ही खोज लिया । अपने को न मारा जाने योग्य समझने वाले वृत्र के प्राण कहाँ हैं, यह बात तुम उस के द्वारा किये जाने वाले कार्योंसे जान सकेथे ।५। वह वृत्र जलमें स्तोता हुआ अँधेरे में ही बढ़ रहा था । सुसिद्ध सोम को पीकर पुष्ट होने के पश्चात् कामनाओं के पूर्ण करने वाले इन्द्र ने वज्र प्रहार द्वारा उसका बध किया था ।६। (३२)

उद् यदिन्द्रो महते दानवाय वधर्यमिष्ट सहो अप्रतीतम् ।
यदीं वज्रस्य प्रभृतौ ददाभ विश्वस्य जन्तोरधमं चकार ॥७
त्यं चिदर्णं मधुपं शयानमसिन्वं वव्रं मह्याददुग्रः ।
अपादमत्रं महता वधेन नि दुर्योण आवृणङ् मृध्रवाचम् ॥८
को अस्य शुष्मं तविषीं वरात एको धना भरते अप्रतीतः ।
इमे चिदस्य ज्रयसो नु देवी इन्द्रस्यौजसो भियसा जिहाते ॥९
न्यस्मै देवी स्वधितिर्जिहीत इन्द्राय गातुरुशतीव येमे ।
सं यदोजो युवते विश्वमाभिरनु स्वान्वे क्षितयो नमन्त ॥१०
एकं नु त्वा सत्पतिं पाञ्चजन्यं जातं शृणोमि यशसं जनेषु ।
तं मे जगृभ्र आशसो नविष्ठं दोषा वस्तोर्हवमानास इन्द्रम् ॥११
एवा हि त्वामृतुथा यातयन्तं मघा विप्रेभ्यो ददतं शृणोमि ।
किं ते ब्रह्माणो गृहते सखायो ये त्वाया निदधुः काममिन्द्र ।१२।३३

उस दैत्य वृत्ति वाले वृत्र पर जब इन्द्र ने अपने विजयशील वज्र को प्रेरित कर उसपर प्रहार किया,तब सभी जीवों के सामने उसे नीचे गिरा दिया ।७। विकराल कर्म वाले इन्द्रने चलते हुए मेघ को रोककर सोते हुए की रक्षा करने वाले सबको ढक लेने वाले वृत्रको पकड़ लिया और फिर उस पैर रहित एवं परिमाण रहित वृत्र को अपने वज्रप्रहार से छिन्न भिन्न कर दिया ।८। इन्द्र की शक्ति शत्रुओं का शोषण करने वाली है उसका निवारण करनेमें कोई समर्थ नहीं । इन्द्र अकेले ही असंख्यक शत्रुओं के धनों को जीत लेते हैं । आकाश और पृथिवी इन्द्रके पराक्रम से प्रभावित हुई गति करती हैं ।९। सबका धारक और प्रकाश से पूर्ण आकाश इन्द्र के सामने झुकता हुआ गति करता है । कामना वाली सुन्दरी के समान पृथिवी इन्द्र के लिए समर्पित होती है । जब वे इन्द्र सब प्राणियोंमें अपने बल को स्थापित करते हैं तब सभी प्रजा उन के सामने नमस्कार पूर्वक झुक जाती है ।१०। हे इन्द्र ! ऋषियों द्वारा सुना है कि तुम मनुष्यों के स्वामी हो । तुम सज्जनों का पालन करने वाले हो । मनुष्यों के कल्याण के लिए तुम्हारा आविर्भाव हुआ है रात दिन स्तुति में लीन, अपनी अभिलाषाओं को प्रकट करती हुई हमारी सन्तति स्तुति के पात्र इन्द्र का आश्रय प्राप्त करे ।११। हे इन्द्र ! तुम प्राणियों को प्रेरित करते तथा स्तुति करने वाले को धन देते हो । इन्द्र जो स्तुति करने वाले अपनी अभिलाषा तुम्हारे प्रति निवेदन करते हैं, तुम्हारे वे अनन्य मित्र तुमसे क्या पाते हैं ? ।१२। (३३)

॥ प्रथमोऽध्यायः समाप्तः ॥

सूक्त ३२ (तीसरा अनुवाक)

(ऋषि—प्राजापत्यः संवरणः । देवता—इन्द्रः । छन्द—त्रिष्टुप्)

महि महे तवसे दीध्ये नॄनिन्द्रयित्था तवसे अतव्यान् ।

यो अस्मै सुमतिं वाजसातौ स्तुतो जने समर्यश्चिकेत ॥१
स त्वं न इन्द्र धियसानो अर्कैर्हरीणां वृषन् योक्त्रमश्रेः ।
या इत्था मघवन्ननु जोषं वक्षो अभि प्रार्यः सक्षि जनान् ॥२
न ते त इन्द्राभ्यस्मदृष्वाऽयुक्तासो अब्रह्मता यदसन् ।
तिष्ठा रथमधि तं वज्रहस्ताऽऽ रश्मिं देव यमसे स्वश्वः ॥३
पुरू यत् त इन्द्र सन्त्युक्था गवे चकर्थोर्वरासु युध्यन् ।
ततक्षे सूर्याय चिदोकसि स्वे वृषा समत्सु दासस्य नाम चित् ॥४
वयं ते त इन्द्र ये च नरः शर्धो जज्ञाना याताश्च रथाः ।
आस्माञ्जगम्याददिशुष्म सत्वा भगो न हव्यः प्रभृथेषु चारुः ॥५॥१

जो इन्द्र पराक्रम सम्बन्धी कर्मों को करने में वीर पुरुषों से युक्त हैं एवं श्रेष्ठ बुद्धि से सभी पर शासन करने में समर्थ हैं, ऐसे ऐश्वर्यशाली इन्द्र के स्तोता निर्बल होते हुए भी महान् बल का सम्बन्ध करने में समर्थ हैं। वे इन्द्र अन्न लाभ के निमित्त स्तुत होकर हम पर कृपा करने वाले हों ।१। हे इन्द्र ! हे कामनाओं को पूर्ण करने वाले ! तुम हमारी कामना पूर्ण करते हुए प्रसन्न करने वाले स्तोत्रों से रथ में संयुक्त अश्वों की लगाम पकड़ते हो। हे इन्द्र ! हे मघवन् ! इस प्रकार तुम हमारे शत्रुओं को वशीभूत करनेमें समर्थ हो ।२। हे तेजस्वी इन्द्र! जो मनुष्य तुम्हारे भक्त नहीं है, जो तुम्हारे साथ नहीं रहते वे मनुष्य श्रेष्ठ कर्मों से हीन होने के कारण तुम्हारे नहीं हो सकते। वज्रिन् ! तुम हमारे यज्ञ को प्राप्त होने के लिए उस रथ पर चढ़ो जिसको तुम स्वयं चलाते हो ।३। हे इन्द्र ! तुम्हारे अपनेसे सम्बन्धित बहुत स्तोत्र हैं इसी कारण उर्वर भूखण्डों पर वर्षा करने की इच्छा से वृष्टि के अव-रोधकोंको छिन्न-भिन्न करते हो। तुम कामनाओं को पूर्ण करने वाले हो। तुम सूर्य स्थान में वृष्टि को रोकने वाले दस्युओं से संग्राम करके उनके नाम को मिटा देते हो ।४। हे इन्द्र ! हम ऋत्विक् और यज-मान आदि सब तुम्हारे ही हैं। यज्ञानुष्ठान द्वारा हम तुम्हारे बल को बढ़ाते हैं और आहुति देने के लिए तुम्हारे समीप जाते हैं। हे इन्द्र !

तुम्हारा बल सब में व्याप्त है। तुम्हारी कृपासे भग के समान प्रशंसा करने योग्य विश्वस्त भृत्यादि हमको कार्य में प्राप्त हों।५। (१)

पपृक्षेण्यमिन्द्र त्वे ह्योजो नृम्णानि च नृतमानो अमर्तः।
स न एनीं वसवानो रयिं दाः प्रार्यः स्तुषे तुविमघस्य दानम् ॥६
एवा न इन्द्रोतिभिरव पाहि गृणतः शूर कारून्।
उत त्वचं ददतो वाजसातौ पिप्रीहि मध्वः सुषुतस्य चारोः ॥७
उत त्ये मा पौरुकुत्स्यस्य सूरेस्त्रसदस्योर्हिरणिनो रराणाः।
वहन्तु मा दश श्येतासो अस्य गैरिक्षितस्य क्रतुभिर्नु सश्चे ॥८
उत त्ये मा मारुताश्वस्य शोणाः क्रत्वामघासो विदथस्य रातौ।
सहस्रा मे च्यवतानो ददान आनूकमर्यो वपुषे नार्चत् ॥९
उत त्ये मा ध्वन्यस्य जुष्टा लक्ष्मण्यस्य सुरुचो यतानाः।
मह्ना रायः संवरणस्य ऋषेर्व्रजं न गावः प्रयता अपि ग्मन् ॥१०॥२

हे इन्द्र ! तुम्हारी शक्ति पूजा करने के योग्य हैं, तुम अविनाशी सर्वत्र व्याप्त हो। तुम अपने तेज से संसार को आच्छादित करते हुए हमको उज्ज्वल धन प्रदान करो। हम ऐश्वर्यशाली दाता इन्द्र के दान के प्रशंसक हैं। तुम अपने रक्षा साधनों द्वारा हमारी रक्षा करो। युद्धमें तुम अपने आश्रय को प्रदान करते हुए हमारे सुसिद्ध सोमरस का पान करो और पुष्ट होओ।७। गैरिक्षित "पुरुकुत्स" के पुत्र 'त्रसदस्यु' और सुवर्णादि ऐश्वर्य के स्वामी हैं। इन्होंने दस घोड़े हमको दिये थे, वे श्वेत रङ्गके हैं। वे घोड़े हमको वहन करें। उनको रथमें जोड़कर हम शीघ्र ही चलें।८। 'मारुताश्व' के पुत्र विदथ ने जो लाल रङ्ग के द्रुतगामी घोड़े हमको दिये थे, वे हमको वहन करने वालेहों। उन्होंने हम को पूजनीय मानकर असंख्य धन तथा शरीर के आभूषण प्रदान किये हैं।९। 'लक्ष्मण' के पुत्र ध्वन्य ने हमको जो उज्ज्वल वर्णका नाश अपने कर्म में क्षमतावान् घोड़ा दिया था, वह हमको वहन करे। गौओं द्वारा गौशाला को प्राप्त करने के समान 'ध्वन्य' द्वारा दिया हुआ महान् ऐश्वर्य सम्वरण ऋषि के आश्रय को प्राप्त हों।१०। (२)

सूक्त ३४

(ऋषि–सम्वरणः प्राजापत्यः । देवता–इन्द्रः । छन्द–त्रिष्टुप् जगती)

अजातशत्रुमजरा स्वर्वत्यनु स्वधामिता दस्ममीयते ।
सुनोतन पचत ब्रह्मवाहसे पुरुष्टुताय प्रतरं दधातन ।।१
आ यः सोमेन जठरमपिप्रताऽमन्दत मघवा मध्वो अन्धसः ।
यदीं मृगाय हन्तवे महावधः सहस्रभृष्टिमुशना वधं यमत् ।।२
यो अस्मै घ्रंस उत वा य ऊधनि सोमं सुनोति भवति द्युमाँ
अह ।
अपाप शक्रस्ततनुष्टिमूहति तनूशुभ्रं मघवा यः कवासखः ।।३
यस्यावधीत् पितरं यस्य मातरं यस्य शक्रो भ्रातरं नात ईषते।
वेतीद्वस्य प्रयता यतंकरो न किल्बिषादीषते वस्व आकरः ।।४
न पञ्चभिर्दशभिर्वष्ट्यारभं नासुन्वता सचते पुष्यता चन ।
जिनाति वेदमुया हन्ति वा धुनिरा देवयुं भजति गोमति व्रजे।।५।।३

जिनसे शत्रुता करने का कोई साहस नहीं करता तथा जो शत्रुओं का संहार करने वाले हैं उनकी कभी भी क्षीण न होने वाली स्वर्ग दायिनी प्रचुर हवियाँ प्राप्त हों। हे ऋत्विगण ! उन इन्द्र के निमित्त पुरोडाश परिपक्व करो और श्रेष्ठ कर्मोंमें लगो। इन्द्र बहुतों द्वारा पूजित तथा स्तोत्रों के वहन करने वाले हैं।१। इन्द्र ने उदर को सोम रस से परिपूर्ण कर लिया और सुमधुर सोमरस को पीकर मुदित हो गए। फिर मृग नामक असुर को हनन करने की इच्छा से उन्होंने अपने अत्यन्त तेजस्वी वज्र को हाथ में उठा लिया।२। जो यजमान इन्द्र के निमित्त दिन रात सोम सिद्ध करते हैं वे अत्यन्त तेजस्वी होते हैं। जो यजमान यज्ञ नहीं करते तो वे भी धर्म और सन्तानकी इच्छा करते हैं सुन्दर आभूषणों को धारण करते हैं और विरुद्ध आचरण वाले व्यक्तियों की सहायता करते हैं, उन यजमानों को सामर्थ्यवान् इन्द्र त्याग देते हैं।३। हे इन्द्र ! तुम जिसके माता पिता अथवा भाई को दण्ड देते हो, उससे भी भयभीत नहीं होते और उसे सदैव नियन्त्रण में

रखने का प्रयत्न करते हो। अपने ऐश्वर्य को सब ओर से संग्रह करने में कुशल इन्द्र पापी से भी भयभीत नहीं होते वरन् सदैव उनके नाश को ही प्रस्तुत रहते हैं।४। शत्रुओं का संहार करने के लिये इन्द्र पाँच दस सहायकों को भी नहीं चाहते। जो व्यक्ति सोम सिद्ध नहीं करता तथा कुटुम्बियों का भी पालन नहीं करता, उसके साथ इन्द्र मेल नहीं रखते। शत्रुओं को कम्पायमान करने वाले इन्द्र उसका वध कर देते हैं याज्ञिकों के गोष्ठ को इन्द्र गौओं से युक्त करते हैं।५। (२)

वित्वक्षणा समृतौ चक्रमासजोऽसुन्वतो विषुणः सुन्वतो वृधः।
इन्द्रो विश्वस्य दमिता विभीषणो यथावशं नयति दासमार्यः ॥६
समीं पणेरजति भोजनं मुषे वि दाशुषे भजति सूनरं वसु।
दुर्गे चन ध्रियते विश्व आ पुरु जनो यो अस्य तविषीमचुक्रुधत्॥७
सं यज्जनौ सुधनौ विश्वशर्धसाववेदिन्द्रो मघवा गोषु शुभ्रिषु।
युजं ह्यन्यमकृत प्रवेपन्युदीं गव्यं सृजते सत्वभिर्धुनिः ॥८
सहस्रसामाग्निवेशिं गृणीषे शत्रिमग्न उपमां केतुमर्यः।
तस्मा आपः संयतः पीपयन्त तस्मिन् क्षत्रममवत् त्वेषमस्तु ।९।४

शत्रुओं को युद्ध में क्षीण करने वाले इन्द्र रथके पहियेको तेज होने की शक्ति देते हैं। वे सोम सिद्ध न करने वाले से दूर रहते और सोम-वान को बढ़ाते हैं। वे इन्द्र संसार के प्रेरक तथा भय के उत्पादक हैं। वे दस्युओं को अपने वशीभूत करते हैं।६। इन्द्र वणिकों के समान धन के लिये गमन करते हैं। मनुष्यों की प्रतिष्ठा बढ़ाने वाले उस धन को यज्ञ करने वाले यजमानों को प्रदान करते हैं। जो इन्द्र को कुपित करता है वह मनुष्य घोर सङ्कट में पड़ जाता है।७। सुन्दर तप वाले तथा महान् सामर्थ्य वालेदो व्यक्ति जब परस्पर विद्वेष करते है तब उन में जो यजमान यज्ञ करते हैं इन्द्र उसकी सहायता करते हैं। मेघों को कम्पायमान करने वाले इन्द्र उस याज्ञिक यजमानको गौएँ प्रदान करते हैं।८। हे इन्द्र ! असंख्य धनों के देने वाले "अग्निवेष" पुत्र ऋषि की हम प्रशंसा करते हैं। वे अनुपमेय तथा प्रसिद्ध हैं। जल राशि उन्हें

भले प्रकार पुष्ट करे । उनका धन बल तथा प्रकाश से पूर्ण हो ।६। (४)

सूक्त ३५

(ऋषि–प्रभूवसुराङ्गिरसः । देवता—इन्द्रः । छन्द—अनुष्टुप्, पंक्तिः)

यस्ते साधिष्ठोऽवस इन्द्र क्रतुष्टमा भर ।
अस्मभ्यं चर्षणीसहं सस्निं वाजेषु दुष्टरम् ॥१
यदिन्द्र ते चतस्रो यच्छूर सन्ति तिस्रः ।
यद् वा पञ्च क्षितीनामवस्तत् सु न आ भर ॥२
आ तेऽवो वरेण्यं वृषन्तमस्य हूमहे ।
वृषजूर्तिर्हि जज्ञिष आभूभिरिन्द्र तुर्वणिः ॥३
वृषा ह्यसि राधसे जज्ञिषे वृष्णि ते शवः ।
स्वक्षत्रं ते धृषन्मनः सत्राहमिन्द्र पौंस्यम् ॥४
त्वं तमिन्द्र मर्त्यममित्रयन्तमद्रिवः ।
सर्वरथा शतक्रतो नि याहि शवसस्पते ।५।५

हे इन्द्र ! तुम्हारा अत्यन्त, कार्य साधक कर्म हमारी रक्षा करने वाला हो । तुम्हारा कर्म सब मनुष्यों को पवित्र करने वाले यथा शुद्ध हैं । युद्ध स्थल में वह किसी के द्वारा फीका नहीं किया जा सकता ।१। हे इन्द्र ! तुम्हारे जो रक्षा साधन चार वर्णों में हैं तथा जो रक्षा साधन तीन लोकों में विद्यमान हैं, उन सब रक्षा साधनों को तुम हमारे लिए भले प्रकार प्राप्त कराओ ।२। हे इन्द्र ! तुम इच्छित फलके सिद्ध करने वाले हो । तुम्हारे रक्षा साधन ग्रहण करने योग्य हैं हम उनकी याचना करते हैं । उन्हें तुम मरुद्गण सहित हमको प्राप्त कराने वाले होओ।३। हे इन्द्र ! तुम इच्छित फलों की वर्षा करने वाले हो । तुम यजमानों को धन प्रदान करने के लिए ही उत्पन्न हुए हो । तुम्हारा बल फलों की वृष्टि करने में समर्थ है । तुम स्वभाव से पराक्रमी हो । विरोधियों का तुम सदा दमन करते हो । तुम्हारा पुरुषार्थ शत्रु संघ का नाश करने में समर्थ हैं ।४। हे वज्रिन् ! तुम्हारे रथ की चाल कभी मन्द नहीं

पड़ती । तुम शक्तियोंके स्वामी एवं सैकड़ों शुभ कर्मों के करने वाले हो। जो मनुष्य तुमसे शत्रुता का व्यवहार करने को उद्यत होता है उसे लक्ष्य कर तुम अपने बल सहित प्रयाण करते हो ।५। (५)

त्वामिद् वृत्रहन्तम जनासो वृक्तबर्हिषः ।
उग्रं पूर्वीषु पूर्व्यं हवन्ते वाजसातये ॥६
अस्माकमिन्द्र दुष्टरं पुरोयावानमाजिषु ।
सयावानं धनेधने वाजयन्तमवा रथम् ॥७
अस्माकमिन्द्रेहि नो रथमवा पुरंध्या ।
वयं शविष्ठ वार्यं दिवि श्रवो दधीमहि दिवि स्तोमं मनामहे ।८।६

हे इन्द्र ! हे शत्रुओं के हनन कर्त्ता ! युद्ध काल उपस्थित होने पर मनुष्य तुम्हारा ही आह्वान करते हैं क्योकि तुम्हारे अस्त्र युद्ध के लिए सदा उद्यत रहते हैं । तुम अपनी प्रजाओं में प्राचीन हो ।६। हे इन्द्र ! रथ के रक्षक होओ । वह रथ रणक्षेत्रमें सब प्रकार के धनों की कामना करता है और दासों के साथ चलता है । उसे कोई नहीं रोक सकता । वह युद्ध क्षेत्र में घुसा चला जाता है ।७। हे इन्द्र ! हमारे प्रति आत्मीयता का भाव रखते हुए पधारो । अपने श्रेष्ठ रक्षा साधनों से हमारे रथ की रक्षा करो । तुम अत्यन्त बलवान् एवं प्रकाशवान् तुम्हारी कृपा से हम वरण करने योग्य धनों को तुम्हारे द्वारा स्थापित करावें तुम तेजस्वी हो । हम तुम्हारा भले प्रकार स्तवन करते हैं ।८। (६)

सूक्त ३६

(ऋषि–प्रभूवसुराङ्गिरसः । देवता–इन्द्रः । छन्द–त्रिष्टुप्, जगती)

स आ गमदिन्द्रो यो वसूनां चिकेतद् दातुं दामनो रयीणाम् ।
धन्वचरो न वंसगस्तृषाणश्चकमानः पिबतुं दुग्धमंशुम् ॥१
आ ते हनू हरिवः शूर शिप्रे रुहत् सोमो न पर्वतस्य पृष्ठे ।
अनु त्वा राजन्नर्वतो न हिन्वन् गीर्भिर्मदेम पुरुहूत विश्वे ॥२
चक्रं न वृत्तं पुरुहूत वेपते मनो भिया मे अमतेरिदद्रिवः ।
रथादधि त्वा जरिता सदावृध कुविन्नु स्तोषन्मघवन् पुरूवसुः॥३

एष ग्रावेव जरिता इन्द्रेयर्ति वाचं बृहदाशुषाणः ।
प्र सव्येन मघवन् यंसि रायः प्र दक्षिणिद्धरिवो मा वि वेनः ॥४
वृषा त्वा वृषणं वर्धतु द्यौर्वृषा वृषभ्यां वहसे हरिभ्याम् ।
स नो वृषा वृषरथः सुशिप्र वृषक्रतो वृषा वज्रिन् भरे धाः ॥५
यो रोहितौ वाजिनौ वाजिनीवान् त्रिभिः शतैः सचमानावदिष्ट ।
यूने समस्मै क्षितयो नमन्तां श्रुतरथाय मरुतो दुवोया ।६।७

इन्द्र हमारे यज्ञ स्थान में आवें । वे देवता जो धनों के ज्ञाता है, उनका स्वरूप कैसा है ? वे इन्द्र ऐश्वर्य का दान करने वाले हैं और दानशील स्वभाव से युक्त हैं । धनुष सहित जाने वाले धनुषधारी के समान साहसपूर्वक गमन करने वाले इन्द्र सोम पीकर अपनी तृषा का निवारण करें ।१। हे दो घोड़े से युक्त इन्द्र ! हमारे द्वारा प्रदत्त सोम पर्वत की चोटी के समान तुम्हारे मुख प्रदेश पर पहुँचे । हे इन्द्र ! तुम सुशोभित हो । घास से जैसे अश्व तृप्त होते हैं वैसे ही हम स्तुतियों से तुम्हें तृप्त करते हैं । तुम बहुतों द्वारा पूजितहो ।२।हे बहुस्तुत वज्रिन् पृथिवी पर स्थित पहिये के समान हमारा मन दारिद्य की आशङ्का से काँपया है । तुम सदा प्रवृद्ध हो । स्तुति करने वाले "पुरवसु" ऋषि तुम्हारी अत्यन्त स्तूति करते हैं । तुम रथ पर चढ़ कर उनके समक्ष पधारो ।३। हे इन्द्र ! प्राप्त फल को भोगने वाले स्तोता सोम कूटने के प्रस्तरके समान तुम्हारा स्तवन करते हैं। तुम अश्ववान् एवं धनवान् हो । तुम अपने बाँए अथवा दाँए हाथों से धन प्रदान करते हो । तुम हमारे मनोरथ को निष्फल नहीं करना ।४। हे इन्द्र ! तुम कामनाओंके पूर्ण करने वाले हो । इच्छाओं की वर्षा करने वाली आकाश पृथिवी तुम्हें बढ़ावें । तुम वर्षाकरने वाली हो । अश्व तुम्हें यज्ञ-स्थानमें लाते हैं । हे वज्रिन् ! तुम्हारा रथ मङ्गलों की वृष्टि करने वाला है । युद्ध में तुम हमारे रक्षक होओ ।५। हे मरुद्गण ! तुम इन्द्र के सहायक हो ऐश्वर्यशाली राजा 'श्रूतरथ' ने हमको लाल रङ्ग के दो घोड़े और तीन सौ गायें प्रदान की थीं । उस सतत युवा श्रुतरथ को उसकी सम-

पूर्ण प्रजा अभिवादन करती और उसकी आज्ञा का पालन करती है।६।
(७)

सूक्त ३७

(ऋषि–अत्रि: । देवता–इन्द्र: । छन्द–त्रिष्टुप्)

सं भानुना यतते सूर्यस्याऽऽजुह्वानो घृतपृष्ठ: स्वञ्चा: ।
तस्मा अमृध्रा उषसो व्युच्छान् य इन्द्राय सुनवामेत्याह ॥१
समिद्धाग्निर्वनवत् स्तीर्णबर्हिर्युक्तग्रावा सुतसोमो जराते ।
ग्रावाणो यस्येषिरं वदन्त्ययदध्वर्युर्हविषाव सिन्धुम् ॥२
वधूरियं पतिमिच्छन्त्येति य ईं वहाते महिषीमिषिराम् ।
आस्य श्रवस्याद् रथ आ च घोषात् पुरू सहस्रा परि वर्तयाते॥३
न स राजा व्यथते यस्मिन्निन्द्रस्तीव्रं सोमं पिबति गोसखायम् ।
आ सत्वनैरजति हन्ति वृत्रं क्षेति क्षितीः सुभगो नाम पुष्यन्॥४
पुष्यात् क्षेमे अभि योगे भवात्युभे वृतौ सयाती सं जयति ।
प्रिय: सूर्ये प्रियो अग्ना भवाति य इन्द्राय सुतसोमो ददाशत्।५।८

विधिवत् आह्वान किये हुये अग्नि हवि देने से अग्नि प्रज्वलित होकर सूर्य रश्मियों से युक्त होने का प्रयत्न करते हैं। जो व्यक्ति इन्द्र के लिए यज्ञ करो ऐसा कहता है उसके लिए उषा अहिंसित होकर विविध रूपों से प्रकट होती हैं।१। जो यजमान अग्नि को दीप्त करते तथा कुश की वृद्धि करते हैं वे यज्ञ कर्म में नियुक्त होकर प्रस्तर द्वारा सोमरस को निकालते हुए स्तुति करते हैं। जो अध्वर्यु हव्य प्रदान करते हैं वे सिन्धु के समान विस्तृत एव सम्पन्न होते हैं।२। जैसे किसी स्त्री को सौभाग्यवती और पत्नी बनने के योग्य जानकर पुरुष उससे विवाह करता है और वैसे ही वह महिषी भी पति की कामना करती हुई उसे प्राप्त होती है। उसी प्रकार इन्द्रका रथ हमारी कामना करता हुआ हमको प्राप्त हो। वह शब्द करता हुआ सब ओरसे धन लावे।३। जिन यजमानों के यज्ञमें इन्द्र दुग्धयुक्त सोमरस को पीते हैं वे यजमान

दुखी नहीं होते। वे अपने अनुचरोंके साथ जाते हुये शत्रुओं को मानते और प्रजा-रक्षण में समर्थ होते हैं। वे अनेक सुखों का उपभोग करते हुए इन्द्र की पूजा करते हैं।४। जो इन्द्र के लिये सिद्ध सोमरस देता है, वह कुटुम्बियों को सुखी रखता है। वह अप्राप्त धन को पाने में सफल होता हुआ धन की रक्षा करने में समर्थ होता है वह शत्रुओं को तिरस्कृत करता हुआ सूर्य और अग्नि दोनों का प्रिय होता है।५।
(८)

सूक्त ३८

(ऋषि–अत्रिः। देवता–इन्द्रः। छन्द–अनुष्टुप्)

उरोष्ट इन्द्र राधसो विभ्वी रातिः शतक्रतो।
अधा नो विश्वचर्षणे द्युम्ना सुक्षत्र मंहय ॥१
यदीमिन्द्र श्रवाय्यमिषं शविष्ठ दधिषे।
पप्रथे दीर्घश्रुत्तमं हिरण्यवर्ण दुष्टरम् ॥२
शुष्मासो ये ते अद्रिवो मेहना केतसापः।
उभा देवावभिष्टये दिवश्च ग्मश्च राजथः ॥३
उतो नो अस्य कस्य चिद् दक्षस्य तव वृत्रहन्।
अस्मभ्यं नृम्णमा भराऽस्मभ्यं नृमणस्यसे ॥४
नू त आभिरभिष्टिभिस्तव शर्मञ्छतक्रतो।
इन्द्र स्याम सुगोपाः शूर स्याम सुगोपाः ॥५॥९

हे इन्द्र! तुमने सैकड़ों कल्याणकारी कार्य किये हैं। तुम अपने ऐश्वर्य का महान दान करते हो। हे सबके देखने वाले! हे श्रेष्ठ बल और ऐश्वर्य के स्वामिन्! तुम हमको असंख्य धन प्रदान करो।१। हे सुवर्ण के समान कान्तिमान्! हे अत्यन्त शक्तिशालिन् इन्द्र! तुम यश दायक अन्न के धारण करने वाले हो, अतः दीर्घ काल तक ऋतुओं से अपराजित रहते हुए हम यशोजनक अन्न बल की वृद्धि करने में समर्थ हों। हे वज्रिन्! पूजन के पात्र सुविख्यात बल वाले मरुद्गण तुम्हारे बल से युक्त हैं तुम और वे दोनों ही सूर्य के समान पृथिवी का पालन

करते हुए उसे महान् ऐश्वर्य प्रदान करते हो ।२-३। हे वृत्र का संहार करने वाले इन्द्र ! हम तुम्हारे बलकी स्तुति करते हैं। तुम हमको श्रेष्ठ धन लाकर देते हो, क्योंकि तुम हमारे लिए धन की अभिलाषा करते हो ।४। हे शतकर्मा इन्द्र ! तुम्हारे आश्रय में रहते हुए हम शीघ्र हो सुख से सम्पन्न हों। हे इन्द्र ! तुम्हारे सुखका हम प्राप्त करें। हे वीर ! हम उत्तम भूमि और कुटुम्ब ले युक्त हों ।५। (६)

सूक्त ३९

(ऋषि-अत्रिः। देवता-इन्द्रः। छन्द-अनुष्टुप् पंक्तिः)

यदिन्द्र चित्र मेहना ऽस्ति त्वादातमद्रिवः ।
राधस्तन्नो विदद्वस उभयाहस्त्या भर ॥१
यन्मन्यसे वरेण्यमिन्द्र द्युक्षं तदा भर ।
विद्याम तस्य ते वयमकूपारस्य दावने ॥२
यत् ते दित्सु प्रराध्यं मनो अस्ति श्रुतं बृहत् ।
तेन दृलहा चिदद्रिव आ वाजं दर्षि सातये ॥३
मंहिष्ठं वो मघोनां राजानं चर्षणीनाम् ।
इन्द्रमुप प्रशस्तये तूर्वीभिर्जुजुषे गिरः ॥४
अस्मा इत् काव्यं वच उक्थमिन्द्राय शंस्यम् ।
तस्म उ ब्रह्मवाहसे गिरो वर्धन्त्यत्रयो गिरः शुम्भन्त्यत्रयः।५।१०

हे इन्द्र ! हे वज्रधारिन् ! तुम अत्यन्त अद्भुत रूप वाले हो। तुम्हारे पास जो दान देने योग्य अमूल्य धन है, उसे हमारे लिए अपने दोनों हाथोंसे प्रदान करो ।१। हे इन्द्र ! जिस अन्नको तुम उत्तम मानते हो अपना वह अन्न हमको प्रदानकरो। हम तुम्हारे उस उत्कृष्ट अन्नको प्राप्त करनेमें सर्वथा योग्य हैं। हे इन्द्र ! तुम्हारा धन दान देने निमित्त विस्तीर्ण रहता है। हे वज्रिन्। तुम हमको श्रेष्ठ पौष्टिक धन देने के लिए सदा इच्छा करते रहते हो ।२-३। हे मनुष्यों ! इन्द्र हविरूप धनसे सम्पन्न हैं। वे तुम्हारे लिए अत्यन्त पूज्य तथा अखिल मनुष्यों के अधीश्वर हैं। स्तुति करने वाले पुरातन स्तोत्रोंसे उनकी स्तुति एवं परिचर्या

करते हैं। उन्हीं महान् इन्द्रके लिए यह काव्य वचन कहने योग्य हुआहै वे स्तोत्रों को बढ़ाते हैं। अत्रिपुत्र ऋषिगण उनके समक्ष स्तोत्रों को उच्चारित करते हुए उन्हें सुशोभित करते हैं ।४-५। (१०)

सूक्त ४०

(ऋषि–अत्रि: । देवता–इन्द्रः, सूर्यः । छन्द–उष्णिक्, त्रिष्टुप् अनुष्टुप्)

आ याह्यद्रिभिः सुतं सोमं सोमपते पिब ।
वृषन्निन्द्र वृषभिर्वृत्रहन्तम ॥१
वृषा ग्रावा वृषा मदो वृषा सोमो अयं सुतः ।
वृषन्निन्द्र वृषभिर्वृत्रहन्तम ॥२
वृषा त्वा वृषणं हुवे वज्रिञ्चित्राभिरूतिभिः ।
वृषन्निन्द्र वृषभिर्वृत्रहन्तम ॥३
ऋजीषी वज्री वृषभस्तुराषाट्छुष्मी राजा वृत्रहा सोमपावा ।
युक्त्वा हरिभ्यामुप यासदर्वाङ् माध्यंदिने सवने मत्सदिन्द्रः॥४
यत् त्वा सूर्य स्वर्भानुस्तमसाविध्यदासुरः ।
अक्षेत्रविद् यथा मुग्धो भुवनान्यदीधयुः ।५।११

हे इन्द्र ! हमारे यज्ञ में पधारो। हे सोमेश्वर इन्द्र ! प्रस्तर द्वारा सुसिद्ध सोमरस आकर पान करो। हे फलों की वर्षा करने वाले, हैं शत्रुओं का अत्यन्त संहार करने वाले इन्द्र ! तुम फलों की वर्षा करने वाले मरुद्गण के साथ सोमपान करो।१। अभिषव करने वाला प्रस्तर माधुर्य वर्षक है। सोमरस के पीने से उत्पन्न हुआ हर्ष कामनाओं की वर्षा करने में समर्थ हैं। हे फलों को वर्षा करने वाले शत्रुओं के उत्तम नाशक इन्द्र ! तुम मरद्गण के साथ सोमपान करो ।२। हे वज्रिन् ! तुम सोम के सेवन कर्त्ता और अभीष्टों की वर्षा करने वाले हो। हम तुम्हारे अद्भुत रक्षा साधनों की याचना करते हैं। हे फलों के वर्षक! हे शत्रुओं के उत्तम नाशक इन्द्र ! तुम मरुतो के साथ सोम पान करो ।३। इन्द्र वज्रधारी एवं अग्रणी हैं। वे अभीष्टोंकी वर्षाकरने वाले शत्रुओं का हनन करने वाले, महाबली सबके स्वामी, वृत्र के मारने वाले सोम

रस के पीने वाले हैं। ऐसे इन्द्र अपने रथ में अश्वों को जोड़कर हमारे सामने आवें और मध्य सवन में सोम पीकर पुष्टि को प्राप्त हों ।४। हे सूर्य ! 'स्वर्भानु' नामक दैत्य ने जब तुम्हें अन्धकार से ढक लिया था, उन समय सभी लोक एक सा दिखाई देता था कि वहाँ के निवासी विमूढ़ हो गये हैं और अपने-अपने स्थान को भी वे नहीं जा रहे हैं ।५। (११)

स्वर्भानोरध यदिन्द्र माया अवो दिवो वर्तमाना अवाहन् ।
गूलहं सूर्यं तमसापव्रतेन तुरीयेण ब्रह्मणाविन्ददत्रिः ॥६
मा मामिम तव सन्तमत्र इरस्या द्रुग्धो भियसा नि गारीत् ।
त्वा मित्रो असि सत्यराधास्तौ मेहावतं वरुणश्च राजा ॥७
ग्राव्णो ब्रह्मा युयुजानः सपर्यन् कीरिणा देवान् नमसोपशिक्षन् ।
अत्रिः सूर्यस्य दिवि चक्षुराधात् स्वर्भानोरप माया अघुक्षत् ॥८
यं वै सूर्यं स्वर्भानुस्तमसाविध्यदासुरः ।
अत्रयस्तमन्वविन्दन् नह्यन्ये अशक्नुवन् ।९।१२

हे इन्द्र ! जब तुमने स्वभानु की तेजस्वी माया का निवारण किया था। तब वृत्र को नष्ट करने वाले अन्धकार द्वारा ढके हुए सूर्यको अत्रि की चार ऋचाओं द्वारा प्रकट कर दिया ।६। सूर्य ने कहा—हे अत्रि ऋषि ! हम ऐसी अवस्था में तुम्हारी ही रक्षा चाहते हैं। अन्न की कामना वाला द्रोही राक्षस इस डरावने अन्धकार के द्वारा मुझे निगल न ले। इसलिए तुम और वरुण दोनोंही हमारे रक्षक होओ। तुम सत्य के पालन कर्त्ता और हमसे मित्रभाव रखने वाले होओ ।७। उस समय ऋत्विज अत्रिने सूर्य को नमस्कार कर स्तुति की। पत्थरसे कूटकर इन्द्र के लिए सोम सिद्ध किया स्तोत्रों ! द्वारा अन्तरिक्ष में सूर्य के चक्षु को धारण किया। उस समय स्वर्भानु की सब माया उन्होंने दूर कर दी।८। जिस सूर्य को स्वर्भानु ने अपनी माया से अन्धकार द्वारा ढक दिया था, उस सूर्य को मुक्त करने में अत्रिपुत्र के सिवाय अन्य कोई भी समर्थ न हो सका ।९। (१२)

HSS 1:46

सूक्त ४१

(ऋषि–अत्रिः । देवता–विश्वेदेवाः । छन्द–त्रिष्टुबादीनि)

को नु वां मित्रावरुणावृतायन् दिवो वा महः पार्थिवस्य वा दे।
ऋतस्य वा सदसि त्रासीथां नो यज्ञायते वा पशुषो न वाजान्॥१
ते नो मित्रो वरुणो अर्यमायुरिन्द्र ऋभुक्षा मरुतो जुषन्त ।
नमोभिर्वा ये दधते सुवृक्ति स्तोमं रुद्राय मीलहुषे सजोषाः ॥२
आ वां येष्ठाश्विना हुवध्यै वातस्य पत्मन् रथ्यस्य पुष्टौ ।
उत वा दिवो असुराय मन्म प्रान्धांसीव यज्यवे भरध्वम् ।
प्र सक्षणो दिव्यः कण्वहोता त्रितो दिवः सजोषा वातो अग्निः ।
पूषा भगः प्रभृथे विश्वभोजा आजि न जग्मुराश्वश्वतमाः ॥४
प्र वो रयिं युक्ताश्वं भरध्वं राय एषेऽवसे दधीत धीः ।
सुशेव एवैरौशिजस्य होता ये व एवा मरुतस्तुराणाम् ।५।१३

हे मित्रावरुण ! तुम्हारे निमित्त यजन करते की इच्छा करने वाला कौनसा यजमान यज्ञ करनेमें समर्थ होता है ? तुम दोनों आकाश भूमण्डल तथा अन्तरिक्ष, इनमें से किस स्थान में रहकर हमारा पालन करते यथा हविदाता को अन्न और पशु देते हो ? हे मित्र वरुण अर्यमा, इन्द्र, ऋभुक्षा, वायु और मरुद्गण, तुम मनुष्यों को स्नेह पूर्वकचाहने वाले हो । जो वर्षणशील शत्रुओंको रुलाने वाले एवं उत्तम स्तुतियों के धारण करने वाले हैं वे सभी साधन और शक्तिसे युक्त होकर हमारे प्रति स्नेह करें ।२। हे अश्विद्वय ! तुम दमन करनेमें समर्थ हो । हम तुम्हारे रथ को वेगवान करनेके लिए बुलाते हैं । हे ऋत्विजो तुम तेजस्वी और प्राणों का अपहरण करने में समर्थ रुद्र के लिए हव्य और स्तुति प्रस्तुत करो ।३। विद्वज्जन जिन्हें आहूत करते हैं जो यज्ञानुष्ठान को स्वीकार करते हैं, जो शत्रुओं का संहार करने में समर्थ हैं वे वायु, अग्नि, पूषा प्रकट होकर सूर्य के समान वीरता करने वाले हों । यह सभी देवता संहार के आश्रय रूप है । यह हमारे यज्ञ में वेगवान अश्व के युद्ध में वेग से दौड़ने के समान शीघ्र आवें । हे मरुद्गण ! तुम हमारे लिए

अश्वयुक्त धन प्राप्त कराओ स्तुति करने वाले गौ अश्वादि की कामना से तथा प्राप्त धन की रक्षा के यिये तुम्हारा स्तवन करते हैं। उशिज-पुत्र कक्षीवान् के होता अत्रि गमनशील अश्व पाकर सुखी हों।४-५। (११)

प्र वो वायुं रथयुजं कृणुध्वं प्र देवं पनितारमर्कैः ।
इषुध्यव ऋतसापः पुरन्धीर्वस्वीर्नो अत्र पत्नीरा धिये धुः ॥६
उप व एषे वन्द्येभिः शूषैः प्र यह्वी दिवश्चितयद्भिरर्कैः ।
उषासानक्ता विदुषीव विश्वमा हा वहतो मर्त्याय यज्ञम् ॥७
अभि वो अर्चे पोष्यावतो नृन् वास्तोष्पतिं त्वष्टारं रराणः ।
धन्या सजोषा धिषणा नमोभिर्वनस्पतिरोषधी राय एषे ॥८
तुजे नस्तने पर्वताः सन्तु स्वैतवो ये वसवो न वीराः ।
पनित आप्त्यो यजतः सदा नो वर्धान्नः शंसं नर्यो अभिष्टौ ॥९
वृष्णो अस्तोषि भूम्यस्य गर्भं त्रितो नपातमपां सुवृक्ति ।
गृणीते अग्निरेतरी न शूषैः शोचिष्केशो नि रिणाति वना॥१०॥१४

हे ऋत्विजो ! उज्ज्वल कामनाओं के पूर्ण करने वाले, ब्राह्मण के समान पूजनीय, स्तुतिके पात्र एवं फलप्रदान करने वाले वायु देवताको यज्ञ स्थान पर बुलाने के लिये स्तोत्रों द्वारा रथ पर चढ़ाओं। यज्ञ को ग्रहण करने बाली, सुन्दर रूप वाली, प्रशंसा की पात्र देवाङ्गनाएँ भी हमारे यज्ञ में आवें ।६। हे दिन और रात्रि ! तुम दोनों महान् हो। हम वन्दना के योग्य दिव्य लोकवासी देवताओं के साथ तुम दोनों को भी सुन्दर तेजस्वी स्तोत्र और हवि देते हैं। देवगण ! तुम कर्मों को जानते हुए यजमान के यज्ञ में पधारो ।७। तुम सब देवताओं के रक्षक और यज्ञ में अग्रगण्य रहते हो। स्तोत्र द्वारा अथवा हव्य प्रदान करते हुए धन प्राप्ति के लिए हम तुम्हारा आह्वान करते हैं। त्वष्टा, वाणी, वनस्पति और औषधियों की हम स्तुति करते हैं ।८। संसार के पालन-कर्त्ता मेघ असीमित दानके लिए हमारे अनुकूल हों। वे स्तुतियों के पात्र के योग्य मनुष्य का हित-साधन करने वाली हमारी स्तुतिके द्वारा प्रसंन होते हुए हमको हर प्रकार सुसम्पन्न करें ।९। हम वृष्टिकारक, अन्तरिक्ष

के गर्भ में स्थित सृष्टि के पालन कर्त्ता विद्युत रूप अग्नि की,पाप नाशक स्तोत्रों से स्तुति करते हैं। वे अग्नि तीन रूप वाले तथा तीन स्थानों में व्याप्त हैं। वे सुख देनेवाले अग्निमेरे चलनेके समय मुझपर क्रोधित नहीं होते, किन्तु अपनी तेजोमयी ज्वालाओं से वनों को भस्म करते हैं।१०।

(१४)

कथा महे रुद्रियाय ब्रवाम कद् राये चिकितुषे भगाय।
आप ओषधीरुत नोऽवन्तु द्यौर्वना गिरयो वृक्षकेशाः ॥११
शृणोतु न ऊर्जां पतिर्गिरः स नभस्तरीयाँ इषिरः परिज्मा।
शृण्वन्त्वापः पुरो न शुभ्राः परि स्रुचो बबृहाणस्याद्रेः ॥१२
विदा चिन्नु महान्तो ये व एवा ब्रवाम दस्मा वार्यं दधानाः।
वयश्चन सुभ्व आव यन्ति क्षुभा मर्तमनुयतं वधस्नैः ॥१३
आ दैव्यानि पार्थिवानि जन्माऽपश्चाच्छा सुमखाय वोचम्।
वर्धन्तां द्यावो गिरश्चन्द्राग्रा उदा वर्धन्तामभिषाता अर्णाः ॥१४
पदेपदे मे जरिमा नि धायि वरूत्री वा शक्रा या पायुभिश्च।
सिषक्तु माता मही रसा नः स्मत् सूरिभिर्ऋजुहस्त ऋजुवनिः
।१५।१५

हम अत्रि-वंशज, रुद्र के पुत्र मरुद्गण की किस भाँति उपासना करें ? सर्वज्ञाता भगदेवता के लिए, धन प्राप्ति के निमित्त किस स्तोत्र का पाठ करें ? जल, औषधियाँ, आकाश, वन एवं वृक्ष जिन पर्वतों के केश-समान हैं, वे हमारे रक्षक बनें।११। बल और अन्न के अधीश्वर और आकाशमें विचरणशील वायु देवता हमारे स्तोत्र को श्रवण करे। नगरों से समान शुभ्र जल की धारा हमारी स्तुति ग्रहण करे।१२। हे मरुद्गण ! तुम महान् हो। हमारे स्तोत्रों को शीघ्र जानो। हम तुम्हारे स्तोता हैं, उत्तम हवियाँ एकत्र कर तुम्हारा स्तवन करते हैं। तुम हमारे अनुकूल होकर आओ, शत्रुओं का अस्त्रों द्वारा हनन करके हमारे पास पधारो।१३। हम देवताओं के लिए पृथिवी के लिए, जन्म और विजय प्राप्ति के लिए शोभनकर्मा मरुद्गण की स्तुति करते हैं। हमारी स्तुतियाँ बढ़ें। दिव्यलोक हमको समृद्ध बनावे। नदियों को मरु-

द्गण जलसे परिपूर्ण करें ।१४। जो सभी विघ्नोंको शान्त करके हमारी रक्षा करने में सक्षम है, वह सभी को जन्म देने वाली पृथिवी स्तुतियों को स्वीकार करे। हम सदा उसकी स्तुति करते हैं । समृद्ध वाणी से युक्त स्तुति करने वालों के प्रति अनुकूल होती हुई, कृपापूर्ण हाथ को उठाकर वह हमारा कल्याण करे ।१५। (१५)

कथा दाशेम नमसा सुदानूनेवया मरुतो अच्छोक्तौ प्रश्रवसो मरुतो अच्छक्तौ ।
मा नोऽहिर्बुध्न्यो रिषे धादस्माकं भूदुपमातिवनिः ॥१६
इति चिन्नु प्रजायै पशुमत्यै देवासो वनते मर्त्यो व
आ देवासो वनते मर्त्यो वः ।
अत्रा शिवां तन्वो धासिमस्या जरां चिन्मे निर्ऋतिर्जग्रसीत॥१७
तां वो देवाः सुमतिमूर्जयन्तीमिषमश्याम वसवः शसा गोः ।
सा नः सुदानुर्मृलयन्ती देवी प्रति द्रवन्ती सुविताय गम्याः ॥१८
अभि न इला यूथस्य माता स्मन्नदीभिरुर्वशी वा गृणातु ।
उर्वशी वा बृहद्दिवा गृणानाऽम्यूर्ण्वाना प्रभृथस्यायोः ॥१६
सिषुक्तु न ऊर्जव्यस्य पुष्टेः ।२०।१६

उन दानशील मरुद्गण की स्तुति हम कैसे करें ? कौन से स्तोत्र द्वारा उनकी पूजा करें ? क्या वर्तमान स्तोत्र से मरुद्गण की स्तुति करना सम्भव है? अहिर्बुध्न्यदेव हमारा अमङ्गल न करें वरन् वे हमारे शत्रुओं का संहार करें ।१६। हे देवताओं ! यजमान लोग सन्तान और पशु-प्राप्ति के निमित्त तुम्हारी पूजा करते हैं। वे सुखकारी अन्न से हमारे देह पुष्ट करें और बुढ़ापे को हमसे दूर ही रखें। १७। हे तेजस्वी वसुओ ! हमारी धेनुरूपी बुद्धि द्वारा हम हृष्टकारी तथा पोषक अन्न को प्राप्त करें । वह दानमय स्वभाव वाली तथा सर्व सुखों की देने वाली बुद्धि देवी हमारे कल्याणके लिए हमको शीघ्र ही प्राप्त हो ।१८। गवादि समूह के देने वाली इडा और उर्वशी जल पूर्ण नदियों के साथ सुसङ्गत हुई हमारे अनुकूल हों । उर्वशी हमारे कार्यों की प्रशंसा करती हुई यजमानों को अपने तेज से परिपूर्ण करती हुई यहाँ पधारे ।१९।

पोषण करने वाले 'ऊर्जव्य' राजाका देश अत्यन्त शक्ति तथा समृद्धि को को प्राप्त करें ।२०।　　　　　　　　　　　　　　　　　　(१६)

सूक्त ४२

(ऋषि–अत्रिः । देवता–विश्वेदेवाः, रुद्रः । छन्द–त्रिष्टुप्,एकपदा विराट्)

प्र शंतमा वरुणं दीधिती गीर्मित्रं भगमदितिं नूननमश्याः ।
पृषद्योनिः पञ्चहोता शृणोत्वतूर्तपन्था असुरो मयोभुः ॥१
प्रति मे स्तोममदितिजगृम्यात् सूनुं न माता हृद्यं सुशेवम् ।
ब्रह्म प्रियं देवहितं यदस्त्यहं मित्रे वरुणे यन्मयोभु ॥२
उदीरय कवितमं कवीनामुनत्तैनमभि मध्वा घृतेन ।
स नो वसूनि प्रयता हितानि चन्द्राणि देवः सविता सुवाति ॥३
समिन्द्र णो मनसा नेषि गोभिः सं सूरिभिर्हरिवः सं स्वस्ति ।
सं ब्रह्मणा देवहितं यदस्ति सं देवानां सुमत्या यज्ञियानाम् ॥४
देवो भगः सविता रायो अंश इन्द्रो वृत्रस्य संजितो धनानाम् ।
ऋभुक्षा वाज उत वा पुरंधिरवन्तु नो अमृतासस्तुरासः ।५।१७

दी हुई हवियों के साथ हमारे सुखदायक स्तोत्र, वरुण, मित्र, भग, सूर्य के पास पहुँचे । पञ्च वायु के साधनभूत, अन्तरिक्ष में रहने वाले, अप्रतिहत गति वाले, प्राणों के देन वाले, सुख के प्रवर्त्तक वायु हमारे स्तोत्र को सुनें ।१। हमारे अन्तःकरण से निकले हुए स्तोत्र को अदिति अपने पुत्रको ग्रहण करने के समान ग्रहण करें । हम उषा और रात्रि, मित्र और वरुण के लिए सुखदायक तथा देवताओं के ग्रहण करने योग्य स्तोत्र प्रदान करें ।२। हे ऋत्विग्गण ! तुम अत्यन्त तेजस्वी अग्नि को प्रदीप्ति करो । मधुर सोम और घृत से इन्हें सींचो । वे आदित्य हमको शुद्ध प्रसन्नताप्रद और हितकारी सुवर्ण दें ।३। हे इन्द्र ! तुम प्रसन्न होकर गवादि धन देते हो । हे अश्विनीकुमारों से युक्त इन्द्र ! तुम हमको विद्वान् पुत्र, दिव्य सुख अन्न तथा देवताओं की कृपा प्राप्त कराने वाले हो ।४। ऐश्वर्यों के स्वामी सवितादेव, भग, वृत्र संहारक इन्द्र सर्व प्रकार धनोंको वशीभूत करने वाले ऋभुक्षा पुरन्धि आदि

सभी अमरत्व प्राप्त देवता हमारे यज्ञ स्थान में आकर शीघ्र रक्षक हों ।५। (१७)

मरुत्वतो अप्रतीतस्य जिष्णोरजूर्यतः प्र ब्रवामा कृतानि ।
न ते पूर्वे मघवन् नापरासो न वीर्यं नूतनः कश्चनाप ॥६
उप स्तुहि प्रथमं रत्नधेयं बृहस्पतिं सनितारं धनानाम् ।
यः शंसते स्तुवते शंभविष्ठः पुरूवसुरागमज्जोहुवानम् ॥७
तवोतिभिः सचमाना अरिष्टा बृहस्पते मघवानः सुवीराः ।
ये अश्वदा उत वा सन्ति गोदा ये वस्त्रदाः सुभगास्तेषु रायः ॥८
विसर्माणं कृणुहि वित्तमेषां ये भुञ्जते अपृणन्तो न उक्थैः ।
अपव्रतान् प्रसवे वावृधानान् ब्रह्मद्विषः सूर्याद् यावयस्व ॥९
य ओहते रक्षसो देववीतावचक्रेभिस्तं मरुतो नि यात ।
यो वः शमीं शशमानस्य निन्दात् तुच्छ्यान् कामान् करते सिष्विदानः ।१०।१८

हम यजमान मरुद्गण से युक्त इन्द्र के कार्यों का बखान करते हैं। वे कभी युद्ध क्षेत्र से हटते नहीं। वे सदा विजय करने वाले तथा कभी वृद्ध न होने वाले हैं। हे इन्द्र ! कोई भी पुरातन पुरुष तुम्हारे बल की समानता नहीं करते। उनके पश्चात् होने वाले व्यक्ति भी तुम्हारी समानता नहीं कर सके। कोई नवीन पराक्रमी भी तुम्हारी समानता नहीं कर सकता।६। हे विज्ञ ! तुम श्रेष्ठ ज्ञान के देने वाले बृहस्पति का स्तवन करो। वे हविरन्न के विभाजक हैं। वे स्तोता को अत्यन्त सुख देते हैं, बुलाने वाले यजमान के पास श्रेष्ठ धन लेकर पहुँचते हैं।७। हे बृहस्पते ! तुम्हारे द्वारा पोषित होने पर मनुष्य विघ्नों से बचते तथा धन और पुत्रों से सम्पन्न होते हैं। तुम्हारी कृपा प्राप्त कर जो धनिक गौ-वस्त्रादि दान करे, उसे धन-प्राप्ति हो।८। हे बृहस्पते ! जो स्तोता हमको दान भाग न देकर स्वयंही उसका उपभोग करता है,और व्रतानुष्ठान नहीं करता,जो मन्त्रसे द्वेष करताहै, उसको धन हीन बना दो। यदि यह मनुष्य सन्तान से युक्त हुआ वृद्धि को प्राप्त

हो रहा है, तो तुम उसे सूर्य-दर्शन न होने दो ।९। हे मरुद्गण ! जो यजमान देवताओं के यज्ञ में आसुरी वृत्ति से कर्म करता है, जो अन्न, पशु धादि के द्वारा भोग-कामना से क्लेश में पड़ता है अथवा जो तुम्हारे स्तोता की निन्दा करता है तुम उसे बिना पहिये के रथ में डालकर अन्धकूप में डाल देते हो ।१०।　　　　(१८)

तमु ष्टुहि यः स्विषुः सुधन्वा यो विश्वस्य क्षयाते भेषजस्य ।
यक्ष्वा महे सौमनसाय रुद्रं नमोभिर्देवमसुरं दुवस्य ॥११
दमूनसो अपसो ये सुहस्ता वृष्णः पत्नीर्नद्यो विभ्वतष्टाः ।
सरस्वती बृहद्दिवात राका दशस्यन्तीर्वरिवस्यन्तु शुभ्राः ॥१२
प्र सू महे सुशरणाय मेधां गिरं भरे नव्यसी नायमानाम् ।
य आहना दुहितुर्वक्षणासु रूपा मिनानो अकृणोदिदं नः ॥१३
प्र सुष्टुतिः स्तनयन्तं रुवन्तमिलस्पतिं जरितनूनमश्याः ।
यो अब्दिमाँ उदनिमाँ इयर्ति प्र विद्युता रोदसी उक्षमाणः ॥१४
एषः स्तोमो मारुतं शर्धो अच्छा रुद्रस्य सूनूँर्युवन्यूँरुदश्याः ।
कामो राये हवते मा स्वस्त्युप स्तुहि पृषदश्वाँ अवासः ॥१५
प्रैषः स्तोमः पृथिवीमन्तरिक्षं वनस्पतीरोषधी राये अश्योः ।
देवोदेवः सुहवो भूतु मह्यं मा नो माता पृथिवी दुर्मतौ धात्।१६
उरौ देवा अनिबाधे स्याम ॥१७
समश्विनोरवसा नूतनेन मयोभुवा सुप्रणीती गमेम ।
आ नो रयिं वहतमोत वीराना विश्वान्यमृता सौभगानि ।१८।१९

हे विज्ञ ! रुद्र का स्तवन करो । उसके बाण शत्रुओंका नाश करने में समर्थ हैं । वे सभी औषधादि के स्वामी हैं । वे जन कल्याण करने वाले शक्तिमान् तथा देहधारियों को प्राण देने वाले हैं । उन रुद्रदेव का यजन तथा सेवा करो ।११। सुन्दर, मनस्वी, चमस अश्व रथ गौ आदि के कुशल निर्माता ऋभुगण, वृष्टिकारी इन्द्र की पत्नी रूप नदियाँ तेजस्विनी रात्रि आदि सभी हमको धन प्रदान करें ।१२। महान्, सुन्दर रक्षा करने वाले इन्द्र के लिए हम तुरन्त रची गई स्तुति

भेंट करते हैं। वे इन्द्र वृष्टिकर्त्ता हैं। वे भूमि के हित साधन के लिये नदियों का रूप निश्चित करते और हमको जल प्राप्त करते हैं ।१३। हे मनुष्यों ! तुम्हारी सुन्दर स्तुति गर्जन करने वाले शब्दवान् जल के स्वामी को प्राप्त हो। वे मेघों के धारण करने वाले हैं तथा वे जल वृष्टि करते हुए आकाश और पृथिवी को विद्युत् के प्रकाश से परिपूर्ण करते हैं ।१४। हमारी स्तुति रुद्र पुत्र मरुद्गण के समक्ष ठीकप्रकार पहुँचे। धनकी कामना हमको निरन्तर प्रेरणा देती रहे। चित्र-विचित्र वर्ण वाले घोड़ें पर चढ़कर जो मरुत् चलते हैं, उन मरुद्गण की स्तुति करो ।१५। हमारे द्वारा प्रस्तुत यह धन के निमित्त पृथिवी, आकाश वृक्ष और औषधियोंके पास पहुँचे। हमारे निमित्त सब देवताओं का आह्वान किया जाय। पृथिवी माता हमको कुबुद्धि में ही न पड़ा रहनेदें ।१६। देवताओं! हम सभी महान् पीड़ा एवं विघ्न रहित सुख से पूर्ण स्थान में निवास करें ।१७। हम अश्विनीकुमारों के उन रक्षा साधनों को प्राप्त करें, जिन्हें पहिले कोई जानता ही न था। ये रक्षा-साधन आनन्द के देने वाले तथा सुख उत्पन्न करने वाले हैं। हे अविनाशी अश्विद्वय ! तुम दोनों हमको वीर पुत्र धन तथा सभी स्थिर सौभाग्यको प्राप्त कराओ ।१८। (१६)

सूक्त ४३

(ऋषि—अत्रिः। देवता—विश्वेदेवाः। छन्द—त्रिष्टुप्, पंक्तिः)

आ धेनवः पयसा तूर्ण्यर्था अमर्धन्तीरुप नो यन्तु मध्वा।
महो राये बृहतीः सप्त विप्रो मयोभुवो जरिता जोहवीति ॥१
आ सुष्टुती नमसा वर्तयध्यै द्यावा वाजाय पृथिवी अमृध्रे।
पिता माता मधुवचाः सुहस्ता भरेभरे नो यशसावविष्टाम् ॥२
अध्वर्यवश्चकृवांसो मधूनि प्र वायवे भरत चारु शुक्रम्।
होतेव नः प्रथमः पाह्यस्य देव मध्वो ररिमा ते मदाय ॥३
दश क्षिपो युञ्जते बाहू अद्रिं सोमस्य या शमितारा सुहस्ता।
मध्वो रसं सुगभस्तिर्गिरिष्ठां चनिश्चदद् दुदुहे शुक्रमंशुः ॥४

असावि ते जुजुषाणाय सोमः क्रत्वे दक्षाय बृहते मदाय ।
हरी रथे सुधुरा योगे अर्वागिन्द्र प्रिया कृणुहि हूयमानः ।५।२०

वेग स बहने वाली नदियाँ मधुर जल के सहित, f वांध्र गति से हमारे पास आवें । अत्यन्त प्रीति वाले स्तोता श्रेष्ठ ऐश्वर्य के लिये सुख के कारण-भूत सप्त महा नदियों कों आहूत करें । अन्न प्राप्ति के लिए हम श्रेष्ठ स्तोत्र और हवि द्वारा अहिंसित रहते हुए आकाश-पृथिवी को प्रसन्न करना चाहते हैं । प्रिय वाणी वरद हस्त और यज्ञ से युक्त माता पिता रूप आकाश-पृथिवी, रणक्षेत्र में हर प्रकार हमारी रक्षा करें ।१-२। अध्वर्युगण ! तुम मधुर हवियाँ उपस्थित करो और तेजस्वी सोम को वायु की भेंट करो । हे वायो ! इस सोम रस को अन्य देवताओं से पहले ही होता के समान पान कर लो यह मधुर सोमरस तुम्हें प्रसन्न करने के लिये प्रस्तुत है ।३। ऋत्विजों की सोम निचोड़ने वाली दसों अँगुलियाँ तथा सोम कूटने में चतुर दोनों भुजाएँ पत्थर को प्राप्त करती हैं । कुशल अँगुलियों वाले ऋत्विक् प्रसन्नता पूर्वक माधुर्यमय सोम में रस निकालते हैं तब उससे स्वच्छ रस प्राप्त होता है ।४। हे इन्द्र ! तुम्हारे पुष्ट होनेके निमित्त तथा वृत्र-हनन कार्य में प्रयुक्त करने के हेतु तुम्हें बल और यश प्राप्त करने के लिए सोमरस भेंट करते हैं । हे इन्द्र तुम्हें इसीलिये बुलाते हैं । तुम अपने चतुर घोड़ों को रथ में जोड़कर हमारे पास आओ ।५।   (२०)

आ नो महीमरमतिं सजोषा ग्नां देवीं नमसा रातहव्याम् ।
मधोर्मदाय बृहतीमृतज्ञामाग्ने वह पथिभिर्देवयानैः ॥६
अञ्जन्ति यं प्रथयन्तो न विप्रा वपावन्तं नाग्निना तपन्तः ।
पितुर्न पुत्र उपसि प्रेष्ठ आ घर्मो अग्निमृतयन्नसादि ।।७
अच्छा मही बृहती शंतमा गीर्दूतो न गन्त्वश्विना हुवध्यै ।
मयोभुवा सरथा यातमर्वाग्गन्तं निधिं धुरमाणिर्न नाभिम् ।।८
प्र तव्यसो नमउक्तिं तुरस्याऽहं पूष्ण उत वायोरदिक्षि ।
या राधसा चोदितारा मतीनां या वाजस्य द्रविणोदा उतत्मन्।९

आ नामभिर्मरुतो वक्षि विश्वाना रूपेभिर्जातवेदो हुवानः ।
यज्ञं गिरो जरितुः सुष्टुयिं च विश्वे गन्त मरुतो विश्व ऊती ।
।१०।२१

हे अग्ने ! हम तुमसे स्नेह करते हैं। मधुर सोमरसको पीकर पराक्रमी होने के लिये देवों के लक्षित, मार्ग से ज्ञान रूपिणी वाणी को हमें प्राप्त कराओ। वह सर्वशक्ति सम्पन्न देवी सर्वत्र गमन करतीहुई हमारे यज्ञकी जाने। उसकी प्रेरणासे स्तोत्र सहित हवियों को हम समर्पितकरें।६। पिता की गोद में प्रिय पुत्र के बैठने के समान ज्ञानी अध्वर्युओं से अग्नि के ऊपर हव्य पात्र रखा है। उस समय यह जान पड़ता है जैसे विशाल शक्ति से युक्त व्यक्ति अग्नि द्वारा तपायाजा रहा है।७।हमारा वह पूज्य, सुख प्रदान करने वाला महान् स्तोत्र अश्विनीकुमार को यहाँ लाने के लिये दूत के समान उनके पास पहुँचे। हे सुखदाता अश्विनीकुमारो ! तुम दोनों एकही रथ पर चढ़कर हमारे द्वारा भेंट किये जाने वाले सोम के पास आओ। जैसे बिना धुरे के साथ नहीं चलता वैसेही बिना तुम्हारे सोमयाग भी पूर्ण नहीं होता। हम वेगवान् तथा पराक्रमी पूषा और वायुका स्तवन करते हैं। वह दोनों देवता अन्न और धनके निमित्त वृद्धिकी प्रेरणा करें और जो देवतामें नियुक्त होते हैं वे हमको धनदें।८-९। हे जन्म लेने वालोंके ज्ञाता अग्निदेव ! हमारे द्वारा बुलाये जाकर तुम विभिन्न देवताओं को मरुद्गण सहित यज्ञ में लाते हो। हे हे मरुद्गण ! तुम अपने श्रेष्ठ रक्षा साधनों सहित यज्ञ स्थान में पधारो और सुन्दर स्तुति युक्त उपासना को ग्रहण करो।१० (२१)

आ नो दिवो बृहतः पर्वतादा सरस्वती यजता गन्तु यज्ञम् ।
हवं देवी जुजुषाणा घृताची शग्मां नो वाचमुशती शृणोतु ॥११
आ वेधसं नीलपृष्ठं बृहन्तं वृहस्पतिं सदने सादयध्वम् ।
सादद्योनिं दम आ दीदिवांसं हिरण्यवर्णमरुषं सपेम ॥१२
आ धर्णसिर्बृहद्दिवो रराणो विश्वेभिर्गन्त्वोमभिर्हुवानः ।
ग्ना वसान ओषधीरमृध्रस्त्रिधातुशृङ्गो वृषभो वयोधाः ॥१३

मातुष्पदे परमे शुक्र आयोर्विपन्यवो रास्पिरासो अग्मन् ।
सुशेव्यं नमसा रातहव्याः शिशुं मृजन्त्यायवो न वासे ॥१४
बृहद् वयो बृहते तुभ्यमग्ने धियाजुरो मिथुनासः सचन्त ।
देवोदेवः सुहवो भूतु मह्यं मा नो माता पृथिवी दुर्मतौ धात्।१५
उरौ देवा अनिबाधे स्याम।।१६
समाश्विनोरवसा नूतनेन मयोभुवा सुप्रणीती गमेम ।
आ नो रयिं वहतमोत वीराना विश्वाग्यमृता सौभगानि ।१७।२२

प्रकाशवान् आकाश से देवी सरस्वती हमारे यज्ञमें पधारें। हमारी स्तुति से हर्ष को प्राप्त हुई वह अपने मन से हमारे मंगलकारी स्तोत्रों को श्रवण करें ।११। रक्षा करने वाले पराक्रमी वृहस्पति को यज्ञ स्थान में स्थापना करो वे घरके मध्यमें विराजमान होकर ज्ञानको बढ़ाते हैं। वे सुवर्णके समान वर्ण वाले तथा तेजस्वी हैं। हम उन महान् का उत्तम प्रकार से पूजन करते हैं।१२। वे अग्निदेव सबके धारण करने वाले हैं। वे अत्यन्त प्रकाशवान्, कामनाओंकी वर्षा करने वाले और औषधियोंकी वृद्धि करने वाले हैं। वे सुन्दर गतिवाले तथा त्रिविध, लाल,श्वेत,काली ज्वालाओंसे युक्त हैं वे वृष्टिकारक एवं अन्न प्रदान करने वाले हैं। हम उनको बुलाते हैं, वे अपने पूर्ण रक्षासाधनों सहित यहाँ आवें।१३। होता हव्य को धारण करने वाले ऋत्विक् पृथिवी माता सर्वश्रेष्ठ स्थान पर जाते हैं। जैसे पुष्ट करने के लिए बालक के देह का मर्दन करते हैं, वैसे ही नवोत्पन्न अग्निको स्तुतियों के साथ हवियाँ देकर पुष्ट करते हैं ।१४। हे अग्ने ! तुम महान् हो। धर्म-कार्य करने वाले दम्पत्ति एक तुम्हें ही हविरन्न देते हैं। देवताओंका हम भलेप्रकार आह्वान करें। माता पृथिवी हमारे प्रतिकूल न हो ।१५। हे देवताओं ! हम बाधाओं से रहित असीमित ऐश्वर्य को प्राप्त करने वाले हों ।१६। हम अश्विनीकुमारों के अभूतपूर्व रक्षा-साधनोंको प्राप्त करें वे आनन्दप्रद और कल्याणकारी कार्यों से सम्पन्न हैं। अविनाशी अश्विद्वय ! हमको श्रेष्ठ धन, बल सन्तान और सभी सौभाग्य को ग्रहण कराओ ।१७। (२२)

सूक्त ४४

(ऋषि–अवत्सारः । देवता–विश्वेदेवाः । छन्द–जगती, त्रिष्टुप्)

तं प्रत्नथा पूर्वथा विश्वथेमथा ज्येष्ठतातिं वर्हिषदं स्वर्विदम् ।
प्रतीचीनं वृजन दोहसे गिरा ऽऽशुं जयन्तमनु यासु वर्धसे ॥१
श्रिये सुदृशीरुपरस्य या स्वर्विरोचमानः ककुभामचोदते ।
सुगोपा असि न दभाय सुक्रतो परो मायाभिर्ऋत आस नाम ते।२
अत्यं हविः सचते सच्च धातु चाऽरिष्टगातुः स होता सहोभरिः।
प्रसर्स्राणो अनु वर्हिर्वृषा शिशुर्मध्त युवाजरो विस्रुहा हितः ॥३
प्र व एते सुयुजो यामन्निष्टये नीचीरमुष्मै यम्य ऋतावृधः ।
सुयन्तुभिः सर्वशासैरभीशुभिः क्रिविर्नामानि प्रवणे मुषायति । ४
संजर्भुराणस्तरुभिः सुतेगृभं वयाकिनं चित्तगर्भासु सुस्वरुः ।
धारवाकेष्वृजुगाथ शोभसे वर्धस्व पत्नीरभि जीवो अध्वरे।५।२३

प्राचीन कालीन यजमान,हमारे पूर्वज तथा वर्तमान कालीन मनुष्य भी उन इन्द्र की स्तुति करके अपने अभीष्ट को पूर्ण करते आये हैं, उसी प्रकार हम उनकी स्तुति करके अपने अभीष्ट को पूर्ण करें । वे इन्द्रदेवताओं में बड़े, सर्वज्ञ कुश आसन पर विराजमान होने वाले, पराक्रमी शत्रु-विजेता तथा अत्यन्त वेग वाले हैं । उनको इस स्तुति द्वारा प्रसन्न करो ।१। हे इन्द्र ! तुम्हारा तेज स्वर्ग में भी विस्तृत्त रूप से फैला है। वर्षा को रोकने वाले मेघ में जो उज्ज्वल जल-समूह है, उसे तुम मानव कल्याण के जिये सब दिशाओंमें भेजते हो । तुम वर्षा आदि कर्मों द्वारा मनुष्यों का पालन करते हो । हे इन्द्र ! प्राणियोंका हनन न करो । तुम शत्रुओं की माया दूर करने वाले हो । इसलिए तुम्हारा नाम सत्य पर आश्रित हैं ।२। नित्य जल का साधन करने वाले तथा जगत् के आश्रय रूप हव्य को अग्नि सदा वहन करते हैं । वे निर्बल गति वाले, वल के विधाता तथा यज-कर्म का निर्वाह करने वाले हैं । वे कुश पर विराजमान होते हैं । वे फलों की वर्षा करने वाले बालक, युवा, साहसी तथा औषधों में निवास करते हैं ।३। यजमानों के लिये यज्ञ की वृद्धि करने

वाली सूर्य रश्मियाँ परस्पर सुसङ्गत हुई यज्ञ भूमि में आने की इच्छा प्रकट करती हैं। वेग से आने वाली और संसार को नियम में रखने वाली इन सब रश्मियों द्वारा सूर्य जल की वृष्टि करते हैं ।४। हे अग्ने ! तुम्हारा स्तोत्र सुन्दर है। छना हुआ सोम रस काठ के बर्तन में सञ्चित किया जाता है और तुम उस मधुर रस को स्वीकार करते हुए स्तुतियाँ श्रवण कर प्रसन्न होते हो, तब साधकों में तुम अत्यन्त सुशोभित होते हो। हे प्राणदाता अग्ने ! तुम अपनी रक्षण सामर्थ्य वाली शिखा को यज्ञ स्थान में बढ़ाओ ।५। (२३)

याद्दगेव दद्दशे ताद्दगुच्यते सं छायया दधिरे सिध्रयाप्स्वा ।
महीमस्मभ्यमुरुषामुरु ज्रयो बृहत् सुवीरमनपच्युतं सहः ॥६
वेत्याग्रुर्जनिवान् वा अति स्पृधः समर्यता मनसा सूर्यः कविः ।
घ्रन्सं रक्षतं परि विश्वतो गयमस्माकं शर्म वनवत स्वावसुः ॥७
ज्यायांसमस्य यतुनस्य केतुन ऋषिस्वरं चरति यासु नाम ते ।
याद्दश्मिन् धायि तमपस्यया विदद् य उ स्वयं वहते सो
अरं करत् ॥८
समुद्रमासामव तस्थे अग्रिमा न रिष्यति सवनं यस्मिन्नायता ।
अत्रा न हार्दि क्रवणस्य रेजते यत्रा मतिर्विद्यते पूतबन्धनी ॥९
स हि क्षत्रस्य मनसस्य चित्तिभिरेवावदस्यं यजतस्य सध्रेः ।
अवत्सारस्य स्पृणवाम रण्वभिः शविष्ठं वाजं विदुषा चिदर्ध्यम् ।
।१०।२४

जो देखते हैं वही वर्णन करते हैं। जैसे जलों द्वारा पुष्ट हुए वृक्ष अपनी छायाके नीचे प्राणियों को सुख देते हैं वैसे ही देवगण भी अपनी प्रजाओंके लिए अपनी कल्याण कारिणी छाया द्वारा अत्यन्त सुखदायिनी पृथ्वी का पालन करें और युद्धक्षेत्रमें कभी भी पीछे भागने वाले वीरों के बल को भी पुष्ट करें ।६। सब को देखने वाले अग्रणी आदित्य अपने हैं, वे धनके आश्रयदाता हमको श्रेष्ठ यशस्वी और रक्षा साधन से युक्त घर तथा सुख दें ।७। हे अग्ने ! यजमान तुम्हारे निकट आते हैं। तुम

प्रकट होनेपर जाने जाते हो । ऋषिगण तुम्हारी स्तुति करते हैं । जिससे तुम्हारा नाम बढ़ता है । वे जिस कार्य की इच्छा करते हैं, उसे प्रयत्न द्वारा सिद्ध कर लेते हैं । जो उनकी उपासना करते हैं, वे इच्छित फल प्राप्त करते हैं ।८। हमारे इन सभी स्तोत्रों में जो स्तोत्र श्रेष्ठ हो वह सूर्य के समक्ष पहुँचे । यज्ञस्थान में उनके जिस स्तोत्र को बढ़ाया जाताहै वह स्तोत्र कभी नष्ट नहीं होता । जिस घर से सूर्य को हृदय समर्पित किया जाता है, उस घर के मनुष्य को हार्दिक इच्छा कभी विफल नहीं होती ।९। वे सूर्य सब द्वारा पूजित तथा सभी के अभीष्टों को पूर्ण करने वाले हैं । उनके पाससे हम 'क्षत्र 'मनस' 'अवद' 'सध्रि' और 'अवत्सार' ऋषि विद्वानों द्वारा उपभोग्य अन्नों को अपने कार्यों द्वारा समृद्ध करते हैं ।१०। (२४)

श्येन आसामदितिः कक्ष्यो मदो विश्ववारस्य यजतस्य मायिनः।
समन्यमन्यमर्थयन्त्येतवे विदुर्विषाणं परिपानमन्ति ते ॥११
सदापृणो यजतो वि द्विषो वधीद् बाहुवृक्तः श्रुतवित् तर्यो वः सचा ।
उभा स वरा प्रत्येति भाति च यदीं गणं भजते सुप्रयावभिः॥१२
सुतंभरो यजमानस्य सत्पतिर्विश्वासामूधः स धियामुदञ्चनः ।
भरद् धेनू रसवच्छिश्रिये पयो ऽनुब्रुवाणो अध्येति न स्वपन्१३
यो जागार तमृचः कामयन्ते यो जागार तमु सामानि यन्ति ।
यो जागार तमयं सोम आह तवाहमस्मि सख्ये न्योकाः ॥१४
अग्निर्जागार तमृचः कामयन्ते ऽग्निर्जागार तमु सामानि यन्ति ।
अग्निर्जागार तमयं सोम आह तवाहमस्मि सख्ये न्योकाः१५।२५

'विश्ववार' 'यजत' और 'मायी' ऋषि का सोम-रस द्वारा उत्पन्न हर्ष बाज के समान चाल वाला है । वह अदिति के समान विस्तृत और कसे हुए अश्व के समान सुशोभित है । वह परस्पर सोम पीने के लिए कहते हैं और सोमपान के पश्चात् हृष्ट होते हैं ।११। 'सदीपृ- 'यजत' 'वाहुवृक्त' 'श्रुतवित्' और 'तर्य' ऋषि तुम सबसे मिल-

कर शत्रुओं का नाश करने वाले हैं। ऋषि ऐहलौकिक और पारलौकिक सभी इच्छाओंकी सिद्धि करते हुए तेजस्वी बनें। वे भले प्रकाशसे मिश्रित हव्य सामग्री द्वारा विश्वेदेवताओं की सुन्दर स्तुति करते हैं।१२। 'अवत्सार' नामक यजमान के अनुष्ठान में ऋषि उत्तम फलों द्वारा पोषित हुए। सभी यज्ञ-कार्य को उत्तम रीति से पूर्ण किया गया, गौओंने उत्तम मधुर रस युक्त दुग्ध दिया। यह दुग्ध बाँटा गया। इस प्रकार से निरालस्य हुये 'अवत्स' प्रतिदिन पठन, अध्ययन आदि करते रहे।१३। जो देवता सदा जागते हैं ऋचाएं, उनको चाहती हैं। देवता सदा चैतन्य रहते हैं, सामवेद की ऋचाएँ उन्हें प्राप्त करती हैं। जो देवता सदा जागरित रहते हैं उनसे सोम कहें कि 'हमको ग्रहण करो'। हे अग्ने ! हम तुम्हारे मित्र-भाव में ही सदा आश्रित रहें।१४। अग्नि सदा चैतन्य रहते हैं। ऋचाऐं उन्हें चाहती हैं। अग्नि सदा जानते हैं, सोम उन्हें प्राप्त करता है। अग्नि सदा जागरित रहते हैं उनसे यह सुसिद्ध सोम कहे कि 'हमको ग्रहण करो।' हेअग्ने ! हम सदा ही तुम्हारी मित्रता के आश्रित रहें।१५। (२५)

सूक्त ४५ (चौथा अनुवाक)

(ऋषि-सदापृण आत्रेयः। देवता-विश्वेदेवाः। छन्द-पुरस्ताज्योतिःत्रिष्टुप्)

विदा दिवो विष्यन्नद्रिमुक्थैरायत्या उषसो अर्चिनो गुः।
अपावृत व्रजिनीरुत् स्वर्गाद् वि दुरो मानुषीर्देव आवः ॥१
वि सूर्यो अमतिं न श्रियं सादोर्वाद् गवां माता जानती गात्।
धन्वर्णसो नद्यः खादोअर्णाः स्थूणेव सुमिता दृंहत द्यौः ॥२
अस्मा उक्थाय पर्वतस्य गर्भो महीनां जनुषे पूर्व्याय।
वि पर्वतो जिहीत साधत द्यौराविवासन्तो दसयन्त भूम ॥३
सूक्तेभिर्वो वचोभिर्देवजुष्टैरिन्द्रा न्वग्नी अवसे हुवध्यै।
उक्थेभिर्हि ष्मा कवयः सुयज्ञा आविवासन्तो मरुतो यजन्ति ॥४
एतो न्वद्य सुध्यो भवाम प्र दुच्छुना मिनवामा वरीयः।
आरे द्वेषांसि सनुतर्दधामाऽयाम प्राञ्चो यजमानमच्छ ।५।२५

इन्द्र ने अङ्गिराओं के स्तव से वज्र को गिराकर पणियों द्वारा चुराई हुई, छिपी गायों को मुक्त किया। आने वाली उषा की रश्मियाँ व्याप्त होती हैं। अंधेरे का नाश करके सूर्य प्रकट होंते तथा मनुष्यों के घरों के किवाड़ों को खोलते हैं।१। जैसे विभिन्न पदार्थ अपने विभिन्न रूपों को प्रकट करते हैं, वैसे ही सूर्य अपने प्रकाश को बढ़ाते हैं रश्मियों का जाल बुनने वाली उषा सूर्य के आने को बाट न देखती हुई अन्तरिक्ष आविर्भूत होती है। किनारों को तोड़ती हुई नदियाँ वेगवान् जलसे परिपूर्ण होती हुई बहतीहैं। घरमें बने हुए सुन्दर तथा दृढ़ स्तम्भ के समान सूर्य सुदृढ़ भावसे प्रजाधारणमें समर्थ होते हैं।२।महान् स्तोत्रों के रचयिता प्राचीनकालीन ऋषियों के समान हम जब तक स्तुति करते हैं, तब तक मेघके पेट में रहने वाला जल हमारे ऊपर बरसता है। मेघ से जल गिरता हैं और आकाश अपने कर्म द्वारा सेवा करता है।३। हे इन्द्र ! हे अग्निदेव ! हम सङ्कटों से मुक्त होने का इच्छा से देवताओं द्वारा ग्रहण करने योग्य स्तोत्रों द्वारा तुम्हें बुलाते हैं। उत्तम प्रकार से यज्ञ-कर्म करने वाले मरुद्गण के समान कर्मों लगे रहने वाले मेधावी-जन सुन्दर स्तोत्रों द्वारा तुम दोनों की पूजा करते हैं।४। हे इस यज्ञ के करने वाले ! दिन में आओ। हम सुन्दर कर्म करना चाहते हैं। हम शत्रुओं का संहार करते और सब ओर छाये हुये बैरियों को दूर भगाते हैं। हम यजमानों के पास शीघ्र जाते हैं।५। (२६)

एता धियं कृणवामा सखायो ऽप या मातॉं ऋणुत व्रजं गोः।
यया मनुर्विशिशिप्रं जिगाय यया वणिग्बङ्कुरापा पुरीषम्॥६
अनूनोदत्र हस्तयतो अद्रिरार्चन् येन दश मासो नवग्वाः।
ऋतं यती सरमा गा अविन्दद् विश्वानि सत्याङ्गिराश्चकार॥७
विश्वे अस्या व्युषि माहिनायाः सं यद् गोभिरङ्गिरसो नवन्त।
उत्स आसां परमे सधस्थ ऋतस्य पथा सरमा विदद् गाः॥८
आ सूर्यो यातु सप्ताश्वः क्षेत्रं यदस्योर्विया दीर्घयाथे।
रघुः श्येनः पतयदन्धो अच्छा युवा कविर्दीदयद् गोषु गच्छन्॥९

आ सूर्यो अरुहच्छुक्रमर्णो ऽयुक्त यद्धरितो वीतपृष्ठाः ।
उद्रा न नावमनयन्त धीरा आशृण्वतीरायो अर्वागतिष्ठन् ॥१०
धियं वो अप्सु दधिषे स्वर्षां ययातरन् दश मासो नवग्वाः ।
अया धिया स्याम देवगोपा अया धिया तुतुर्यामात्यंहः ।११।२७

हे मित्रो ! आगमन करो । स्तोत्रों का उच्चारण करो । उन स्तोत्रों से चुराई हुई गौओं के स्थानका पता लगा था, 'मनु' ने शत्रु पर विजय प्राप्त की थी और वणिक् के समान बहुत फलों को चाहने वाले 'कक्षीवान्' ने वन में जाकर जल प्राप्त किया था ।६। इस यज्ञ स्थान में ऋत्विजों के हाथ से काम में लाये जाते हुए पत्थर का शब्द हो रहा है उसी से 'नवग्वों और' 'दशग्वों' ने इन्द्र की उपासना की थी । उसी से यज्ञ में आकर सरमा से गौएँ पायी और अङ्गिरावंशीय ऋषियों की सभी साधना सफल हो गई थी ।७। अङ्गिरागण उषा के उदित होते समध प्राप्त गौओं से मिले थे, तब उस श्रेष्ठ यज्ञशाला में दूध गिरने लगा, क्योंकि सरमा ने सत्य मार्ग द्वारा गौओं को देख लिया था ।८। सप्त अश्वों के स्वामी आदित्य हमारे अभिमुख पधारें । वे लम्बे प्रयाण करने के लिए वेगवान बाज के समान शीघ्रगामी होते हुए आवें । वे सतत युवा तथा दूरदर्शी अपनी किरणोंसे विराजमान, प्रकाशको फैलाते हैं । अत्यन्त दीप्त जलको सूर्य ऊपर उठाते हैं । जब वे अपने सुन्दर पीठ वाले घोड़ों को रथ में जोड़ते हैं तब यजमान उन्हें जल पर तैरती हुई नाव के समान बुलाते हैं । उनके आदेश पर ही जल-वृष्टि होती हैं ।६-१०। हे देवताओं ! हम सुख देने वाली उस बुद्धि को धारण करें,जिसके द्वारा 'नवग्वों ने दस महीनों तक तक यज्ञानुष्ठान किया था । उसी धारणवती वृद्धि के द्वारा हम विद्वानों द्वारा धारण करने योग्य उत्तम गुणों को प्राप्त करें और उनके परिणामों का अतिक्रमण करने में समर्थ हों ।११। (२७)

सूक्त ४६

(ऋषि–प्रतिक्षत्र आत्रेयः । देवता–विश्वेदेवाः । छन्द–जगती, त्रिष्टुप्)

हयो न विद्वाँ अयुजि स्वयं धुरि तां वहामि प्रतरणीमवस्युवम् ।

नास्या वश्मि विमुचं नावृतं पुनर्विद्वान् पथः पुरएत ऋजु नेषति।१
अग्न इन्द्र वरुण मित्र देवाः शर्धः प्र यन्त मारुतोत विष्णो ।
उभा नासत्या रुद्रो अध ग्नाः पूषा भगः सरस्वती जुषन्त ॥२
इन्द्राग्नी मित्रावरुणादितिं स्वः पृथिवीं द्यां मरुतः पर्वताँ अपः ।
हुवे विष्णुं पूषणं ब्रह्मणस्पतिं भगं नु शंसं सवितारमूतये ॥३
उत नो विष्णुरुत वातो अस्रिधो द्रविणोदा उत सोमो मयस्करत्।
उत ऋभव उत राये नो अश्विनोत त्वष्टोत विभ्वानु मंसते ॥४
उत त्यन्नो मारुतं शर्ध आ गमद् दिविक्षयं यजतं बर्हिरासदे ।
बृहस्पतिः शर्म पूषोत नो यमद् वरूथ्यं वरुणो मित्रो अर्यमा ॥५
उत त्ये नः पर्वतासः सुशस्तयः सुदीतयो नद्यस्त्रामणे भुवन् ।
भगो विभक्ता शवसावसा गमदुरुव्यचा अदितिः श्रोतु मे हवम्।६
देवानां पत्नीरुशतीरवन्तु नः प्रावन्तु नस्तुजये वाजसातये ।
याः पार्थिवासो या अपामपि व्रते ता नो देवीः सुहवाः शर्म यच्छत ॥७

उत ग्ना व्यन्तु देवपत्नीरिन्द्राण्यग्नाय्यश्विनी राट् ।
आ रोदसी वरुणानी शृणोतु व्यन्तु देवीर्य ऋतुर्जनीनाम् ।८।२८

"प्रतिक्षत्र" ने अपने को नाड़ी में घोड़ेके समान ओड़ा । होता उस अलौकिक रक्षा का विधान करने वाले यज्ञ रूप बोझे को ढोते हैं । इस बोझे को वहन करने से युक्त होना हम नहीं चाहते । इस भार को हम बार-बार ढोते रहें, ऐसा भी हम नहीं चाहते, मार्गों के ज्ञाता, आगे-आगे चलने वाले, सबके रहस्यों को जानने वाले पुरुष हमको समस्त मार्गों में सरलता पूर्वक ले जाने में समर्थ हैं ।१। हे अग्नि, इन्द्र, वरुण और मित्र आदि देवताओं ! तुम सब हमको शक्ति दो । मरुद्गण और हमको समर्थ बनावें । असत्याचरण न करने वाले दोनों रुद्र, देवाङ्गनायें पूषा भग और सरस्वती सभी हमारी स्तुति से प्रसन्न हों ।२। हम रक्षा प्राप्ति के निमित्त इन्द्र, अग्नि, मित्र, वरुण, अदिति आदित्य, आकाश-पृथिवी, मरुद्गण, पर्वत, जल, विष्णु, पूषा, ब्रह्मणस्पति और को आहूत करते हैं ।३। विष्णु, वायु, अहिंसक और धनदाता सोम

हमको सुख प्रदान करें। ऋभुगण, दोनों अश्विनीकुमार, त्वष्टा और विभु हमको धन देने के निमित्त प्रसन्न हों ।४। स्वर्गवासी तथा पूज्य मरुद्गण कुश पर विराजमान होने के लिए हमारे पास आवें। वृहस्पति वरुण, मित्र और अर्यमा हमको सभी गृहस्थ सम्बन्धी सुख प्राप्त करावें। ।५। सुन्दर स्तोत्र वाले पर्वत एवं उदार वृत्ति वाली नदियाँ हमारा पालन करें। धन देने वाले भग देवता अन्न तथा साधनों सहित आवें। सब स्थानोंपर रहने वाली अदिति हमारे स्तोत्र को सुनें।६। देवताओं की पत्नियाँ हमारी स्तुतियों की कामना करती हुई हमारी रक्षा करें। हम उनकी रक्षा द्वारा बलवान् पुत्र और उत्तम अन्न प्राप्त करें। हे देव पत्नियो ! तुम सर्वत्र कर्मोंमें लीन रहो। हम तुम्हें आहूत करते हैं। तुम हमको सुखी बनाओ।७। देवाङ्गनायें हवियाँ ग्रहण करें। इन्द्राणी अग्नानी, दीप्तिमती, अश्विनी, रोदसी, वरुणानी आदि देवियाँ हमारे स्तोत्रों को सुनें। ये देवियाँ हव्य ग्रहण करें। देवियों में ऋतुओं की अधिष्ठात्री देवी हमारे स्तोत्र को सुनें और हवि ग्रहण करें।८। (२८)

सूक्त ४७

(ऋषि—प्रतिरथ आत्रेयः। देवता—विश्वेदेवाः। छन्द—त्रिष्टुप्)

प्रयुञ्जती दिव एति ब्रुवाणा मही माता दुहितुर्बोधयन्ती।
आविवासन्ती युवतिर्मनीषा पितृभ्य आ सदने जोहुवाना ॥१
अजिरासस्तदप ईयमाना आतस्थिवांसो अमृतस्य नाभिम्।
अनन्तास उरवो विश्वतः सीं परि द्यावापृथिवी यन्ति पन्थाः ॥२
उक्षा समुद्रो अरुषः सुपर्णः पूर्वस्य योनिं पितुरा विवेश।
मध्ये दिवो निहितः पृश्निरश्मा वि चक्रमे रजसस्पात्यन्तौ ॥३
चत्वार ईं बिभ्रति क्षेमयन्तो दश गर्भं चरसे धापयन्ते।
त्रिधातवः परमा अस्य गावो दिवश्चरन्ति परि सद्यो अन्तान् ॥४
इदं वपुर्निवचनं जनासश्चरन्ति यन्नद्यस्तस्थुरापः।
द्वे यदीं बिभृतो मातुरन्ये इहेह जाते यम्या सबन्धू ॥५
वि तन्वते धियो अस्मा अपांसि वस्त्रा पुत्राय मातरो वयन्ति।

उपप्रक्षे वृषणो मोदमाना दिवस्पथा वध्वो यन्त्यच्छ ॥६
तदस्तु मित्रावरुणा तदग्ने शं योरस्मभ्यमिदमस्तु शस्तम् ।
अशीमहि गाधमुत प्रतिष्ठां नमो दिवे बृहते सादनाय ।७।१

सेवा-रत, नित्य युवती, पूज्या उषा बुलाई आने पर शक्तिमती माता के समान कन्या स्वरूप पृथिवी को जागरित करती है। वह मनुष्यों को कार्य में प्रवृत्त करती हुई रक्षा करने वाले देवताओं के साथ यज्ञ स्थानमें आती है ।१। सर्वव्याप्त और असीमित किरणें अपने प्राकट्य रूप कर्म का सम्पादन करती हुई अविनाशी सूर्य मण्डल के साथ एकत्र बैठकर आकाश, पृथिवी और अन्तरिक्ष में जाती हैं ।२। कामनाओं का सिंचन करने वाले, देवताओं के लिए सुख का विधान करने वाले, उज्ज्वल तथा तेज चलने वाले, रथ ने पितृ रूप पूर्व दिशा में गमन किया, फिर स्वर्ग में अवस्थित विभिन्न वर्षा वाले आदित्य अन्तरिक्ष में बढ़े और उन्होंने विश्व की रक्षा की ।३। चार ऋत्विक् अपनी मङ्गल कामना करते हुए सूर्य को हव्य से धारण करते हैं। दशो दिशायें अपने गर्भ से उत्पन्न सूर्य को नित्यकर्म में प्रेरणा करती हैं। शीत, ग्रीष्म और वर्षा के भेदसे सूर्य की तीन प्रकार की ऋतुयें अन्तरिक्ष की सीमा में घूमती रहती हैं ।४। हे मनुष्यों ! यह शरीर अवश्य मनन और श्रवण करने योग्य है, जिनमें प्रवाहित होने वाली नाड़ियाँ पृथिवी पर बहने वाली नदियों के समान हैं। स्त्री और पुरुष की दोनों प्रकृतियाँ इस शरीर के धारण करने वाले दिन-रात के समान परस्पर बँधी हैं ।५। सूर्य के निमित्त यजमान स्तोत्र तथा हव्य को बढ़ाते हैं। इसी पुत्र रूप सूर्य के लिये दिशायें प्रकाश का जाल बुनती हैं। उन वृष्टिकारक सूर्य के द्वारा पुष्ट हुई पत्नी रूप किरणे आकाश द्वारा हमारे पास आगमन करें ।६। हे मित्रावरुण ! हमारी स्तुतिको स्वीकार करो। हे अग्ने! हम सबके कल्याण के निमित्त इस स्तोत्र को स्वीकार करो। हम प्रतिष्ठित हों। हम तेजोमय, पराक्रमी तथा सबको आश्रय देने वाले सूर्य की पूजा करते हैं ।७।   (१)

सूक्त ४८

(ऋषि—प्रतिभानुरात्रेयः । देवता—विश्वेदेवाः । छन्द—जगती)

कदु प्रियाय धाम्ने मनामहे स्वक्षत्राय स्वयशसे महे वयम् ।
आमेन्यस्य रजसो यदभ्र आँ अपो वृणाना वितनोति मायिनी॥१
ता अत्नत वयुनं वीरवक्षणं समान्या वृतया विश्वमा रजः ।
अपो अपाचीरपरा अपेजते प्र पूर्वाभिस्तिरते देवयुर्जनः ॥२
आ ग्रावभिरहन्येभिरक्तुभिर्वरिष्ठं वज्रमा जिघर्ति मायिनि ।
शतं वा यस्ल प्रचरन् त्स्वे दमे संवर्तयन्तो वि च वर्तयन्नहा ॥३
तामस्य रीतिं परशोरिव प्रत्यनीकमख्य भुजे अस्य वर्पसः ।
सचा यदि पितुमन्तमिव क्षयं रत्नं दधाति भरहूतये विशे ॥४
स जिह्वया चतुरनीक ऋञ्जते चारु वसानो वरुणो यतन्नरिम् ।
न तस्य विद्म पुरुषत्वता वयं यतो भगः सविता दाति वार्यम्॥५।२

हम सबकी कामना के योग्य पूजा के पात्र उस तेज की कब पूजा करेंगे ? वह तेज अपने ही बल से प्रकाशवान् हैं, तथा सभी अन्न उसमें व्याप्त हैं । उसी तेज की शक्ति चैतन्य होकर अन्तरिक्ष में मेघ में वर्षा जल को बढ़ाती है ।१। ऋत्विजों के प्राप्त करने योग्य ज्ञान को यह उषायें फैलाती हैं । अपनी आभा द्वारा सम्पूर्ण संसार को परिपूर्ण करती हैं । देवताओं की कामना करने वाले यजमान बीती हुई अथवा आने वाली उषाओं की चिन्ता छोड़कर वर्तमान उषा के द्वारा अपनी बुद्धि को बढ़ाते हैं ।२। दिन और रात्रि में सिद्ध किये गये सोम से पुष्ट हुए इन्द्र मायावी वृत्र के लिए अपने विशाल वज्र को तेजोमय बनाते हैं । इन्द्रमय सूर्य की असंख्य किरणें दिनों को प्रवर्तित करती हुई अपने घर रूप आकाश में घूमती रहती हैं । फरसे के समान दमकते हुए अग्नि के उस स्वाभाविक रूप को हम देखते हैं । हम अपने सुख के निमित्त तेजोमय आदित्य की किरणों की स्तुति करते हैं । ये आदित्य आह्वान करने वाले यजमान के यज्ञ में सहायक होते और अन्न तथा रत्नादि से

परिपूर्ण घर प्रदान करते हैं ।३-४। अपने शोभन तेज से चमकते हुए अग्निदेव अन्धकार तथा वैरियों का नाश करते हैं । सब ओर अपनी ज्वाला को फैलाते हुए घृतादि हव्य-भक्षण करते हैं । हम उन अभीष्ट दायक अग्नि के उस पुरुषार्थ को नहीं जानते, जिसके द्वारा यह यजन योग्य सविता ग्रहण करने योग्य ऐश्वर्य को प्राप्त कराते हैं ।५। (२)

सूक्त ४६

(ऋषि—प्रतिप्रभ आत्रेयः । देवता—विश्वेदेवाः । छन्द—त्रिष्टुप्)

देवं वो अद्य सवितारमेषे भगं च रत्नं विभजन्तमायोः ।
आ वां नरा पुरुभुजा ववृत्यां दिवेदिवे चिदश्विना सखीयन् ॥१
प्रति प्रयाणमसुरस्य विद्वान्त्सूक्तैर्देवं सवितारं दुवस्य ।
उप ब्रुवीत नमसा विजानञ्ज्येष्ठं च रत्नं विभजन्तमायोः ॥२
अदत्रया दयते वार्याणि पूषा भगो अदितिर्वस्त उस्रः ।
इन्द्रो विष्णुर्वरुणो मित्रो अग्निरहानि भद्रा जनयन्त दस्माः ॥३
तन्नो अनर्वा सविता वरूथं तत् सिन्धव इषयन्तो अनु ग्मन् ।
उप यद् वोचे अध्वरस्य होता रायः स्याम पतयो वाजरत्नाः ॥४
प्र ये वसुभ्य ईवदा नमो दुर्ये मित्रे वरुणे सूक्तवाचः ।
अवैत्वभ्वं कृणुता वरीयो दिवस्पृथिव्योरवसा मदेम ।५।३

हम यजमानों के लिए सविता और भग देवताओं की सेवामें जाते है । वे यजमानों को धन देते हैं । हे अग्रगण्य तथा बहुकर्मा अश्विनी-कुमारो ! हम तुम्हारी मित्रता को चाहने वाले तुम्हारे प्रतिदिन सामीप्य की याचना करते हैं ।१। हे विद्वानों ! पशुओं के शमनकर्त्ता सविता-देव को आते जानकर सूक्तों से उनका पूजन करो । वे मनुष्योंको उत्तम ऐश्वर्य के देने वाले हैं । उनको हविरन्न और नमस्कार द्वारा स्तुति करो ।२। यजन योग्य पालन कर्त्ता तथा कभी नाश को प्राप्त न होंने वाले अग्नि ग्रहण करने योग्य काष्ठ को अपनी ज्वाला से वहन करते हैं, और ग्रहण करने योग्य धन यजमानों को देते हैं । आदित्य अपने तेज को फैलाते हैं, इन्द्र विष्णु, मित्र और अग्नि देवता उत्तम

दिनों को प्रकट करते हैं ।३। जिन सवितादेव का कोई तिरस्कार नहीं कर सकता वे सवितादेव हमको अभीष्ट ऐश्वर्य दें । उस ऐश्वर्यको लाने के लिए उनकी किरणें गमन करें । इस कामना से हम होतागण स्तुति करते हैं । हम बहुत प्रकार के धन, अन्न और बल के स्वामी हों ।४। जिन यजमानों के गतिशील अन्न वसुओं को प्रदान किया है, तथा जिन्होंने मित्रावरुण के उद्देश्य से स्तुतियाँ की हैं,उन्हें महान तेज मिले । हे देवगण ! उन्हें स्थिर सुख दो । हम आकाश और पृथिवी द्वारा पाले जाकर तुष्ट हों ।५। (३)

सूक्त ५०

(ऋषि–स्वस्त्यारात्रेयः । देवता–विश्वेदेवाः । छन्द–अनुष्टुप्, पंक्तिः)

विश्वो देवस्य नेतुर्मर्तो वुरीत सख्यम् ।
विश्वो राय इषुध्यति द्युम्नं वृणीत पष्यसे ।।१
ते ते देव नेतर्ये चेमाँ अनुशसे ।
ते राया ते ह्यापृचे सचेमहि सचथ्यैः ।।२
अतो न आ नृनतिथीनतः पत्नीर्दशस्यत ।
आरे विश्वं यथेष्ठां द्विषो युयोतु यूयुविः ।।३
यत्र वह्निरभिहितो दुद्रवद् द्रोण्यः पशुः ।
नृमणा वीरपस्त्यो ऽर्णा धीरेव सनिता ।।४
एष ते देव नेता रथस्पतिः शं रयिः ।
शं राये शं स्वस्तय इषःस्तुमो मनामहे देवस्तुतो
मनामहे ।५।४

सभी यजमान सवितादेव सेमित्रताकी याचना करते हैं । सब प्रजायें उनसे धन माँगती हैं । उनकी कृपा से उनकी अपनी रक्षाके लिए प्रचुर धन लाभ करते हैं ।१। हे प्रभो ! हम यजमान तुम्हारी उपासना करतें हैं तथा इन्द्रादि देवताओं की उपासना करने वाले भी तुम्हारे ही हैं ।

हम तथा वे, दोनों प्रकार के उपासक धन ऐश्वर्य से सम्पन्न हों और हमारे सभी मनोरथ पूर्ण हों ।२। इस यज्ञ में हम ऋत्विजों के लिए तिथि के समान पूजनीय देवताओं की सेवा करें । इस यज्ञ में हवि देकर देव पत्नियों की सेवा करें ।३। जिस यज्ञ में यज्ञ वाहक, सर्वश्रेष्ठ पशु के समान आगे बढ़ने वाला मार्ग दर्शक कार्य भार उठाता है, उस यज्ञ में सवितादेव चतुर गृहिणी के समान गृह, पुत्र, सेवक तथा धन प्रदान करते हैं ।४। हे सवितादेव! तुम्हारा यह ऐश्वर्ययुक्त सबका रक्षक रथ हमारा कल्याण करने वाला हो । हम पूजा के पात्र सवितादेव की स्तुति करने वाले हैं । हम धन,सुख तथा अमरत्व प्राप्तिके लिए उनकी स्तुति करते हैं ।५। (४)

सूक्त ५१

(ऋषि-स्वस्त्यात्रेयः । देवता–विश्वेदेवाः । छन्द–गायत्री,
त्रिष्टुप्, अनुष्टुप् उष्णिक्)

अग्ने सुतस्य पीतये विश्वैरूमेभिरा गहि । देवेभिर्हव्यदातये ।।१
ऋतधीतय आ गत सत्यधर्माणो अध्वरम् ।
अग्नेः पिबत जिह्वया ।।२
विप्रेभिर्विप्र सन्त्य प्रातर्यावभिरा गहि । देवेभिः सोमपीतये ।।३
अयं सोमश्चमू सुतो ऽमत्रे परि षिच्यते । प्रिय इन्द्राय वायवे ।।४
वायवा याहि वीतये जुषाणो हव्यदातये ।
पिबा सुतस्यान्धसो अभि प्रयः ।५।५

हे अग्ने ! तुम इन्द्रादि सभी रक्षा करने वाले देवताओं के साथ सोम पीने के लिए हविदाता यजमानों के पास पधारो और अग्नि की जिह्वा सोमयुक्त हवियों का भक्षण करे ।१-२। हे मेधावी अग्निदेव! तुम उषाकाल में आगमन करने वाले मेधावी देवताओं के साथ सोम पीने के लिए पधारो ।३। यह सोम अभिषवण फलक द्वारा सिद्ध किया

और पात्र में एकत्रित किया है। यह इन्द्र और वायु के लिए अत्यन्त प्रिय है। हे इन्द्र और वायो ! इस सोमरस का पान करने के लिये आओ ।४। हे वायो ! हविदाता यजमान पर अनुग्रह करनेके लिए सोम पीने के निमित्त आओ, इस सोम का सेवन करो ।५।   (५)

इन्द्रश्च वायवेषां सुतानां पीतिमर्हथः ।
ताञ्जुषेथामरेपसावभि प्रयः ॥६
सुता इन्द्राय वायवे सोमासो दध्याशिरः ।
निम्नं न यन्ति सिन्धवोऽभि प्रयः । ७
सजूर्विश्वेभिर्देवेभिरश्विभ्यामुषसा सजूः ।
आ याह्यग्ने अत्रिवत् सुते रण ॥८
सजूर्मित्रावरुणाभ्यां सजूः सोमेन विष्णुना ।
आ याह्यग्ने अत्रिवत् सुते रण ॥९
सजूरादित्यैर्वसुभिः सजूरिन्द्रेण वायुना ।
आ याह्यग्ने अत्रिवत् सुते रण ।१०।६

हे वायो ! तुम और इन्द्र दोनों ही सोम पान करने के योग्य हो। दोनों सोममय अन्न में सेवन के लिए यहाँ आओ ।६। इन्द्र और वायुके उद्देश्य से हव्य युक्त सोम-रस तैयार हैं। इन्द्र और वायो ! नीचे की ओर बहने वाली नदियों के समान यह सोम तुम्हारे प्रति गमन करता है ।७। हे अग्ने ! तुम सभी देवताओं, अश्विनीकुमारों और उषा से सुसङ्गत हुए यहाँ आओ। यज्ञ में अत्रिके समान तुम भी अभिषुत सोम से पुष्टि को प्राप्त होओ। हे अग्ने ! तुम मित्र, वरुण सोम और विष्णु के सहित यहाँ आओ, और अत्रिके समान भी अभिषुत सोम में विहार करो ।८-९। हे अग्ने ! तुम आदित्य, वसुगण,इन्द्र और वायु सहित यहाँ आकर अत्रि के समान सोम से आनन्दित होओ ।१०।   (६)

स्वस्ति नो मिमीतामश्विना भगः स्वस्ति देव्यदितिरनर्वणः ।
स्वस्ति पूषा असुरो दधातु नः स्वस्ति द्यावापृथिवी सुचेतुना ॥११

स्वस्तये वायुमप ब्रवामहै सोमं स्वस्ति भुवनस्य यस्पतिः ।
बृहस्पतिं सर्वगणं स्वस्तये स्वस्तय आदित्यासो भवन्तु नः ॥१२
विश्वे देवा नो अद्या स्वस्तये वैश्वानरो वसुरग्निः स्वस्तये ।
देवा अवन्त्वृभवः स्वस्तये स्वस्ति नो रुद्रः पात्वंहसः ॥१३
स्वस्ति मित्रावरुणा स्वस्ति पथ्ये रेवति ।
स्वस्ति न इन्द्रश्चाग्निश्च स्वस्ति नो अदिते कृधि ।१४
स्वस्ति पन्थामनु चरेम सूर्याचन्द्रमसाविव ।
पुनर्ददताघ्नता जानता सं गमेमहि ।१५।७

अश्विनीकुमार हमारे लिए कभी नष्ट न होनेवाले सुख प्रदान करें। पराक्रमी सत्य स्वरूप और शत्रुओं के हनन-कर्त्ता पूषा हमारे लिये सुखकारी हों ।१२। हम अपने कल्याण के लिये वायु तथा सोम की स्तुति करते हैं । सोम सम्पूर्ण जगत् के पालन कर्त्ता है । हम अपने कल्याण के लिए सब देवताओं के साथ मन्त्र-पालक बृहस्पति की स्तुति करते हैं । अदिति के पुत्र देवता और अरुणादि द्वादश देव हमारे लिए मङ्गलकारी हों ।१२। सब देवता इस यज्ञ में हमारा कल्याण करें, तथा हमारे रक्षक हों । मनुष्यों में प्रमुख तथा गृहदाता अग्निदेव हमारा कल्याण करें, और रक्षक बनें । तेजस्वी ऋभुगण हमारा मङ्गल करें । रुद्र हमको पाप से बचाते हुए मङ्गलकारी हों ।१३। हे दिन-रात्रि के देवता मित्रावरुण ! तुम दोनों हमारा कल्याण करो । हे धन की देवी ! हमारा मङ्गलकरो । इन्द्र अग्नि और अदिति हमारा कल्याण करे ।१४। सूर्य और चन्द्रमा बिना बाधा के जैसे परिभ्रमण करते हैं, वैसे ही हम भी मार्गों में सुख पूर्वक विचरण करें । प्रवास में दीर्घकाल तक रहने पर भी हमसे स्नेह करने वाले तथा हमारी याद करने वाले कुटुम्बियों और मित्रों से हम मिलें ।१५। (७)

सूक्त ५२

(ऋषि–श्यावाश्वः आत्रेयः । देवता–मरुतः । छन्द–अनुष्टुप् पंक्तिः)

प्र श्यावाश्व धृष्णुया ऽर्चा मरुद्भिर्ऋक्वभिः
ये अद्रोघमनुष्वधं श्रवो मदन्ति यज्ञियाः ॥१
ते हि स्थिरस्य शवसः सखायः सन्ति धृष्णुया।
ते यामन्ना धृषद्विनस्त्मना पान्ति शश्वतः ॥२
ते स्पन्द्रासो नोक्षणो ऽति ष्कन्दन्ति शर्वरीः ।
मरुतामधा महो दिवि क्षमा च मन्महे ॥३
मरुत्सु वो दधीमहि स्तोमं यज्ञं च धृष्णुया ।
विश्वे ये मानुषा युगा पान्ति मर्त्यं रिषः ॥४
अर्हन्तो ये सुदानवो नरो असामिशवसः ।
प्र यज्ञं यज्ञियेभ्यो दिवो अर्चा मरुद्भ्यः ।५।८

हे श्यावाश्व ऋषि ! तुम धैर्यपूर्वक स्तुति के पात्र मरुद्गण की पूजा करो । यज्ञ के पात्र मरुद्गथ नित्य प्रति हविरूप अन्न प्राप्त करते हुए प्रसन्न होते हैं । उनका बल कभी विचलित नही होता । वे धीर जब मार्ग में चलते हैं, यब अपनी इच्छा से हमारे परिवार की रक्षा करते हैं ।१-२। जल वृष्टि करने में समर्थ मरुद्गण रात्रि को लाँघते हुए चलते हें । वे जिस कारण यह कर्म करते हैं, उसी कारण हम उन मरुद्गणके आकाश और पृथिवी में व्याप्त तेज की उपासना करते हैं ।३।हे होताओ ! अब तुम कर्म में लगे हुए किसलिए मरुद्गण की स्तुति करते और उन्हें हवियाँ देते हो ? इसीलिए तो वे मरणधर्मा मनुष्यों की हिंसकों से हर समय रक्षा करते हैं ।४। हे होताओं ! जो पूजा के योग्य सुन्दर दान से युक्त, कर्म करने में अग्रणी तथा अत्यन्त पराक्रमी हैं, ऐसे यज्ञ के पात्र उन मरुद्गण के लिए यज्ञ को सम्पन्न करने बाली हवियाँ दो ।५। (८)

आ रुक्मैरा युधा नर ऋष्वा ऋष्टीरसृक्षत ।
अन्वेनाँ अह विद्युतो मरुतो जज्झतीरिव भानुरर्त त्मना दिवः।६
ये वावृधन्त पार्थिवा य उरावन्तरिक्ष आ ।
वृजने वा नदीनां सधस्थे वा महो दिवः ॥७

शर्धो मारुतमुच्छंस सत्यशवसमृभ्वसम् ।
उत स्म ते शुभे नरः प्र स्पन्द्रा युजत त्मना ॥८
उत स्म ते परुष्ण्यामूर्णा वसत शुन्ध्यवः ।
उत पव्या रथानामद्रिं भिन्दन्त्योजसा ॥९
आपथयो विपथयो ऽन्तस्पथा अनुपथाः ।
एतेभिर्मह्यं नामभिर्यज्ञं विष्टार ओहते ।१०।९

वृष्टि कर्म में समर्थ मरुद्गण शस्त्र विशेष से सजते हैं । वे मेघ को विदीर्ण करने के लिये शस्त्र विशेष को निकालते हैं । शब्द करने वाले जलों के समान विद्युत् भी मरुद्गण का साथ देती है । तेजस्वी मरुद्-गण का तेज स्वयं ही प्राप्त होता है ।६। जो मरुद्गण पृथिवी पर बढ़ते हैं तथा जो मरुद्गण अन्तरिक्षमें बढ़ते हैं वे नदियों की जल शक्ति तथा विस्तीर्ण आकाश में बढ़ें । इस प्रकार वर्षा कार्य के लिये सर्वत्र बढ़ते मरुद्गण मेघको विदीर्ण करनेके लिये विशिष्ट शस्त्रों का उपयोग करते हैं ।७। हे मनुष्यो ! मरुद्गण के श्रेष्ठ बलका स्तवन करो । वह अत्यन्त बढ़ा हुआ तथा सत्य का आश्रय रूप है । वर्षा कार्य में अग्रगण्य मरुत रक्षा करने वाली बुद्धि से जल के निमित्त गमन करने का श्रम करते हैं ।८। मरुगण 'परुष्णी' नदी में विद्यमान होते और सबको पवित्र करने वाले तेज को सर्वत्र फैलाते हैं । वे अपने बल से मेघ का खण्डन करते हैं ।९। जो मरुत हमारे सामने से जाते हैं, जो सर्वत्र गमन शील हैं जो पर्वतों की गुफाओं में भी घुस जाते हैं तथा अनुकूल मार्गों पर चलते हैं, वे मरुद्गण वृद्धि को प्राप्त होकर हमारे यज्ञ के वहन करने में समर्थ हैं ।१०। (९)

अधा नरो न्योहते ऽधा नियुत ओहते ।
अधा पारावता इति चित्रा रूपाणि दर्श्या ॥११
छन्दःस्तुभः कुभन्यव उत्समा कारिणो नृतुः ।
ते मे के चिन्न तायव ऊमा आसन् दृशि त्विषे ॥१२
य ऋष्वा ऋष्टिविद्युतः कवयः सन्ति वेधसः :

तमृषे मारुतं गणं नमस्या रमया गिरा ॥१३
अच्छ ऋषे मारुतं गणं दाना मित्रं न योषणा ।
दिवो वा धृष्णव ओजसा स्तुता धीभिरिषण्यत ॥१४
नू मन्वान एषां देवाँ अच्छा न वक्षणा ।
दाना सचेत सूरिभिर्यामश्रुतेभिरञ्जिभिः ॥१५
प्र ये मे बन्ध्वेषे गां वोचन्त सूरयः पृश्नि वोचन्त मातरम् ।
अधा पितरमिष्मिणं रुद्रं वोचन्त शिक्वसः ॥१६
सप्त मे सप्त शाकिन एकमेका शता ददुः ।
यमुनायामधि श्रुतमुद् राधो गव्यं मृजे नि राधो अश्व्यं मृजे ।
।१७।१०

वे वृष्टि आदि के नेता संसार के अग्रणी हैं । अन्तरिक्ष में ग्रह तारे मेघ को धारण करते हैं । इस प्रकार से विविध रूपमें देखने योग्य होते हैं ।११। जल की कामना से छन्दों द्वारा स्तुति करने वालों ने मरुद्गण की स्तुति की थी, तथा प्यासे "गौतम" के पीने के लिए कूप को बुलाया था । उनमें से कुछ मरुतों ने अदृश्य रह कर रक्षा की थी, और कितनों ही ने प्रत्यक्ष होकर बल दिखायाथा ।१२। हे 'श्यावाश्व' ऋषि! विद्युत् रूप आयुध से सुसज्जित, मेधावी, सबके बताने वाले दर्शनीय मरुतों की सुन्दर श्रेष्ठ स्तोत्र द्वारा सेवा करो ।१३। हे ऋषि ! तुम हव्य देने तथा स्तुतियों के साथ मरुतों के समक्ष आदित्य के समान जाओ । हे शक्ति द्वारा हराने वाले मरुद्गण ! तुम आकाश या अन्य लोकद्वय से हमारे यज्ञ में पधारो । हम तुम्हारा आह्वान करते हैं ।१४। स्तोतागण मरुतों की शीघ्रतासे स्तुति करके अन्य देवताओं की स्तुतिकी कामना नहीं करते । ज्ञानी, द्रुतगामी तथा फल देने वाले मरुद्गण से स्तोतागण इच्छित दान पाते हैं ।१५। जिन प्रेरणावान् मरुद्गण ने हमसे बन्धुवत् वार्तालाप किया, उन्होंने पृथिवी को माता और पराक्रमी तथा शत्रु के रुलाने वाले रुद्र को अपना पिता बताया था ।१६। सात-सात शक्तिशाली मरुद्गण एक-एक होकर हमको सैंकड़ों ऐश्वर्य प्रदान करें ।

इसके द्वारा दिया गया प्रसिद्ध ऐश्वर्य हम 'यमुना' तट पर प्राप्त करें। उनके दान को हम प्राप्त करने वाले हों।१७। (१०)

सूक्त ५३

(ऋशि—श्तावाश्व आत्रेयः। देवता—मरुतः छन्द—गायत्री, बृहती, अनुष्टुप्, उष्णिक्, पक्तिः, ककुप्)

को वेद जानमेषां को वा पुरा सुम्नेष्वास मरुताम्।
यद् युयुज्रे किलास्यः ॥१
ऐतान् रथेषु तस्थुष कः शुश्राव कथा ययुः।
कस्मै सस्रुः सुदासे अन्वापय इलाभिर्वृष्टयः सह ॥२
ते म आहुर्य आययुरुप द्युभिर्विभिर्मदे।
नरो मर्या अरेपस इमान् पश्यन्निति ष्टुहि ॥३
ये अञ्जिषु ये वाशीषु स्वभानवः स्रक्षु रुक्मेषु खादिषु।
श्राया रथेषु धन्वसु ॥४
युष्माकं स्मा रथाँ अनु मुदे दधे मरुतो जीरदानवः।
वृष्टी द्यावो यतीरिव ।५।११

मरुद्गण के जन्म का ज्ञाता कौन है ? मरुद्गण के पालन के समय कौन वर्तमान था ? जब उन्होंने पृथिवी को धुरे से जोड़ा था, तब इनके बल को कौन जानता था ? ।१। यह मरुद्गण रथ पर चढ़े हैं, इनके रथ के शब्दको किसने सुना ? यह किस प्रकार चलते हैं, इसबात को कौन जानने वाला है ? किस उदार मनुष्यके लिये वृष्टिशील मरुद्गण बहुत से अन्न के सहित प्रकट होंगे ? ।२। सोम पान से उत्पन्न होने वाले हर्ष के लिए तेजस्वी घोड़ों पर चढ़कर जो मरुद्गण हमारे पास आये थे, उन्होंने कहा था कि वे मनुष्यों का हित करने वाले हैं। हे मनुष्य ! तू इसी प्रकार स्तुति किया कर ।३। हे मरुद्गण ! जो तेज तुम्हारे आश्रित हैं, जो अस्त्रों में, माला में,आभूषणों में रथ तथा धनुष में स्थित है, उन सब तेजों को हम नमस्कार करते हैं ।४। हे शीघ्र ! देने वाले मरुद्गण ! वृष्टि की सब ओर गमन-शील दीप्ति के समान

तुम्हारे दर्शनीय रथ को देखकर हम प्रसन्न होते और तुम्हारा स्तवन करते हैं ।५।   (११)

आ यं नरः सुदानवो ददाशुषे दिवः कोशमचुच्यवुः ।
वि पर्जन्यं सृजन्ति रोदसी अनु धन्वना यन्ति वृष्टयः ।:६
ततृदानाः सिन्धवः क्षोदसा रजः प्र सस्रुर्धेनवो यथा ।
स्यन्ना अश्वा इवा ध्वनो विमोचने वि यद् वर्तन्त एन्यः :।७
आ यात मरुतो दिव आन्तरिक्षादमादुत ।
भाव स्थात परावतः ।।८
मा वो रसानितभा कुभा क्रुमुर्मा वः सिन्धुर्नि रीरमत् ।
मा वः परिः ष्ठात् सरयुः पुरीषिण्यस्मे इत् सुम्ममस्तु वः ।।९
तं वः शर्धं रथानां त्वेषं गणं मारुतं नव्यसीनाम् ।
अनु प्र यन्ति वृष्टयः ।१०।१२

सुन्दर दान वाले मरुत् हविदाता यजमान के लिये जल धारण करने वाले मेघ को बरसाते हैं। वे आकाश पृथिवी के लिए मेघ को छोड़ते हैं। फिर वर्षा करने वाले मरुद्गण सर्वत्र जाने वाले जल के समान व्याप्त होते हैं ।६। दूध देने वाली नव प्रसूता गौ के समान मेघ से गिरने वाला जल अन्तरिक्ष में बढ़ता है। मार्ग में गमन करने वाले द्रुतगामी घोड़े के समीप छोड़ी गई नदियाँ अत्यन्त वेग से बहती हैं।७। हे मरुद्गण ! तुम आकाश, अन्तरिक्ष अथवा इसी लोक से जहाँ-कहीं हों वहीं से यहाँ आओ। तुम स्वर्ग आदि दूर देश के लिये मत आओ ।८। हे मरुद्गण ! "रसा" "अनितमा" और "कुभ" तथा सर्वत्र जाने वाली 'सिन्धु' नदी तुमको कभी न रोके। जलसे परिपूर्ण 'सरयू' तुमको न रोके। तुम्हारे आने से उत्पन्न सुखको हम सब प्राप्त करें ।९। प्रेरणा देने वाली नवीन रथ की शक्ति के साथ तेजोमय मरुतों की हम स्तुति करते हैं। वर्षा तो मरुतोंका अनुगमन करती और मरुद्गण सब स्थानों पर परिभ्रमण करते हैं।१०।   (१२)

शर्धंशर्धं व एषां व्रातंव्रातं गणंगणं सुशस्तिभिः ।
अनु क्रामेम धीतिभिः ।।११

कस्मा अद्य सुजाताय रातहव्याय प्र ययुः ।
एना यामेन मरुतः ॥१२
येन तोकाय तनयाय धान्यं बीजं वहध्वे अक्षितम् ।
अस्मभ्यं तद् धत्तन यद् व ईमहे राधो विश्वायु सौभगम् ॥१३
अतीयाम निदस्तिरः स्वस्तिभिर्हित्वावद्यमरातीः ।
वृष्ट्वी शं योराप उस्रि भेषजं स्याम मरुतः सह ॥१४
सुदेवः समहासति सुवीरो नरो मरुतः स मर्त्यः ।
यं त्रायध्वे स्याम ते ॥१५
स्तुहि भोजान् त्स्तुवतो अस्य यामनि रणन् गावो न यवसे ।
यतः पूर्वां इव सखीरनु ह्वय गिरा गृणीहि कामिनः ।१६।१३

हे मरुद्गण ! हम सुन्दर स्तोत्र और हवि प्रस्तुत करते हुए उत्तम कर्म द्वारा तुम्हारे बल, समूह और गण का अनुसरण करते हैं ।११। वे मरुद्गण आज किस हविदाता यजमानके पास श्रेष्ठ रथ द्वारा जायेंगे ? ।१२। जिस कृपापूर्ण हृदय से तुम पुत्र' पौत्रादि को अनेक बार अन्नदान करते हो,उसी हृदयसे हमको भी अन्न प्रदान करो । हम तुमसे उन्नति-प्रद आयुष्य, सौभाग्यवर्द्धक धन को माँगते हैं ।१३। हे मरुद्गण ! हम तुम्हारी रक्षा द्वारा पाप का त्याग करें । जब तुम बुद्धि को प्रेरित करो तब हम पाप के निवारण करने वाले सत्य सुख, वनस्पति आदि का लाभ करें ।१४। हे पूजनीय मरुद्गण! तुम जिसकी रक्षा करना चाहते हो,वह देवताओं की कृपा पाकर सुन्दर पुत्र पौत्रादि प्राप्त करता है । हम भी उसी के समान तुम्हारी रक्षा प्राप्त करने वाले हों क्योंकि हम भी तुम्हारे ही हैं ।१५। हे विज्ञ ! तुम यजमानके इस यज्ञ में मरुद्-गण का स्तवन करो । वे मरुद्गण वीर आदि खाने के लिये प्रसन्नता से जाने वाली गौओं के समान ही प्रसन्न होते हैं । प्राचीन मित्रोंके समान गतिमान् मरुतों को आहूत करो । स्तुति की कामना वाले मरुद्गण की श्रेष्ठ वाणी द्वारा स्तुति करो ।१६। (१३)

सूक्त ५४

(ऋषि–श्यावाश्व आत्रेयः । देवता–मरुतः । छन्द–जगतीः ।

प्र शर्धाय मारुताय स्वभानव इमां वाचमनजा पर्वतच्युते ।
धर्मस्तुभे दिव आ पृष्ठयज्वने द्युम्नश्रवसे महि नृम्णमचत ॥१
प्र वो मरुतस्तविषा उदन्यवो वयोवृधो अश्वयुजः परिज्रयः ।
सं विद्युता दधति वाशति क्षितः स्यरन्त्यापोऽवना परिज्रयः ॥२
विद्युन्महसो नरो अश्मदिद्यवो वातत्विषो मरुतः पर्वतच्युतः ।
अब्दया चिन्मुहुरा ह्लादुनीवृतः स्तनयदमा रभसा उदोजसः ॥३
व्यक्तून् रुद्रा व्यहानि शिक्वसो व्यन्तरिक्षं वि रजांसि धूतयः ।
वि यदज्राँ अजथ नाव ईं यथा विदुर्गाणि मरुतो नाह रिष्यथ४
तद् वीर्यं वो मरुतो महित्वनं दीर्घं ततान सूर्यो न योजनम् ।
एता न यामे अगृभीतशोचिषो ऽनश्वदां यन्न्ययातना गिरिम्५।१४

केवल मरुद्गण के लिए की जाने वाली स्तुति की प्रशंसा करो। वे स्वयं महान् पर्वतों को चीरने वाले, आकाश से आने वाले तथा तेज-युक्त अन्न वाले हैं। इनको आदर पूर्वक हविरन्न दो।१। हे मरुद्गण! तुम्हारे गुण प्रकट होते हैं। वे संसार की रक्षा के लिए जल की इच्छा करने वाले, अन्न के बढ़ाने, वाले,, चलने के लिये घोड़ों को रथ में जोड़ने वाले, विद्युत् से सुसङ्गति करने वाले एवं तेजस्वी है। जब मेघ गर्जन करते, तब चारों ओर फिरने वाला जल समूह पृथिवी पर गिरता है।२। प्रकाशमय तेजवाले वृष्टि के स्वामी, आयुधधारी,पर्वतको तोड़ने वाले, बारम्बार जल प्रदान करने वाले, वज्र फैंकने वाले शब्द-वान् मरुद्गणवर्षा करने के लिये उत्पन्न होते हैं।३। हे रुद्र पुत्र मरुद्गण! तुम दिवस-रात्रि को प्रकट करते हो। तुम सर्व सामर्थ्यों से युक्त हो, तथा लोकों को उखाड़ फैंकने वाले हो। तुम कम्पायमान करने वाले हो, अतः समुद्र में चलने वाली नौका के समान मेघ को कँपाओ। तुम शत्रु-पुरों को ध्वस्त करते हो, परन्तु स्वयं नष्ट नहीं होते।४। हे मरुद्गण! जैसे सूर्य अपने प्रकाश को बहुत दूर तक, फैलाते

हैं अथवा देवताओं के घोड़े जैसे चलने में तेजी दिखाते हैं, वैसे ही तुम्हारे प्रसिद्ध पराक्रम की प्रशंसा स्तोतागण दूर-२ तक फैला देते हैं ।५।

(१४)

अभ्राजि शर्धो मरुतो यदर्णसं मोषथा वृक्षं कपनेव वेधसः ।
अध स्मा नो अरमतिं सजोषसश्चक्षुरिव यन्तमनु नेषथा सुगम्।६
न स जीयते मरुतो न हन्यते न स्रेधति न व्यथते न रिष्यति ।
नास्य राय उप दस्यन्ति नोतय ऋषिं वा यं राजानं वा सुषूदथ७
नियुत्वन्तो ग्रामजितो यथा नरो ऽर्यमणो न मरुतः कवन्धिनः ।
पिन्वन्त्युत्सं यदिनासो अस्वरन् व्युन्दन्ति पृथिवीं मध्वो अन्धसा८
प्रवत्वतीयं पृथिवी मरुद्भ्यः प्रवत्वती द्यौर्भवति प्रयद्भ्यः ।
प्रवत्वतीः पथ्या अन्तरिक्ष्याः प्रवत्वन्तः पर्वता जीरदानवः ॥९
यन्मरुतः सभरसः स्वर्णरः सूर्य उदिते मदथा दिवो नरः ।
न वोऽश्वाः श्रथयन्ताह सिस्रतः सद्यो अस्याध्वनः पारमश्नुथः ।
।१०।१५

हे वृद्धिदायक मरुद्गण ! तुम जल से परिपूर्ण मेघपर आघात करते हो । तुम्हारा बल अत्यन्त शोभनीय है । तुम परस्पर समान प्रीति वाले हो । जैसे चक्षु मार्ग दिखाने में नेतृत्व करता है,वैसे ही तुम हमको श्रेष्ठ मार्ग द्वारा ऐश्वर्य के निकट पहुँचा दो ।६। हे मरुद्गण! जिस मंत्रद्वारा तुम मंत्रद्रष्टा विद्वान्को उत्तम कर्मोंमें लगाते हो वह मंत्र दूसरों के द्वारा जीता नहीं जाता और न उसकी कोई हिंसा ही कर सकता है । वह कभी क्षीण नहीं होता,कभी पीड़ित नहीं होता और न उसे कोई रोकही सकता है । उसका दान तथा साधक कभी नाश को प्राप्त नही होते ।७। नियुक्त अश्वोंके स्वामी, एकत्रित पदार्थों के विश्लेषण कर्त्ता,नेता स्वरूप ग्राम को जीत लेने वाले वीर पुरुष के समान तेजस्वी मरुद्गण जलों से युक्त है । जलसे सम्पन्न होते हैं तब मेघको जलसे परिपूर्ण करतेहैं और गर्जन करते हुए साररूप तथा मधुर रस से युक्त जलसे भूमि को सींचते हैं ।८। यह पृथ्वी मरुद्गण के लिए विशाल हुई है । आकाश भी मरुद्गणके गमन के लिए विस्तृत हुआ है । अन्तरिक्षका मार्ग मरुद्गण लिये

बढ़ता है । मेघ मण्डल मरुद्गण के निमित्त ही वृष्टि करता है ।९। हे अत्यन्त पराक्रमी मरुद्गण ! हे दिव्य लोक के नेता ! तुम सूर्य के प्रकट होने पर सोम पान के लिए इच्छा करते हो । उस समय तुम्हारे घोड़े चलने से रुकते नहीं । उस समय तुम लोकत्रय के मार्गों को पार करते हुए भी थकते नहीं ।१०। (१५)

अंसेषु व ऋष्टयः पत्सु खादयो वक्षःसु रुक्मा मरुतो रथे शुभः ।
अग्निभ्राजसो विद्युतो गभस्त्योः शिप्राः शीर्षसु विनता
हिरण्ययीः ॥११
तं नाकमर्यो अगृभीतशोचिषं रुशत् पिप्पलं मरुतो वि धूनुथ ।
समच्यन्त वृजनातित्विषन्त यत् स्वरन्ति घोषं विततमृतायवः॥१२
युष्मादत्तस्य मरुतो विचेतसो रायः स्याम रथ्यो वयस्वतः ।
न यो युच्छति तिष्यो यथा दिवोऽस्मे रारन्त मरुतःसहस्रिणम्१३
यूयं रयिं मरुतः स्पार्हवीरं यूयमृषिमवथ सामविप्रम् ।
यूयमर्वन्तं भरताय वाजं यूयं धत्थ राजानं श्रुष्टिमन्तम् ॥१४
तद् वो यामि द्रविणं सद्यऊतयो येना स्वर्ण ततनाम नॄँरभि ।
इदं सु मे मरुतो हर्यता वचो यस्य तरेम तरसा शतं हिमाः१५।१६

हे मरुद्गण ! तुम्हारे कन्धों पर अस्त्र सुशोभित होते हैं । पाँवों में रक्षा करने वाले कटक, वक्ष पर हार और रथ पर दीप्ति चमकते हैं । तुम्हारे दोनों हाथों में चमकती हुई किरणें तथा सिर सुवर्णमय मुकुट हैं ।११। हे मरुद्गण ! जब तुम चलते हो तब दिव्यलोक और समूह सभी विचलितहो उठते हैं । जब तुम हमारेद्वारा दीहुई हवियोंको भक्षण कर हृष्ट होते हो, अपना प्रकाश फैलाते हो, तब जल वर्षा करने की इच्छा करतेहुए घनघोर गर्जना करते हो ।१२। हे मरुद्गण! हे विभिन्न मत वालों ! हम रथों से युक्त हैं । हम तुम्हारे द्वारा दिये जाने वाले अन्नयुक्त धनों के स्वामी हों । तुम्हारा दिया हुआ धन कभी नाश को प्राप्त नहीं होता । वैसे ही जैसे सूर्य आकाश से पृथक् नहीं होते । हे मरुद्गण! तुम हमको असीमित धन देकर सुखी बनाओ ।१३। हे मरुद्-गण ! तुम हमको इच्छित धन,पुत्र, इत्यादि दो । तुम सोमवान ऋत्विक्

की रक्षा करने वाले होओ। हे मरुतो! तुम राजा "श्यावाश्व" को अन्न दो। वे देवताओंकी कामना से यज्ञ करते हैं। हे मरुद्गण ! तुम उनको सुख प्रदान करो ।१४। हे तुरन्त रक्षा करने वाले मरुद्गण ! तुमसे हम धन माँगते हैं। जैसे सूर्य अपनी किरणों को दूर तक फैलाते हैं, वैसे ही हम भी अपने सन्तान तथा सेवकों को उसी धन द्वारा बढ़ावें। हे मरुद्-गण ! तुम हमारे इस स्तोत्र से प्रसन्न होते हुए हमको चाहो। जिससे हम अपनी आयु के सौ वर्ष सुखपूर्वक निकाल सकें ।१५। (१६)

सूक्त ५५

(ऋषि–श्यावाश्व आत्रेयः। देवता–मरुतः। छन्द–जगती, त्रिष्टुप्)

प्रयज्यवो मरुतो भ्राजदृष्टयो बृहद् वयो दधिरे रुक्मवक्षसः।
ईयन्ते अश्वैः सुयमेभिराशुभिः शुभं यातामनु रथा अवृत्सत ॥१
स्वयं दधिध्वे तविषीं यथा विद बृहन्महान्त उर्विया वि राजथ।
उतान्तरिक्षं ममिरे व्योजसा शुभं यातामनु रथा अवृत्सत ॥२
साकं जाताः सुभ्वः साकमुक्षिताः श्रिये चिदा प्रतरं वावृधुर्नरः।
विरोकिणः सूर्यस्येव रश्मयः शुभं यातामनु रथा अवृत्सत ॥३
आभूषेण्यं वो मरुतो महित्वनं दिदृक्षेण्यं सूर्यस्येव चक्षणम्।
उतो अस्माँ अमृतत्वे दधातन शुभं यातामनु रथा अवृत्सत ॥४
उदीरयथा मरुतः समुद्रतो यूयं वृष्टिं वर्षयथा पुरीषिणः।
न वो दस्रा उप दस्यन्ति धेनवः शुभं यातामनु रथा अवृत्सत५।१७

चमकते हुए अस्त्रों से युक्त मरुद्गण युवा बनाने वाले अन्न को धारण करते हैं, उनके हृदय पर हार सुशोभित रहता है। शीघ्रता से नियम पर चलने वाले, द्रुत वेग वाले, घोड़े उन्हें वहन करते हैं। सुन्दर भाव से गमन करने वाले मरुद्गण के रथ सबसे पीछे जाते हैं ।१। हे मरुद्गण ! तुम सब जैसा उचित समझते हो, वैसा ही बल धारण करते हो। हे मरुद्गण ! तुम महान् होकर सुशोभित होओ अपने पराक्रम से अन्तरिक्ष को व्याप्त करो। सुन्दर विचार से गमन करने वाले मरुतों के रथ सबसे पीछे चलते हैं ।२।

मरुद्गण महान् हैं। वे एक साथही वर्षा करने वाले होते हैं। वे अत्यन्त शोभा के लिये सब स्थानों पर बढ़ते हैं। सूर्य की किरणों के समान वे यज्ञादि उत्तम कार्योंके कराने वाले हैं। सुन्दर बिचार से युक्त उन मरुद्गणके रथ सबसे पीछे गमन करते हैं।३। हे मरुद्गण ! तुम्हारी महानता स्तुति योग्य हैं। तुम्हारा तेज सूर्य के समान चमकता है। तुम हमको स्वर्ग-लाभ कराने में सहायक बनो। सुन्दर विचारों से परिपूर्ण मरुतों के रथ सबके रथों से पीछें हैं।४। हे मरुद्गण ! तुम अन्तरिक्ष से वर्षा के जलों को प्रेरणा करो। हे जलों के स्वामी मरुतो ! तुम वर्षा करो। हे शत्रुओंके नाश करने वालो ! तुमको प्रसन्न करने वाले कभी भी सूखते नहीं। सुन्दर विचार से गमन करने वाले मरुद्गण रथ सबके पश्चात् गमन करते है।५। (१७)

यदश्वान् धूर्षु पृषतीरयुग्ध्वं हिरण्ययान् प्रत्यत्काँ अमुग्ध्वम्।
विश्वा इत् स्पृधो मरुतो व्यस्यथ शुभं यातामनु रथा अवृत्सत॥६
न पर्वता न नद्यो वरन्त वो यत्राचिध्वं मरुतो गच्छथेदु तत्।
उत द्यावापृथिवी याथना परि शुभं यातामनु रथा अवृत्सत॥७
यत् पूर्व्यं मरुतो यच्च नूतनं यदुद्यते वसवो यच्च शस्यते।
विश्वस्य तस्य भ-था नवेदसः शुभं यातामनु रथा अवृत्सत॥८
मृलत नो मरुतो मा वधिष्टनाऽस्मभ्यं शर्म बहुलं वि यन्तन।
अधि स्तोत्रस्य सख्यस्य गातन शुभं यातामनु रथा अवृत्सत॥९
यूयमस्मान् नयत वस्यो अच्छा निरंहतिभ्यो मरुतो गृणानाः।
जुषध्वं नो हव्यदातिं यजत्रा वयं स्याम पतयो रयीणाम्।१०।१८

हे मरुद्गण ! जब तुम रथके अगले भागमें पृषती अश्वों को जोड़ते हो,तब सुवर्णके समान दमकते हुए अपने कवच को उतार देते हो। तुम सभी युद्धोंमें विजय पाते हो। सुन्दर भावसे युक्तहोकर गमनशील मरुतों के रथ सबसे पीछे गमन करते हैं।६। हे मरुद्गण ! पर्वत और नदियाँ तुम्हारे मार्ग को न रोकें। तुम जिस यज्ञादि कर्म में जाना चाहते हो वहाँ जाते ही हो। तुम आकाश और पृथ्वीमें वर्षा के लिये व्याप्त होते हो। सुन्दर विचार से युक्त मरुद्गग के रथ सबके पश्चात् चलते हैं।७।

हे मरुद्गण ! जो यज्ञादि कर्म पहिले सम्पन्न हुए तथा जो कर्म अब हो रहे हैं उनमें जो स्तुतियाँ गायी जाती है, तुम उन्हें जानो । सुन्दर भाव से युक्त मरुतों का रथ पीछे-पीछे चलता है ।८। हे मरुद्गण ! हमको सुखी बनाओ । हमसे यदि कोई अपराध हुआ है, उससे जो तुम क्रुद्ध हुए हो, उससे हमारे कार्य में विघ्न न डालो । तुम हमको अत्यन्त सुख दो । स्तुति को जानकर हमारे साथ सख्य रखो । सुन्दर भाव से गमन करने वाले मरुद्गण के रथ सबसे पीछे जाते हैं ।६। हे मरुद्गण ! तुम हमें धन के सामने ले आओ । हमारे से प्रसन्न होकर हमको पापों से छुड़ाओ । हे मरुद्गण ! हमारे द्वारा दिये गये हविरन्न को स्वीकार करो, जिससे हम बहुत प्रकार के धनों के स्वामी हों ।१०।   (८)

सूक्त ५६

(ऋषि—श्यावाश्व आत्रेयः । देवता—मरुतः । छन्द—बृहती, सतोबृहती)

अग्ने शर्धन्तमा गणं पिष्टं रुक्मेभिरञ्जिभिः ।
विशो अद्य मरुतामव ह्वये दिवश्चिद् रोचनादधि ॥१
यथा चिन्मन्यसे हृदा तदिन्मे जग्मुराशसः ।
ये ते नेदिष्ठं हवनान्यागमन् तान् वर्ध भीमसंदृशः ॥२
मीलहुष्मतीव पृथिवी पराहता मदन्त्येत्यस्मदा ।
ऋक्षो न वो मरुतः शिमीवाँ अमो दुध्रो गौरिव भीमयुः ॥३
नि ये रिणन्त्योजसा वृथा गावो न दुर्धुरः ।
अश्मानं चित् स्वर्यं पर्वतं गिरिं प्र च्यावयन्ति यामभिः ॥४
उत् तिष्ठ नूनमेषां स्तोमैः समुक्षितानाम् ।
मरुतां पुरुतममपूर्व्यं गवां सर्गमिव ह्वये ।५।१९

हे अग्ने! क्रान्तियुक्त आवरणों वाले, शत्रुओंको जीतनेवाले मरुद्गण को आहूत करो । हम आज उज्ज्वल दिव्यलोक के मरुद्गण को सम्मुख आने की कामना से बुलाते हैं ।१। हे अग्ने ! जैसे तुम मरुद्गण को पूजनीय जानकर उनका सम्मान करते हो, वैसे ही वे हमारे पास कल्याणकारी भावों से पधारें । जो हमारे आह्वान को सुनते ही चले आते हैं,

उन विकराल मरुतों को हवि देकर बढ़ाओ ।२। पृथ्वी पर रहने वाला एक मनुष्य दूसरे मनुष्य से आकर्षित होने पर उसके सामने जाता है, वैसे ही मरुद्गण प्रसन्न होते हुए हमारे सामने आते हैं । हे मरुद्गण ! तुम अग्नि के समान कार्य में क्षमतावान् और वृषभ के समान साहसी हो ।३। कठिनाई से पीड़ित किये जा सकने वाले अश्व के समान मरुद्-गण अपने पराक्रम से बिना परिश्रम के शत्रुओं को मारते हैं । वे चलने में शब्द करने वाले, जगत् को परिपूर्ण करने वाले, जलयुक्त मेघको वृष्टि के लिए गिराते हैं ।४। हे मरुद्गण ! तुम उच्च आसन पर विराजमान होओ । स्तोत्र द्वारा बढ़े हुए जल समूह के समान सम्पन्न, बल से युक्त और अद्भुत मरुद्गण को हम बुलाते हैं ।५। (१९)

युङ्ग्ध्वं ह्यरुषी पथे युङ्ग्ध्वं रथेषु रोहितः ।
युङ्ग्ध्वं हरी अजिरा धुरि वोलहवे वहिष्ठा धुरि वोलहवे ॥६
उत स्या वाज्यरुषस्तुविष्वणिरिह स्म धायि दर्शतः ।
मा वो यामेषु मरुतश्चिरं करत् प्र तं रथेषु चोदत ॥७
रथं नु मारुतं वयं श्रवस्युमा हुवामहे ।
आ यस्मिन् तस्थौ सुरणानि बिभ्रती सचा मरुत्सु रोदसी ।८
तं वः शर्धं रथेशुभं त्वेषं पनस्युमा हुवे ।
यस्मिन् त्सुजाता सुभगा महीयते सचा मरुत्सु मीहुलषी ।९।२०

हे मरुद्गण! तुम रथमें अश्वों को जोड़ो । रथमें लाल रङ्गके घोड़ों को जोड़ो । बोझा ढोने के लिए द्रुतगामी दो घोड़ोंको योजितकरो । जो बोझा ढोनेमें मजबूत होते हैं उन घोड़ोंको बोझ ढोने के लिए जोड़ो ।६। हे मरुद्गण ! रथमें जुड़े हुए, तेजस्वी, ध्वनि करने वाले और दर्शनयोग्य वे घोड़े यात्रामें देर न करें । रथम जुड़े हुए उन घोड़ोंको तुम इसप्रकार से हाँकों, जिससे वह देर न कर पावें ।७। हम मरुतों के उस अन्न युक्त रथ को बुलाते हैं जिस पर सुमधुर जल को धारण करती हुई मरुद्गण की माता विराजमान हैं ।८। हे मरुद्गण ! हम तुम्हारे सुशोभित, तेजस्वी और स्तुति के योग्य उस रथ को बुलाते हैं । उसके बीच में सुजाता, मीहलुषी मरुद्गण के साथ पूजी आती हैं ।९। (२०)

सूक्त ५७ (पाँचवाँ अनुवाक)

(ऋषि–श्यावाश्व आत्रेयः । देवता–मरुतः । छन्द–जगती, त्रिष्टुप्)

आ रुद्रास इन्द्रवन्तः सजोषसो हिरण्यरथाः सुविताय गन्तन ।
इयं वो अस्मत् प्रति हर्यते मतिस्तृष्णजे न दिव उत्सा उदन्यवे।१
वाशीमन्त ऋष्टिमन्तो मनीषिणः सुधन्वान इषुमन्तो निषङ्गिणः।
स्वश्वाः स्थ सुरथाः पृश्निमातरः स्वायुधा मरुतो याथना शुभम्२
धूनुथ द्यां पर्वतान् दाशुषे वसु निवो वना जिहते यामनो भिया।
कोपयथ पृथिवीं पृश्निमातरः शुभे यदुग्राः पृषतीरयुग्ध्वम् ।।३
वातत्विषो मरुतो वर्षनिर्णिजो यमा इव सुसदृशः सुपेशसः ।
पिशङ्गाश्वा अरुणाश्वा अरेपसः प्रत्वक्षसो महिना द्यौरिवोरवः४
पुरुद्रप्सा अञ्जिमन्तः सुदानवस्त्वेषसंदृशो अनवभ्रराधसः ।
सुजातासो जनुषा रुक्मवक्षसो दिवो अर्का अमृतं नाम भेजिरे।
।५।२१

हे परस्पर दयायुक्त मन वाले, सुवर्णिम रथ में चढ़े हुए, इन्द्र के अनुगामी रुद्र पुत्रो ! तुम हमारे सरलता से प्राप्त यज्ञ में पधारो ! हम तुम्हारे निमित्त ही स्तोत्र पढ़ते हैं । तुम प्यास से पीड़ित तथा जल की कामना करते हुए गौतम के पास जैसे स्वर्ग से जल लाये थे, वैसे ही हमारे पास आओ ।१। सुन्दर मति वाले मरुद्‌गण ! तुम्हारे पास विविध आयुध, श्रेष्ठ अश्व तथा शोभित रथ हैं । तुम अस्त्रों से सुसज्जित हो । हमारे मङ्गल के लिए यहाँ आओ । २ । हे मरुद्‌गण ! तुम अन्तरिक्ष में मेघों को कंपाओ और हवि वाले अन्न दो । तुम्हारे आनेके डरसे जङ्गलभी काँप जाते हैं । हे महान् पराक्रम वाले ! जब तुम आने के उद्देश्य से अश्व योजित करते हो तब पृथ्वी पर वृष्टि करते हो ।३। मरुद्‌गण तेजस्वी, वृष्टि के शुद्ध करने वाले के समान रूप वाले दर्शन के योग्य, काले और लाल रङ्ग के घोड़ों के स्वामी, पाप रहित तथा शत्रु का नाश करने वाले हैं । वे आकाशके समान अत्यन्त विस्तृत हैं ।४। जल वृष्टि करने वाले, दानमय

तेजस्वी, कभी क्षीण न होने वाले धन से युक्त, श्रेष्ठ जन्म वाले, हृदय पर हार धारण करने वाले, और पूजन के पात्र मरुद्गण आकाश से आकर अमृत गुण वाला रस प्राप्त करते हैं ।५। (२१)

ऋष्टयो वो मरुतो अंसयोरधि सह ओजो बाह्वोर्वो बलं हितम्।
नृम्णा शीर्षस्वायुधा रथेषु वो विश्वा वः श्रीरधि तनूषु पिपिशे६
गोमदश्वावद् रथवत् सुवीरं चन्द्रवद् राधो मरुतो ददा नः ।
प्रशस्तिं नः कृणुत रुद्रियासो भक्षीय वोऽवसो दैव्यस्य ॥७
हयो नरो मरुतो मृलता नस्तुवीमघासो अमृता ऋतज्ञाः ।
सत्यश्रुतः कवयो युवानो बृहद्गिरयो बृहदुक्षमाणाः ।८।२२

हे मरुद्गण ! तुम्हारे कन्धे पर विशिष्ट आयुध दोनों भुजाओं में शत्रु का संहार करने वाली शक्ति, शिर पर मुकुट रथ पर ध्वज है और शरीर अत्यन्त सुशोभित हैं ।६। हे मरुद्गण ! तुम हमको गौ, घोड़े, रथ, पुत्र, सुवर्ण तथा बहुत-सा अन्न दो। हे रुद्र पुत्रो ! तुम हमारी सम्पन्नता की वृद्धि करो। हम तुम्हारी दिव्य रक्षा को प्राप्त करें ।७। हे मरुद्गण ! तुम हमारे अनुकूल होओ। तुम असीमित ऐश्वर्य वाले, कभी भी न होने वाले, सत्य फल देने वाले, वर्षणशील, तरुण, ज्ञानी स्तोत्रवान् तथा वृष्टि गुण से युक्त हो ।८। (२२)

सूक्त ५८

(ऋषि—श्यावाश्व आत्रेयः। देवता—मरुतः। छन्द—त्रिष्टुप्)

तमु नूनं तविषीमन्तमेषां स्तुषे गणं मारुतं नव्यसीनाम् ।
य आश्वश्वा अमवद् वहन्त उतेशिरे अमृतस्य स्वराजः ॥१
त्वेषं गणं तवसं खादिहस्तं धुनिव्रतं मायिनं दातिवारम् ।
मयोभुवो ये अमिता महित्वा वन्दस्व विप्र तुविराधसो नृन् ॥२
आ वो यन्तूदवाहासो अद्य वृष्टिं ये विश्वे मरुतो जुनन्ति ।
अयं यो अग्निर्मरुतः समिद्ध एतं जुषध्वं कवयो युवानः ॥३
यूयं राजानमिर्यं जनाय विभ्वतष्टं जनयथा यजत्राः ।
युष्मदेति मुष्टिहा बाहुजूतो युष्मत् सदश्वो मरुतः सुवीरः ॥४

अरा इवेदचरमा अहेव प्रप्र जायन्ते अकवा महोभिः ।
पृश्नेः पुत्रा उपमासो रभिष्ठाः स्वया मत्या मरुतः सं मिमिक्षुः।५
यत् प्रायासिष्ट पृषतीभिरश्वैर्वीळुपविभिर्मरुतो रथेभिः ।
क्षोदन्त आपो रिणते वनान्यवोस्रियो वृषभः क्रन्दतु द्यौः ॥६
प्रथिष्ट यामन् पृथिवी चिदेषां भर्तेव गर्भं स्वमिच्छवो धुः ।
वातान् ह्यश्वान् धुर्यायुयुज्रे वर्षं स्वेदं चक्रिरे रुद्रियासः ॥७
हये नरो मरुतो मृलता नस्तुवीमघासो अमृता ऋतज्ञाः ।
सत्यश्रुतः कवयो युवानो बृहद्‌गिरयो बृहदुक्षमाणाः।८।२३

आज हम यज्ञ-दिवस में इन स्तुति योग्य तेजस्वी मरुद्‌गण की स्तुति करते हैं। वे द्रुतगामी अश्वों के स्वामी, अपनी शक्ति से सर्वत्र पहुँचने वाले, जलों के स्वामी तथा अपने तेज से तेजस्वी है ।१। हे होता ! कान्तिमान् कँपकँपी उत्पन्न करने वाले, धनों के प्रदान करने वाले तथा मेधावी मरुद्‌गण की परिचर्या करो। वे मरुत् सुखों के देने वाले हैं, उनकी महिमाका पार नहीं औरवे असीमित ऐश्वर्यके स्वामी है, उन मरुद्‌गण को नमस्कार करो ।२। मरुद्‌गण संसार में व्याप्त हैं, वे वर्षा को प्रेरणा करने वाले हैं। वे जल को वहन करने वाले तुम्हारे समक्ष पधारे हैं। हे युवा और ज्ञानवान् मरुद्‌गण ! तुम्हारे निमित्त जो अग्नि प्रदीप्त हुए हैं, उन्हीं के द्वारा हमारी साधना को स्वीकार करो ।३। हे पूज्य मरुद्‌गण ! तुम यजमान को पुत्र दो, वह तुत्र तेजस्वी शत्रुओं का नाश करने वाला हो। हे मरुद्‌गण ! तुम्हारीही कृपा द्वारा अपने बाहुबलसे शत्रुका संहार करने वाले तथा असंख्य घोड़ोंके स्वामी पुत्र प्राप्त होते हैं ।४। हे मरुद्‌गण ! रथचक्र में लगे दण्डों के समान तुम सब एक साथ ही आविर्भूत हुए हो। तुम दिनों के सदृश एक समान हो। पृश्नि के पुत्र एक से ही हुए हैं उनमें कोई कम तेज वाला नहीं हैं । वे वेगवान् हैं और स्वयं ही जल वर्षा में प्रवृत्त होते हैं ।५। हे मरुद्‌गण ! जब तुम अश्व योजित कर दृढ़ पहिये वाले रथ पर चढ़-कर आते हो, तब धारा गिरती है। सूर्य किरणों द्वारा जल वृष्टि के

करने वाला पर्जन्य नीचे की ओर मुख करके शब्द करता है ।६। मरुद्-गण के आने से पृथिवी को उर्वराशक्ति मिलती है । जैसे पतिद्वारा पत्नी में गर्भ स्थापित होता है वैसे ही मरुद्गण पृथ्वी पर अपने जल रूप गर्भांश को स्थापित करते हैं । वे रुद्र पुत्र द्रुतगामी घोड़ों को रथ के आगे जोड़कर वर्षा कार्य करते हैं ।७। हे मरुद्गण ! तुम हम पर कृपा करो । तुम सबसे प्रमुख, महान् ऐश्वर्य, अविनाशी, सत्य फल वाले ज्ञानी, जलवर्षक, युवा, स्तुतियों के पात्र तथा वृष्टि के करने वाले हो ।८। (३)

सूक्त ५९

(ऋषि–श्यावाश्वः । देवता–मरुतः । छन्द–त्रिष्टुप्, जगती)

प्र वः स्पलक्रन् त्सुविताय दावनेऽर्चा दिवे प्र पृथिव्या ऋतं भरे।
उक्षन्ते अश्वान् तरुषन्त आ रजोऽनु स्वं भानुं श्रथयन्ते अर्णवैः१
अमादेषां भियसा भूमिरेजति नौर्न पूर्णा क्षरति व्यथिर्यती ।
दूरेदृशो ये चितयन्त एमभिरन्तर्महे विदथे येतिरे नरः ॥२
गवामिव श्रियसे शृङ्गमुत्तमं सूर्यो न चक्षू रजसो विसर्जने ।
अत्या इव सुभ्वश्चारवः स्थन मर्या इव श्रियसे चेतथा नरः ॥३
को वो महान्ति महतामुदश्नवत् कस्काव्या मरुतः को ह पौंस्या।
यूयं ह भूमिं किरणं न रेजथ प्र यद् भरध्वे सुविताय दावने ॥४
अश्वा इवेदरूषासः सबन्धवः शूरा इवा प्रयुधः प्रोत युयुधुः ।
मर्या इव सुवृधो वावृधुर्नरः सूर्यस्य चक्षुः प्र मिनंति वृष्टिभिः५
ते अज्येष्ठा अकनिष्ठास उद्भिदोऽमध्यमासो महसा वि वावृधुः ।
सुजातासो जनुषा पृश्निमातरो दिवो मर्या आ नो अच्छा जिगातन ॥६
वयो न ये श्रेणीः पप्तुरोजसाऽन्तान् दिवो बृहतः सानुनस्परि ।
अश्वास एषामुभये यथा विदुः प्र पर्वतस्य नभनूँरचुच्यवुः ॥७
मिमातु द्यौरदितिर्वीतये नः सं दानुचित्रा उषसो यतन्ताम् ।
आचुच्यवुर्दिव्यं कोशमेत ऋषे रुद्रस्य मरुतो गृणानाः ।८।२४

हे मरुद्गण ! मङ्गल की आकांक्षा से हविदाता होता भले

प्रकार तुम्हारी स्तुति करते हैं । हे होता ! तुम प्रकाशवान् सूर्य की स्तुति करो । हम पृथ्वी को नमस्कार करते हैं, सर्वत्र व्याप्त होने वाली वर्षा को मरूद्गण गिराते हैं । अन्तरिक्ष में सर्वत्र सींचने वाले मेघों के साथ अपने तेज को दिखाते हैं ।१। जैसे मनुष्य को जल में ले जाती हुई नौका कांपती हुई लगती है वैसे ही मरूद्गण के डर से पृथ्वी कांपती है । वे दूर से दिखाई पड़ते हैं और गति द्वारा जाते हैं वे देवता समान मरूद्गण आकाश और पृथ्वी के मध्य अधिक हवि प्राप्त करने का यत्न करते हैं ।२। हे मरूद्गण ! तुम गौओं के सींगों के समान ऊँचे मुकुटों को सिर पर शोभा के लिये धारण करते हो । जैसे दिवसों के स्वामी सूर्य अपनी किरणों को फैलाते हैं, वैसे ही तुम वृष्टिके लिये अपना दैदीप्यमान तेज फैलाते हो; तुम अश्वों के समान द्रुतगति वाले तथा सुन्दर हो । यजमान आदि के समान तुम भी यज्ञादि उत्तम कर्मोंके ज्ञाता हो ।३ हे मरूद्गण ! तुम पूज्य हो । कौन तुम्हारी पूजा करने तथा तुम्हारे उद्देश्यसे स्तोत्र-पाठ करनेमें समर्थ होगा? कौन तुम्हारी वीरता का कीर्तन करेगा ? क्योंकि जब तुम वृष्टि जल को गिराते हो तब रश्मियों के समान पृथ्वी भी कांपने लगती हैं ।४। अश्वों के समान द्रुतगामी, तेजस्वी, मैत्री-भाव से मुक्त मरुद्गण वीरों के समान कर्मों में लगे हुए हैं । ऐश्वर्यशाली पुरुषों के समान वे अत्यन्त पराक्रमी होते हुए हुए वृष्टि के द्वारा सूर्य को भी ढक लेते हैं ।५। इस मरुद्गणमें कोई भी छोटा या बड़ा नहीं है । उन शत्रुओं का नाश करने वालों में कोई भी मध्यमश्रेणी का नहीं है । सभी अपने तेज से बढ़े हुए हैं । हे उत्तम जन्मवाले, मनुष्यों का कल्याण करने वाले मरुद्गण ! तुम आकाश-मार्ग से हमारे सामने पधारो ।६। हे मरुद्गण ! तुम पंक्ति बद्ध पक्षियों के समान बलपूर्वक बढ़े हुए ऊँचे उठकर अन्तरिक्ष तक जाते हो । तुम्हारे घोड़े मेघ से वर्षा का जल गिराते हैं,यह बात देवता और मनुष्य सभी को ज्ञात है ।७। हमारा पालन करने के लिये आकाश और पृथ्वी वर्षा को प्रकट करें । अत्यन्त दानमय स्वभाव वाली उषा हमारे

कल्याण के लिये प्रयत्नशील हो । हे ऋषियो ! तुम्हारी स्तुति से प्रसन्न हुए यह रूद्र पुत्र दिव्य जल की वर्षा करें ।८। (२४)

सूक्त ६०

(ऋषि-श्यावाश्व आत्रेयः । देवता-मरुतः,अग्निः । छन्द-त्रिष्टुप् जगती)

ईले अग्निं स्ववसं नमोभिरिह प्रसत्तो वि षयत् कृतं नः ।
रथैरिव प्र भरे वाजयद्भिः प्रदक्षिणिन्मरुतां स्तोममृध्याम् ॥१
आ ये तस्थुः पृषतीषु श्रुतासु सुखेषु रूद्रा मरुतो रथेषु ।
वना चिदुग्रा जिहते नि वो भिया पृथिवी चिद् रेजते पर्वतश्चित्२
पर्वतश्चिन्महि वृद्धो विभाय दिवश्चित् सानु रेजत स्वने वः ।
यत् क्रीडथ मरुत ऋष्टिमन्त आप इव सध्यञ्चो धवध्वे ॥३
वरा इवेद् रैवतासो हिरण्यैरभि स्वधाभिस्तन्वः पिपिश्रे ।
श्रिये श्रेयांसस्तवसो रथेषु सत्रा महांसि चक्रिरे तनूषु ॥४
अज्येष्ठासो अकनिष्ठास एते सं भ्रातरो वावृधुः सौभगाय ।
युवा पिता स्वपा रूद्र एषां सुदुघा पृश्निः सुदिना मरुद्भ्यः ॥५
यदुत्तमे मरुतो मध्यमे वा यद् वावमे सुभगासो दिवि ष्ठ ।
अतो नो रूद्रा उत वा न्वस्याऽग्ने वित्ताद्धविषो यद् यजाम ॥६
अग्निश्च यन्मरुती विश्ववेदसो दिवो वहध्वं उत्तरादधि ष्णुभिः।
ते मन्दसाना धुनयो रिशादसो वामं धत्त यजमानाय सुन्वते ॥७
अग्ने मरुद्भिः शुभयद्भिर्ऋक्वभिः सोमं पिव मन्दसानो गणश्रिभिः ।
पावकेभिर्विश्वमिन्वेभिरायुभिर्वैश्वानर प्रदिवा केतुना सजूः।८।२५

हम 'श्यावाश्व' ऋषि रक्षा करने वाले अग्नि का सुन्दर स्तोत्र से स्तवन करते हैं । वे इस यज्ञ में पधार कर हमारे स्तोत्र को जानें, जैसे रथ अपने लक्ष्य पर पहुँचता है, वैसे ही हम अन्न की कामना वाले स्तोत्रों द्वारा अपने अभीष्ट की याचना करते हैं । हम प्रदक्षिणा करने के पश्चात् अपने स्तोत्र को बढ़ावें ।१। हे रूद्र पुत्रो ! तुम प्रसिद्ध अश्वों से जुते हुए सुन्दर सुसज्जित रथपर चढ़कर चलो । जब तुम रथ पर चढ़ते

हो तब तुम्हारे डरसे जङ्गलभी काँप जाते हैं ।२। हे मरूद्‌गण ! तुम्हारे भयङ्कर गर्जन को सुनकर विशाल पर्वत भी डर जाते हैं और अन्तरिक्ष के ऊंचे प्रदेश भी कम्पायमान होते हैं। हे मरूतो ! तुम शस्त्रधारी हो, जब तुम क्रीड़ा निमग्न होते हो तब जल के समान दौड़ते हो ।३। जैसे विवाह की कामना वाला वैभवशाली युवक सुवर्णाभूषणों से सुसज्जित होता है वैसे ही सर्वोत्कृष्ट एवं पराक्रमी मरूद्‌गण रथपर चढ़कर अपने तेजसे सुसज्जित होते हैं ।४। यह मरूद्‌गण एक साथ ही जन्मे हैं। उनमें छोटा कोई नहीं हे। यह परस्पर बन्धु भाव रखते हुए वृद्धि को प्राप्त होते हैं। इन श्रेष्ठ अनुष्ठानों को करने वाले नित्य युवा मरूद्‌गण पिता रूद्र और माता रूपिणी पृथ्वी के लिये सुन्दर दिन प्रकट करें ।५। हे भाग्यवान् मरूद्‌गण ! तुम उत्कृष्ट आकाश में मध्याकाश अथवा नीचे के आकाश में अवस्थित रहते हो। हे रुद्रपुत्रो ! तुम उन स्थानों से हमारे पास आओ। हे अग्ने ! हमारे द्वारा आज दी जाने वाली हवि को तुम जानो ।६। हे मरूद्‌गण ! तुमसब जानते हो तुम और अग्नि आकाश से सर्वोच भाग में रहते हो। तुमहमारी हबि और स्तुति से प्रसन्न होते हुए शत्रुओं का वध करो और सोमसिद्ध करने वाले यजमानों को इच्छित ऐश्वर्य दो ।७। हे अग्ने ! तुम प्राचीन काल से ही ज्वालाओं से युक्त रहते हुए सुन्दर शोभायमान, पूज्य शोधनकर्त्ता तथा प्रीति के देने वाले हो। तुमदीर्घायुष्य मरूद्‌गण के साथ आकर सोमरस पियो ।८।   (२५)

सूक्त ६१

(ऋषि–श्यावाश्व आत्रेयः। देवता–मरूतः तरन्तमहिषी
शशीयसीं प्रभृति ! छन्द–गायत्री, अनुष्टुप् बृहती प्रभृति)

के ष्ठा नरः श्रेष्ठतमा य एकएक आयय । परमस्याः परावतः॥१

क्ववोऽश्वाः क्वाभीशवः कथं शेक कथा यय ।
पृष्ठे सदो नसोर्यमः ॥२

जघने चोद एषां वि सक्थानि नरो यमुः। पुत्रकृथे न जनयः ॥३

परा वीरास एतन मर्यासो भद्रजानयः । अग्नितपो यथासथ ।।४
सनत् साश्व्यं पशुमुत गव्यं शतावयम् ।
श्यावाश्वस्तुताय या दोर्वीरायोपबर्बृहत् ।५।२६

हे प्रमुख नेताओं ! तुम कौन हो ? तुम अन्तरिक्ष से एक-२ बार यहाँ पधारो ।१। हे मरुतो ! पुम्हारे घोड़े कहाँ हैं ? लगाम कहाँ है ? तुम्हारा गमन कैसा है ? अश्वों की पीठ पर आस्तरण और दोनों नाकों में रस्सी दिखाई देती है ।२। शीघ्र चलने के लिये लिए घोड़ो की जांघों पर चाबुक लगाई जाती है । मरुद्गण अश्वों को अपनी जाँघों को चौड़ा करके तेजी से दौड़ने के लिये प्रेरित करते हैं ।३। हे शत्रुओं का नाश करने वालो ! वीरो ! हे मनुष्य का मंगल करने वालो तथा उत्तम जन्म वालो ! हे मरुतो ! तुम अग्निमें तपाये गये ताम्रपात्रके समान वर्ण वाले दिखाई देते हो ।४। 'श्यावाश्व' ने जिसका स्तवन किया, जिसने वीर 'तरन्त' को अपने बाहु-बन्धन में बाँध लिया, उसी 'तरन्त' की महिषी शशीयसी हमें घोड़े, गौ तथा पशु धन देती है ।५। (२६)

उत त्वा स्त्री शशीयसी पुंसो भवति वस्यसी । अदेवत्रादराधसः
वि या जानाति जसुरिं वि तृष्यन्तं वि कामिनम् ।
देवत्रा कृणुते मनः ।६।७
उत घा नेमो अस्तुतः पुमाँ इति ब्रुवे पणिः । स वैरदेय इत्समः ८
उत मेऽरपद् युवतिर्ममन्दुषी प्रति श्यावाय वर्तनिम् ।
वि रोहिता पुरुमीलहाय येमतुर्विप्राय दीर्घयशसे ।।९
यो मे धेनूनां शतं वैददश्विर्यथा ददत् । तरन्त इव मंहना।१०।२७

जो मनुष्य देवताओंकी उपासना नहीं करता और दान नहीं करता उस मनुष्य से 'शशीयसी' पूर्णतः श्रेष्ठ हैं ।६। वह 'शशीयसी' दुःखी प्यासे तथा धन की उपासना करने वाले को जानती है । वह देवताओं की प्रीति में अपनी बुद्धि लगाती हैं ।७। 'शशीयसी' के अर्द्धाङ्ग रूप पति 'तरन्त' की स्तुति करके भी हम कहते हैं कि उनकी स्तुति ठीक प्रकार नहीं हो पाई । वे दान के बारे में सब समय एक समान ही

है।८। युवती शशीयसीने प्रसन्नतासे 'श्यावाश्व' को मार्ग दिखाया था। उसके दिये हुए लाल रङ्ग के दोनों घोड़े हमको मेधावी, तेजस्वी पुरमीह्ल के पास पहुँचते हैं।९। 'विददश्व' के पुत्र 'पुरमीह्ल' ने भी 'तरन्त' के समान ही हमको सौ गायें मथा महान् ऐश्वर्य प्रदान किया था।१०। (२७)

य ईं वहन्त आशुभिः पिबन्तो मदिरं मधु। अत्र श्रवांसि दधिरे११
येषां श्रियाधि रोदसी विभ्राजन्ते रथेष्वा। दिवि रुक्म इवोपरि१२
युवा स मारुतो गणस्त्वेषरथो अनेद्यः । शुभंयावाप्रतिष्कुतः॥१३
को वेद नूनमेषां यत्रा मदन्ति धूतयः । ऋतजाता अरेपसः ॥१४
यूयं मर्तं विपन्यवः प्रणेतार इत्था धिया । श्रोतारो यामहूतिषु ।१५।२८

जो मरूद्गण द्रुतगामी घोड़ों पर चढ़कर हर्षोत्पादक सोम रस को पीते हुए इस स्थान पर आये थे,वे यहाँ विविध प्रकार की स्तुतियों को ग्रहण करते हैं।११। जिन मरूतों के तेज से आकाश पृथ्वी व्याप्त होते हैं, ऊपर दिव्य लोक में तेजस्वी सूर्य के समान के मरूद्गण रथ पर चढ़े हुए, विशिष्ट तेंजसे युक्त होते हैं।१२। वे मरूद्गण नित्य युवा, तेजोमय रथ वाले, अनिद्य सुन्दर गति से चलने वाले और कभी न रूकने वाले हैं।१३। जल वर्षा के निमित्त उत्पन्न शत्रुओं को कंपाने वाले और पाप से रहित मरूद्गण जिस स्थान पर पुष्टिको प्राप्त हुए, उस स्थान का ज्ञाता कौन है ? ।१४। हे स्तुति की कामना वाले मरूद्गण ! जो मनुष्य तुम्हें अपने कर्मद्वारा प्रसन्न करता है,उसे तुम स्वर्गादि की प्राप्ति कराते हो। यज्ञ में बुलाये जाने पर तुम आह्वान को सुनते हो।१५। (२८)

ते नो वसूनि काम्या पुरुश्चन्द्रा रिशादसः ।
आ यज्ञियासो ववृत्तन ॥१६
एतं मे स्तोममूर्म्ये दार्भ्याय परा वह। गिरो देवि रथीरिव ॥१७
उत मे वोचतादिति सुतसोमे रथवीतौ । न कामो अप वेति मे१८

एष क्षेति रथवीतिर्मघवा गोमतीरनु । पर्वतेष्वपश्रितः ।१६।२६

हे शत्रुओं का नाश करने वाले, ऐश्वर्यवान् ! मरुद्गण ! तुम हमको इच्छित धन प्रदान करो ।१६। हे रात्रिदेवी ! तुम हमारे पास से मरुतों की स्तुति को उनके पास पहुँचाओ । यह स्तोत्र मरुद्गणके लिये हैं । हे देवी ! जैसे रथ वाला रथ पर विविध वस्तुएं रखकर लक्ष्य पर पहुँचता है वैसे ही तुम हमारे इस सम्पूर्ण स्तोत्र को पहुँचाओ ।१७। हे रात्रि देवी ! सोम की समाप्ति पर "रथवीति" को यह बताना कि मेरी अभिलाषा अभी न्यून नहीं हुई है ।१८। वे "रथवीति" "गोमती" तट पर रहते हैं । उनका स्थान हिमयुक्त पर्वत पर अवस्थित है ।१९। (२६)

सूक्त ६२

(ऋषि–श्रुतिविदात्रेयः । देवता–मित्रावरुणौ । छन्द–त्रिष्टुप्)

ऋतेन ऋतमपिहितं ध्रुवं वां सूर्यस्य यत्र विमुचन्त्यश्वान् ।
दश शता सह यस्थुस्तदेकं देवानां श्रेष्ठं वपुषामपश्यम् ॥१
तत् सु वां मित्रावरुणा महित्वमीर्मा तस्थुषीरहभिर्दुदुह्रे ।
विश्वाः पिन्वथः स्वसरस्य धेना अनु वामेकः पविरा ववर्त॥२
अधारयतं पृथिवीमुत द्यां मित्रराजाना वरुणा महोभिः ।
वर्धयतमोषधीः पिन्वतं गा अव वृष्टिं सृजतं जीरदानू ॥३
आ वामश्वासः सुयुजो वहन्तु यतरश्मय उप यन्त्ववाक् ।
घृतस्य निर्णिगनु वर्तते वामुप सिन्धव प्रदिवि क्षरन्ति ॥४
अनु श्रुताममतिं वर्धदुर्वीं बर्हिरिव यजुषा रक्षमाणा ।
नमस्वन्ता धृतदक्षाधि गर्ते मित्रासाथे वरुणेलास्वन्त। ।५।३०

हम तुम्हारे आश्रयभूत, जल द्वारा ढके हुए, अनादिकालीन, सत्यरूप सूर्यमंडल को देखते हैं । उस स्थान में अवस्थित घोड़ोंको स्तोता छोड़ते हैं । उस सूर्यमंडल में सहस्रों किरणें रहती हैं । तेजस्वी अग्नि आदि देवताओं के बीच हमने सूर्य के उस उत्तम मंडल के दर्शन किये ।१। हे मित्रावरुण ! तुम्हारी महिमा अत्यन्त प्रशस्त है जिसके द्वारा गतिशील

सूर्य के तेज को बढ़ाते हो। तुम्हारा एक मात्र रथ अनुक्रम से घूमता है।२। हे मित्रावरुण ! स्तुति करने वाले यजमान तुम्हारी कृपा से राज्य प्राप्त करते हैं। तुम दोनों अपने पराक्रम से आकाश पृथिवी को धारण करते हो। हे शीघ्र देने वाले मित्रावरुण ! तुम औषधियों और गौओं की वृद्धि के लिए जल वृष्टि करो।३। हे मित्रावरुण ! तुम्हारे अश्व रथ में भले प्रकार जुतकर तुम दोनों को वहन करें। वे सारथि के नियन्त्रण में चलें। साकार जल तुम्हारा अनुगमन करता है। तुम्हारी कृपा से ही प्राचीन नदियाँ बहती हैं।४। हे अन्न तथा जल से युक्त मित्रावरुण! तुम दोनों शरीर के तेज को बढ़ाते हो। यज्ञ की रक्षा जैसे मंत्र से होती है, वैसे ही तुम पृथिवी की रक्षा करो। तुम दोनों यज्ञ स्थान में रथ पर चढ़ो।५। (३०)

अक्रविहस्ता सुकृते परस्पा यं त्रासाथे वरुणेलास्वन्तः ।
राजाना क्षत्रमहृणीयमाना सहस्रस्थूणं बिभृथः सह द्वौ ॥६
हिरण्यनिर्णिगयो अस्य स्थूणा वि भ्राजते दिव्य श्वाजनीव ।
भद्रे क्षेत्रे निमिता तिल्विले वा सनेम मध्वो अधिगर्त्यस्य ॥७
हिरण्यरूपमुषसो व्युष्टावयःस्थूणमुदिता सूयस्य ।
आ रोहथो वरुण मित्र गर्तमतश्चक्षाथे अदितिं दितिं च ॥८
यद् बंहिष्ठं नातिविधे सुदानू अच्छिद्रं शर्म भुवनस्य सोपा ।
तेन नो मित्रावरुणावविष्टं सिषासन्तो जिगीवांसः स्याम ।९।३१

हे मित्रावरुण ! तुम दोनों जिस यजमान की यज्ञ में रक्षा करते हो उस सुन्दर स्तुति करने वाले यजमान को देने वाले बनो। तुम दोनों ऐश्वर्य-शाली क्रोध से रहित होकर सहस्र स्तम्भ युक्त मकान के धारण करने वाले हो।६। इनका रथ तथा कील आदि सब सुवर्ण के है। वह रथ अन्तरिक्ष में विद्युत् के समान सुशोभित होता है। हम कल्याणकारी स्थान में सोमरस स्थापित करे।७। हे मित्रावरुण ! तुम उषाकाल में सूर्योदय होने पर यज्ञ में आते समय सुवर्णमय रथ पर उषाकाल में सूर्योदय होने पर यज्ञ में आते समय सुवर्णमय रथ पर चढ़ो और अखण्ड भूमि तथा इधर-उधर बिखरी हुई प्रजा को देखो।८। हे दानमय तथा संसार की रक्षा करने वाले मित्रावरुण ! जो सुख न

टूटने योग्य, कभी क्षीण न होने वाला तथा महान् हैं, उस सुखको तुम धारण करने वाले हो। हमारा उसी सुखद्वारा पालनकरो। हम इच्छित धन पावें और पशुओं को जीतें।६। (३१)

॥ तृतीयोऽध्यायः समाप्तः ॥

सूक्त ६३

(ऋषि—अर्चनाना आत्रेयः। देवता—मित्रावरुणौ। छन्द—जगती)

ऋतस्य गोपावधि तिष्ठथो रथं सत्यधर्माणा परमे व्योमनि।
यमत्र मित्रावरुणावथो युवं तस्मै वृष्टिर्मधुमत् पिन्वते दिवः ॥१
सम्राजावस्य भुवनस्य राजथो मित्रावरुणा विदथे स्वर्दृशा।
वृष्टिं वां राधो अमृतत्वमीमहे द्यावापृथिवी वि चरन्ति तन्यवः॥२
सम्राजा उग्रा वृषभा दिवस्पती पृथिव्या मित्रवरुणा विचर्षणी।
चित्रेभिरभ्रैरुप तिष्ठथो रवं द्यां वर्षयथो असुरस्य मायया ॥३
माया वां वरुणा दिवि श्रिता सूर्यो ज्योतिश्चरत चित्रामायधम्।
तमभ्रेण वृष्टया गूहथो दिवि पर्जन्य द्रप्सा मधुमन्त ईरते ॥४
रथं युञ्जते मरुतः शुभे सुखं शूरो न मित्रावरुणा गविष्टिषु।
रजांसि चित्रा वि चरन्ति तन्वयोदिवः सम्राजा पयसानउक्षतम्५
वाचं सु मित्रावरुणाविरांवतीं पर्जन्यश्चित्रां वदति त्विषीमतीम्।
अभ्रा वसत मरुतः सु मायया द्यां वर्षयतमरुणामरेपसम् ॥६
धर्मणा मित्रावरुणा विपश्चिता व्रता रक्षेथे असुरस्य मायया।
ऋतेन विश्वं भुवनं वि राजथः सूर्यमा धत्थो दिवि चित्र्यं रथम्
७।१

हे जल रक्षक, सत्य धर्म के युक्त मित्रावरुण ! हमारे यज्ञ में आने के लिए तुम दोनों रथ के ऊपर चढ़ते हो। यज्ञ में तुम जिस यजमान की रक्षा करते हो, उस यजमान के लिये आकाश से मधुर जल की वर्षा होती है।१। हे स्वर्गद्रष्टा मित्रावरुण ! इस यज्ञ में विराजमान तुम विश्व का शासन करते हो। हम तुमसे वर्षा रूप अन्न तथा दिव्य ऐश्वर्य की याचना करते हैं। तुम दोनों की महती किरणें आकाश और पृथिवी के बीच घूमती हैं।२। हे मित्र और वरुण ! तुम दोनों अत्यन्त सुशोभित जल की वर्षा करने वाले पराक्रमी आकाश पृथिवी के

स्वामी सर्वद्रष्टा हो। तुम दोनों अद्भुत रूप वाले मेघों के साथ स्तोत्र सुनने के लिए आओ। फिर वर्षाकारी पर्जन्य के बलसे आकाश से जल धाराओं को गिराओ ।३। हे मित्रावरुण ! जब ज्योतिर्मय भास्कर अन्तरिक्ष में घूमते हैं, तब तुम दोनों की माया स्वर्गमें रहती है। तुम दोनों आकाश से मेघ तथा वर्षा द्वारा सूर्यका पालन करते हो। हे पर्जन्य ! मित्रावरुण की प्रेरणा से मधुर जल धार मिलती हैं ।४। हे मित्रावरुण ! जैसे वीर पुरुष में आने के लिए अपने रथ को सजाता है, वैसेही तुम दोनोंके सहयोग से वृष्टि के निमित्त मरुद्गण अपने कल्याणकारी रथको सजाते हैं। जल वर्षाके लिए मरुद्गण विभिन्न लोकों में घूमते हैं। हे शोभनीय देवताओ ! तुम मरुतों के साथ हम पर जल वृष्टि करो ।५। हे मित्रावरुण ! तुम दोनों की प्रेरणा से ही मेघ अन्न-साधन करने वाला अद्भुत गर्जन करताहै। उन मेघोंकी रक्षा मरुद्गण अपनी बुद्धिसे करते हैं। तुम दोनों भी उनके साथ अरुण वर्ण वाले पाप रहित आकाश से वर्षा करते हो ।६। हे मेधावी मित्रावरुण ! तुम दोनों संसारका उपकार करने वाले वर्षा आदि कर्म द्वारा यज्ञ का पालन करते हो। जल वर्षा करने वाले पर्जन्यकी शक्ति द्वारा जलको उज्ज्वल बनाते हो। तुम पूजनीय तथा तेजस्वी रथ सूर्य मंडल में स्थापित करो ।७। (१)

सूक्त ६४

(ऋषि–अर्चनाना आत्रेयः। देवता–मित्रावरुणौ। छन्द–अनुष्टुप्, पंक्तिः)

वरुणं वो रिशादसमृचा मित्र हवामहे।
परि व्रजेव बाह्वो र्जगन्वांसा स्वर्णरम् ॥१
ता बाहवा सुचेतुना प्र यन्तमस्मा अर्चते।
शेवं हि जार्यं वां विश्वासु क्षासु जोगुवे ॥२
यन्नूनमश्यां गतिं मित्रस्य यायाँ पथा।
अस्य प्रियस्य शर्मण्यहिंसानस्य सश्चिरे ॥३
युवाभ्यां मित्रावरुणोपमं धेयामृचा।
यद्ध क्षये मघोनां स्तोतृणां च स्पूर्धसे ॥४
आ नो मित्र सुदीतिभिर्वरुणश्च सधस्थ आ।
स्वे क्षये मघोनां सखीनां च वृधसे ॥५

युवं नो येषु वरुण क्षत्रं बृहच्च बिभृथः।
उरु णो वाजसातये कृतं राये स्वस्तये ॥६
उच्छन्त्यां मे यजता देवक्षत्रे रुशद्गवि।
सुतं सोमं न हस्तिभिरा पड्भिर्धावतं नरा बिभ्रतावर्चनानसम्
।७।२

हे मित्रावरुण ! इस मन्त्र द्वारा हम तुम दोनों को आहूत करते हैं। तुम अपने भुजबल से शत्रुओं को हटाओ और स्वर्गके मार्ग को दिखाओ ।१। हे मित्रावरुण ! तुम दोनों विद्वानहो । हम स्तोताओं को तुम दोनों ही इच्छित धन दो । हम सुन्दर हाथों द्वारा तुम दोनों को प्रणाम करते हैं । तुम दोनों का दिया हुआ प्रशंसनीय सुख सभी स्थानों में व्याप्त है ।२। हम अभी चलें । मित्र द्वारा दिखाये हुए मार्ग पर हम चलें । अहिंसिक मित्र का श्रेष्ठ कल्याण हमको घर से प्राप्त हो ।३। हे मित्रा-वरुण ! तुम दोनों की स्तुति करते हुए हम ऐसा ऐश्वर्य प्राप्त करेंगे, जिससे सभी स्तुतिकर्त्ता हमारे धन के प्रति ईर्ष्यालु होंगे ।४। हे मित्रा-वरुण ! तुम सुन्दर तेज से युक्त होकर हमारे यज्ञ में पधारो । तुम धन-वान यजमानों के घर में तथा मित्रों के घर में ऐश्वर्य की वृद्धि करो ।५। हे मित्रावरुण ! हमारी स्तुतियों के लिए तुम असीमित अन्न बल धारण करते हो । तुम दोनों ही हमको अन्न और सुख प्रदान करो ।६। हे मित्रावरुण ! हे स्वामिन् ! तुम दोनों उषाकाल में सुन्दर रश्मियुक्त प्रातः वेला में यज्ञ-गृह में पूजे जाते हो । उस गृह में हमारे द्वारा सुसिद्ध सोमरस को देखो । तुम दोनों स्तोता के उपर प्रसन्न होते हुए गतिशील घोड़े पर चढ़कर शीघ्र आओ ।७।　　(२)

सूक्त ६५

(ऋषि—रातहव्य आत्रेयः। देदता—मित्रावरुणौ । छन्द—अनुष्टुप्, पंक्तिः)

यश्चिकेत स सुक्रतुर्देवत्रा स ब्रवीतु नः।
वरुणो यस्य दर्शतो मित्रो वा वनते गिरः ॥१
ता हि श्रेष्ठवर्चसा राजाना दीर्घश्रुत्तमा।

ता सत्पती ऋतावृध ऋतावाना जनेजने ॥२
ता वामियानोऽवसे पूर्वा उप ब्रुवे सचा।
स्वश्वासः सु चेतुना वाजाँ अभि प्र दावने ॥३
मित्रो अंहोश्चिदादुरु क्षयाय गातुं वनते।
मित्रस्य हि प्रतूर्वतः सुमतिरस्ति विधतः ॥४
वयं मित्रस्यावसि स्याम सप्रथस्तमे।
अनेहसस्त्वोतयः सत्रा वरुणशेषसः ॥५
युवं मित्रेमं जनं यतथः सं च नयथः।
मा मघोनः परि ख्यतं मो अस्माकमृषीणां गोपीथे न उरुष्यतम्।
६।३

हे मित्रावरुण ! जो मनुष्य देवताओं में तुम दोनों के स्तोत्र को जानता है, वह उत्तम अनुष्ठान करने वाला है। वह सुन्दर कर्म करने वाला स्तोता हमको स्तुति बतावे, जिन स्तुतियों को सुन्दर रूप वाले मित्रावरुण स्वीकार करते हैं।१। अत्यन्त तेजस्वी ईश्वर रूप मित्रावरुण सुदूर निवास करते हुए भी हमारे आह्वान को सुन लेते है। यजमानों के ईश्वर और यज्ञकी वृद्धि करने वाले यह दोनों देवता प्रत्येक यजमान के मङ्गल करने के लिये घूमते फिरते हैं।२। हे मित्रावरुण ! तुम दोनों प्राचीन हो हम तुम्हारे समक्ष उपस्थित हुए अपनी रक्षा-कामना करते हुए तुम्हारी पूजा करते हैं। द्रुतगति वाले घोड़े के स्वामी होकर अन्न के निमित्त सुन्दर ज्ञान वालों का स्तवन करते हैं।३। मित्र देवता अधम स्तोता को भी उत्तम घर में रहने का उपाय बताते हैं। हिंसक स्वभाव वाला भी यदि उनकी प्रीति करे तो वे उसके प्रति भी कल्याण भावना रखते हैं।४। दुःखों का निवारण करने वाले मित्र देवता की महान् रक्षा को हम यजमान प्राप्त कर सकें। हे मित्र ! हम तुम्हारे द्वारा पापों से बचायें जाते हुए, तुम्हारे आश्रय में एक समय में ही वरुण देवता के प्रजा रूप माने जायें।५। हे मित्र ! हे वरुण ! हम स्तोता तुम दोनों का स्तवन करते हैं। तुम दोनों ही हमारे समीप पधारो। यहाँ आकर हमको सभी इच्छित वस्तुओं को प्राप्त कराओ।

हे मित्रावरुण ! हम अन्न के स्वामी हैं। हमको त्यागना नहीं,तुम हमारे पुत्रों से विमुख मत होना। हमारे सोमयाग में तुम दोनों सर्व प्रकार हमारे रक्षक होना।६। (३)

सूक्त ६६

(ऋषि—रातहव्य आत्रेयः। देवता—मित्रावरुणौ। छन्द—अनुष्टुप्)

आ चिकितान सुक्रतू देवौ मर्त रिशादसा।
वरुणाय ऋतपेशसे दधीत प्रयसे महे ॥१
ता हि क्षत्रामविह्नुतं सम्तगसुर्यमाशाते।
अध व्रतेव मानुषं स्वर्ण धायि दर्शतम् ॥२
ता वामेषे रथानामुर्वीं गव्यूतिमेषाम्।
रातहव्यस्य सुष्टुतिं दधृक् स्तोमैंर्मनामहे ॥३
अधा हि काव्यो युवं दक्षस्य पूर्भिरद्भुता।
नि केतुना जनानां चिकेथे पूतदक्षसा ॥४
तद्दतं पृथिवी बृहच्छ्रवएष ऋषीणाम्।
ज्रयसानावरं पृथ्वति क्षरन्ति यामभिः ॥५
आ यद् वामीयचक्षसा मित्र वयं च सूरयः।
व्यचिष्ठे बहुपाय्ये यतेमहि स्वराज्ये ।६।४

हे स्तुतियों के जानने वाले मनुष्यों। तुम शत्रुओं का संहार करने तथा अनेक उत्तम कर्मों के करने वाले दोनों देवताओं का आह्वान करो। हवि रूप अन्न तथा रस पूज्य वरुण को अर्पण करो जो अन्नों के स्वामी हैं।१। तुम दोनों का पराक्रम कभी नष्ट न होने वाला तथा राक्षसों का नाश करने वाला है। जैसे सूर्य अन्तरिक्ष में प्रकाशित होते हैं वैसे ही तुम्हारा प्रकाशित बल यज्ञ स्थान में देदीप्यमान होता है।२। हे मित्रावरुण ! हविरन्न-युक्त श्रेष्ठ स्तुति द्वारा शत्रुओं को वशीभूत करने वाला सामर्थ्य लाभ करते हुए, तुम दोनों हमारे इस रथ के आगे मार्ग की रक्षा के लिये चलते हो उस समय हम दोनों का स्तवन करते हैं।३। हे स्तुति के पात्र, अत्यन्त बल वीरो, दोनों

देवताओ ! हमारी परिपूर्ण करने वाली स्तुति द्वारा तुम दोनों अत्यन्त अद्भुत होते हो। क्योंकि तुम दोनों ही प्रति युक्त हृदय से हमारे स्तोत्र के जानने वाले हो ।४। हे भूमिदेवों ! हम ऋषियों का अभीष्ट साधन करने के लिए तुम्हारे ऊपर जल स्थापित करते हैं। वे गतिमान दोनों देवता अपने नियम और गति द्वारा बहुत जल की वर्षा करते हैं ।५। हे मित्रावरुण ! तुम दूरदर्शी हो। हम स्तुति करने वाले तुम दोनों को बुलाते हैं। हम तुम्हारे अत्यन्त विशाल बहुतों के द्वारा जाने हुए आश्रय को प्राप्त करें ।६। (४)

सूक्त ६७

(ऋषि—यजत आत्रेयः। देवता— मित्रावरुणौ। छन्द—अनुष्टुप्)

बलित्था देव निष्कृतमादित्या यजतं बृहत्।
वरुण मित्रार्यमन् वर्षिष्ठं क्षत्रमाशाथे ॥१
आ यद् योनिं हिरण्ययं वरुणो मित्र सदथः।
धर्तारा चर्षणीनां यन्तं सुम्नं रिशादसा ॥२
विश्वे हि विश्ववेदसो वरुणो मित्रो अर्यमा।
व्रता पदेव सश्चिरे पान्ति मर्त्यं रिषः ॥३
ते हि सत्या ऋतस्पृश ऋतावानो जनेजने।
सुनीथासः सुदानवोऽहोश्चिदुरुचक्रयः ॥४
को नु वां मित्रास्तुतो वरुणो वा तनूनाम्।
तत् सु वामेषते मतिरत्रिभ्य एषते मतिः ।५।५

हे तेजस्वी अदिति पुत्र मित्र, वरुण और तुम सब यजन योग्य, वर्द्धमान वृहद् बल के तत्काल धारण करने वाले हो और अत्यन्त क्षमता युक्त हो ।१। हे मित्रावरुण ! तुम मनुष्यों की रक्षा करने वाले और शत्रुओं का नाश करने वाले हो। जब तुम इस सुन्दर यज्ञ स्थल में आते हो। तब हमारा मङ्गल करते हो। सबके जानने वाले मित्र, वरुण और अर्यमा अपने अपने स्थान के अनुरूप हमारे इस यज्ञ-गृह में विराजमान होते हैं और हिंसा करने वाले पापी असुरों से

मनुष्योंकी रक्षा करते हैं।२-३। वे मित्रावरुण सत्य मार्गके दिखाने वाले, जल की वर्षा करने वाले तथा यज्ञ की रक्षा करने वाले हैं। वे प्रत्येक मनुष्य को सत्य मार्ग दिखाते और धन देतेहैं। वे निम्न कोटिके स्तोता कोभी ऐश्वर्य प्रदान करते हैं।४। हे मित्रावरुण ! हमारे द्वारा तुम दोनों की स्तुतियाँ करने परभी कौन ऐसा है जिसकी स्तुति नहीं हुई ? अर्थात् तुम दोनों ही स्तुत्य हों। हम अल्प बुद्धि वाले अत्रि वंशीय स्तोता तुम्हारी स्तुति करते हैं।५। (५)

सूक्त ६८

(ऋषि–यजत आत्रेयः। देवता–मित्रावरुणौ। छन्द- गायत्री)

प्र वो मित्राय गायत वरुणाय विपा गिरा। महिक्षत्रावृतं बृहत्१
सम्राजा या घृतयोनी मित्रश्चोभा वरुणश्च। देवा देवेषु प्रशस्ता२
ता: नः शक्तं पार्थिवस्य महो रायो दिव्यस्य।
महि वां क्षत्रं देवेषु ॥३
ऋतमृतेन सपन्तेषिरं दक्षमाशाते। अद्रुहा देवौ वर्धेते ॥४
वृष्टिद्यावा रीत्यापेषस्पती दानुमत्याः। बृहन्तं गर्तमाशाते ।५।६

हे ऋत्विजो ! तुम मित्रावरुण की भले प्रकार स्तुति करो। हे महान् पराक्रमी मित्रावरुण ! तुम दोनों हमारे इस श्रेष्ठ महायज्ञ में आगमन करो।१। मित्रावरुण दोनों ही सबके अधीश्वर जल के उत्पन्न करने वाले, तेजस्वी और देवताओं में अत्यन्त स्तुतियों के पात्र है। हे ऋत्विजो ! उन दोनों की परिचर्या करो।२। वे दोनों देवता हमको पार्थिव तथा दिव्य दोनों प्रकार का ऐश्वर्य प्रदान करने वाले हैं। हे मित्रावरुण [तुम दोनों प्रशंसित पराक्रमी देवताओं में प्रसिद्ध हो। हम उस पराक्रमका गान करते हैं।३। वे दोनों देवता जल द्वारा यज्ञका स्पर्श करते हुए यजमान को सम्पन्न करते हैं। हे मित्रावरुण ! तुम्हारा कोई द्रोही नहीं हैं। तुम दोनों अत्यन्त बढ़े हुए हो।४। इन दोनों की प्रेरणा से अन्तरिक्ष जल वर्षा करता है, जो दोनों इच्छित फल का सम्पादन करने वाले हैं, जो वृष्टिदायक होने के कारण अन्नों के स्वामी हैं और

जो दानशील व्यक्ति पर सदा अनुग्रह करते हैं,वे दोनों देवता मित्र और वरुण यज्ञ में आने के लिए रथ पर चढ़ते हैं ।५। (६)

सूक्त ६९

(ऋषि—उरुचक्रिरात्रेयः । देवता—मित्रावरुणौ । छन्द—त्रिष्टुप्)

त्री रोचना वरुण त्रीरुत द्यून् त्रीणि मित्र धारयथो रजांसि ।
वावृधानावमतिं क्षत्रियस्याऽनु व्रतं रक्षमाणावजुर्यम् ।
इरावतीर्वरुण धेनवो वां मधुमद् वां सिन्धवो मित्र दुहे ।
त्रयस्तस्थुर्वृषभासस्तिसृणां धिषणानां रेतोधा वि द्युमन्तः ॥२
प्रातर्देवीमदितिं जोहवीमि मध्यंदिन उदिता सूर्यस्य ।
राये मित्रावरुणा सर्वतातेले तोकाय तनयाय शं योः ॥३
या धर्तारा रजसो रोचनस्योतादित्या दिव्या पार्थिवस्य ।
न वां देवा अमृता आ मिनन्ति व्रतानि मित्रावरुणा ध्रुवाणि४।७

हे मित्रावरुण ! तुम दोनों ज्योतिर्मान तीनों दिव्य लोकों के धारण करने वाले हो । तुम तीनों अन्तरिक्ष और तीनों भूमंडलों के धारण करने वाले हो । तुम दोनों यजमान के क्षात्र-कर्म की सदा रक्षा करते हो ।१। हे मित्रावरुण ! तुम्हारी प्रेरणासे ही गौएँ दूध देती हैं।तुम्हारी प्रेरणा से ही मेघ जल प्रदान करते हैं । तुम्हारी प्रेरणा से ही जलों की वर्षा करने वाले जलधारक तथा ज्योतिर्मान अग्नि, बायु और सूर्य नामक तीनों देवता पृथ्वी, अन्तरिक्ष और सूर्य मंडल के अधिपति रूप से प्रतिष्ठित होते हैं ।२। प्रातः सवन और दिन के मध्य सवन में हम ऋषिगण देवताओं की तेजस्विनी माता अदिति का आह्वान करते हैं । हे मित्रावरुण ! हम धन, पुत्र पौत्रादि, सुख लाभ तथा अनिष्टों के शमनार्थ दोनों की इस यज्ञ में स्तुति करते हैं ।३। हे सौर लोक से उत्पन्न हुए अदिति के दोनों पुत्रों ! तुम दोनों ही स्वर्ग और पृथिवी के धारण करने वाले हो । हम तुम दोनों की स्तुति करते हैं । हे मित्रावरुण ! तुम्हारे कार्य सदा स्थिर रहते हैं । इन्द्रादि देव भी तुम्हारे कार्यों को विनष्ट नहीं कर सकते ।४। (७)

सूक्त ७०

(ऋषि–उरुचक्रिरात्रेयः । देवता–मित्रावरुणौ । छन्द–गायत्री)

पुरूरुणा चिद्ध्यस्त्यवो नूनं वां वरूण । मित्र वंसि वां सुमतिम्१
ता वां सम्यगद्रुह्वाणेषमश्याम धायसे । वयं ते रूद्रा स्याम ॥२
पातं नो रूद्रा पायुभिरूत त्रायेथां सुत्रात्रा तुर्याम दस्यून् तनूभिः३
मा कस्याद्भुतक्रतू यक्षं भुजेमा तनूभिः । मा शेषसा मा तनसा ।४।८

हे मित्रावरुण ! तुम्हारे रक्षा साधन अत्यन्त ही दृढ़ है । हम तुम दोनों की कृपा-बुद्धि की याचना करते हैं ।१। हे दोनों देवताओं ! तुम द्रोह से शून्य हो । हम तुम्हारे द्वारा अपने भोजन के लिये अन्न पावें । हे रुद्रो ! हम तुम्हारी ही स्तुति करते हैं । हम तुम्हारे ही सेवक हैं । हम समृद्धिको प्राप्ति करो ।२। हे देवद्वय ! अपने रक्षा साधनोंसे हमारी रक्षा करो । सुन्दर आश्रय में पालन करो । हम अभीष्ट पावें और हमारे अनिष्ट दूर हों हम अपने पुत्रों द्वारा या स्वयं ही शत्रुओं को नष्ट करनेमें समर्थ हों ।३। हे अद्भुतकर्मा मित्रावरुण ! हम किसी अन्य प्रशंसनीय धन का अपने लिए उपभोग नही करते हैं । हम तुम्हारी कृपासे ही पुष्ट हैं । किसी के धन से शरीर को पुष्ट नहीं करते । हम अपने सन्तान के साथ तथा हमारे कुटुम्बी भी अन्य किसीके धन का उपभोग नहीं करते अर्थात हम तुम्हारी कृपा द्वारा प्राप्त धन सम्पति से ही सन्तुष्ट रहते हैं ।४।　　　　　　　　　　　　　(८)

सूक्त ७१

(ऋषि–बाहुवृक्त आत्रेयः । देवता–मित्रावरुणौ । छन्द–गायत्री)

आ नो गन्तं रिशादसा वरूण मित्र वर्हणा। उपेमं यारूमध्वरम्१
विश्वस्य हि प्रचेतसा वरूण मित्र राजथः। ईशाना पिप्यतं धियः२
उप नः सुतमा गतं वरूण मित्र दाशुषः । अस्य सोमस्य पीतये३।९

हे मित्रावरुण ! तुम दोनों ही शत्रुओं को नष्ट करने वाले हो ।

हमारे यज्ञ में हिंसा नहीं होती । तुम दोनों ही हमारे यज्ञ में पधारो ।१। हे मेधावी ! मित्रावरुण ! तुम दोनों सब मनुष्य के स्वामी हो । तुम दोनों हमारे लिए ईश्वर रूप हो । तुम हमको फल देते हुए हमारे कर्मों को पुष्ट करो ।२। हे मित्रावरुण ! तुम दोनों हमारे सुसिद्ध सोम रस के निमित्त आओ । हम हव्य प्रदान करते हैं,हमारे सोमरस का पान करने के लिए यहाँ पधारो ।३। (६)

सूक्त ७२

(ऋषि—बाहुवृक्त आत्रेयः । देवता—मित्रावरुणौ । छन्द—उष्णिक्)

आ मित्रे वरूणे वयं गीर्भिर्जुहुमो अत्रिवत् ।
नि बर्हिषि सदतं सोमपीतये ॥१
व्रतेन स्थो ध्रुवक्षेमा धर्मणा यातयज्जना ।
नि बर्हिषि सदतं सोमपीतये ॥२
मित्रश्च नो वरूणश्च जुषेतां यज्ञमिष्टये ।
नि बर्हिषि सदतां सोमपीतये ॥३।१०

जिस प्रकार हमारे मूल पुरुष अत्रि ने तुम्हारा आह्वान किया था हे मित्रावरुण ! उसी विधि से मन्त्र द्वारा हम भी तुमको बुलाते हैं । वे दोनों देवता कुशासन के ऊपर बैठकर सोमरस को स्वीकार करें ।१। मित्रावरुण जगत् के आधार स्वरूप हैं और सदैव अपने स्थान पर सुस्थिर बने रहते हैं । यज्ञ में ऋत्विक्‌गण हमको हविदाना करते हैं । अतः यह दोनों देवता कुशासन पर विराजमान हों ।२। मित्र और वरुण से हम प्रार्थना करते हैं कि वे हमारे यज्ञ में सोत्साह से भाग लें और सोम को ग्रहण करने के लिये कुशासन पर आकर विराजें ।३। (१०)

सूक्त ७३ [छठवाँ अनुवाक]

(ऋषि—पौर आत्रेयः । देवता—अश्विनौ । छन्द—उष्णिक्)

यदद्य स्थः परावति यदर्वावत्यश्विना ।
यद् वा पुरू पुरूभुजा यदन्तरिक्ष आ गतम् ॥१
इह त्या पुरुभूतमा पुरू दंसांसि बिभ्रता ।

वरस्या याम्यध्रिगू हुवे तुविष्टमा भुजे ॥२
ईर्मान्यद् वपुषे वपुश्चक्रं रथस्य येमथुः ।
पर्यन्या नाहुषा युगा मह्ना रजांसि दीयथः ॥३
तद् षु वामेना कृतं विश्वा यद् वामनु ष्टवे ।
नाना जातावरेपसा समस्मै बन्धुमेयथुः ॥४
आ यद् वां सूर्या रथं तिष्ठद् रघुष्यदं सदा ।
परि वामरूषा वयो घृणा वरन्त आतपः ।५।११

हे अश्विनीकुमारों ! तुम असंख्य यज्ञों में हव्य ग्रहण करते हो यद्यपि तुम उस समय सुदूर स्वर्ग में अन्तरिक्ष में अथवा किसी अन्य दूरस्थ लोक में वर्तमान होंगे, तो भी उन लोकोंसे हमारे यज्ञ में पधारो ।१। हे अश्विनीकुमारो ! तुम दोनों ही यजमानों को उत्साहित करने वाले, विविध अनुष्ठानों के धारण करने वाले, वरण करने योग्य श्रेष्ठ गति तथा कर्मों वाले हो । हम तुम्हारी रक्षा के निमित्त आह्वान करते हैं । तुम दोनों हमारे इस यज्ञ में पधारो ।२। हे अश्विनीकुमारो ! सूर्य को प्रकाशित करने के लिये तुमने रथ के ज्योतिर्मान पहिले को योजित किया । तुम अपने पराक्रम ले प्राणियों के लिए दिवस रात्रि आदि को प्रकट करने के लिए अन्य पहिए द्वारा में घूमते हो ।३। हे सर्वव्यापक अश्विगण ! हम जिस स्तोत्र से तुम्हारी स्तुति करते हैं, तुम दोनों का वह स्तोत्र सुसम्पादित हो । हे पाप से रहित दोनों देवताओं ! हमको असीमित धन दो ।४। हे अश्विनीकुमारो ! जब तुम्हारी नारी रूपिणी सूर्या तुम्हारे द्रुतगामी ऊपर चढ़ती है, तब तुम दोनों के चारों ओर अत्यन्त तेजोमय प्रकाश फैल जाता है ।५।　　　　(११)

युवोरत्रिश्चिकेतति नरा सुम्नेन चेतसा ।
धर्मं यद् वामरेपसं नासत्यास्ना भुरण्यति ॥६
उग्रो वां ककुहो ययिः शृण्वे यामेषु संतनिः ।
यद् वां दंसोभिरश्विनाऽत्रिर्नराववर्तति ॥७
मध्व ऊ षु मधूयुवा रुद्रा सिषक्ति पिप्युषी ।

यन् समुद्राति पर्षथः पक्वाः पृक्षो भरन्त वाम् ॥८
सत्यामिद् वा उ अश्विना युवामाहुर्मयोभुवा ।
ता यामन् यामहूतमा यामन्ना मृलयत्तमा ॥६
इमा ब्रह्माणि वर्धना ऽश्विभ्यां सन्तु शंतमा ।
या तक्षाम रथाँ इवाऽवोचाम बृहन्नमः ।१०।१२

हे अश्विनीकुमारो ! हमारे पिता अत्रि ने तुम्हारी स्तुति करके जब अग्नि के ताप को सुख से सहन करने योग्य समझा तब अग्नि के मारक प्रभाव का शमन होने के कारण वे तुम्हारे उपकार की याद करते हुए कृतज्ञ हुए ।६। तुम्हारा ऊँचा, दृढ़, गतिशील रथ यज्ञ में प्रख्यात है हे अश्विनीकुमारो ! तुम्हारे कृपापूर्ण कार्यों से हमारे पिता अत्रि दुःखों से छुटकारा पा सके थे ।७। हे मधुर सोम के पिलाने वाले देवताओ ! हमारी बलकारक स्तुति तुम्हारे ऊपर मधुर सोम रस को सींचती रहे । तुम अन्तरिक्षकी सीमाको भी लाँघ जाते हो । परिपक्व हविरन्न तुम दोनोंको सुख देने वाला है ।८। हे अश्विनीकुमारो ! ज्ञानी जन तुम दोनों को सुख का देने वाला कहते हैं, वह अवश्य ही सत्य है। हमारे यज्ञ में सुख प्रदान करने के लिये बुलाये जाने पर तुम हमारी हार्दिक अभिलाषा की पूर्ति कर हमें सुखी करो ।६। जैसे कलाकार शिल्पी रथों का निर्माण करता है, वैसे हम अश्विनीकुमारों को पुष्ट करने के लिये स्तुतियाँ उनको स्नेहदायिनी बनें ।१०। (१२)

सूक्त ७४

(ऋषि—पौर आत्रेयः । देवता—अश्विनौ । छन्द—अनुष्टुप् निचृत)

कूष्ठो देवावश्विना ऽद्या दिवो मनावसू ।
तच्छ्रवथो वृषण्वसू अत्रिर्वामा विवासति ॥१
कुह त्या कुह नु श्रुता दिवि देवा नासत्या ।
कस्मिन्ना यतथो जने को वां नदीनां सचा ॥२
कं याथः कं ह गच्छथः कमच्छा युञ्जाथे रथम् ।
कस्य ब्रह्माणि रण्यथो वयं वामुश्मसीष्टये ॥३

पौरं चिद्धयुदप्रुतं पौर पौराय जिन्वथः ।
यदीं गृभीततातये सिंहमिव द्रुहस्पदे ।।४
प्र च्यवानाज्जुजुरुषो वव्रिमत्कं न मुञ्चथः ।
युवा यदी कृथः पुनरा काममृण्वे वध्वः ।५।१३

हे स्तुति के योग्य, धन का दान देने वाले अश्विद्वय ! आज इस यज्ञ दिवस में तुम दोनों आकाश से आकर इस पृथ्वी पर रुको और अत्रि ऋषि जिस स्तोत्र का तुम्हारे लिए पाठ करते थे, उस स्तोत्र को सुनो ।१। वे दोनों तेजस्वी दोनों कहाँ है ? वे इस यज्ञ दिन में आकाश के किस स्थान पर वर्त्तमान रहकर स्तुतियाँ सुन रहे हैं । हे अश्विनीकुमारो ! तुम दोनों किस यजमान के पास आते हो ? कौन स्तुति कहने वाला यजमान तुम्हारी स्तुति करता है ? ।२। हे अश्विद्वय ! तुम दोनों किसके यज्ञ स्थान में आते हो ? तुम किससे जाकर मिलते हो ? तुम किसके सामने जानेके लिये अपने रथ में घोड़े जोड़ते हो ? किस स्तोता के स्तोत्र तुम्हारी भक्ति करते हैं ? हम तुम दोनो को प्राप्त करने की अभिलाषा करते हैं ।३। हे अश्वनीकुमारों तुम दोनों जलवाहक मेघ को प्रेरणा करो । जैसे वन में सिंह को शिकारी ललकारता है, वैसे ही यज्ञ-कर्म में तुम दोनों अनिष्टों को ताड़ना दो ।४। तुम दोनों ने बुढ़ापे से जीर्ण हुए च्यवन के पुराने शरीर की कुरूपता को कवच के समान दूर किया था । जब उनको दुबारा युवावस्था दी तब उन्होंने सुन्दर स्त्री के रूप में इच्छित भार्या को प्राप्त किया था ।५। (१३)

अस्ति हि वामिह स्तोता स्मसि वां संदृशि श्रिये ।
न श्रुतं म आ गतमवोभिर्वाजिनीवसू ।।६
को वामद्य पुरूणामा वव्ने मर्त्यानाम् ।
को विप्रो विप्रवाहसा को यज्ञैर्वाजिनीवसू ।।७
आ वां रथो रथानां येष्ठो यात्वश्विना ।
पुरू चिदस्मयुस्तिर आङ्गूषो मर्त्येष्वा ।।८

शमू षु वां मधूयुवा ऽस्माकमस्तु चर्कृतिः ।
अर्वाचीना विचेतसा विभिः श्येनेव दीयतम् ॥९
अश्विना यद्ध कर्हिचिच्छुश्रूयातमिमं हवम् ।
वस्वीरू षु वां भुजः पृञ्चन्ति सु वां पृचः ।१०।१४

हे अश्विनीकुमारो! तुम दोनोंकी स्तुति करने वाले इस यज्ञ मंडप में उपस्थित हैं । हम समृद्धि के लिये तुम्हारे दर्शन के लिये चलें । तुम हमारे आह्वान को आज सुनो । तुम अन्नयुक्त हो, अपने रक्षा साधनों सहित यहाँ पधारो ।६। हे अन्नवान अश्विनीकुमारो ! असंख्य मरणधर्मा प्राणियों में कौन ओज तुम्हें अधिक प्रसन्न करता है ? हे ज्ञानीजनों द्वारा नमस्कृत अश्विद्वयो! कौन ज्ञानी तुमतो और सबकीअपेक्षा अधिक तृप्त करता है ? हे अश्विनीकुमारो ! अन्य सभी देवताओंके रथोंमें तब की तपेक्षा अधिक वेगसे चलने वाला तथा असंख्य शत्रुओंको हनन करने वाला और सभी के द्वारा स्तुत हुआ तुम दोनों का सुन्दर रथ हम यजमानों की मंगल कामना करता हुआ, हमारे इस श्रेष्ठ यज्ञ स्थान में आने ।८। हे अश्विनीकुमारो ! तुम्हारे निमित्त सम्पादन किए गये स्तोत्र हमारे लिये सुखोंका उत्पादन करें । हे ज्ञानवान् अश्विद्वय । तुम दोनों बाज पक्षी के समान सर्वत्र जाने वाले अपने रथपर चढ़कर हमारे सामने आने की कृपा करो ।९। हे अश्विद्वय ! तुम जहाँ कहीं भी हो, हमारे आह्वान को अवश्य सुनो । तुम्हारे पास पहुँचनेकी इच्छा करता हुआ हविरन्न तुम दोनों को प्राप्त हो ।१०। (१४)

सूक्त ७५

(ऋषि–अवस्युः । देवता–अश्विनौ । छन्द–पंक्तिः)

प्रति प्रियतमं रथं वृषणं वसुवाहनम् ।
स्तोता वामश्विनावृषिः स्तोमेन प्रति भूषति माध्वी मम श्रुतं हवम् ।१

अत्यायातमश्विना तिरो विश्वा अहं सना ।
दस्रा हिरण्यवर्तनी सुषुम्ना सिन्धुवाहसा माध्वी मम श्रुतं हवम्२

आ नो रत्नानि बिभ्रतावश्विना गच्छतं युवम् ।
रूद्रा हिरण्यवर्तनी जुषाणा वाजिनीवसू माध्वी मम श्रुतं हवम्३
सुष्टुभो वां वृषण्वसू रथे वाणीच्याहिता ।
उत वां ककुहो मृगः पृक्षः कृणोति वापुषो माध्वी मम श्रुतं हवम्४
बोधिन्मनसा रथ्येषिरा हवनश्रुता ।
विभिश्र्यवानमश्विना नि याथो अद्वयाविनं माध्वी मम श्रुतं
हवम् ।५।१५

हे अश्विनीकुमारो ! तुम्हारी स्तुति करने वाले अवस्यु ऋषि तुम दोनों के फलों की वर्षा करने वाले और धन से परिपूर्ण रथ को सजाते हैं। हे ज्ञानियो ! हमारे आह्वानको सुनो ।१।हे अश्विनीकुमारो ! तुम सब यजमानों को लाँघकर यहाँ आओ। जिससे हम सब बैरियों को वशीभूत कर सकें। हे शत्रुहन्ता अश्विद्वय ! तुमस्वर्णिम रथ पर चढ़ने वाले, महान धन वाले, नदियों के प्रवाहित करने वाले हो। तुम दोनों हमारे आह्वानको सुनो ।२। हे अश्विनीकुमारों ! तुम हमारे लिये रत्न धन लेकर आओ। हे स्वर्णिम रथ चढ़ने वाले ! स्तुत्य अन्नवान् यज्ञ में प्रतिष्ठित होने वाले ज्ञानी अश्विनीकुमारो ! तुम दोनों हमारे सुन्दर आह्वानको श्रवण करो ।३। हे धनकी वर्षा करने वाले अश्विनीकुमारो! तुम दोनों की स्तुति करने वाले का स्तोत्र तुम्हारे निमित्त पढ़ा जाताहै तुम्हारा यजमान एकाग्र मन से तुम दोनों को हविरन्न प्रदान करता है। तुम दोनों विवेक बुद्धि वाले, रथ पर चढ़ाने वाले वेगवान् और स्तोत्रको सुनने वाले हो। तुम दोनों निष्कपट अन्तःकरण वाले च्यवन ऋषि के पास शीघ्र ही घोड़े पर चढ़कर गये थे। हे ज्ञानवान् ! तुम हमारे आह्वान को सुनो ।४-५। (१५)

आ वां नरा मनोयुजो ऽश्वासः प्रुषितप्सवः ।
वयो वहन्तु पीतये सह सुम्नेभिरश्विना माध्वी मम श्रुतं हवम्६
अश्विनावेह गच्छत नासत्या मा वि वेनतम् ।
तिरश्चिदर्यया परि वर्तिर्यातमदाभ्यां माध्वी मम श्रुतं हवम्॥७

अस्मिन् यज्ञे अदाभ्या जरितारं शुभस्पती ।
अवस्युमश्विना युवं गृणन्तमुप भूषथो माध्वी मम श्रुतं हवम्॥८
अभूदुषा रुशत्पशुराग्निरधाय्यृत्वियः ।
अयोजि वां वृषण्वसू रथो दस्रावमर्त्यो माध्वी मम श्रुतं हवम् ।
।९।१६

हे अश्विनी कुमारो ! तुम दोनों के अश्व सुशिक्षित वेगवान और अद्भुत रूप वाले हैं । वे इस यज्ञ मण्डप मे सोम पीने के लिए दोनों को शोभन ऐश्वर्य सहित लावें । हे मधुविज्ञान-विशारद अश्विनीकुमारो तुम दोनों हमारे आह्वान को सुनो ।६। हे अश्विनीकुमारो ! तुम इस यज्ञ गृह में आओ । तुम दोनों हमारे विरुद्ध नहीं होना । हे स्वामिन् तुम अजेय हो, तुम हमारे यज्ञ गृह में आओ । हे मधुविद्या के जानने वाले अश्विनीकुमारो तुम दोनों हमारे आह्वान को सुनो ।७। हे अश्विनीकुमारो ! तुम जल के स्वामी हो । तुम दोनों इस गृह में स्तोता पर अनुग्रह करो । हे मधुविद्या के ज्ञाता अश्विद्वय ! तुम दोनों हमारे आह्वान को सुनो ।८। उषा फैल गई । कांतिमती किरणोंसे युक्त अग्नि वेदी पर विराजमान हुए हैं । हे धन की वर्षा करने वाले तथा शत्रुओं का विनाश करने वाले अश्विनी कुमारो । तुम दोनों के दृढ़तर रथ में घोड़े जुड़ जाँय । हे मधुविद्या-विशारद ! हम दोनोंका आह्वान सुनो ।९। (१६)

सूक्त ७६

(ऋषि—अत्रिः । देवता—अश्विनौ । छन्द—त्रिष्टुप्)

आ भात्यग्निरुषसामनीकमुद् विप्राणां देवया वाचो अस्थुः ।
अर्वाञ्चा नूनं रथ्येह यातं पीपिवांसमश्विना घर्ममच्छ ।।१
न संस्कृतं प्र मिमीतो गमिष्ठा ऽन्ति नूनमश्विनोपस्तुतेह ।
दिवाभिपित्वेऽवसागमिष्ठा प्रत्यवर्ति दाशुषे शंभविष्ठा ।।२
उता यातं संगवे प्रातरह्नो मध्यंदिन उदिता सूर्यस्य ।
दिवा नक्तमवसा शंतमेन नेदानीं पीतिरश्विना ततान ।३
इदं हि वां प्रदिवि स्थानमोक इमे गृहा अश्विनेदं दुरोणम् ।

आ नो दिवो बृहता पर्वतादा ऽद्भ्यो यातमिषमूर्जं वहन्ता ॥४
समश्विनोरवसा नूतनेन मयोभुवा सुप्रणीती गमेम ।
आ नो रयिं वहतमोत वीराना विश्वान्यमृता सौभगानि ।५।१७

उषा काल में चैतन्य अग्नि प्रकाशमान हो रहे हैं । ज्ञानी स्तोताओं के द्वारा देवताओंकी कामना वाले स्तोत्र गाये जातेहैं । हे रथोंके स्वामी अश्विनीकुमारो ! तुम दोनों इस गृह में प्रकट होकर इस सोमरस से युक्त यज्ञमें आओ ।१। हे अश्विनीकुमारो ! तुम हमारे इस संस्कार युक्त यज्ञ की हिंसा न करो यज्ञ के पास शीघ्र आकर स्तुति के पात्र बनो । तुम अपने रक्षा साधनों सहित प्रातःकाल आओ जिससे अन्न का अभाव न हो, तुत हविदाता यजमान का कल्याण करो ।२। हे अश्विद्वय ! तुम रात्रि के अन्त में, गौओं के दोहन के समय प्रातःकाल में जब आदित्य अत्यन्त वढ़े हुए हैं, सायंकाल और रात्रि में अथवा किसी भी समय अपने मङ्गलकारी रक्षा साधनों सहित यहाँ आओ । अश्विनोकुमारों के अतिरिक्त अन्य देवता सोम रस पीने को शीघ्र प्रस्तुत नहीं होते । ।३। हे अश्विद्वय ! उस उत्तर वेदी पर तुम प्राचीनकाल से विराजमान होते आये हो । यह सभी घर तुम दोनों के ही है । तुम दोनों जल से परिपूर्ण मेघ द्वारा अन्तरिक्ष में अन्न और पराक्रम के साथ हमारे पास आओ ।४। हम सब अश्विनीकुमारों के उत्तम रक्षा साधनों तथा सुख से पूर्ण आगमनसे प्रसन्न हों । हे अमरत्व प्राप्त अश्विद्वय ! तुम दोनों हम को धन सन्तान और सभी सुख दो ।५। (१७)

सूक्त ७७

(ऋषि–अत्रिः । देवता–अश्विनौ । छन्द–त्रिष्टुप्)

प्रातर्यावाणा प्रथमा यजध्वं पुरा गृध्रादररुषः पिबातः ।
प्रातर्हि यज्ञमश्विना दधाते प्र शंसन्ति कवयः पूर्वभाजः ॥१
प्रातर्यजध्वमश्विना हिनोत न सायमस्ति देवया अजुष्टम् ।
उतान्यो अस्मद् यजते वि चावः पूर्वःपूर्वो यजमानो वनीयान् ॥२

हिरण्यत्वङ्‌मधुवर्णो घृतस्नुः पृक्षो वहन्ना रथो वर्तते वाम् ।
मनोजवा अश्विना वातरंहा येनातियाथो दुरितानि विश्वा ॥३
यो भूयिष्ठं नासत्याभ्यां विवेष चनिष्ठं पित्वो ररते विभागे ।
स तोकमस्य पीपरच्छमीभिरनूर्ध्वभासः सदमित् तुतुर्यात् ॥४
समश्विनोरवसा नूतनेन मयोभुवा सुप्रणीती गमेम ।
आ नो रयिं वहतमोत वीराना विश्वान्यमृता सौभगानि ।५।१८

हे ऋत्विको ! दोनों अश्विनीकुमार प्रातःकाल ही सब देवताओं से पहले ही पहुँचते हैं, तुम सब उनका यज्ञ करो । वे दिन के पूर्व काल में ही हव्य ग्रहण करते हैं । वे प्रातःकाल ही यज्ञ को धारण करते है । प्राचीनकालीन ऋषिगण उनकी प्रात सेवन से ही स्तुति करते हैं ।१। हे मनुष्यो ! प्रातःकाल ही अश्विनीकुमारो की पूजा करो । उन्हें हवियाँ दो । सायंकाल दिया जाने वाला हव्य देवताओं के पास नहीं पहुँचता । उस असेवनीय हव्यको देवता ग्रहण नहीं करते । हमारे सिवाय जो कोई व्यक्ति सोम द्वारा उनका यज्ञ कराता है और हवि देकर सन्तुष्ट करता है तथा जो व्यक्ति हमसे पूर्व ही उनकी पूजा करता है, वह देवताओं का प्रीति भाजन होता है ।२। हे अश्विनीकुमारो ! तुम दोनों का सुवर्ण जटित, सुन्दर वर्ण वाला, जलवर्षक मन के समान द्रुतगति वाला, वायु के समान वेग वाला और अन्नों का धारक रथ आता है । तुम दोनों ही उस रथ के द्वारा सब दुर्गम मार्गो को लाँघ जाते हो ।३। जो यजमान अश्विनीकुमारों के लिये यज्ञमें हविदान करता है, वह अपनी संतान आदि की रक्षा प्राप्त करता है । जो अग्नि को प्रदीप्त नहीं करते, वे हानि सहन करते हैं ।४। हम अश्विनीकुमारों के श्रेष्ठ रक्षा-साधनों को शुभ आगमनसे प्राप्त करें । हे अविनाशी अश्विद्वय ! तुम दोनों हमको धन, सन्तान तथा सुख दो ।५। (१८)

सूक्त ७८

(ऋषि—सप्तवध्रिरात्रेयः । देवता—अश्विनौ । छन्द—उष्णिक्, त्रिष्टुप्, अनुष्टुप्)

अश्विनावेह गच्छतं नासत्या मा वि वेनतम् ।
हंसाविव पततमा सुताँ उप ॥१
अश्विना हरिणाविव गौराविवानु यवसम् ।
हंसाविव पततमा सुताँ उप ॥२
अश्विना वाजिनीवसू जुषेथां यज्ञमिष्टये ।
हंसाविव पततमा सुताँ उप ॥३
अत्रिर्यद् वामवरोहन्नृबीसमजोहवीन्नाधमानेव योषा ।
श्येनस्य चिज्जवसा नूतनेमा ऽऽगच्छतमश्विना शंतमेन ।४।१६

हे अश्विनीकुमारो ! तुम दोनों इस यज्ञ में आओ । जैसे दो हंस स्वच्छ जल के पास जाते हैं वैसे ही तुम दोनों सिद्ध सोम रस के लिए पधारो ।१। हे अश्विनीकुमारो ! जैसे हरिण घासके लिए दौड़ते हैं और दो हंस स्वच्छ जल के लिऐ जाते हैं वैसे ही तुम दोनों हमारे छने हुए सोम रस के लिए नाओ ।२। हे अश्विनीकुमारो ! तुम अन्न और श्रेष्ठ निवास के देने वाले हो । तुम दोनों हमारे यज्ञ में कामनायें पूर्ण करने के लिए आओ । जैसे दो हंस स्वच्छ जल के पास जाते हैं वैसे ही तुम दोनों इस सिद्ध सोम रस के पास आओ ।३। हे अश्विनीकुमारो ! जैसे स्त्री अपने पतिको विनम्रता से प्रसन्न कर लेती है वैसे ही हमारे पिता अत्रि ने तुम्हारा स्तवन करते हुए तुषाग्नि कुण्ड से छुटकारा पाया था तुम दोनो श्येनके नवोत्पन्न वेगके समान वेग वाले सुखदायक रथ द्वारा हमारी रक्षा के निमित्त पधारो ।४।   (१६)

वि जिहीष्व वनस्पते योनिः सूष्यन्त्या इव ।
श्रुतं मे अश्विना हवं सप्तवध्रिं च मुञ्चतम् ।।५
भीताय नाधमानाय ऋषये सप्तवध्रये ।
मायाभिरश्विना युवं वृक्षं सं च वि चाचथः ॥६
यथा वातः पुष्करिणीं समिङ्गयति सर्वतः ।
एवा ते गर्भ एजतु निरैतु दशमास्यः ॥७

यथा वातो यथा वनं यथा समुद्र एजति ।
एवा त्वं दशमास्य सहावेहि जरायुणा ॥८
दश मासाञ्छशयानः कुमारो अधि मातरि ।
निरैतु जीवो अक्षतो जीवो जीवन्त्या अधि ।९।२०

हे काष्ठ निर्मित पेटिके ! प्रसव करने वाली स्त्री का अङ्ग जैसे सन्तानोत्पत्ति के समय तदनुकूल हो जाता है वैसे ही तुम भी विस्तृत हो कर सुविधाजनक बन जाओ । तुम सप्तवध्रि ऋषि की मुक्ति करने के लिये हमारा आह्वान सुनो ।५। अश्विनीकुमारो ! तुम दोनों भयभीत तथा निकलने के लिए प्रार्थना करते हुए सप्तवध्रि ऋषि के लिये माया की पेटी को पृथक करते हो ।६। वायु जैसे सरोवर आदि के जल को चलाती है वैसे ही तुम्हारा गर्भस्थ शिशु स्पन्दन करने वाला हो और वह दस मास में पूर्ण होकर बाहर निकल आवे ।७। वायु, वन और समुद्र जैसे काँपते हैं, वैसे दस मास तक गर्भस्थ शिशु जरायु में लिपटा हुआ निकलता है ।८। जननी के गर्भ में दस मास तक अवस्थित शिशु जीवित ही, अक्षत रूप से जीवित माता से जन्म ले ।९। (२०)

सूक्त ७९

(ऋषि–सत्यश्रवा आत्रेयः । देवता–उषाः । छन्द–पंक्तिः)

महे नो अद्य बोधयोषो राये दिवित्मती ।
यथा चित्रो अबोधयः सत्यश्रवसि वाय्ये सुजाते अश्वसूनृते ॥१
या सुनीथे शौचद्रथे व्यौच्छो दुहितर्दिवः ।
सा व्युच्छ सहीयसि सत्यश्रवसि वाय्ये सुजाते अश्वसूनृते ॥२
सा नो अद्याभरद्वसुर्व्युच्छा दुहितर्दिवः ।
यो व्यौच्छः सहीयसि सत्यश्रवसि वाय्ये सुजाते अश्वसूनृते ॥३
अभि ये त्वा विभावरि स्तोमैर्गृणन्ति वह्नयः ।
मघैर्मघोनि सुश्रियो दामन्वन्तः सुरातयः सुजाते अश्वसूनृते ॥४
यच्चिद्धि ते गणा इमे छदयन्ति मघत्तये ।

परि चिद् वष्टयो दधुर्ददतो राधो अह्रयं सुजाते अश्वसूनृते ।५।२१

हे कान्तिमति उषे ! तुमने जैसे हमको पहिले श्रेष्ठ बुद्धि दी थी, उसी प्रकार आज भी बहुत सा धन प्राप्त करने के लिये बुद्धि दो। हे सुन्दर प्राकट्य वाली उषे ! घोड़ों की प्राप्ति के लिये स्तोता तुम्हारी स्तुति करते हैं। 'सत्यश्रवा' पर कृपा करो ।१। हे सूर्य की पुत्री उषे ! तुमने "शूचद्रथ" के पुत्र "सुनीथि" के लिए अन्धकार को नष्ट किया था। हे सुन्दर उत्पत्ति वाली उषे ! अश्व लाभ के लिये स्तोतागण तुम्हारी स्तुति करते हैं। तुमने वय्य के पुत्र पराक्रमी "सत्यश्रवा" का अन्धकार दूर किया था।२। हे सूर्यकन्ये ! धन लेकर आती हो। आज तुम हमारे अन्धकार को दूर करो। हे उत्तम जन्म वाली अश्व लाभ के लिए तुम्हारी स्तुति की जाती है। तुमने वय्य पुत्र पराक्रमी "सत्यश्रवा" का अन्धकार मिटाया था। हे ज्योतिर्मयी उषे ! जो ऋत्विक स्तोत्र से तुम्हारी परिचर्या करते हैं वे ऐश्वर्यसे सम्पन्न और दानी होते हैं। ऐश्वर्यशालिनी उषे ! तुम उत्तम जन्म वाली हो स्तोता गण अश्व लाभ के लिए तुम्हारी स्तुति करते हैं।३-४। हे उषे ! धन के लिए तुम्हारी सेवा में उपस्थित गृह साधक अक्षय हविरन्न देकर हमारे अनुकूल हुए थे। हे उत्तम कर्म वाली उषे ! स्तोतागण अश्व लाभ के लिए तुम्हारी स्तुति करते हैं।५। (२१)

ऐषु धा वीरवद् यश उषो मघोनि सूरिषु ।
ये नो राधांस्यह्र्या मघवानो अरासत सुजाते अश्वसूनृते ॥६
तेभ्यो द्युम्नं बृहद् यश उषो मघोन्या वह ।
ये नो राधांस्यश्व्या गव्या भजन्त सूरयः सुजाते अश्वसूनृते ॥७
उत नो गोमतीरिष आ वहा दहितर्दिवः ।
साकं सूर्यस्य रश्मिभिः शुक्रैः शोचद्भिरर्चिभिः सुजाते अश्वसूनृते८
व्युच्छा दुहितर्दिवो मा चिरं तनुथा अपः ।
नेत् त्वा स्तेनं यथा रिपुं तपाति सूरोअर्चिषा सुजातेअश्वसूनृते९
एतावद् वेदुषस्त्वं भूयो वा दातुमर्हसि ।

या स्तोतृभ्यो विभावर्युच्छन्ती न प्रमीयसे सुजाते अश्वसूनृते।
।१०।२२

हे ऐश्वर्यशालिनी उषे! जिससे हमको अश्वों और गौओंसे युक्त धन दिया था,उस यजमानको तुम धन और अन्न दो। हे उत्तम जन्म वाली उषे ! स्तोतागण अश्व प्राप्ति के लिये तुम्हारी स्तुति करते हैं।७। हे सूर्य की पुत्री उषे ! तुम सूर्य रश्मियों और अग्नि की प्रज्वजित ज्वालाओंके सहित हमारे पास अन्न और गौओं को लाओ। हे उत्तम जन्म वाली उषे ! स्तुति करने वाले यजमान अश्व प्राप्ति के लिए तुम्हारी स्तुति करते हैं।८। हे सूर्य पुत्री उषे ! तुम प्रकाश को फैलाओ। हमारे प्रति देर मत करो। राजा जैसे चोर अथवा शत्रु को पीड़ित करता है वैसे सूर्य तुम्हें अपने रश्मियोंसे पीड़ित न करें। हेउत्तम जन्म वाली देवी उषे ! स्तुति करने वाले यजमान सुन्दर अश्वों की प्राप्ति के निमित्त तुम्हारी स्तुति करते हैं।६। हे उषे ! जो माँगा गया है और जो नहीं माँगा गया, तुम वह सब हमको देने की सामार्थ्य से परिपूर्ण हो। हे ज्योतिर्मय ! तुम स्तुति करने वालों का अन्धकार दूर करती हो परन्तु उन का अनिष्ट नहीं करती। हे उत्तम जन्म वाली उषे ! स्तुति करने वाले यजमान अश्वों की प्राप्ति के लिए तुम्हारी स्तुति करते।१०।२२

सूक्त ८०

(ऋषि–सत्यश्रवा आत्रेयः। देवता–उषा। छन्द–त्रिष्टुप्)

द्युतद्यामानं बृहतीमृतेन ऋतावरीमरुणप्सुं विभातीम्।
देवीमुषसं स्वरावहन्तीं प्रति विप्रासो मतिभिर्जरन्ते ॥१
एषा जनं दर्शता बोधयन्ती सुगान् पथः कृणवती यात्यग्रे।
बृहद्रथा बृहती विश्वमिन्वोषा ज्योतिर्यच्छत्यग्रे अह्नाम् ॥२
एषा गोभिररुणेभिर्युजाना ऽस्रेधन्ती रयिमप्रायु चक्रे।
पथो रदन्ती सुविताय देवी पुरुष्टुता विश्ववारा वि भाति ॥३
एषा व्येनी भवति द्विबर्हा आविष्कृण्वाना तन्वं पुरस्तात्।
ऋतस्य पन्थामन्वेति साधु प्रजानतीव न दिशो मिनाति ॥४
एषा शुभ्रा न तन्वो विदानोर्ध्वेव स्नाती दृशये नो अस्थात्।

अप द्वेषो बाधमाना तमांस्युषा दिवो दुहिता ज्योतिषागात् ॥५
एषा प्रतीची दुहिता दिवो नॄन् योषेव भद्रा नि रिणीते अप्सः ।
व्यूर्ण्वती दाशुषे वार्याणि पुनर्ज्योतिर्युवतिः पूर्वथाकः ।६।२३

तेजस्वी रथ पर चढ़ी हुई सर्वव्यापिनी यज्ञोंमें उत्तम प्रकार से पूजनीय, अरुण वर्ण वाली सूर्य के पहिले आने वाली उषा की ऋत्विग्गण स्तोत्रोंसे स्तुति करते हैं ।१। दर्शनीय रूप वाली उषा सोते हुए प्राणियों को चैतन्य करती है और मार्गों को दिखाती हुई विस्तृत रथपर चढ़कर सूर्य के पुरोभागमें चलती है । अत्यन्त महिमामयी तथा संसारमें व्याप्त होने वाली उषा दिन के आरम्भ काल में अपना प्रकाश फैलाती है ।२। लाल किरणोंमें संयोग करती हुई उषा सुख से जाने के लिए मार्गों को चमकाती है तथा सबके लिये वरणीय होतीहुई स्वयं प्रकाशित होती है। यह देवी अनुरागयुक्त प्राणियों से तृप्त होती हुई अक्षय एश्वर्योंको स्थर करती है ।३। वह शुभ्र प्रकाश वाली होती हुई रात्रि और दिवस दोनोंसे ही आगे बढ़ती हुई अपने आगे प्रकाश को विस्तृत करती है । वह नित्य प्रति सूर्यका अनुगमन करती हुई दिशाओंको जानती है । वह देवी अपने रूप को प्राची में प्रकट करती है ।४। स्नान करके सुन्दर अलङ्कारों से सजी हुई रमणी के समान अपना रूप दिखाती हुई उषा प्राची में प्रकट होती है । सूर्य की पुत्री उषा वैरी अन्धकार को भगाने के लिये बाध्य करती हुई अपने प्रकाश सहित आती है ।५। अपने प्रकाश से संसार को परिपूर्ण करने वाली सूर्य की पुत्री उषा पश्चिम की ओर मुख करके शरीर विन्यास करने वाली रमणी के समान अपने रूपको प्रकट करती हैं । यह देवी हविदाता यजमानके लिए वरण करने योग्य धन देती है । नित्य उषा वारम्वार अपने प्रकाश को दिखाती है ।६। (२३)

सूक्त ८१

(ऋषि—श्यावाश्व आत्रेयः । देवता—सविता । छन्द—जगती)

युञ्जते मन उत युञ्जते धियो विप्रा विप्रस्य बृहतो विपश्चितः ।
वि होत्रा दधे वयुनाविदेक इन्मही देवस्य सवितुः परिष्टुतिः ॥१

विश्वा रूपाणि प्रति मुञ्चते कविः प्रासावीद् भद्रं द्विपदे चतुष्पदे
वि नाकमख्यत् सविता वरेण्यो ऽनु प्रयाणमुषसो वि राजति ॥२
यस्य प्रयाणमन्वन्य इद् ययुर्देवा देवस्य महिमानमोजसा ।
यः पार्थिवानि विममे स एतशो रजांसि देवः सविता महित्वना३
उत यासि सवितस्त्रीणि रोचनोत सूर्यस्य रश्मिभिः समुच्यसि ।
उत रात्रीमुभयतः परीयस उत मित्रो भवसि देव धर्मभिः ॥४
उतेशिषे प्रसवस्य त्वमेक इदुत पूषा भवसि देव यामभिः ।
उतेदं विश्वं भुवन वि राजसि श्यावाश्वस्ते सवितः स्तोममानशे
।५।२४

विद्वान लोग अपने चित्त कों श्रेष्ठ कर्मों में लगाते हैं। वे सभी महान् स्तुति के पात्र और मेधावी सवितादेव की प्रेरणा से यज्ञानुष्ठान में प्रवृत्त होते हैं। वे ओताओ के कार्यों के ज्ञाता हैं वहीं उन्हें यज्ञ कार्यमें लगाते हैं। उन सर्वैस्वर्यवान् सवितादेव की महिमा स्तुतिके योग्य है ।१। वे मेधावी सवितादेव स्वयं ही सब रूपों के धारण करने वाले हैं। वे मनुष्य पशु आदि सब प्राणियों के कल्याण के ज्ञाता है। वे सबके द्वारा वरण करने योग्य सबको प्रेरणा देने वाले तथा स्वयं को प्रकाशित करने वाले हैं। वे उषा के आविर्भूत होने के पश्चात् उदित होते हैं।२। अग्नि आदि सभी देवता ज्योतिर्मय सवितादेव का अनुगमन करते हुए महिमावान् होते हैं। जो सवितादेव अपनी महिमा से पृथिवी आदि लोकों को परिपूर्ण करने में समर्थ हैं वे अपने तेज से ही अत्यन्त महिमा वाले हैं।३। हे सवितादेव ! तुम लोकों में गमन करते हुए अपनी रश्मियों से सुसङ्गति करते हो। तुम ही रात्रि को दोनों ओर व्याप्त करते हो। हे सबितादेव ! तुम संसार के धारण करने वाले होकर सबके मित्र बनते हो।४। हे सवितादेव ! तुम एक ही इस जगत को उत्पन्न करने में पूरी तरह समर्थ हो और तुमएक ही अपने नियमों द्वारा सबकी रक्षा करते हो। तुम ही सम्पूर्ण मुवन को

प्रकाशित करते हुए उस पर शासन करते हो । हे सवितादेव ! श्यावाश्व ऋषि तुम्हारी स्तुति के योग्य सामर्थ्य से युक्त हैं ।५।
(२४)

सूक्त ८२

(ऋषि–श्यावश्व आत्रेयः । देवता–सविता। छन्द–अनुष्टुप् गायत्री)

तत् सवितुर्वृणीमहे वयं देवस्य भोजनम् ।
श्रेष्ठं सर्वधातम तुरं भगस्य धीमहि ॥१
अस्य हि स्वयशस्तरं सवितुः कच्चन प्रियम् ।
न मिनन्ति स्वराज्यम् ॥२
स हि रत्नानि दाशुषे सुवाति सविता भगः। तं भागं चित्रमीमहे३
अद्या नो देव सवितः प्रजावत् सावीः सौभगम् ।
परा दुःष्वप्न्यं सुव ॥४
विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव ।
यद् भद्रं तन्न आ सुव ।५।२५

हम साधक सवितादेव से भोग के योग्य ऐश्वर्य की याचना करते हैं। उनकी कृपा से हम भग देवता के पास से श्रेष्ठ ऐश्वर्य तथा उपभोग्य ओर शत्रुओंका नाश करने वाला धन प्राप्त करें।१। उन सविता देव के सर्वप्रिय असाधारण, ज्योतिर्मान ऐश्वर्य की कोई राक्षस भी नष्ट करने में समर्थन नहीं है ।२। वह सवितादेव तथा यजन के योग्य भग देवता हमहवि देने वालों के लिये रमणीय ऐश्वर्य देते हैं। अतः हम उन भग देवतासे भी रमणीय ऐश्वर्य की प्रार्थना करते हैं ।३। हे सविता देव ! इस किवस से हमको सन्तानयुक्त ऐश्वर्य को प्रदान करते हुए दुःस्वप्नसे उत्पन्न शङ्का तथा दारिद्रयके दुःखको दूर करो।४। हे सवितादेव हमारे सभी अनिष्टों को दूर करते हुए पशु और सुन्दर घर रूप सौभाग्य तथा ऐश्वर्य को हमारे सम्मुख उपस्थित करो ।५। (२५)

अनागसो अदितये देवस्य सवितुः सवे । विश्वा वामानि धीमहि६
आ विश्वदेवं सत्पतिं सूक्तैरद्या वृणीमहे । सत्यसवं सवितारम्।७

य इमे उभे अहनी पुर एत्यप्रयुच्छन् । स्वाधीर्देवः सविता ॥८
य इमा विश्वा जातान्याश्रावयति श्लोकेन ।
प्र च सुवाति सविता ।६।२६

हम साधाकगण प्रेरणा देने वाले सविताद्रेव की प्रेरणासे अखण्डनीय देवी अदिति का कोई अपराध न करें, हम सभी रमणीय और अभीष्ट धनों को प्राप्त करें ।६। आज हम इस यज्ञ दिवस में स्तोत्रों द्वारा सभी देवताओं के स्वामी साधकोंके रक्षक सवितादेव की सब प्रकार से उपासना करने में समर्थ हों ।७। जो सवितादेव भले प्रकार ध्यान करने योग्य तथा उत्तम कर्म वाले है जो निरालस्य हुये दिन और रात्रि के सन्धिकाल में गमन करते है हम उन सवितादेव की स्तोत्रों द्वारा स्तुति करते हैं ।८। जो सवितादेव सभी उत्पन्न प्राणियों को अपने यश से अब गत कराते हैं, जो जब जीवों कों प्रेरणा देते हैं, उन सवितादेव की इस यज्ञ दिवस में हम स्तुति करते हैं ।६। (२६)

सूक्त ८३

(ऋषि–अत्रिः । देवता–पर्जन्यः । छन्द–त्रिष्टुप्, जगती अनुष्टुप्)

अच्छा वव तवसं गीर्भिराभिः स्तुहि पर्जन्यं नमसा विवास ।
कनिक्रदद् वृषभो जीरदानू रेतो दधात्योषधीषु गर्भम् ॥१
वि वृक्षान् हन्त्युत हन्ति रक्षसो विश्वं बिभाय भुवनं महावधात्।
उतानागा ईषते वृष्ण्यावतो यत् पर्जन्यः स्तनयन् हन्ति दुष्कृतः॥२
रथीव कशयाश्वाँ अभिक्षिपन्नाविर्दूतान् कृणते वर्ष्याँ अह ।
दूरात् सिंहस्य स्तनथा उदीरते यत् पर्जन्यः कृणुते वर्ष्यं नभः ॥३
प्र वाता वान्ति पतयन्ति विद्युत उदोषधीर्जिहते पिन्यते स्वः ।
इरा विश्वस्मै भुवनाय जायते यत् जर्जन्यः पृथिवीं रेतसावति।४
यस्य व्रते पृथिवी नंनमीति यस्य व्रते शफवज्जर्भुरीति ।
यस्य व्रत ओषधीर्विश्वरूपाः स नः पर्जन्य महि शर्म यच्छा।५।२७

हे स्तोताओ ! तुम शक्तिशाली पर्जन्य के सम्मुख उपस्थित होकर उनकी स्तुति करो । सुन्दर स्तोत्र रूप वाली स्तुति से उनका स्तवन

करो । हव्यरूप अन्नसे उनकी सेवा करो ! जल वृद्धि करने वाले उदार चेता, गर्जन शब्द वाले पर्जन्य द्वारा वनस्पतियों में गर्भ स्थापित करते हैं, फलप्रद बनाते हैं ।१। पर्जन्य देव वृक्षों को भूमिसात् करते, असुरों का संहार करते और विकराल होते हुए जगत् को डर दिखाते तथा पापियों को विनष्ट करते हैं । इसलिए जो व्यक्ति पापी नहीं वे भी डर जाते हैं और उन वर्षा करने वाले पर्जन्य के सामने से भाग जाते हैं ।२। जैसे रथी चाबुक मारकर घोड़ों को उत्तेजित करते हुए वीरों को उत्साहित करते हैं । वैसे ही पर्जन्य मेघों को प्रेरित करके जल वृष्टि के लिए प्रोत्साहित करते हैं । जब तक पर्जन्य मेघों को अन्तरिक्ष में एकत्र करते हैं तब तक शेर के समान गर्जन वाले मेघों का शब्द देरसे ही सुनाई देता है ।३। जब तक पर्जन्यदेव वर्षा द्वारा पृथिवीका पालन करते हैं तब तक वर्षा के कार्य में योग देने वाली वायु प्रवाहित रहती है । सब ओर विद्युत् चमकती, अन्तरिक्ष वृष्टि करता और वनस्पतियाँ वृद्धि को प्राप्त होती हैं । तब पृथिवी सबका हित साधन करने में सूक्ष्म हो जाती है ।४। हे पर्जन्य ! तुम्हारे कर्म के समान पृथ्वी झुकती है तुम्हारे ही कर्म द्वारा वनस्पतियाँ विभिन्न वर्ण तथा रूप वाली होती है हे पर्जन्यदेव ! हमको अत्यन्त सुख दो ।५। (२७)

दिवो नो वृष्टिं मरुतो ररीध्वं प्र पिन्वत वृष्णो अश्वस्य धाराः ।
अर्वाङेतेन स्तनयित्नुनेह्यपो निषिञ्चन्नसुरः पिता नः ।।६
अभि क्रन्द स्तनय गर्भमा धा उदन्वता परि दीया रथेन ।
दृतिं सु कर्ष विषितं न्यञ्चं समा भवन्तुद्वतो निपादाः ।।७
महान्तं कोशमुदचा नि षिञ्च स्यन्दन्तां कुल्या विषिताः पुरस्तात्
घृतेन द्यावापृथिवी व्युन्धि सुप्रपाणं भवत्वघ्न्याभ्यः ।।८
यत पर्जन्य कनिक्रदत् स्तनयन् हंसि दुष्कृतः ।
प्रतीदं विश्वं मोदते यत् किं च पृथिव्यामधि ।।९
अवर्षीर्वर्षमुदु षू गृभायाऽकर्धन्वान्यत्येतवा उ ।
अजीजन ओषधीर्भोजनाय कमुत प्रजाभ्योऽविदो मनीषां ।१०।२८

हे मरुद्गण ! हमारे निमित्त तुम अन्तरिक्ष से वृष्टिको प्रेरित करो हे वर्षा करने वाले ! सर्वत्र मेघों से जल गिराओ। हे पर्जन्य ! तुम सींचने वाले गर्जन युक्त मेघ सहित हमारे सामने आओ। क्योंकि तुम जल की वर्षा द्वारा हमारा पालन करने वाले हो।६। हे पर्जन्य ! तुम गर्जनशील होओ। जलवृष्टि द्वारा वनस्पतियों को गर्भवती, फल-प्रद बनाओ। अपने जलयुक्त रथ से अन्तरिक्ष में घुसो। जल युक्त मेघ को वृष्टि के लिए प्रेरित करो। ऊँचे नीचे प्रदेशों को समतल करो।७। हे पर्जन्य ! जलके कोष-रूप मेघको उत्तेजित कर वृष्टि कराओ। वेग वती नदियाँ प्रवाहित हों। जल द्वारा आकाश और पृथिवी को भिगो दो। गौओं के पीनेके लिये मधुर जल की कमी न रहे।८। हे पर्जन्य ! तुम गम्भीर गर्जन द्वारा मेघों को चीरते हो, तब यह सम्पूर्ण संसार और पृथिवी के सभी जीव बल को प्राप्त करते हैं।९। हे पर्जन्य तुमने जल वृष्टि द्वारा मरुभूमि को उर्वर बनाने के लिये उसे जल से परिपूर्ण कर दिया। मनुष्यके लाभार्थ वनस्पतियों को प्रकट कर स्तोताओं द्वारा पुजे गये।१०। (२८)

सूक्त ८४

(ऋषि–अत्रिः। देवता–पृथिवी। छन्द–अनुष्टुप्)

बलित्था पर्वतानां खिद्रं बिभर्षि पृथिवि।
प्र या भूमिं प्रवत्वति मह्ना जिनोषि महिनि॥१
स्तोमासस्त्वा विचारिणि प्रति ष्टोभन्त्यक्तुभिः।
प्र या वाजं न हेषन्तं पेरुमस्यस्यर्जुनि॥२
दृलहा चिद् या वनस्पतीन् क्ष्मया दर्धर्ष्योजसा।
यत् ते अभ्रस्य विद्युतो दिवो वर्षन्ति वृष्टयः।३।२९

हे पृथ्वी ! तुम उत्तम गुण वाली हो, तुम पर्वतों के बल से प्राणि यों का पालन करती हो। हे पृजनीय! तुम पर्वतोंके समान उदार और अपनी उर्वरा भूमि को उत्तम रीतिसे सींचने वाली होओ।१। हे गति-

मती पृथ्वी। स्तोतागण अपने सुन्दर स्तोत्रों द्वारा तुम्हारी स्तुति करते हैं। हे अर्जुनो ! तुम हिनहिनाते हुये अश्व के समान मेघ को उसके उत्तम कर्म में प्रेरित करती हो।२। हे पृथ्वी ! तुम अपनी दृढ़ सामर्थ्य से बड़े बड़े वृक्षोंको धारण करतीहो और तेजोमय अन्तरिक्षसे विद्युत की चमक के साथ तुम पर वर्षा होती है। इसलिये तुम अत्यन्त पूजनीय हो।३। (२६)

सूक्त ८५

(ऋषि–अत्रिः। देवता–वरुणः। छन्द–त्रिष्टुप्)

प्र सम्राजे बृहदर्चा गभीरं ब्रह्म प्रियं वरुणाय श्रुताय।
वि यो जघान शमितेव चर्मोपस्तिरे पृथिवीं सूर्याय ॥१
वनेषु व्यन्तरिक्षं ततान वाजमर्वत्सु पय उस्रियासु।
हृत्सु क्रतुं वरुणो अप्स्वग्निं दिवि सूर्यमदधात् सोममद्रौ ॥२
नीचीनबारं वरुणः कवन्धं प्र ससर्ज रोदसी अन्तरिक्षम्।
तेन विश्वस्य भुवनस्य राजा यवं न वृष्टिर्व्युनत्ति भूम ॥३
उनत्ति भूमिं पृथिवीमुत द्यां यदा दुग्धं वरुणो वष्ट्यादित्।
समभ्रेण वसत पर्वतासस्तविषीयन्तः श्रथयन्त वीराः ॥४
इमामू ष्वासुरस्य श्रुतस्य महीं मायां वरुणस्य प्र वोचम्।
मानेनेव तस्थिवाँ अन्तरिक्षे वि यो ममे पृथिवीं सूर्येण ।५।३०

हे अत्रि ऋषि ! तुम भले प्रकार विराजमान सर्वविख्यात और विघ्नों के शमन करने वाले वरुण देवताके लिए सुन्दर और प्रिय स्तोत्र का पाठ करो। जैसे पशुओं का वध करने वाला, पशु चर्म को बढ़ाता है, वैसे ही वरुण सूर्य के विचरण के लिए अन्तरिक्षको विस्तीर्ण करते हैं।१। वृक्षों के ऊपरी भाग में वरुण, अन्तरिक्ष को फैलाते हैं। वे अश्वों में बल, गौओं में दूध और मनुष्यों में सद्भाव प्रेरित करते हैं। वे जल में अग्नि, अन्तरिक्ष में आदित्य तथा पर्वतों पर सोमादि औषधियों की स्थापना करते हैं।२। वरुणदेव स्वर्ग, पृथिवी और अन्तरिक्ष के हित-साधनार्थ मेघ के निम्न भाग को चीरते हैं। जैसे वृष्टि अनाजों को

सींचती है वैसे ही वरुणदेव सम्पूर्ण पृथ्वी को गीली कर देते हैं।३। वरुणदेव वृष्टि की इच्छा करते हैं, तब अन्तरिक्ष और दिव्य लोक को भिगोते हैं फिर मेघों द्वारा पर्वत शिखरों को ढक लेते हैं। मरुद्गण अपने पराक्रमसे हृष्ट हुए सेघों को ढीला करते हैं।४। हम प्रसिद्ध तथा राक्षसों का संहार करने वाले वरुण की बुद्धि की प्रशंसा करते हैं। वे वरुणदेव अन्तरिक्ष में स्थिति होकर सूर्य द्वारा पृथिवी और अन्तरिक्ष को व्याप्त करते हैं।५।   (३०)

इमामू नु कवितमस्य मायां महीं देवस्य नकिरा दधर्ष।
एकं यदुद्गा न पृणन्त्येनीरासिञ्चन्तीरवनयः समुद्रम् ॥६
अर्यम्यं वरुण मित्र्यं वा सखायं वा सदमिद् भ्रातरं वा।
वेशं वा नित्यं वरुणारणं वा यत् सीमागश्चकृमा शिश्रथस्तत् ॥७
कितवासो यद् रिरिपुर्न दीवि यद् वा घा सत्यमुत यन्न विद्म।
सर्वा ता वि ष्य शिथिरेव देवाधा ते स्या वरुण प्रियासः।८।३१

तेजस्वी ज्ञानी महान् वरुणदेव की प्रसिद्ध बुद्धिका कोई खण्डन नहीं कर सकता। केवल जल सींचने वाली उज्ज्वल नदियाँ जलद्वारा अकेले समुद्र को भी पूर्ण करने में समर्थ नहीं हो सकती। यह केवल वरुण की महान् सामर्थ्य का फल है।६। हे वरुण! यदि हम कभी किसीभी मित्र साथी, दुष्टोंके शासक, भ्राता,पड़ोसीं हमसे युद्ध न करने वाले,व्यक्तियों के प्रति कोई अपराध कर बैठे तो तुम उस अपराधके पाप को नष्टकर दो। हे वरुण! जुआ खेलने वाले के समान यदि हम जानते हुए या अनजाने में भी कोई अपराध करें तो तुम ढीले बन्धन के समान उन्हें छोड़ दो। इसके पश्चात् हम तुम्हारे प्रिय हों।७-८।   (३१)

सूक्त ८६

(ऋषि–अत्रिः। देवता–इन्द्राग्नी। छन्द–विराट्पूर्वा अनुष्टुप्)

इन्द्राग्नी यमवथ उभा वाजेषु मर्त्यम्।
दृलहा चित् स प्र भेदति द्युम्ना वाणीरिव त्रितः ॥१
या पृतनासु दुष्टरा या वाजेषु श्रवाय्या।

या पञ्च चर्षणीरभीन्द्राग्नी ता हवामहे ॥२
तयोरिदमवच्छवस्तिग्मा दिद्यु न्मघोनोः ।
प्रति द्रु णा गर्भस्त्योर्गवां वृत्रघ्न एषते ॥३
ता वामेषे रथानामिन्द्राग्नी हवामहे ।
पती तुरस्य राधसो विद्वांसा गिर्वणस्तमा ॥४
ता वृधन्तावनु द्यू नु मर्ताय देवावदभा ।
अर्हन्ता चित् पुरो दधेऽशेव देवावर्वते ॥५
एवेन्द्राग्निभ्यामहावि हव्यं शूष्यं घृतं न पूतमद्रिभिः ।
ता सूरिषु श्रवो बृहद् रयिं गृणत्सु दिधृतमिषं गृणत्सु दिधृतम्
।६।३२

हे इन्द्राग्ने ! तुम मरणधर्मा मनुष्यों की रणक्षेत्र में रक्षा करो। तुम्हारी रक्षा को पाकर वह बड़े बड़े दुखों से पार हो जाता है और वैरियों के वाक्यों का ज्ञानमयी वाणियों द्वारा खण्डन करता हुआ तीनों स्थानों में व्याप्त होता है। जो इन्द्राग्नि मुखमें किसी के द्वारा वशीभूत नहीं होते जो रणभूमि में सदा प्रशंसा प्राप्त करते हैं जो पाँचों प्रकार के प्राणियों की रक्षा करते हैं उन इन्द्राग्नि की हम स्तुति करते हैं।२। इन्द्र और अग्नि का बल शत्रुओंको हराता है। जब यह दोनों एक रथ पर चढ़कर गौओं के छुड़ाने के लिये तथा वृत्र का हनन करने के लिये चलते हैं तब इन दोनों पराक्रमियों के हाथोंमें तीक्ष्ण वज्र स्थिर रहता है। हे वैभव के स्वामी गतिशील सबों के जानने वाले अत्यन्त पूजनीय इन्द्र और अग्निदेव ! युद्ध में तुम्हारे रथ को लाने के लिए हम तुम्हें आहूत करते हैं।४। हे इन्द्राग्ने दोनों अजेय हो। हम अश्व प्राप्ति के लिए तुम दोनों की स्तुति करते हैं तुम दोनों ही मनुष्यों के समान बढ़ते तथा सूर्य के समान प्रकाशमान रहते हो।५। हे इन्द्राग्ने ! तुमको पाषाणों में कूटे हुए सोमरस के समान पुष्टिवर्धक हव्य दिया गया है। तुम दोनों मनुष्यों को अन्न दो। स्तुति करने वालों को अन्न धन प्रदान करो।६।

सूक्त ८७

(ऋषि-एवयामरुदात्रेयः । देवता-मरुतः । छन्द-अतिजगती)

प्र वो महे मतयो यन्तु विष्णवे मरुत्वते गिरिजा एवयामरुत् ।
प्र शर्धाय प्रयज्यवे सुखादये तवसे भन्ददिष्टये धुनिव्रताय शवसे।१
प्र ये जाता महिना ये च नु स्वयं प्र विद्मना ब्रुवत एवयामरुत् ।
क्रत्वा तद् वो मरुतो नाधृषे शवो दाना मह्ना तदेषामधृष्टासो
नाद्रयः ॥२
प्र ये दिवो बृहतः शृण्वरे गिरा सुशुक्वानः सुभ्व एवयामरुत् ।
न येषामिरी सधस्थ ईष्ट आँ अग्नयो न स्वविद्युतः प्र स्पन्द्रासो
धुनीनाम् ॥३
स चक्रमे महतो निरुरुक्रमः समानस्मात् सदस एवयामरुत् ।
यदायुक्त त्मना स्वादधि ष्णुभि र्विष्पर्धसो विमहसो जिगाति
शेवृधो नृभिः ॥४
स्वनो न वोऽमवान् रेजयद् वृषा त्वेषो ययिस्तविष एवयामरुत् ।
येना सहन्त ऋञ्जत स्वरोचिषः स्थारश्मानो हिरण्ययाः
स्वायुधास इष्मिणः ।५।३३

'एवया' ऋषि की वाणी से निकले हुए स्तौत्र मरुद्गण के सहित विष्णुके समीप पहुँचे ओर वे ही स्तोत्र पूज्य पराक्रमी, ऊत्तम प्रकार से सजे हुए, स्तुतियों की कामना करने वाले, मेत्रों को प्रेरित करने वाले तथा सशक्त और सामर्थ्यवान् मरुद्गण के समीप उपस्थित हों ।१। जो मरुद्गण महान् देवता इन्द्र के साथ प्रकट हुए, जो मज्ञ में जाने सम्बन्धी भाव सहित उत्पन्न हुए,उव मरुद्गण की 'एवया' ऋषि स्तुति करते हैं। हे मरुद्गण ! तुम्हारा बल अभीष्ट फल प्रदान करने के कारण महान् होगया है । तुम पर्वतोंके समान दृढ़हो ।२।जो तेजस्वी स्वछंद गमनशील स्वयं से आह्वान सुनते हैं,अपने घरमे प्रतिष्ठित करके जिन्हें हटाने की सामर्थ्य किसी में नही है, जो अपने तेजसे तेजस्वी तथा अग्निके समान नदियाँ प्रवाहित करते हैं,उन मरुतोंकी एवया ऋषि स्तुति करते हैं ।३।

अपनी इच्छासे जानेवाले मरुद्गणके घोड़े जब रथमें जोड़े जाते, तब मरुत उनकी कामना करतेहैं। वे मरुद्गण सर्वत्र व्याप्त होने वाले और अन्तरिक्ष से जाने वाले हैं। परस्पर स्पर्धा करने वाले, महान् पराक्रमी तथा कल्याणकारी मरुद्गण अपने स्थान से निकल पड़ते हैं।४। हे मरुद्गण! तुम अपने ही तेज में स्थित, सदा एक सी क्रान्ति वाले, दिव्य अलंकारों में सुसज्जित तथा अन्न प्रदान करने वाले हो। तुम अपने कार्य को सिद्ध करने के लिए जिस शब्द द्वारा शत्रुओं को वशीभूत करते हो, वह जल की वृष्टि करने वाला, तेजोमय और पराक्रमी गर्जन 'एवयामरुत्' को कम्पित करने वाला न हो।५। (३३)

अपारो वो महिमा वृद्धशवसस्त्वेषं शवोऽवत्वेवयामरुत्।
स्थातारो हि प्रसितौ संदृशि स्थन ते न उरुष्यता निदः
शुशुक्वांसो नाग्नयः ॥६

ते रुद्रासः सुमखा अग्नयो यथा तुविद्युम्ना अवन्त्वेवयामरुत।
दीर्घं पृथु पप्रथे सद्म पार्थिवं येषामज्मेष्वा महः
शर्धास्यद्भुतैनसाम् ॥७

अद्वेषो नो मरुतो गातुमेतन श्रोता हवं जरितुरेवयामरुत्।
विष्णोर्महः समन्यवो युयोतन स्मद् रथ्यो न दसना ऽप द्वेषांसि
सनुतः ॥८

गन्ता नो यज्ञं यज्ञियाः सुशमि श्रोता हवमरक्ष एवयामरुत्।
ज्येष्ठासो न पर्वतासो व्योमनि यूयं तस्य प्रचेतसः स्यात
दुर्धर्तवो निदः ।९।३४

हे समान शक्ति वाले मरुद्गण! तुम्हारी महिमाका पार नहीं पाया जासकता। तुम्हारे आश्रयसे एवयामरुत्की रक्षा हो। यज्ञादि श्रेष्ठकर्मो के नियामक तुम्हीं ही तुम प्रदीप्त अग्निके समान प्रकाशवान् हो। हमको निन्दा करने वालों की निन्दा से बचाओ।६ अग्नि के समान प्रदीप्ति वाले पूज्य मरुद्गण! तुम्हारे द्वारा विस्तीर्ण स्थान के समान अन्तरिक्ष प्रसिद्धि को प्राप्त होता है। तुम पाप से रहित हो तथा अपने

गमन समय अपना महान् तेज प्रकट करते हो। तुम एवयामरुत्के रक्षक होओ।७। हे मरुद्गण ! तुम द्वेष से रहित हो। तुम हमारे स्तोत्र के प्रति सुसंगत होओ और स्तुति करने वाले एवयामरुत्का आह्वान सुनो तुम इन्द्रके साथ मिलकर यज्ञ-भाग प्राप्त करते हो। हे मरुद्गण ! जैसे वीर पुरुष शत्रुओंको भगाता है, वैसे ही तू हमारे चोर शत्रुओंको दूर भगाओ।८। हे यज्ञादि कार्यों से बुलाये जाने वाले मरुतों ! तुम हमारे यज्ञ में आओ, जिससे वह यज्ञ पूर्ण हो। तुम विघ्नोंको दूर करते रहते हो। हमारे आह्वानको सुनो। हे श्रेष्ठ ज्ञानी मरुद्गण ! तुम विन्ध्यादि पर्वतों के समान अत्यन्त बढ़े हुए हो। तुम अन्तरिक्ष में रहते हुए उदार चेता श्रेष्ठ शासक बनो।९। (३४)

॥ इति पञ्चमं मण्डलम् समाप्तम् ॥

॥ अथ षष्ठं मण्डलम् ॥

सूक्त १ [प्रथम अनुवाक]

(ऋषि—भरद्वाजो बार्हस्पत्यः। देवता—अग्निः। छन्द-पंक्तिः, त्रिष्टुप्)

त्वं ह्यग्ने प्रथमो मनोता ऽस्या धियो अभवो दस्म होता।
त्वं सीं वृषन्नकृणोर्दुष्टरीतु सहो विश्वस्मै सहसे सहध्यै ॥१

अधा होता न्यसीदो यजीयानिलस्पद इषयन्नीड्यः सन्।
तं त्वा नरः प्रथमं देवयन्तो महो राये चितयन्तो अनु ग्मन् ॥२

वृतेव यन्तं बहुभिर्वसव्यैस्त्वे रयिं जागृवांसो अनु ग्मन्।
रुशन्तमग्निं दर्शतं बृहन्तं वपावन्तं विश्वहा दीदिवांसम् ॥३

पदं देवस्य नमसा व्यन्तः श्रवस्यवः श्रव आपन्नमृक्तम्।
नामानि चिद् दधिरे यज्ञियानि भद्रायां ते रणयन्त संदृष्टौ ॥४

त्वां वर्धन्ति क्षितयः पृथिव्यां त्वां राय उभयासो जनानाम्।
त्वं त्राता तरणे चेत्यो भूः पिता माता सदमिन्मानुषाणाम् ।५।३५

हे अग्ने ! तुम देवताओं में श्रेष्ठ हो। देवताओं का चित्त तुम में लगा है। तुम दर्शन-करने योग्य हो। इस यज्ञमें देवगण के बुलाने वाले

तुम ही हो। हे कामनाओंकी वर्षा करने वाले अग्निदेव ! सभी बलवान् शत्रुओं को हराने के लिए हमें शक्ति दो ।१। हे अग्ने तुम यज्ञानुष्ठानोंके अत्यन्त करने वालेहो । तुम हवियोंको भक्षण करते हुए स्तुतियोंके पात्र होते हो। तुम इन वेदी पर प्रतिष्ठित होओ। धर्म रूप अनुष्ठान के करने वाले ऋत्विगण दिव्य धन-लाभकी कामना से देवताओं में सर्वप्रथम तुमकोही प्रदीप्त करते हैं ।२। हे अग्ने! तुम अत्यन्त तेजस्वी, दर्शनीय, हवियों के भक्षण करने वाले तथा सदा ही ज्योतिर्मान रहते हो। तुम वसुओं के श्रेष्ठ मार्गसे गमन करते हो। धन की कामना करनेवाले यजमान तुम्हारा ही अनुगमन करते हैं ।३। अन्नोंकी कामना करने वाले यजमान अग्नि के आह्वान योग स्थानों में जाकर स्तोत्रों द्वारा उसे प्रसन्न करते हैं और अभिलषित अन्न प्राप्त करते हैं। वे अग्निके दर्शन होने पर प्रसन्न होते हुए स्तोत्र उच्चारित करते और तुम्हारे नामों का कीर्तन करते हैं ।४। हे अग्ने ! यजमान वेदी पर प्रतिष्ठित कर तुम्हारी वृद्धि करते हैं। तुम पशु तथा अन्य धनों की यजमानों के लिए वृद्धि करते हो। अध्वर्यु आदि भी दोनों धनों की कामना करते हुए तुम्हें बढ़ाते हैं। हे दुःखोंके नाश करने वाले अग्निदेव ! तुम स्तुतियों के पात्र होकर मनुष्यों की माता-पिता रूप से रक्षा करते हो ।५। (३५)

सपर्येण्यः स प्रियो विक्ष्वग्निर्होता मन्द्रो नि षसादा यजीयान् ।
तं त्वा वयं दम आ दीदिवांसमुप ज्ञुबाधो नमसा सदेम ॥६
तं त्वा वयं सुध्यो नव्यमग्ने सुम्नायव ईमहे देवयन्तः ।
त्वं विशो अनयो दीद्यानो दिवो अग्ने बृहता रोचनेन ॥७
विशां कविं विश्पतिं शश्वतीनां नितोशनं वृषभं चर्षणीनाम् ।
प्रेतीषणिमिषयन्तं पावकं राजन्तमग्निं यजतं रयीणाम् ॥८
सो अग्न ईजे शशमे च मर्तो यस्य आनट् समिधा हव्यदातिम् ।
य आहुतिं परि वेदा नमोभिर्विश्वेत् स वामा दधते त्वोतः ॥९
अस्मा उ ते महि महे विधेम नमोभिरग्ने समिधोत हव्यैः ।
वेदी सूनो सहसो गीर्भिरुक्थैरा ते भद्रायां सुमतौ यतेम ॥१०

आ यस्ततन्थ रोदसी वि भासा श्रवोभिश्च श्रवस्यस्तरुत्रः।
बृहद्भिर्वाजैः स्थविरेभिरस्मे रेवद्भिरग्ने वितरं वि भाहि ॥११
नृवद् वसो सदमिद्धेह्यस्मे भूरि तोकाय तनयाय पश्वः।
पूर्वीरिषो बृहतीरारेअघा अस्मे भद्रा सौश्रवसानि सन्तु ॥१२
पुरूण्यग्ने पुरुधा त्वाया वसूनि राजन् वसुता ते अश्याम्।
पुरूणि हि त्वे पुरुवार सन्त्यग्ने वसु विधते राजनि त्वे ।१३।३६

कामनाओं की वर्षा करने वाले, पूजन के पात्र, प्रजाओं में यज्ञकर्म सम्पादन करने वाले, अत्यन्त यजनके योग्य अग्नि वेदीपर स्थापित किये जाते हैं। हे अग्ने ! तुम गृहमें प्रज्वलित होतेहो ! हम स्तुति करने वाले अपने घुटने टेककर स्तोत्रोंका उच्चारण करतेहुए तुम्हारी वन्दना करते हैं।६। हे अग्ने ! तुम स्तुति के पात्र हो। हम विवेक बुद्धि वाले मनुष्य सुखकी इच्छा करतेहुए तुम्हारी कामना करते तथा तुम्हारी स्तुति करते हैं। हे अग्ने ! तुम प्रदीप्त तेज वाले हो। तुम अत्यन्त प्रकाश वाले सूर्य के समान प्रकाशमान होते हुए दिव्यलोक की प्राप्ति कराओ।७। मनुष्य के स्थायी ज्ञान से परिपूर्ण, शत्रुओं का नाश करने वाले, अभीष्टको पूर्ण करने वाले सदा वर्तमान अन्नों के धारण कर्त्ता, पवित्रता के सम्पादन करने वाले धन चाहने वालों द्वारा कामना किये जातेहुए तेजस्वी अग्नि देव की हम स्तुति करते हैं।८। हे अग्ने तुम्हारा यजन स्तवन करनेवाले अथवा हविदाता यजमान जो स्तुतियुक्त आहुति देता है,वह तुम्हारीकृपा से सभी इच्छित धनों को प्राप्त करता है।९। हे अग्ने ! हम हव्य देते हुए तथा नमस्कार पूर्वक तुम्हारा स्तवन करते हैं, तुम महान् हो। हम स्तोत्र सहित तुम्हारीपूजा करते हैं। हम तुम्हारी सुन्दरकृपा पानेके लिए यत्नशील हैं,इस कार्यमें हमको सफलता मिले।१०। हे अग्ने तुमने अपने तेजसे आकाश पृथिवीको बढ़ाया है। तुम संकटोंसे छुड़ाने वाले स्तुतियों से पूजन करने योग्य हो। तुम हमारे पास बहुत अन्न और महान् धन के साथ प्रज्वलित होओ।११। हे ऐश्वर्यशाली अग्निदेव ! हमको संतान युक्त धन दो। हमारे पुत्र, पौत्रों को पशु आदि धन दो। हमको हमारा

इच्छा पूर्ण करने वाले, पाप से शून्य अन्न तथा ऐश्वर्य सुख प्रदान करो ।१२। हे ज्योतिर्मान् अग्निदेव ! हम तुम्हारे पास से अश्व गवादि पशुओं से युक्त धन-लाभ करें । हे अग्ने तुम सबके वरण करने योग्य, ऐश्वर्यवान् तथा रमणीय हो । तुम प्रचुर धनों के स्वामी हो ।१३। (३६)

॥ चतुर्थोऽध्यायः समाप्तः ॥

सूक्त २

(ऋषि–भरद्वाजो वार्हस्पत्यः । देवता–अग्निः । छन्द–उष्णिक् त्रिष्टुप् जगती)

त्वं हि क्षैतवद् यशो ऽग्ने मित्रो न पत्यसे ।
त्वं विचर्षणे श्रवो वसो पुष्टिं न पुष्यसि ॥१
त्वां हि ष्मा चर्षणयो यज्ञेभिर्गीर्भिरीलते ।
त्वां वाजी यात्यवृको रजस्तूर्विश्वचर्षणिः ॥२
सजोषस्त्वा दिवो नरो यज्ञस्य केतुमिन्धते ।
यद्ध स्य मानुषो जनः सुम्नायुर्जुह्वे अध्वरे ॥३
ऋधद् यस्ते सुदानवे धिया मर्तः शशमते ।
ऊती ष बृहतो दिवो द्विषो अंहो न तरति ॥४
समिधा यस्त आहुतिं निशितिं मर्त्यो नशत् ।
वयावन्तं स पुष्यति क्षयमग्ने शतायुषम् ।५।१

हे अग्ने ! तुम मित्रके समान अन्न और तेजके स्वामी हो । हे सर्वदर्शी, तुम अन्न और पोषण योग्य पदार्थों द्वारा हमको पुष्ट बनाओ ।१। हे अग्ने! स्तोतागण हवियोंके साधन रूप हव्य और स्तोत्र द्वारा तुम्हारी पूजा करते हैं । अहिंसित जलको प्रेरणा देने वाले और प्राणियोंको व्याप्त करने वाले आदित्य तुम्हें प्राप्त करते है ।२। हे अग्ने ! समान प्रीति वाले ऋत्विक् तुम्हें प्रज्वलित करते हैं तुम यज्ञ के ध्वजरूप हो । मनु के संतान रूप यजमान सुख की कामना वाले होकर यज्ञ में तुम्हें बुलाते हैं ।३। हे अग्ने ! तुम उदार मन वालेहो । जो मरणधर्मा यजमान अनु-

ध्यान में लगकर तुम्हारी स्तुति करे, वह सम्पन्न हो। हे अग्ने ! तुम तेजस्वी हो यह यजमान तुम्हारे रक्षा साधनोंको पाकर शत्रुओं को नष्ट करे ।४। हे अग्ने ! जो यजमान तुमको मन्त्र युक्त आहुति से पुष्ट करता है, वह सन्तानवान् होकर सौ वर्ष तक जीवित रहता हुआ सुन्दर घर में निवास करता है ।५। (१)

त्वेषस्ते धूम ऋण्वति दिवि षञ्छुक्र आततः ।
सूरो न हि द्युता त्वं कृपा पावक रोचसे ॥६
अधा हि विक्ष्वीड्यो ऽसि प्रियो नो अतिथिः ।
रण्वः पुरीव जूर्यः सूनुर्न त्रययाय्यः ॥७
क्रत्वा हि द्रोणे अज्यसे ऽग्ने वाजी न कृत्व्यः ।
परिज्मेव स्वधा गयो ऽत्यो न ह्वार्यः शिशुः ॥८
त्वं त्या चिदच्युता ऽग्ने पशुर्न यवसे ।
धामा ह यत् ते अजर वना वृश्चन्ति शिक्वसः ॥९
वेषि ह्यध्वरीयतामग्ने होता दमे विशां ।
समृधो विश्पते कृणु जुषस्व हव्यमङ्गिरः ॥१०
अच्छा नो मित्रमहो देव देवानग्ने वोचः सुमतिं रोदस्योः ।
वीहि स्वस्तिं सुक्षितिं दिवो नॄन् द्विषो अंहांसि दुरिता तरेम
ता तरेम तवावसा तरेम ।११।२

हे अग्ने ! तुम तेजस्वी हो तुम्हारा उज्ज्वल धूम अन्तरिक्ष में फैलता है और मेघके रूपमें बदल जाता है । हे पवित्र करनेवाले अग्नि देव ! तुम स्तुतियोंसे प्रसन्न होते हुए आदित्यके समान प्रकाशमान होते हो ।६। हे अग्ने ! तुम स्तुतियोंके पात्र हो। हमारे लिये तुम अतिथि के समान पूज्य हो । तुम साथ में रहने वाले जन-कल्याणार्थ उपदेश करने वाले वृद्ध पुरुष के समान आश्रययोग्य तथा पुत्रके समान पालन करने योग्य हो ।७। हे अग्ने ! अरणि मंथन द्वारा ही तुम्हारा विद्यमान होना सिद्ध होताहै जैसे घोड़ा अपने सवार को ले जाता है, वैसे ही तुम हव्य को ले जाने वाले होओ । वायुके समान तुम सर्वत्र जाते हो,हमको अन्न

और घर दो । तुम बालक के समान शुद्ध भाव वाले हो ।८। हे अग्ने ! घास आदि के निमित्त जोड़ा गया पशु जैसे सब घास को खा लेता है, वैसे ही तुम प्रौढ़ काष्ठों को तुरन्त खा जाते हो । हे अग्ने तुम अविनाशी एवं तेजस्वी हो । तुम्हारी ज्वालायें बनों को भस्मकर डालती हैं ।६। हे अग्ने तुम यज्ञकर्म की इच्छा करने वाले यजमान के घर होता बन कर प्रवेश करते हो । तुम मनुष्यों का पालन करने वाले हो । हमारे लिए समृद्धि की कामना करो । हे अग्ने ! तुम हमारी हवियों को ग्रहण करो ।१०। हे सुन्दर तेज वाले अग्ने तुम शक्ति और विकराल गुणों से युक्त तया और पृथिवीमें व्याप्त हो । तुम हमारे स्तोत्र को देवताओंके निकट पहुँचाओ । हम स्तुति करने वालों को सुन्दर आवासयुक्त सौभाग्य प्राप्त कराओ । हम शत्रुओं, सङ्कटों और पापोंसे दूरहो जाँय,हम अन्य जन्मों में भी पापों से बचें । हे अग्ने ! तुम्हारे रक्षा साधवोंके बल पर शत्रुओं से युक्त हों ।११।

(२)

सूक्त ३

(ऋषि—भारद्वाजो बार्हस्पत्यः । देवता—अग्निः । छन्द-त्रिष्टुप्, पंक्तिः)

अग्ने स क्षेषदृतपा ऋतेजा उरु ज्योतिर्नशते देवयुष्टे ।
यं त्वं मित्रेण वरुणः सजोषा देव पासि त्यजसा मर्तमंहः ॥१
ईजे यज्ञेभिः शशमे शमीभिर्ऋधद्वारायाग्नये ददाश ।
एवा चन तं यशसामजुष्टिर्नांहो मर्तं नशते न प्रदृप्तिः ॥२
सूरो न यस्य दृशतिररेपा भीमा यदेति शुचतस्त आ धीः ।
हेषस्वतः शुरुधो नायमक्तोः कुत्रा चिद् रण्वो वसतिर्वनेजाः ॥३
तिग्मं चिदेम महि वर्पो अस्य भसदश्वो न यमसान आसा ।
विजेहमानः परशुर्न जिह्वां द्रविर्न द्रावयति दारु धक्षत् ॥४
स इदस्तेव प्रति धादसिष्यञ्छिशीत तेजोऽयसो न धाराम् ।
चित्रध्रजतिररतिर्यो अक्तोर्वेर्न द्रुषद्वा रघुपत्मजंहाः ॥५॥३

हे अग्ने ! जो यजमान यज्ञ के निमित्त उत्पन्न हुआ और यज्ञानुष्ठानोंको करताहै, वह दीर्घायु प्राप्त करें। तुम वरुण और मित्रके समान

प्रीति वाने होकर अपने तेजद्वारा जिस यजमानको पापोंसे बचातेहो वह देवताओंकी कामना करनेवाला यजमान तुम्हारी महती रक्षा प्राप्तकरता है। सर्वश्रेष्ठ वैभव से सम्पन्न अग्नि के लिये जो साधक हवि देता है उसे पुत्रोंका अभाव नहींहोता और मिथ्याभिमान तथा पाप उसके पास नहीं पहुँचते।१-२। सूर्यके समान ही अग्नि का दर्शन भी पापसे बचाता है। हे अग्ने! तुम्हारी प्रज्वलित ज्वाला पापियों को भयङ्कारी एवं सर्वत्र गमन करने वाली है। रात्रिमें रंभाने वाली गौ के समान अग्निनेव बढ़ते हुए शब्दवान होते हैं। सबको निवास देने वाले अग्नि वन युक्त पर्वत के अग्रभाग में क्रीड़ा करते हैं।३। अग्नि का रूप प्रकाश से उज्ज्वल है। इनका मार्ग तीक्ष्ण है। यह अश्व के समान मुखसे तृणादि का भक्षण करते हैं। कुठार की तीक्ष्ण धार काष्ठ को काट डालती है, वैसे ही अग्नि अपनी ज्वाला को वृक्षादि पर डालते हैं जैसे स्वर्णकार सोने को पानी बना देता है वैसे ही अग्नि सम्पूर्ण जङ्गल को द्रवीभूत कर डालते हैं।४। जैसे बाण सन्धान करने वाला लक्ष्य पर बाण चलाता है, वैसे ही अग्नि अपनी ज्वाला को चलाते हैं। जैसे कुठार का स्वामी अपने कुठार की धार तेज करता है वैसे ही अग्नि भी अपनी ज्वालाको तीक्ष्ण करते हैं। वृक्ष के ऊपर रहने वाले पक्षी के समान अद्भुत गतिवाले अग्नि रात्रि को लाँघ जाते हैं।५। (३)

स ईं रेभो न प्रति वस्त उस्राः शोचिषा रारपीति मित्रमहाः।
नक्तं य ईमरुषो यो दिवा नॄनमर्त्यो अरुषो यो दिवा नॄन् ॥६
दिवो न यस्य विधतो नवीनोद् वृषा रुक्ष ओषधीषु नूनोत्।
घृणा न यो ध्रजसा पत्मना यन्ना रोदसी वसुना दं सुपत्नी ॥७
धायोभिर्वा यो युज्येभिरर्कैर्विद्युन्न दविद्योत् स्वेभिः शुष्मैः।
शर्धो वा यो मरुतां ततक्ष ऋभुर्न त्वेषो रभसानो अद्यौत्।८।४

अग्निदेव स्तुतियोग्य आदित्यके समान प्रज्वलित ज्वालाको फैलाते हैं। सबके अनुकूल रहने वाले प्रकाश को फैलाते हुए तेज से शब्दवान होती हैं। रात में प्रदीप्त हुए अग्नि दिन के समान ही मनुष्यों को कर्म

में प्रेरित करते हैं। वे अमरत्व से युक्त दर्शनीय अग्नि अपने चमकते हुए तेज से ज्वालाओं को प्रेरित करते हैं।६। जिन अग्नि का प्रकाशमान रश्मि फैलाने वाला प्राकट्य हुआ है वे कामनाओं की वर्षा करने वाले ज्योतिर्मन अग्नि औषधि रूप काष्ठ में महान शव्द करते हैं। जो तेजस्वी ऊपर की ओर अपने तेजसे उठते हैं वे हमारे शत्रुओंको हराते हुए दिव्यलोक और भूलोक को ऐश्वर्य से सम्पन्न करते हैं। जो अग्नि अश्व के समान नियुक्त हुए पूजनीय तेज सहित गमन करते हैं, वे अपने तेज से ही विद्युत् के समान दीप्तिमान् होते हैं। जो अग्नि मरुद्गण के बल को बढ़ाते हैं वे अत्यन्त तेजस्वी सूर्य के समान प्रकाशवान् तथा अत्यन्त वेगवान् होते हैं।७-८। (४)

सूक्त ४

(ऋषि—भरद्वाजो वार्हस्पत्यः। देवता—अग्निः। छन्द—त्रिष्टुप्)

यथा होतर्मनुषो देवताता यज्ञेभिः सूनो सहसो यजासि।
एवा नो अद्य समना समानानुशन्नग्न उशतो यक्षि देवान् ॥१
स नो विभावा चक्षणिर्न वस्तोरग्निर्वन्दारु वेद्यश्चनो धात्।
विश्वायुर्यो अमृतो मर्त्येषूषर्भुद् भूदतिथिर्जातवेदाः ॥२
द्यावो न यस्य पनयन्त्यभ्वं भासांसि वस्ते सूर्यो न शुक्रः।
वि य इनोत्यजरः पावको ऽश्नस्य चिच्छिश्नथत् पूर्व्याणि ॥३
वद्मा हि सूनो अस्यद्मसद्वा चक्रे अग्निर्जनुषाज्मान्नम्।
स त्वं न ऊर्जसन ऊर्जं धा राजेव जेरवृके क्षेष्यन्तः ॥४
नितिक्ति यो वारणमन्नमत्ति वायुर्न राष्ट्र्यत्येत्यक्तून्।
तुर्याम यस्त आदिशामरातीरत्यो न ह्रुतः पततः परिह्रुत् ।५।५

हे देवताओं के बुलाने वाले बल-पुत्र अग्निदेव! जैसे विद्वान् के यज्ञ में तुमने हवि द्वारा देवताओं का यजन किया वैसेही हमारे इस यज्ञ में इन्द्रादि देवताओं को तुम अपने ही समान बल वाला समझते हुए उनका ही यजन करो।१। जो सूर्य के समान अत्यन्त तेजस्वी, सबके

लिए सरलता से जानने योग्य दिन के प्रकाशक, आश्रयभूत, अविनाशी अतिथि, रूप मेधावी तथा यज्ञ वेलामें चैतन्य होने वाले हैं,वे अग्नि हम को प्रशंसित धन लाभ करावें ।२। स्तुति करने वाले जिन अग्निदेव के महान् कर्मों का सङ्कीर्तन करता है, वे उज्ज्वल वर्ण वाले अग्नि सूर्य के समान अपने तेज को फैलाते हैं। अजर तथा पवित्र करने वाले अग्नि अपने तेज से हो सब पदार्थों को दिखाते हैं और अरुणादिका वध करते हैं ।३। हे अग्ने ! तुम सबको प्रेरणा देने वाले तथा स्तुति के योग्य हो। तुम हवियों से प्रसन्न होते हुए उपासकों को अन्नयुक्त घर देते हो। हे अन्न दाता अग्ने ! हमको अन्न दो। हमारे शत्रुओं पर विजय प्राप्त करो और यज्ञवेदी में विराजमान होओ ।४। जो अग्नि अपने तेज को बढ़ाते हैं, जो अन्धकार को दूर करते हैं जो हवि ग्रहण करते ओर वायु के समाने सब पर शासन करते हैं वे अग्नि रात्रि को पान करते हैं। हे अग्ने ! हम तुम्हारी कृपा से हवि न देने वाले पर विजय प्राप्त करें, तुम अश्व के समान वेगवान् होते हुए हमपर आक्रमण करने वाले शत्रु का संहार करो ।५। (५)

आ सूर्यो न भानुमद्भिरर्कैरग्ने ततन्थ रोदसी वि भासा ।
चित्रो नयत् परि तमांस्यक्तः शोचिषा पत्मन्नौशिजो न दीयन् ।६
त्वां हि मन्द्रतममर्कशोकैर्ववृमहे महि नः श्रोष्यग्ने ।
इन्द्रं न त्वा शवसा देवता वायुं पृणन्ति राधसा नृतमाः ।।७
नू नो अग्नेऽवृकेभिः स्वस्ति वेषि रायः पथिभिः पर्ष्यंहः ।
ता सूरिभ्यो गृणते रासि सुम्नं मदेम शतहिमाः सुवीराः ।८।६

हे अग्ने ! तुम आकाश पृथिवी को सूर्य के समान आच्छादित करते हो। अपने मार्ग पर नियमित रूप से चलने वाले सूर्य के समान अद्भुत गति वाले अग्नि अंधेरेको नष्ट करें ।६। हे अग्ने ! तुम अत्यन्त पूजनीय एवं तेजस्वी हो। हम तुम्हारा गुणगान करते हैं। तुम हमारे महान स्तोत्र को सुनो। हे अग्ने ! ऋत्विग्गण तुम्हें हवियों से प्रसन्न करते हैं। तुम वायु के समान बली और इन्द्र के समान दिव्य गुणों से

युक्त हो ।७। हे अग्ने ! तुम चोरों से शून्य मार्ग द्वारा शीघ्र ही हमारे लिए श्रेष्ठ ऐश्वर्य के पास पहुँचाओ । हमको पापों से छुड़ाओ । स्तुति करने वाले को तुम जो सुख देते हो वही सुख हमको दो । हम सुन्दर सन्तान वाले होकर सौ वर्ष तक सुख पूर्वक जीवें ।८।   (६)

सूक्त ५

(ऋषि—भरद्वाजो बार्हस्पत्यः । देवता—अग्निः । छन्द—त्रिष्टुप्)

हुवे वः सूनुं सहसो युवानमद्रोघवाच मतिभिर्यविष्ठम् ।
य इन्वति द्रविणानि प्रचेता विश्ववाराणि पुरुवारो अध्रुक् ॥१
त्वे वसूनि पुर्वणीक होतर्दोषा वस्तोरेरिरे यज्ञियासः ।
क्षामेव विश्वा भुवनानि यस्मिन् त्सं सौभगानि दधिरे पावके ॥२
त्वं विक्षु प्रदिवः सीद आसु क्रत्वा रथीरभवो वार्याणाम् ।
अत इनोषि विधते चिकित्वो व्यानुषग्जातवेदो वसूनि ॥३
यो नः सनुत्यो अभिदासदग्ने यो अन्तरो मित्रमहो वनुष्यात् ।
तमजरेभिर्वृषभिस्तव स्वैस्तपा तपिष्ठ तपसा तपस्वान् ॥४
यस्ते यज्ञेन समिधा य उक्थैरर्केभिः सूनो सहसो ददाशत् ।
स मर्त्येष्वमृत प्रचेता राया द्युम्नेन श्रवसा वि भाति ॥५
स तत् कृधीषितस्तूयमग्ने स्पृधो बाधस्व सहसा सहस्वान् ।
यच्छस्यसे द्युभिरक्तो वचोभिस्तज्जुषस्व जरितुर्घोषि मन्म ॥६
अश्याम तं काममग्ने तवोती अश्याम रयिं रयिवः सुवीरम् ।
अश्याम वाजमभि वाजयन्तो ऽश्याम द्युम्नमजराजरं ते ।७।७

हे अग्ने ! हम स्तोत्रों द्वारा तुम्हें बुलाते हैं । तुम बल के पुत्र, सतत युवा महान स्तोत्रों द्वारा स्तुत्य, मेधावी तथा द्रोह से शून्य हो । ऐसे गुण वाले अग्नि स्तुति करने वाले मनुष्योंको उनका इच्छित ऐश्वर्य देतेहैं ।१। हे अग्ने ! तुम बहुत ज्वालाओंसे युक्त तथा देवताओंके बुलाने वाले हो । यज्ञ करनेवाले यजमान दिनरात तुमको हविरन्न प्रदान करते रहते हैं । जैसे देवताओं ने सभी प्राणियों को पृथिवी पर स्थापित किया था, वैसे ही अग्निने धनोंको धारण कराया था ।२। हे अग्ने ! तुम अपने

सामर्थ्यमें श्रेष्ठ कामनाओंको प्राप्त करते हों और श्रेष्ठ सम्पत्तिको प्राप्त करने वालों में तुम्हीं प्रधान हो। हे मेधावी ! तुम अपने उपासकों को विभिन्न ऐश्वर्य निरन्तर देते रहो।३। हे अग्ने! जो छिपा रहकर हमारा नाश करना चाहताहै अथवा जो शत्रु हमारे भीतर घुसकर हमारानाश करने को इच्छा करता है, इन दोनों प्रकार के शत्रुओं को तुम अपने तेजसे भस्मकर डालो। तुम्हारा तेज अजर, वृष्टिका कारणरूप, सामर्थ्य से युक्तहै ।३। हे अग्ने ! जो यजमान यज्ञ-कर्म से तुम्हारी सेवा करताहै अथवा जो यजमान स्तवनीय स्तोत्र और हवियों द्वारा तुम्हारी सेवा करता है वह यजमान मनुष्यों में उत्तम ज्ञानी है। तथा श्रेष्ठ धन अन्न को प्राप्त करता हुआ सुशोभित होता है ।५। हे अग्ने ! तुम जिस कर्ममें नियुक्त हुए हो उसे शीघ्र सम्पन्न करो। तुम शक्तिशाली हो अतः दूसरों को वश में करने वाली शक्ति से शत्रुओं को नष्ट करो। यह स्मृतियोंसे तुम्हारी अर्चना करता है। तुम इस स्तोत्रको स्वीकार करो। अग्निदेव प्रकाशमान तेज से परिपूर्ण हैं ।६। हे अग्ने ! तुम्हारे आश्रय में हमको इच्छित फल लाभ हो। ऐश्वर्य के स्वामिन् ! हम सुन्दर सन्तान से पूर्ण ऐश्वर्य को प्राप्त करें। अन्न की कामना करते हुए हम तुम्हारे द्वारा दिये हुए अन्नको पावें। हे अग्ने ! तुम अजर हो। हम तुम्हारे अत्यन्त तेजस्वी व जरा रहित यश से यशस्वी बनें ।७। (७)

सूक्त ६

(ऋषि—भरद्वाजो बार्हस्पत्यः। देवता—अग्नि । छन्द—त्रिष्टुप्)

प्र नव्यसा सहसः सूनुमच्छा यज्ञेन गातुमव इच्छमानः।
वृश्चद्वनं कृष्णयामं रुशन्तं वीती होतारं दिव्यं जिगाति ॥१
स श्वितानस्तन्यतू रोचनस्था अजरेभिर्नानदद्भिर्यविष्ठः।
यः पावकः पुरुतमः पुरूणि पृथून्यग्निरनुयाति भर्वन् ॥२
वि ते विष्वग्वातजूतासो अग्ने भामासः शुचे शुचयश्चरन्ति।
तुविम्रक्षासो दिव्या नवग्वा वना वनन्ति धृषता रुजन्तः ॥३
ये ते शुक्रासः शुचयः शुचिष्मः क्षां वपन्ति विषितासो अश्वाः।

अध भ्रमस्त उर्विया भाति यातयमानो अधि सानु पृश्नेः ॥४
अध जिह्वा पापतीति प्र वृष्णो गोषुयुधो नाशनिः सृजाना ।
शूरस्येव प्रसितिः क्षातिरग्नेर्दुर्वर्तुर्भीमो दयते वनानि ॥५
आ भानुना पार्थिवानि ज्रयांसि महस्तोदस्य धृषता ततन्थ ।
स बाधस्वाप भया सहोभिः स्पृधो वनुष्यन् वनुषो नि जूर्व ॥६
स चित्र चित्रं चितयन्तमस्मे चित्रक्षत्र चित्रतमं वयोधाम् ।
चन्द्रं रयिं तुरुवीरं बृहन्तं चन्द्र चन्द्राभिर्गृणते युवस्व ।७।८

अन्न की कामना करने वाले यजमान स्तुति के पात्र एवं जल के आधार अग्नि के पास यज्ञ कर्मसे युक्तहोकर जाते हैं। वे अग्नि जंगलों को भस्म करने वाले उज्ज्वल कामना के योग्य एवं दिव्य होता स्वरूप हैं ।१। वे सबके पवित्र करने वाले एवं महान् हैं। उज्ज्वल वर्षा वाले, अन्तरिक्षसे व्याप्त जरारहित शब्दकारी हैं। वे मरुद्गणसे सुसङ्गत होते हैं। वे असंख्य कठोर काष्ठों को भक्षण करते हुए चलते हैं।२। हे अग्ने! तुम्हारी ज्वालायें वायु के योग से असंख्य काष्ठों को भस्म करती हुई सर्वत्र व्याप्त होतीहैं। प्रज्वलित अग्निमे उत्पन्न ज्वालायें अपनी गमनशील कांति से जंगलों को भस्मीभूत करती हैं ।३। हे तेजोमय अग्ने ! तुम्हारी जो प्रदीप्त ज्वालायें वनों को जलाती हैं, वे छोड़े हुए घोड़ोंके समान इधर-उधर जातीहैं। तुम्हारी गतिशील ज्वालायें पृथ्वीमें अद्भुत रूपसे क्रीड़ा करतीहुई विराजमान होती हैं ।४। वृष्टिके कारणभूत शक्ति की ज्वालायें बारम्बार उठती हैं,उसी प्रकार जैसे गौओं के लिए संग्राम करने वाले इन्द्रका वज्र बारम्बार उठताहै। वीर पुरुषोंके समान अग्नि की ज्वालाओं को कोई रोक नहीं सकता। वे अपने ! विकराल रूप से जंगलों को भस्म कर डालती हैं ।५। हे अग्ने ! तुम अपनी सशक्त ज्वालाओं द्वारा अपने ऐश्वर्य को सम्पूर्ण पृथ्वीपर फैलाते हो। तुम सब सङ्कटों को मिटाओ और अपने तेजके सामर्थ्यसे हमसे द्वेष करने वालों को वश में करते हुए शत्रुओं का नाश कर डालो ।६। हे अग्ने ! तुम अद्भुत तेज वाले हो। हम प्रसन्न करने वाले स्तोत्रोंसे तुम्हारी स्तुति

करते हैं । तुम अत्यन्त विचित्र रूप वाले, यशस्वी, अन्नों के देने वाले हो । हमको पुत्र पौत्रादि से युक्त महान ऐश्वर्य दो ।७। (८)

सूक्त ७

(ऋषि–भरद्वाजो बार्हस्पत्यः । देवता–वैश्वानरः । छन्द–त्रिष्टुप् जगती)

मूर्धानं दिवो अरतिं पृथिव्या वैश्वानरमृत आ जातमग्निम् ।
कविं सम्राजमतिथिं जनानामासन्ना पात्रं जनयन्त देवाः ॥१
नाभिं यज्ञानां सदनं रयीणां महामाहावमभि सं नवन्त ।
वैश्वानरं रथ्यमध्वराणां यज्ञस्य केतुं जनयन्त देवाः ॥२
त्वद् विप्रो जायते वाज्यग्ने त्वद् वीरासो अभिमातिषाहः ।
वैश्वानर त्वमस्मासु धेहि वसूनि राजन् त्स्पृहयाय्याणि ॥३
त्वां विश्वे अमृत जायमानं शिशुं न देवा अभि सं नवन्ते ।
तव क्रतुभिरमृतत्वमायन् वैश्वानर यत् पित्रोरदीदेः । ॥४
वैश्वानर तव तानि व्रतानि महान्यग्ने नकिरा दधर्ष ।
यज्जायमानः पित्रोरुपस्थे ऽविन्दः केतुं वयुनेष्वह्नाम् ॥५
वैश्वानरस्य विमितानि चक्षसा सानूनि दिवो अमृतस्य केतुना ।
तस्येदु विश्वा भुवनाधि मूर्धनि वया इव रुरुहुः सप्तः विस्रुहः॥६
वि यो रजांस्यमिमीत सुक्रतुर्वैश्वानरो वि दिवो रोचना कविः ।
परि यो विश्वा भुवनानि पप्रथे ऽदब्धो गोपा अमृतस्य रक्षिता॥७॥

वैश्वानर अग्नि आकाश के मूर्धा के समान पृथिवी पर गमन करने वाले, यज्ञादि श्रेष्ठ कर्मों के लिए उत्पन्न, ज्ञानी, भले प्रकार सुशोभित तथा यजमानों के लिये अतिथिके समान हैं, वे रक्षा साधनोंसे युक्त तथा देवताओं के मुख रूप हैं । उपासकगण उन्हीं अग्नि देवताको प्रकट करते हैं ।१। अग्नि की श्रद्धा सहित स्तुति करते हैं । यज्ञके द्रव्यों को वहन करने वाले तथा यज्ञके ध्वजरूप वैश्वानर अग्निको देवताओंने उत्पन्न किया है ।२। हे अग्निदेव ! हविरन्न से सम्पन्न यजमान तुमसे

ही ज्ञान प्राप्त करता है । वीर पुरुष तुम्हारी कृपा से ही शत्रुओं को वशीभूत करने में समर्थ होते हैं । हे प्रकाशवान अग्ने ! तुम हमको अभीष्ट धन दो ।३। हे अमरत्व गुण युक्त अग्ने ! तुम दो अरणियों से पुत्र के समान प्रकट हुए हो । सभी देवता तुम्हारी स्तुति करते हैं । हे वैश्वानर अग्ने! जब तुम आश्रय देने वाले आकाश और पृथिवीके मध्य प्रज्वलित होते हो, तब यजमान तुम्हारे यज्ञीय कर्म द्वारा अविनाशी पद प्राप्त करती हैं ।४। हे वैश्वानर अग्ने ! तुम्हारे प्रख्यात कर्मों में कोई विघ्न नहीं डाल सकता । माता-पिता के समान आकाश पृथिवीकी आश्रित अरणियों में उत्पन्न होकर तुमने दिनों के दिखाने वाले सूर्य की स्थापना की ।५। वैश्वानर अग्नि के तेज से दिव्यलोक के उच्च स्थान बने हैं । वैश्वानर के मूर्धा मैं रूप मेघ से जलराशि चलती है ओर उससे सात नदियाँ प्रवाहित होती हैं ।६।पवित्र वकने वाले जिस वैश्वानर ने जलों की रचना की थी तथा तेज से सम्पन्न होकर जिन्होंने आकाश में चमकते हुए नक्षत्रोंको बनाया था और जिन्होंने सभी प्राणियों के लिये चारों दिशायें प्राप्त की थीं वे अग्नि जलोंके रक्षक तथा किसी के द्वारा न जीते जाने योग्य हैं ।७। (६)

सूक्त ८

(ऋषि–भारद्वजो बार्हस्पत्यः । देवता–वैश्वानरः । छन्द–जगती त्रिष्टुप्)

वृक्षस्य वृष्णो अरुषस्य नू सहः प्र नु वोचं विदथा जातवेदसः ।
वैश्वानराय मतिर्नव्यसी शुचिः सोम इव पवते चारुरग्नये ॥१
स जायमानः परमे व्योमनि व्रतान्यग्निर्व्रतपा अरक्षत ।
व्यन्तरिक्षममिमीत सुक्रतुर्वैनरो महिना नाकमस्पृशत् ॥२
व्यस्तभ्नाद् रोदसी मित्रो अद्भुतो ऽन्तर्वादकृणोज्ज्योतिषा तमः
वि चर्मणीव धिषणे अवर्तयद् वैश्वानरो विश्वमधत्त वृष्ण्यम् ।।३
अपामुपस्थे महिषा अगृभ्णत विशो राजानमुप तस्थुर्ऋग्मियम् ।
आ दूतोअग्निमभरद् विवस्वतो वैश्वानरं मातरिश्वा परावतः४

युगेयुगे विदथ्यं गृणद्भ्यो ऽग्ने रयिं यशसं धेहि नव्यसीम्।
पव्येव राजन्नघशंसमजर नीचा नि वृश्च वनिनं न तेजसा ॥५
अस्माकमग्ने मघवत्सु धारयाऽनामि क्षत्रमजरं सुवीर्यम्।
वयं जयेम शतिनं सहस्रिण वंश्वानर वाजमग्ने तवोतिभिः ॥६
अदब्धेभिस्तव गोपाभिरिष्टे ऽस्माकं पाहि त्रिषधस्थ सूरीन्।
रक्षा च नो ददुषां शर्धो अग्ने वैश्वानर प्र च तारीः स्तवानः॥७॥१०

जलों के वर्षक, जन्म से ही मेधावी, प्रकाशमान, सर्वत्र व्याप्त अग्नि के तेज की हम इस यज्ञ में हार्दिक स्तुति करते हैं। उनके समक्ष पवित्र, अभिनव तथा सुन्दर स्तोत्र सोमरस के समान उपस्थित होता है ।१। सत्य कर्मों की रक्षा करने वाले वैश्वानर अग्नि श्रेष्ठ आकाश में प्रकट होकर वैदिक और लौकिक दोनों प्रकार के कर्मों का पालन करते हैं। वे ही अन्तरिक्ष की सीमा निर्धारित करते हैं। श्रेष्ठ कर्मों वाले वैश्वानर अग्नि अपने तेज से आकाश तक पहुँचते हैं। ।२। मित्र के समान हितकारी एवं अद्भुत रूप वाले वैश्वानर अग्नि ने आकाश और पृथिवी को अपने-अपने स्थान पर टिकाकर स्थिर किया। उन्होंने अपने तेज से अन्धकार को छिपाया और आश्रयभूत आकाश पृथिवी को पशुओंके चमड़े के समान बढ़ाया। वे अग्नि समस्त पराक्रम के धारण करने वाले हैं ।३। महान् कर्म वाले मरुद्गण ने अन्तरिक्ष में अग्नि को स्थापित किया था और मनुष्यों ने उनको स्वामी बनाकर उनकी पूजा की। देवताओं के दूत रूप में मातरिश्वा इस वैश्वानर अग्नि को सूर्य मण्डल से इस भू लोक पर ले आये ।४। हे अग्ने! तुम यज्ञ के योग्य हो। जो साधक तुम्हारे लिए अभिनव स्तोत्रों को कहते हैं, उन्हें यशस्वी सन्तान तथा सुन्दर ऐश्वर्य देते हो। हे अग्ने! तुम अजर तथा उच्च स्थान पर प्रतिष्ठित हो। अपने तेज से शत्रु को उसी प्रकार गिरा दो जैसे वज्र वृक्ष को गिरा देता है ।५। हे अग्ने! हम

हविरन्न से सम्पन्न हैं। तुम हमको अक्षुण्ण धन और ऐश्वर्य तथा जरावस्था से रहित एवं शत्रु को भगा देने वाला श्रेष्ठ बल-वीर्य धारण कराओ। हे वैश्वानर अग्ने ! हम तुम्हारे रक्षा साधनों के भरोसे सैंकड़ों और हजारों संख्या वाले ऐश्वर्यको जीत लें ।६। तीनों लोकों के स्वामी अग्निदेव ! तुम किसी के द्वारा भी नष्ट न किये जाने योग्य तथा रक्षा करने वाले बलसे स्तुति करने वालोंकी रक्षा करो। हे वैश्वानर अग्नि! तुम हवि देने वाले यजमानों के बल-वीर्य की रक्षा करो हम तुम्हारी स्तुति करते हैं, तुम हमको दुःखों से पार करो ।७। (१०)

सूक्त ९

(ऋषि–भारद्वाजो बार्हस्पत्यः । देवता–वैश्वानरः । छन्द–त्रिष्टुप्)

अहश्च कृष्णमहरर्जुनं च वि वर्तते रजसी वेद्याभिः ।
वैश्वानरो जायमानो न राजा ऽवातिरज्ज्योतिषाग्निस्तमांसि ॥१
नाहं तन्तुं न वि जानाम्योतुं न यं वयन्ति समरेऽतमानाः ।
कस्य स्वित् पुत्र इह वक्त्वानि परो वदात्यवरेण पित्रा ॥२
स इत् तन्तुं स वि जानात्योतुं स वक्त्वान्यृतुथा वदाति ।
य ईं चिकेतदमृतस्य गोपा अवश्चरन् परो अन्येन पश्यन् ॥३
अयं होता प्रथमः पश्यतेममिदं ज्योतिरमृतं मर्त्येषु ।
अयं स जज्ञे ध्रुव आ निषत्तो ऽमर्त्यस्तन्वा वर्धमानः ॥४
ध्रुवं ज्योतिर्निहितं दृशये कं मनो जविष्ठं पतयत्स्वन्तः ।
विश्वे देवाः समनसः सकेता एकं क्रतुमभि वि यन्ति साधु ॥५
वि मे कर्णा पतयतो वि चक्षुर्वीदं ज्योतिर्हृदय आहितं यत् ।
वि मे मनश्चरति दूरआधीः किं स्विद् वक्ष्यामि किमु नू मनिष्ये६
विश्वे देवा अनमस्यन् भियानास्त्वामग्ने तमसि तस्थिवांसम् ।
वैश्वानरोऽवतूतये नो ऽमर्त्योऽवतूतये नः ।७।११

काले रङ्ग की रात और उज्ज्वल वर्ण वाला दिन संसार को

रखते हुए नियमित रूप से बदलते रहते हैं। वैश्वानर अग्नि राजा के समान दैदीप्यमान होते हुए अन्धेरे को नष्ट करते हैं।१। मैं ताना बाना कुछ नहीं जानता तथा प्रयत्न द्वारा जो वस्त्र बुना जाता है, उसके सम्बन्ध में भी कुछ ज्ञान नहीं है। इस लोक में निवास करने वाले पिता के उपदेश को सुनने वाला पुत्र अन्य लोक की वाणीमें कैसे उपदेश कर सकता है ? ।२। ताना या बानाके सम्बन्ध में केवल वैश्वानर ही जानते हैं। वे समय-२ पर उपदेश देते हैं। जलकी रक्षाकरने वाले तथा पृथ्वी पर गमन करने वाले अग्नि अन्तरिक्ष आदित्य के रूपमें चमकते हैं और संसार को प्रकाश देते हैं।३। हे विज्ञजनो ! वह वैश्वानर अग्नि प्रथम होता हैं,इनसे साक्षात् किया करो। वह मरणधर्मा मनुष्योंके मध्य रहने वाली अमरज्योति के समान हैं। वह कभीभी न मरने वाले नित्य होते हुए शरीर से सदा बढ़ते हैं।४। मन से भी अधिक वेग वाले वैश्वानर अग्नि की स्थिर ज्योति सुख रूप मार्गों को दिखाने के लिए प्राणियों के भीतर निवास करती हैं। सभी देवता समान मति वाले होकर श्रद्धा सहित मुख्य कर्मों के करने वाले वैश्वानर के सम्मुख आते हैं।५। हे अग्ने ! तुम्हारे गुणको सुनने के लिए हमारे दोनों कान और तुम्हारे दर्शन करने के लिए हमारे नेत्र उपस्थित होते हैं। हमारे अन्तःकरण में जो ज्योति निबास करती है, वह भी तुम्हारे रूप को जानने की इच्छा करती है। हमारा मन भी दूरस्थ ज्योति का ध्यान करता हुआ विचार मग्न रहता है फिर हम वैश्वानर के रूपको वाणी द्वारा कैसे कहें ? ।६। हे वैश्वानर अग्ने ! समस्त देवता तुम्हें प्रणाम करते हैं। तुम अन्धकार में रखे दीपक के समान चमकने वाले हो। अपने रक्षा-साधन से हमारी रक्षा करो। हम तुम्हारी शरणमें आते हैं। वे अमरत्व गुण वाले अग्नि हमारी रक्षा करने वाले हों।७।   (११)

सूक्त १०

(ऋषि—भारद्वाजो बार्हस्पत्यः। देवता—अग्निः। छन्द—त्रिष्टुप् द्विपदा, विराट्)

पुरो वो मन्द्रं दिव्यं सुवृक्तिं प्रयति यज्ञे अग्निमध्वरे दधिध्वम्।
पुर उक्थेभिः स हि नो विभावा स्वध्वरा करति जातवेदाः ।।१
तमु द्युमः पुर्वणीक होतरग्ने अग्निभिर्मनुष इधानः ।
स्तोमं यमस्मै ममतेव शूषं घृतं न शुचि मतयः पवन्ते ।।२
पीपाय स श्रवसा मर्त्येषु यो अग्नये ददाश विप्र उक्थैः ।
चित्राभिस्तमूतिभिश्चित्रशोचिर्व्रजस्य साता गोमतो दधाति ।।३
आ यः पप्रौ जायमान उर्वी दूरेदृशा भासा कृष्णाध्वा ।
अध बहु चित् तम ऊर्म्यायास्तिरः शोचिषा ददृशे पावकः ।।४
नू नश्चित्रं पुरुवाजाभिरूती अग्ने रयिं मघवद्भ्यश्च धेहि ।
ये राधसा श्रवसा चात्यन्यान् त्सुवीर्येभिश्चाभि सन्ति जनान् ।।५
इमं यज्ञं चनो धा अग्न उशन् यं त आसानो जुहुते हविष्मान् ।
भरद्वाजेषु दधिषे सुवृक्तिमवीर्वाजस्य गध्यस्य सातौ ।।६
वि द्वेषांसीनुहि वर्धयेलां मदेम शतहिमाः सुवीराः ।७।१२

हे विज्ञजनों ! प्रयत्न से साध्य इस यज्ञ में विघ्नादि से बचे रहने के लिए सब प्रकार के दोषों से रहित अग्नि की स्तोत्रों द्वारा सम्मुख स्थापना करो, क्योंकि वे सभी उत्पन्न पदार्थों के ज्ञाता, यज्ञ में हमारे लिए कल्याणकारी कार्योंका सम्पादन करते हैं ।१। हे अमरूप ज्वालाओं से प्रकाशमान अग्ने ! तुम देवताओं को आहूत करने में समर्थ हो । तुम अपने अंश रूप अग्नियों सहित बढ़ते हुए, स्तुति करने वालों के स्तोत्र को सुनो । ममता से समान यह स्तुति करने वाले यजमान अग्नि के निमित्त सुन्दर स्तोत्र को घृत के समान निवेदन करते हैं ।२। अग्नि में जो मनुष्य स्तोत्र के सहित हव्य देता है, वह अग्नि की कृपा से सभी मनुष्यों में समृद्धिशाली हो जाता है। वे अग्निदेव अद्भुत ज्वालाओं से युक्त एवं अद्भुत रक्षा साधनों सहित उस स्तोता को गौशाला से युक्त गौएं प्रदान करते हैं ।३। अग्नि ने उत्पन्न होकर दूर से ही दिखाई देने वाले अपने तेज से आकाश पृथिवी को परिपूर्ण किया । वह अग्नि रात्रि के घोर अन्धेरे को अपने प्रकाश से दूर करते हुए दिखाई देते हैं

।४। हे अग्ने ! हम हविरन्न वाले हैं। तुम शीघ्र हमको अपने रक्षा-साधनों से युक्त अद्भुत धन दो। जो पुत्र अन्य मनुष्यों को अपने धन और पराक्रम से परास्त करे वह हमें प्राप्त हो।५। अग्ने ! जो हवियों से सम्पन्न मनुष्य तुम्हारा यज्ञ करता है तुम उसकी हविकी कामना करते हुए यज्ञ के साधक रूप उस अन्न को ग्रहण करो। हे अग्ने ! उन पर पूर्ण कृपा करो, जिससे वे यजमान विभिन्न अन्नों को प्राप्त कर सकें।६। अग्ने ! द्वेष करने वाले शत्रुओं को दूर करो। तुम हमारे धन को बढ़ाओ। सुन्दर सन्तानों से साधना सम्पन्न सौ हेमन्तों तक सुखी रहें।७। (१२)

सूक्त ११

(ऋषि—भारद्वाजो बार्हस्पत्यः देवता—अग्निः। छन्द—त्रिष्टुप्)

यजस्व होतरिषितो यजीयानग्ने बाधो मरुतां न प्रयुक्ति।
आ नो मित्रावरुणा नासत्या द्यावा होत्राय पृथिवी ववृत्याः ॥१
त्व होता मन्द्रतमो नो अध्रुगन्तर्देवो विदथा मर्त्येषु।
पावकया जुह्वा वह्निरासाऽग्ने यजस्व तन्वं तव स्वाम् ॥२
धन्या चिद्धि त्वे धिषणा वष्टि प्र देवाञ्जन्म गृणते यजध्यै।
वेपिष्ठो अङ्गिरसां यद्ध विप्रो मधु च्छन्दो भनति रेभ इष्टौ ॥३
अदिद्युतत् स्वपाको विभावाऽग्ने यजस्व रोदसी उरूची।
आयुं न यं नमसा रातहव्या अञ्जन्ति सुप्रयसं पञ्च जनाः ॥४
वृञ्जे ह यन्नमसा बर्हिरग्नावयामि स्रुग्घृतवती सुवृक्तिः।
अभ्यक्षि सद्म सदने पृथिव्या अश्रायि यज्ञः सूर्ये न चक्षुः ॥५
दशस्या नः पुर्वणीक होतर्देवेभिरग्ने अग्निभिरिधानः।
रायः सूनो सहसो वावसाना अति स्रसेम वृजनं नांहः ।६।१३

हे होता रूप अग्ने ! तुम यज्ञ करने वालोंमें महान् हो। तुम हमारे द्वारा पूजित होकर मरुतों को, मनुष्यों को कुमार्ग से रोकने और उत्तम कर्म रूप मार्ग में लगाने वाला बल प्राप्त कराओ। तुम मित्र वरुण तथा असत्य कार्य न करने वाले दोनों देवों और पृथिवी को

हमारे यज्ञ कार्य में लगाओ ।१। हे अग्ने, तुम अत्यन्त पूजनीय हो । तुम हमसे द्वेष नहीं करते । तुम सदा हमारे प्रति दानशील रहते हो । हे अग्ने, तुम हवियों के वाहक हो । तुम्हीं पवित्र करने वाले हो तथा देवताओं की मुख रूप ज्वालाओं द्वारा अपने देह को प्राप्त करने वाले हो ।२। हे अग्ने ! धन कामना करने वाली स्तुति तुम्हें चाहती है । तुम्हारे प्रज्वलित होने पर ही इन्द्रादि देवताओं का यज्ञ कराने में यजमान लोग सफलता प्राप्त करते हैं । सब ऋषियों में अङ्गिरा ऋषि अत्यन्त स्तुति करते हैं और विद्वान् भरद्वाज प्रसन्नताप्रद स्तोत्रोंका पाठ करते हैं ।३। मेधावी एवं तेजस्वी अग्नि भले प्रकार शोभायमान होते हैं । हे अग्ने ! तुम अत्यन्त विस्तृत आकाश पृथ्वी की हवियों से परिचर्या करो । तुम सुन्दर हविरन्नसे युक्तहो । हविदाता ऋत्विक् यजमान के समान ही हव्य द्वारा अग्नि को सन्तुष्ट करते हैं ।४। अग्नि के पास जब हवियुक्त कुश लाया जाता है और शुद्ध घृत से युक्त स्रुक् कुश पर रखा जाता है, तब अग्नि के लिए पृथिवी पर वेदी बनाई जाती है । जैसे सूर्य अपने तेज से स्थित होते हैं, वैसे ही यजमान का यज्ञ अग्नि के आश्रित होता है ।५। हे देवताओं को बुलाने वाले असंख्य ज्वालाओं से युक्त अग्निदेव ! तुम तेजस्वी हो । तुम अग्नियों सहित अपने तेज को बढ़ाते हुए हमको धन दो । हम तुम्हें हव्य प्रदान करते हैं । हम इस शत्रु रूपी पाप के बन्धन से छूट जाँय ।६। (१३)

सूक्त १२

(ऋषि—भारद्वाजो बार्हस्पत्यः । देवता—अग्निः । छन्द—त्रिष्टुप्)

मध्ये होता दुरोणे बर्हिषो राळग्निस्तोदस्य रोदसी यजध्यै ।
अयं स सूनुः सहस ऋतावा दूरात् सूर्यो न शोचिषा ततान ॥१
आ यस्मिन् त्वे स्वपाके यजत्र यक्षद् राजन् त्सर्वतातेव नु द्यौः ।
त्रिषधस्थस्ततरुषो न जंहो हव्या मघानि मानुषा यजध्यै ॥२
तेजिष्ठा यस्यारतिर्वनेराट् तोदो अध्वन् न वृधसानो अद्यौत् ।
अद्रोघो न द्रविता चेतति त्मन्नमर्त्योऽवर्त्र ओषधीषु ॥३

सास्माकेभिरेतरी न शूषैरग्निः ष्टवे दम आ जातवेदाः ।
द्र्वन्नो वन्वन् क्रत्वा नार्वोस्रः पितेव जारयायि यज्ञैः ॥४
अध स्मास्य पनयन्ति भासो वृथा यत् तक्षदनुयाति पृथ्वीम् ।
सद्यो यः स्पन्द्रो विषितो धवीयानृणो न तायुरति धन्वा राट्॥५
स त्वं नो अर्वन् निदाया विश्वेभिरग्ने अग्निभिरिधानः ।
वेषि रायो वि यासि दुच्छुना मदेम शतहिमाः सुवीराः ॥६।१४

देवताओं का आह्वान करने वाले एवं यज्ञ के स्वामी अग्निदेव आकाश पृथिवी को पूर्ण करने के लिए यजमानों के घर में स्थापित होते हैं। वे यज्ञ कर्म से युक्त बल के पुत्र अग्नि अपने प्रकाश द्वारा सूर्य के समान इस अखिल विश्व को दूर से ही प्रकाशित करते हैं।१। हे यज्ञशील, तेजोमय अग्निदेव ! तुम मेधावी हो। तुम तीनों लोकों में व्याप्त होकर मनुष्यों द्वारा दिये गये उत्तम हव्य पदार्थ को देवताओं के पास पहुँचाने में सूर्य के समान तेजस्वी होओ। हे अग्ने ! सभी यजमान श्रद्धा सहित बहुत हव्य भेंट करते हैं।२। जिन अग्निदेवता की सर्वत्र व्याप्त होने वाली एवं अत्यन्त दीप्तिमती ज्वालायें जङ्गल में प्रज्वलित होती है, वे समृद्धि को प्राप्त हुए अग्नि सूर्य के समान अन्तरिक्ष मार्ग में व्याप्त होते हैं। वे सबका कल्याण करने वाले कभी भी क्षीण न होने वाली वनस्पतियों में वायु के समान वेग से जाते तथा अपने प्रकाश से सम्पूर्ण संसार को प्रकाशित करते हैं।३। ज्ञानवान यज्ञस्थान में पूजे जाते हैं यजमान उस जङ्गल में रहकर वनस्पतियों के भक्षण करने वाले बछड़ों के जनक बैल के समान शीघ्र कर्म करने वाले अग्नि की स्तुति करते हैं।४। अकस्मात् जब अग्नि जङ्गलों को भस्म कर भूमि पर फैल जाते हैं, तब स्तुति करने वाले मनुष्य इस लोक में अग्नि की ज्वालाओं की स्तुति करते हैं। अलक्षित भाव से पृथिवी को भोगने वाले अग्नि तेजस्वी होकर विराजते हैं।५। हे शत्रुओं का नाश करने वाले अग्नि देव ! तुम अपनी ज्वालाओं सहित प्रकट होकर हमको निन्दाओं से बचाओ। तुम हमको ऐश्वर्य दो, दुःख देने

वाली शत्रु सेनाओं का नाश करो । हम उत्तम वीरों से युक्त होकर सौ हेमन्त ऋतुओं तक सुखपूर्वक अपना जीवन व्यतीत करें ।६।　(१४)

सूक्त १३

(ऋषि—भारद्वाजो बार्हस्पत्यः । देवता—अग्निः । छन्द—त्रिष्टुप्)

त्वद् विश्वा सुभग सौभगान्यग्ने वि यन्ति वनिनो न वयाः ।
श्रुष्टी रयिर्वाजो वृत्रतूर्ये दिवो वृष्टिरीढ्यो रीतिरपाम् ॥१
त्वं भगो न आ हि रत्नमिषे परिज्मेव क्षयसि दस्मवर्चाः ।
अग्ने मित्रो न बृहत ऋतस्याऽसि क्षत्ता वामस्य देव भूरेः ॥२
स सत्पतिः शवसा हन्ति वृत्रमग्ने विप्रो वि पणेर्भर्ति वाजम् ।
यं त्वं प्रचेत ऋतजात राया सजोषा नप्त्रापां हिनोषि ॥३
यस्ते सूनो सहसो गीर्भिरुक्थैर्यज्ञैर्मर्तो निशितिं वेद्यानट् ।
विश्वं स देव प्रति वारमग्ने धत्ते धान्यं पत्यते वसव्यैः ॥४
ता नृभ्य आ सौश्रवसा सुवीराऽग्ने सूनो सहसः पुष्यसे धाः ।
कृणोषि यच्छवसा भूरि पश्वो वयो वृकायारये जसुरये ॥५
वद्मा सूनो सहसो नो विहाया अग्ने तोकं तनयं वाजि नो दाः ।
विश्वाभिर्गीर्भिरभि पूर्तिमश्यां मदेम शतहिमाः सुवीराः ।६।१५

हे सुन्दर ऐश्वर्यसे युक्त अग्निदेव ! इन विभिन्न प्रकार के ऐश्वर्यों को तुमने ही उत्पन्न किया है । वृक्ष से जैसे विभिन्न प्रकार वाली शाखायें उपजती हैं, वैसे ही तुमसे पशु उत्पन्न होते हैं । रण स्थल में शत्रुओं पर विजय पाने वाला बल भी तुम्हारे द्वाराही उत्पन्न हुआ है । अन्तरिक्ष से होने वाली वर्षा के उत्पत्तिकर्त्ता भी तुम ही हो, इसलिये तुम सभी के लिये पूजनीय हो ।१। हे अग्ने ! तुम उपासना के योग्य हो, हमको सुन्दर धन दो । तुम्हारे तेज देखने योग्य है । तुम सर्वत्र व्याप्त वायु के समान सर्वत्र विद्यमान हो । हे तेजस्विन् ! तुम मित्र के समान प्रचुर ज्ञान देने वाले होओ तथा उपभोग के योग्य सुन्दर ऐश्वर्य को प्राप्त कराओ ।२। हे उत्तम ज्ञान से युक्त यज्ञ के लिये प्रकट हुए अग्ने ! तुम जलधाराओं को व्याप्त करने वाले विद्युत रूप अग्नि के साथ

मिलकर जिस मनुष्य को धन की प्रेरणा देते हो, वह सज्जनों का पालक मेधावी मनुष्य तुम्हारे बल से ही शत्रुओं को नष्ट करता है, और पणि के बल को घटाता है ।३। हे बल के पुत्र एवं तेजोमय अग्ने ! जो मनुष्य उपासना, यज्ञ-कर्म एवं स्तुतियों से तुम्हारे तीक्ष्ण तेज को आकर्षित कर लेता है वह हर प्रकार समृद्ध होता हुआ अन्न आदि लाभ करता है तथा ऐश्वर्य से युक्त होता है ।४। बल के पुत्र अग्ने ! तुम हमारा पालन करने के लिए श्रेष्ठ पुत्रों के सहित सुन्दर अन्न दो । जो पशु आदिसे उत्पन्न दही आदि खाद्य तुम हमारे विरोधियोंसे लाते हो, वह खाद्य हम को प्रचुर परिमाण में दो ।५। हे बल के पुत्र अग्नि देव ! तुम पराक्रमी हो । हमको उपदेश देने वाले होओ । हमें अन्न सहित सन्तान दो । हम स्तुतियाँ करके अपने अभीष्ट को पूर्णकर पावें । हम सुन्दर सन्तानों सहित सौ हेमन्तों तक उपभोग के योग्य सुख पाते हुए जीवें ।६। (१५)

सूक्त १४

(ऋषि—भारद्वाजो बार्हस्पत्यः । देवता-अग्निः । छन्द—अनुष्टुप्, शक्वरी)

अग्ना यो मर्त्यो दुवो भियं जुजोष धीतिभिः ।
भसन्नु ष प्र पूर्व्य इषं वुरीतावसे ।।१
अग्निरिद्धि प्रचेता अग्निर्वेधस्तम ऋषिः ।
अग्निं होतारमीलते यज्ञेषु मनुषो विशः ।।२
नाना ह्यग्नेऽवसे स्पर्धन्ते रायो अर्यः ।
तूर्वन्तो दस्युमायवो व्रतैः सीक्षन्तो अव्रतम् ।।३
अग्निरप्सामृतीषहं वीरं ददाति सत्पतिम् ।
यस्य त्रसन्ति शवसः संचक्षि शत्रवो भिया ।।४
अग्निर्हि विद्मना निदो देवो मर्तमुरुष्यति ।
सहावा यस्यावृतो रयिर्वाजेष्ववृतः ।।५
अच्छा नो मित्रमहो देव देवानग्ने वोचः सुमतिं रोदस्योः ।

वीहि स्वस्ति सुक्षितिं दिवो नॄन् द्विषो अंहांसि दुरिता तरेम ता तरेम तवावसा तरेम ।६।१६

जो साधक यज्ञादि कर्म करता हुआ स्तोत्र द्वारा अग्नि की सेवा करता है, वह मनुष्यों में प्रमुख एवं तेजस्वी होता है तथा अपने पुत्र आदि का पालन करने के लिए वह शत्रुओं के पास से वहुत अन्न प्राप्त करता है ।१। एक मात्र अग्नि ही सर्वोत्कृष्ट ज्ञानी हैं, उनके समान अन्य कोई भी नहीं है । वे यज्ञ-कर्म का निर्वाह करने वाले तथा सर्व-द्रष्टा हैं । यजमानों के पुत्रादि अग्नि को यज्ञ में देवताओं का आह्वान करने वाले मानकर स्तुति करते हैं ।२। हे अग्ने ! शत्रुओं का धन उनके पास से हटकर तुम्हारी स्तुति करने वालों की रक्षा करता है । शत्रुओं को जीतने वाले तुम्हारे उपासक तुम्हारा यज्ञ करते हुए यज्ञ न करने वाली को वश में करने की कामना करते हैं ।३। स्तुति करने वालों को अग्नि उत्तम कर्म वाला शत्रु को जीतने वाला तथा श्रेष्ठ कार्यों की रक्षा रहने वाला पुत्र देते हैं, जिसके देखने से शत्रु उससे डरकर काँपने लगते हैं ।४। अग्नि ही अपने ज्ञान के बल से तेजस्वी होकर निन्दा करने वालों को वशीभूत करते हुए मनुष्य की रक्षा करते है । वह स्वयं तथा उनका वरणीय वल युद्ध काल में किसी पर अप्रकट नहीं रहता ।५। हे सुन्दर तेज वाले दानशील आकाश और पृथिवी में व्याप्त अग्ने ! तुम हमारी स्तुतियों को देवताओं से कहो । हम स्तुति करने वालों को सुन्दर निवास प्रद सुख लाभ कराओ । हम शत्रुओं, पापों तथा कष्टों से रहित रहें । हे अग्ने ! हम तुम्हारे रक्षा साधनों से पार हो जाँय । । (१६)

सूक्त १५

(ऋषि—भारद्वाजो बार्हस्पत्यः । देवता—अग्निः । छन्द—त्रिष्टुप्, शक्वरी, जगती, अतिशक्वरी, बृहती, अनुष्टुप्,)

इममू षु वो अतिथिमुषर्बुधं विश्वासां विशां पतिमृञ्जसे गिरा । वेतीद् दिवो जनुषा कच्चिदा शुचिर्ज्योक् चिदत्ति गर्भो यदच्युतम्१
मित्रं न यं सुधितं भृगवो दधुर्वनस्पतावीड्यमूर्ध्वशोचिषम् ।

स त्वं सुप्रीतो वीतहव्ये अद्‌भुत प्रशस्तिभिर्महयसे दिवेदिवे ॥२
स त्वं दक्षस्यावृको वृधो भूरर्यः परस्यान्तरस्य तरुषः ।
रायः सूनो सहसो मर्त्येष्वा छर्दिर्यच्छ वीतहव्याय सप्रथो
भरद्वाजाय सप्रथः ॥३
द्युतानं वो अतिथिं स्वर्णरमग्निं होतारं मनुषः स्वध्वरम् ।
विप्रं न द्युक्षवचसं सुवृक्तिभिर्हव्यवाहमरतिं देवमृञ्जसे ॥४
पावकया यश्चितयन्त्या कृपा क्षामन् रुरुच उषसो न भानुना ।
तूर्वन् न यामन्नेतशस्य नू रण आ यो घृणे न ततृषाणो अजरः
।५।१७

हे वीतहव्य, हे विज्ञ ! उषाकाल में चैतन्य होने वाले, लोकों के पालक स्वभावसे ही निर्मल, अतिथिके समान पूज्य अग्निकी सेवाकरो । वे अग्निदेव दिव्यलोक से प्रकट होते हुए हविरन्नका सेवन करते हैं ।१। हे अग्ने ! तुम विचित्र हो तुम अरणियों में व्याप्त, स्तुतियों के वहन करने वाले और ऊपर को उठती हुई ज्वालाओं से युक्त हो । तुम को भृगुवंशीय ऋषिजन घर में मित्र के समान रखते हैं । वीतहव्य नित्य-प्रति अपने श्रेष्ठ स्तोत्रसे तुम्हारी स्तुति करते हैं । हे अग्ने ! तुम उन ऋषियों पर कृपा करो ।२। हे अग्ने ! यज्ञादि कर्मों में चतुर व्यक्ति को सम्पन्न करते हुए दूर के या पास के शत्रु से उसकी रक्षा करते हो । हे अग्ने ! तुम अत्यन्त महान हो । मनुष्यों में श्रेष्ठ भारद्वाज वंशीय को ऐश्वर्ययुक्त घर लाभ कराओ ।३। हे वीतहव्य ! तुम सुन्दर स्तुति से हव्यों की वहन करने वाले तेजस्वी, स्वर्ग प्राप्त करने वाले, अतिथि के समान पूजनीय, देवताओं का आह्वान करने में समर्थ, यज्ञ कार्य का सम्पादन करने वाले, ज्ञानी एवं ओजमयी वाणी से युक्त अग्नि देवता की स्तुति करो ।४। उषा जैसे प्रकाश से ही अच्छी लगती हैं, वैसे ही पृथिवी को पवित्र करने वाले और चैतन्य करने वाले अग्नि अपने तेज से सुशोभित होते हैं । जो एतश ऋषि की रक्षा के लिए रणक्षेत्र में शत्रु का नाश करने वाले वीर के समान शीघ्र ही चैतन्य हुए, जो सब

पदार्थों के भक्षण करने में समर्थ तथा कभी क्षीण न होने वाले हैं, हे वीतहव्य ! इन अग्नि की परिचर्या करो ।।। (१७)

अग्निमग्निं वः समिधा दुवस्यत प्रियंप्रियं वो अतिथिं गृणीषणि।
उप वो गीर्भिरमृतं विवासत देवो देवेषु वनते हि वार्यं
देवो देवेषु वनते हि नो दुवः ।।६
समिद्धमग्निं समिधा गिरा गृणे शुचिं पावकं पुरो अध्वरे ध्रुवम्।
विप्रं होतारं पुरुवारमद्रुहं कविं सुम्नैरीमहे जातवेदसम् ।।७
त्वां दूतमग्ने अमृतं युगेयुगे हव्यवाहं दधिरे पायुमीड्यम् ।
देवासश्च मर्तासश्च जागृविं विभुं विश्पतिं नमसा नि षेदिरे ।।८
विभूषन्नग्न उभयाँ अनु व्रता दूतो देवानां रजसी समीयसे ।
यत् ते धीतिं सुमतिमावृणीमहेऽध स्मा नस्त्रिवरूथः शिवो भव।।
तं सुप्रतीकं सुदृशं स्वाञ्चमविद्वांसो विदुष्टरं सपेम ।
स यक्षद् विश्वा वयुनानि विद्वान् प्र हव्यमग्निरमृतेषु वोचत् ।
।१०।१८

हे स्तुति करने वालो ! अदिति के समान आदरणीय एवं अत्यन्त प्रीतिदायक अग्नि की समिधा द्वारा परिचर्या करो । वे अग्नि सभी देवताओं में दानशील स्वभाव के हैं और समिधाओं के ग्रहण करने वाले हैं । वे हमारी पूजा को स्वीकार करते हैं । अतः इन अविनाशी अग्नि के समक्ष स्तोत्रों से स्तुतियाँ करो ।६। समिधाओं से प्रज्वलित हुए अग्नि की हम स्तोत्र से पूजा करते हैं । वह स्वयं पवित्र करने वाले हैं । हम उन दृढ़ विचार वाले अग्नि को श्रेष्ठ स्थान में प्रतिष्ठित करते हैं । हम मेधावी देवताओं के आह्वाक, सबके द्वारा वरण करने योग्य, उत्तम स्वभाव वाले एवं सर्वदर्शी अग्निकी स्तोत्रों द्वारा उपासना करतेहैं ।७। हे अग्ने देवता और मनुष्य दोनोंही तुम्हें दूत नियुक्त करते हैं । तुम अविनाशी रक्षक,हव्यवाहक एवं स्तुतियोंके पात्रहो । वे दोनों ही प्रजा पालक, सर्वव्यापक चैतन्य रहने वाले अग्निदेव को नमस्कार और हव्य सहित प्रतिष्ठापित करतेहैं ।८। हे अग्ने ! देवता और मनुष्यों को विशेष प्रकार से अनुग्रहीत करते हुए तुम देवताओं के दूत होकर आकाश पृथिवीमें घूमते हो । हम श्रेष्ठ स्तोत्रों और सुन्दर यज्ञानुष्ठान

द्वारा तुम्हारी उपासना करते हैं। तुम तीनों लोकों में व्याप्त होनेवाले होते हुए हमको सुखी बनाओ ।६। हम अल्प बुद्धि वाले मनुष्य सुन्दर अङ्ग वाले, मनोहर स्वरूप वाले सबके ज्ञाता, गमनशील अग्निकी सेव करते हैं। जानने योग्य वस्तुओं ज्ञाता अग्नि देवताओं के लिए यज्ञ करें और हमारी हवियों को देवताओं को बतावें ।१०। (१८)

तमग्ने पास्युत तं पिपर्षि यस्त आनट् कवये शूर धीतिम् ।
यज्ञस्य वा निशितिं वोदितिं वा वमित पृणक्षि शवसोत राया।।११
त्वमग्ने वनुष्यतो नि पाहि त्वमु नः सहसावन्नवद्यात् ।
सं त्वा ध्वस्मन्वदभ्येतु पाथः सं रयिः स्पृहयाय्यः सहस्री ।।१२
अग्निर्होता गृहपतिः स राजा विश्वा वेद जनिमा जातवेदाः ।
देवानामुत यो मर्त्यानां यजिष्ठः स प्र यजतामृतावा ।।१३
अग्ने यदद्य विशो अध्वरस्य होतुः पावकशोचे वेष्ट्वं हि यज्वा ।
ऋता यजासि महिना वि यद्भूर्हव्या वह यविष्ठ या ते अद्य ।।१४
अभि प्रयांसि सुधितानि हि ख्यो नि त्वा दधीत रोदसी यजध्यै
अवा नो मघवन् वाजसातावग्ने विश्वानि दुरिता तरेम
ता तरेम तवावसा तरेम ।१५।१९

हे वीरतासे युक्त अग्नि ! तुम क्रांतिदर्शी हो। जो साधक तुम्हारी स्तुति करते हैं तुम उनकी रक्षा करते हुए उनका अभीष्ट सिद्ध करते हो। जो यजमान यज्ञानुष्ठान करता हुआ हविदान करताहै, उसको तुम धन और ऐश्वर्य देतेहो ।११। हे अग्ने ! शत्रुओसे हमारी रक्षा करो। हे पराक्रमी अग्ने ! तुम हमको पापों से बचाओ । हमारे द्वारा दिया हुआ हव्य तुमको प्राप्तहो । तुम्हारे द्वारा दिया हुआ सहस्रों प्रकारका सुन्दर ऐश्वर्य हम स्तोताओं को प्राप्त हों ।१२। देवताओंके आह्वान करनेवाले तेजस्वी एवं सर्वज्ञाता अग्नि हमारे घर के स्वामी हैं। वे सब प्राणियों के जानने वाले हैं। जो अग्नि देवताओं ओर मनुष्यों में अत्यन्त यज्ञ करते हैं, वे सत्यवान अग्नि सुन्दर विधिपूर्वक यज्ञ करे ।१३। हे पवित्र ज्वालाओं वाले एवं यज्ञ का सम्पादन करने वाले अग्ने ! इस समय

यजमान जो यज्ञ कर्म करता है उनकी तुम इच्छा करो तुम देवताओंके लिए यज्ञ करने वाले हो, अतः इस यज्ञ में देवताओं का यज्ञ करो। हे सतत् तरुण अग्ने ! तुम अपनी महत्ता से ही महान् हो। आज हम जो हवियाँ देते हैं, उन्हें ग्रहण करो।१४। हे अग्ने! वेदी पर विधिपूर्वक रखे हुए हव्य पदार्थ का अवलोकन करो। यजमान ने आकाश पृथिवी के निमित्त यज्ञ करने के लिए तुम्हारी स्थापना की है। हे अग्ने ! तुम ऐश्वर्यवान हो। रणक्षेत्र में हमारी रक्षा करो जिससे हम सभी दुःखों से छूट जाँय।१५। (१६)

अग्ने विश्वेभिः स्वनीक देवैरूर्णावन्तं प्रथमः सीद योनिम् ।
कुलायिनं घृतवन्तं सवित्रे यज्ञं नय यजमानाय साधु ॥१६
इममु त्यमथर्ववदग्निं मन्थन्ति वेधसः ।
यमङ्कुयन्तमानायन्नमूरं श्याव्याभ्यः ॥१७
जनिष्वा देववीतये सर्वताता स्वस्तये ।
आ देवान् वक्ष्यमृताँ ऋतावृधो यज्ञं देवेषु पिस्पृशः ॥१८
वयमु त्वा गृहपते जनाना मग्ने अकर्म समिधा बृहन्तम् ।
अस्थुरि नो गार्हपत्यानि स तु तिग्मेन नस्तेजस्य सं शिशाधि ।
।१९।२०

हे सुन्दर ज्वालाओं से युक्त अग्ने। तुम सभी देवताओंमें आगे रहे कर ऊन युक्त एवं घृतयुक्त उत्तर वेदी पर विराजमान होओ और हविदाता यजमानके यज्ञको देवताओं को भले प्रकार प्राप्त कराने वाले होओ।१६। कर्म विधायक ऋत्विकगण मेधावी अथर्वा ऋषि के समान मंथन करते हुए अग्नि को प्रकट करते थे। इधर-उधर विचरणशील दानी अग्नि को रात्रि के अँधेरे में प्रदीप्त करते थे।१७। हे अग्ने ! तुम देवताओं की कामना करने वाले यजमान के सुख को स्थायी बनाने के लिये यज्ञ में मंथन द्वारा उत्पन्न होओ। तुम यज्ञ के बढ़ाने वाले तथा अमरधर्मा देवताओं को यज्ञ से लाओ। फिर हमारे यज्ञ को देवताओं को प्राप्त कराओ।१८। हे यज्ञ की रक्षा करने वाल अग्निदेव! प्राणियों के बीच हम अपनी समिधाओं से तुम्हें प्रवृद्ध करते हैं। हमारे

गार्हपत्य-अग्नि हमें पुत्र पशु विविध एश्वर्यसे सम्पन्न करें। तुम हमको अपने सुन्दर तेज से युक्त करो।१६।   (२०)

सूक्त १६ [दूसरा अनुवाक]

(ऋषि—भारद्वाजो बार्हस्पत्यः। देवता—अग्निः। छन्द—गायत्री त्रिष्टुप् अर्धमाना, अनुष्टुप्)

त्वमग्ने यज्ञानां होता विश्वेषां हितः। देवेभिर्मानुषे जने ॥१
स नो मन्द्राभिरध्वरे जिह्वाभिर्यजा महः। आ देवान् वक्षि यक्षि च ॥२
वेत्था हि वेधो अध्वनः पथश्च देवाञ्जसा। अग्ने यज्ञेषु सुक्रतो॥३
त्वामीळे अध द्विता भरतो वाजिभिः शुनम्। ईजे यज्ञेषु यज्ञियम्४
त्वामिमा वार्या पुरु दिवोदासाय सुन्वते। भरद्वाजाय दाशुषे५।२१

हे अग्ने ! तुम होम सम्पादक अथवा देवताओंको बुलाने वाले हो तुम मनु के वंशजों द्वारा किये जाने वाले यज्ञ में देवताओं द्वारा होता बनाये गये हो।१। हे अग्ने ! तुम आनन्ददायक ज्वालओ सहित हमारे यज्ञ में देवताओं की स्तुति करो। यहाँ इन्द्रादि देवों को बुलाओ और उन्हें हविरन्न प्रदान करो।२।हे अग्ने! तुम सुन्दर कर्म करने वाले तथा दानादि गुण से युक्त हो। तुम यज्ञ के विस्तृत और छोटे दोनों प्रकार के मार्गोंके जानने वालेहो। इस मार्ग-भ्रष्ट साधकको फिर अच्छे मार्ग पर लाओ।३। अग्ने ! "दुष्यन्त" के पुत्र "भरत" हवि देने वाले ऋत्विजों सहित सुखके निमित्त तुम्हारी स्तुति करतेहैं। तुम्हारे द्वारा कामनाओं की पूर्ति एवं अनिष्टों की शान्ति होती है, तुम यज्ञ के योग्य हो। हम स्तुति करने के पश्चात् तुम्हारा यज्ञ करते हैं।४। हे अग्ने ! सोम सिद्ध करने वाले दिवोदास को तुमने जैसे बहुत प्रकार धन दिया था, वैसे ही हविदाता भारद्वाज को वहुत-सा श्रेष्ठ धन दो।५। (२१)

त्वं दूतो अमर्त्य आ वहा दैव्यं जनम्। शृण्वन् विप्रस्य सुष्टुतिम्६
त्वामग्ने स्वाध्यो मर्तासो देववीतये। यज्ञेषु देवमालते ॥७
तव प्र यक्षि संदृशमुत क्रतुं सुदानवः। विश्वे जुषन्त कामिनः॥८
त्वं होता मनुर्हितो वह्निरासा विदुष्टरः। अग्ने यक्षि दिवो विशः९

अग्न आ याहि वीतये गृणानो हव्यदातये । नि होता सत्सि
बर्हिषि ।१०।२२

हे अग्ने ! तुम अमृतत्व गुण से युक्त हो, तुम दैत्य गुण से सम्पन्न हो । विद्वान भारद्वाज ऋषि की स्तुतियाँ सुनकर हमारे देवताओं को लाओ ।६। हे ज्योतिर्मान अग्ने ! तुम्हारा चिन्तन करने वाले ममुष्य देवताओंको प्रसन्न करने वाले उज्ञमें तुम्हारी स्सुति करते हैं और तुमसे अभीष्टोंकी प्रार्थना करते हैं ।७। हे अग्ने ! हम तुम्हारे तेज को भले प्रकार पूजतेहैं तथा तुम्हारे श्रेष्ठ दानवय कमकी स्तुति करते हैं । केवल हम ही नहीं, अन्य यजमान भो तुम्हारी कृपा से सफलताको कामना करते हुए यज्ञानुष्ठान में लगते हैं ।८। हे अग्ने ! तुमको मनु ने होता के कार्य मे नियुक्त किया । तुम ज्वाकायुक्त मुख से हवियों वहन करने वाले अत्यन्त मेधावी हो । तुम देवताओं के लिये यज्ञ करो ।९।हे अग्ने! तुम हवि सेवनके लिए आओ और देवताओंके पास हवि पहुँचाने के लिये स्तुतियाँ ग्रहण करते हुए होता रूप से कुश पर विराजमान होओ ।१०।
(२२)

तं त्वा समिद्भिरङ्गिरो घृतेन वर्धयामसि। बृहच्छोचा यविष्ठ्य११
स नः पृथु श्रवाय्यमच्छा देव विवाससि । बृहदग्ने सुवीर्यम्।।१२
त्वामग्ने पुष्करादध्यथर्वा निरमन्थत । मूर्ध्नो विश्वस्य वाघत.१३
यमु त्वा दध्यङ्ङृषिः पुत्र ईधे अथर्वणः । वृत्रहणं पुरंदरम्।।१४
तमु त्वा पाथ्यो वृषा समीधे दस्युहन्तमम् । धनंजयं रणेरणे
।१५।२३

हे अग्ने ! हम समिधाओंसे तुम्हें वढ़ाते हैं । हे सतत तरुण अग्ने! तुम अत्यन्त प्रकाश वाले होओ ।११, हे ज्योतिर्मान अग्ने! तुम हमको विस्तृत, महान् एवं प्रशंशा युक्त ऐश्वर्य दो ।१२। हे अग्ने ! मुर्धा के समान संसार के धारण करने वाले तुम्हें अरथिद्वय से "अथर्वा" ऋषि ने प्रकट किया १३। हे जग्ने "अथर्वा" के पुग "दध्यङ्" ऋषि नें तुम्हें प्रदी त किया था । तुम शत्रुओं को मारने तथा उनके

नगरों को ध्वंस करने वाले हो ।४। हे अग्ने ! 'पांथ्य वृषा' नामक ऋषि ने तुम्हें चैतन्य किया था। तुम राक्षसों के मारने वाले तथा धनों के जीतने वाले हो ।१५। (२३)

एह्यू षु ब्रवाणि ते ऽग्न इत्थेतरा गिरः। एभिर्वर्धास इन्दुभिः१६
यत्र क्व च ते मनो दक्षं दधस उत्तरम्। तत्रा सदः कृणवसे ॥१७
नहि ते पूर्तमक्षिपद् भुवन्नेमानां वसो। अथा दुवो वनवसे ॥१८
आग्निरगामि भारतो वृत्रहा पुरुचेतनः। दिवोदासस्य सत्पतिः१९
स हि विश्वाति पार्थिवा रयिं दाशन्महित्वना।
वन्वन्नवातो अस्तृतः।२०।२४

हे अग्ने ! तुम यहाँ आओ। हम तुम्हारे निमित्त जिस स्तोत्र को कहते हैं, उसे सुनो ! यहाँ आकर इन सोम रसों द्वारा वृद्धि को प्राप्त होओ ।१६। हे अग्ने तुम्हारा कृपापूर्ण हृदय जिस देश तथा जिस साधक की ओर आकृष्ट होता है, वह उत्कृष्ट बल तथा अन्न धारण करने वाला है। तुम्हारा स्थान उसी यजमान के हृदय में है ।१७। हे अग्ने ! तुम्हारा तेज पुञ्ज नेत्र हमारे लिए संहारक नहीं हैं। वह हमको सदा देखने की सामर्थ्य दे। हे बहुदाता अपने ! तुम हम साधकों द्वारा की जाने वाली सेवा को स्वीकार करो ।१८। हम स्तुतियों से अग्नि को बुलाते हैं। अग्नि हवियों के स्वामी हैं। तथा दिवोदास के शत्रुओं को मारते हैं। अग्नि अपनी कृपासे हमको पृथिवीपर प्राप्त होने वाले सभी धन दें। वे अपने तेज से शत्रुओंको भस्म करते हैं। उनकी हिंसा करने में कोई भी समर्थ नहीं हैं।१९-२०। (२४)

स प्रत्नवन्नवीयसा ऽग्ने द्युम्नेन संयता। बृहत् ततन्थ भानुना२१
प्र वः सखायो अग्नये स्तोमं यज्ञं च धृष्णुया। अर्च गाय च वेधसे ॥२२
स हि यो मानुषा युगा सीदद्धोता कविक्रतुः। दूतश्च हव्यवाहनः२३
ता राजाना शुचिव्रता ऽऽदित्यान् मारुतं गणम्।
वसो यक्षीह रोदसी ॥२४
वस्वी ते अग्ने संदृष्टिरिषयते मर्त्याय। ऊर्जो नपादमृतस्य२५।२५

हे अग्ने ! तुम प्राचीन के समान ही नवीन तेज से विस्तृत अन्त-रिक्ष को बढ़ाते हो ।२१। ऋत्विजो ! तुम शत्रु के संहारक और ईश्वर के समान शक्तिमान् अग्निकी स्तुति करते हुए हवियाँदो ।२२। वे अग्नि हमारे यज्ञ में कुश पर विराजमान हों । जो अग्नि देवताओं के आह्वान करने वाले हैं, वे अत्यन्त मेधावी, यज्ञ कर्म में देवताओं के दूत तथा हवियों को वहन करते हैं ।२३। हे अग्ने ! तुम उत्तम निवास देते हो । तुम इस यज्ञ में विराजमान प्रख्यात, सुन्दर कर्म वाले मित्रावरुण, मरुत और आकाश-पृथिवी के निमित्त यज्ञ करो ।२४। हे अग्ने ! अविनाशी हो । तुम्हारा विस्तृत तेज यजमानोंको अन्न-लाभ कराता है ।२५।(२५)

क्रत्वा दा अस्तु श्रेष्ठो ऽद्य त्वा वन्वन् त्सुरेक्णाः ।
मर्त आनाश सुवृक्तिम् ।।२६
ते ते अग्ने त्वोता इषयन्तो विश्वमायुः
तरन्तो अर्यो अरातीर्वन्वन्तो अर्यो अरातीः ।।२७
अग्निस्तिग्मेन शोचिषा यासद् विश्वं न्यत्रिणम् ।
अग्निर्नो वनते रयिम् ।।२८
सुवीरं रयिमा भर जातवेदो विचर्षणे। जहि,रक्षांसि सुक्रतो।।२९
त्वं नः पाह्यंहसो जातवेदो अघायतः । रक्षा णो ब्रह्मणस्कवे
।।३०।२६

हे अग्ने ! हविदाता तुम्हारी सेवा करतेहुए आज सुन्दर कर्ममें युक्त हों । वे सदा तुम्हारी स्तुति करते रहें ।२६। हे अग्ने ! तुम्हारी स्तुति करने वाले तुम्हारा आश्रय प्राप्त करते हैं वे सब कामना करते हुए पूर्ण आयु भोगते और अन्नलाभ करते हैं । वे आक्रमण करने वालेको हराते और नष्ट करते हैं ।२७। वे अपने तीक्ष्ण तेज से सब पदार्थों को भक्षण करने में समर्थ हैं, वे राक्षसों के हन्ता और हमारे लिए धन दाता है ।२८। हे सबके वाले अग्नि ! तुम सुन्दर ऐश्वर्य लेकर आओ और दुष्टों को नष्ट करो ।२९। हे सर्वज्ञाता अग्ने ! हमको पापों से बचाओ । हे स्तुतियों के स्वामी अग्निदेव ! वैरियोंसे हमारी रक्षा करो ।३०। (२६)

यो नो अग्ने दुरेव आ मर्तो वधाय दाशति। तस्मान्न पाह्यंहसः३१
त्व तं देव जिह्वया परि बाधस्व दुष्कृतम् ।
मर्तो यो नो जिघांसति ॥३२
भरद्वाजाय सप्रथः शर्म यच्छ सहन्त्य । अग्ने वरेण्यं वसु ॥३३
अग्निर्वृत्राणि जङ्घनद् द्रविणस्युर्विपन्यया ।
समिद्धः शुक्र आहुतः ॥३४
गर्भे मातुः पितुष्पिता विदिद्युतानो अक्षरे। सीदन्नृतस्य
योनिमा ।३५।२७

हे अग्ने ! जो मनुष्य कुविचार से हमारी हिंसा के लिये शस्त्र चमकाता है, उस मनुष्य से हमको बचाओ ।३१। हे अग्ने ! जो दुष्ट हमको हिंसित करना चाहे उस पाप के लिए तुम अपना तेज बढ़ाओ ।३ । हे अग्ने ! तुम शत्रुओं को वश में करने में समर्थ हो । तुम हमको सुन्दर बुलाये गये अग्नि स्तुति से प्रसन्न होकर हवि कामना करते हैं । वे अग्नि हमारे शत्रुओं का संहार करने वाले हों ।३३-३४। सुन्दर वेदी पर वह अग्नि विराजते हैं । वे आकाश की रक्षा करने वाले उत्तर वेदी पर विराज कर दुष्टों का नाश करते हैं ।३५। (२७)

ब्रह्म प्रजावदा भर जातवेदो विचर्षणे। अग्ने यद् दीदयद् दिवि३६
उप त्वा रण्वसंदृशं प्रयस्वन्तः सहस्कृत। अग्ने ससृज्महे गिरः३७
उप च्छायामिव घृणेरगन्म शर्म ते वयम्। अग्ने हिरण्यसंदृशः३८
य उग्र इव शर्यहा तिग्मशृङ्गो न वंसगः । अग्ने पुरो रुरोजिथ३९
आ यं हस्ते न खादिनं शिशुं जातं न बिभ्रति ।
विशामग्निं स्वध्वरं ।४०।२८

हे अग्ने ! तुम सर्वदर्शी हो । तुम पुत्र-पौत्रों सहित सुन्दर धन को प्राप्त कराओ । वह अन्न आकाश में, देवताओं में प्रशंसित तथा सुशोभित हो ।३६। हे बलके पुत्र अग्नि ! तुम्हारा तेज अत्यन्त रमणीय है । हव्य रूप अन्न सहित स्तोता तुम्हारी स्तुति करते हैं ।३७। अग्ने ! तुम्हारा तेज सुवर्ण के समान प्रकाशवान है, जैसे थका हुआ मनुष्य छाया

के आश्रय में बैठता है वैसे ही हम तुम्हारा आश्रय प्राप्त करते हैं ।३८। वे अग्नि महा बलवान धनुष धारण करने वाले पुरुष के समान बाणोंसे शत्रुओं मारने वाले हैं उनके तीक्ष्ण सींग बैल के समान हैं । हे अग्ने ! तुमने त्रिपुरासुर के तीनों नगर नष्ट किये हैं ।३९। अरणि के मथने से प्रकट हुए अग्नि को अध्वर्युगण पुत्र के समान धारण करते हैं । हे ऋत्विजो ! उन हवि भक्षण करने वाले यज्ञ-संपादक अग्नि की सेवा करो ।४०। (२८)

प्र देवं देववीतये भरता वसुवित्तमम्। आ स्वे योनौ नि षीदतु४१
आ जातं जातवेदसि प्रियं शिशीतातिथिम्। स्योन आ गृहपतिम्४२
अग्ने युक्ष्वा हि ये तवाऽश्वासो देव साधवः । अरं वहन्ति मन्यवे ॥४३
अच्छा नो याह्या वहाऽभि प्रयांसि वीतये ।
आ देवान् त्सोमपीतये ॥४४
उदग्ने भारत द्युमदजस्रेण दविद्युतत् । शोचा विभाह्यजर ।४५।२६

हे अध्वर्युओ ! तुम देवताओंके हवन के लिए अग्नि में हव्य डालो अग्नि प्रकाशवान् ऐश्वर्यों के जानने वाले हैं । वे आह्वान करने योग्य स्थानपर विराजमान हो ।४१। हे अध्वर्युओ ! अतिथिके समान समान-नीय और निवास देने वाले अग्नि की सुन्दर वेदीमें स्थापना करो ।४२। हे अग्ने ! ज्योतिर्मान हो । अपने रथ में उन सभी सुन्दर घोड़ों को जोड़ो, जो तुम्हें यज्ञ में पहुँचाते हैं ।४३। हे अग्ने ! तुम हमारे सामने पधारो । हव्य भक्षण करने और सोम पीनेके लिए देवताओंको लाओ । हे अग्ने ! तुम हवियों के वहन करने वाले हो । तुम ऊपर उठते हुए बढ़ो । तुम अजर हो । तुम अपने तेज से प्रकाशमान होओ । तुम चैतन्य होकर समस्त संसार को चैतन्य करो ।४४-४५। (२९)

वीती यो देवं मर्तो दुवस्येदग्निमीलीताध्वरे हविष्मान् ।
होतारं सत्ययजं रोदस्योरुत्तानहस्तो नमसा विवासेत् ॥४६

आ ते अग्न ऋचा हविर्हृदा तष्टं भरामसि।
ते ते भवन्तूक्षण ऋषभासो वशा उत ॥४७
अग्निं देवासो अग्रियमिन्धते वृत्रहन्तमम्।
येना वसून्याभृता तृलहा रक्षांसि वाजिना ॥४८॥३०

जो यजमान अपनी हवियों से जिस देवता की उपासना करता है, उस यज्ञ में अग्नि की पूजा होती है। वे आकाश पृथिवी में व्याप्त देवताओं के बुलाने वाले और सत्यरूप हवियों से यजनीय हैं। यजमान इन अग्नि की नमस्कार पूर्वक सेवा करते हैं।४६। हे अग्ने ! हम सुन्दर रूप से तैयार हव्य तुम्हें देते हैं। वह हव्य सामर्थ्य वाले बैल के ओज और गौ के दुग्ध में परिवर्तित होवे।४७। जिस पराक्रमी अग्नि ने यज्ञ में बाधा देने वाले राक्षसों को मारा, जिस अग्नि ने दुष्टों के धन को छीन लिया, उस वृत्र का संहार करने वाले अग्नि को मेधावी जन चैतन्य करते हैं।४८। (३०)

॥ पञ्चमोऽध्यायः समाप्तः ॥

सूक्त १७

(ऋषि–भारद्वाजो बार्हस्पत्यः। देवता–इन्द्रः। छन्द–त्रिष्टुप्
द्विपदा त्रिष्टुप्)

पिबा सोममभि यमुग्र तर्द ऊर्वं गव्यं महि गृणान इन्द्र।
वि यो धृष्णो वधिषो वज्रहस्त विश्वा वृत्रममित्रिया शवोभिः१
स ईं पाहि य ऋजीषी तरुत्रो यः शिप्रवान् वृषभो यो मतीनाम्
यो गोत्रभिद् वज्रभृद् यो हरिष्ठाः स इन्द्र चित्राँ अभि तृन्धि
वाजान् ॥२
एवा पाहि प्रत्नथा मन्दतु त्वा श्रुधि ब्रह्म वावृधस्वोत गीर्भिः।
आविः सूर्यं कृणुहि पीपिहीषो जहि शत्रूँरभि गा इन्द्र तृन्धि ॥३
ते त्वा मदा बृहदिन्द्र स्वधाव इमे पीता उक्षयन्त द्युमन्तम्।
महामनूनं तवसं विभूतिं मत्सरासो जर्हृषन्त प्रसाहम् ॥४

येभिः सूर्यमुषसं मन्दसानो ऽवासयोऽप दृलहानि दर्द्रत् ।
महामद्रिं परि वा इन्द्र सन्तं नुत्था अच्युतं सदसस्परि स्वात् ।५।१

हे पराक्रमी इन्द्र ! अङ्गिरा द्वारा स्तुति होकर तुमने सोम पीने के लिए पणियों द्वारा चुरायी गयी गायों को खोज निकाला । हे इन्द्र ! हे वज्रिन ! तुमने अपने पराक्रम से सर्व शत्रुओं का हनन किया है । तुम सोम पान करो ।१। हे सोमपायिन् ! तुम शत्रुओं से रक्षा करने वाले हो । स्तुति करने वालेके अभीष्टको पूर्ण करने वाले हो । हे इन्द्र ! तुम पर्वतों को तोड़ने वाले तथा घोड़ोंको जोड़ने वाले हो । तुम हमारे लिये अद्‌भुत धन प्रकट करो और सोमपान करो ।२। हे इन्द्र! तुमने पूर्वकाल में सोमरस पिया था, उसी प्रकार सोमरस को भी पियो । यह रस तुम्हें पुष्ट बनावे । तुम हमारी स्तुतियों को सुनते हुए वृद्धि को प्राप्त होओ । हमको अन्न प्राप्त कराने के लिए सूर्य को प्रकट करो । हमारे शत्रुओं का संहार करो और पणियों द्वारा चुराई गई गौओं को प्रकट करो ।३। हे इन्द्र ! तुम अन्नवान् एवं तेजस्वीहो । यह पान किया हुआ सोमरस तुम्हें हृष्ट करे । तुम अत्यन्त गुणी, प्रवृद्ध तथा महान् हो । हमारे शत्रुओं को हराओ ।४। हे इन्द्र ! सोमरस से हृष्टि को प्राप्तकर तुमने अन्धकार को मिटाया और सूर्य तथा उषा को अपने अपने स्थान नियुक्त किया । तुमने अविचल पर्वत को स्वस्थ किया । उस पर्वत में पणियों द्वारा चुराई गई गायें उपस्थित थी ।५। (१)

तव क्रत्वा तव तद् दंसनाभिरामासु पक्वं शच्या दीधः ।
और्णोर्दुर उस्रियाभ्यो वि दृलहोदूर्वाद् गा असृजो अङ्गिरस्वान्६
पप्राथ क्षां महि दंसो व्युर्वीमुप द्यामृष्वो बृहदिन्द्र स्तभावः ।
अधारषो रोदसी देवपुत्रे प्रत्ने मातरा यह्वी ऋतस्य ।।७
अध त्वा विश्वे पुर इन्द्र देवा एकं तवसं दधिरे भराय ।
अदेवो यदभ्यौहिष्ट देवान् त्स्वर्षाता वृणत इन्द्रमत्र ।।८
अध द्यौश्चित् ते अप सा नु वज्राद् द्वितानमद् भियसा स्वस्य मन्योः ।

अहिं यदिन्दो अभ्योहसानं नि चिद् विश्वायुः शयथे जघान ॥९
अध त्वष्टा ते मह उग्र वज्रं सहस्रभृष्टिं ववृतच्छताश्रिम् ।
निकाममरमथसं येन नवन्तमहिं सं पिणगृजीषिन् ॥१०॥२

हे इन्द्र ! तुमने अपनी प्रजा, कर्म, और पराक्रम से गौओं को दुग्धवती बनाया तुमने गौओं के निकलने को शिलाओं को हटाया । अङ्गिराओं से मिलकर गङ्गाको मुक्त कराआ ।६। हे इन्द्र ! तुमने अपने कर्म से विस्तृत पृथिवी को परिपूर्ण किया । तुम महान हो । तुमने दिव्य लोक को गिरने से बचाने लिए धारण किया है । तुमने पालन करने के लिए आकाश पृथिवी को धारण किया है । उन आकाश पृथिवी के देवता पुत्र हैं । वे यज्ञ कर्म करने वाली तथा महत्ववती हैं ।७। हे इन्द्र वृत्रासुर से युद्ध करने जब देवता चले तब सभी देवताओं ने मिलकर तुम्हें ही नेता बनाया । तुमने मरुद्गण को युद्ध में सहायता दी थी । तुम अत्यन्त पराक्रमी हो ।८। प्रचुर अन्न सम्पन्न इन्द्र ने आक्रमणकारी वृत्र को जब मारा तब उनके क्रोध और वज्रसे भयभीत स्वर्ग भी सन्न रह गया ।९। हे पराक्रमी इन्द्र ! त्वष्टा ने तुम्हारे सौ गाँठ तथा सहस्रधार वाले वज्र को बनाया था हे सोमपायी इन्द्र ! उसी वज्र से तुमने वृत्र को मारा था ।१०। (२)

वर्धान् यं विश्वे मरुतः सजोषाः पचच्छतं महिषाँ इन्द्र तुभ्यम् ।
पूषा विष्णुस्त्रीणि सरांसि धावन् वृत्रहणं मदिरमंशुमस्मै ॥११
आ क्षोदो महि वृतं नदीनां परिष्ठितमसृज ऊर्मिमपाम् ।
तासामनु प्रवत इन्द्र पन्थां प्रार्दयो नीचीरपसः समुद्रम् ॥१२
एवा ता विश्वा चकृवांसमिन्द्रं महामुग्रमजुर्यं सहोदाम् ।
सुवीरं त्वा स्वायुधं सुवज्रमा ब्रह्म नव्यमवसे ववृत्यात् ॥१३
स नो वाजाय श्रवस इषे च राये धेहि द्युमत इन्द्र विप्रान् ।
भरद्वाजे नृवत इन्द्र सुरीन् दिवि च स्मैधि पार्ये न इन्द्र ॥१४
अया वाजं देवहितं सनेम मदेम शतहिमाः सुवीराः ॥१५॥३

हे इन्द्र ! मरुद्गण तुम्हें अपने स्तोत्र द्वारा बढ़ाते हैं और तुम्हारे लिए पूषा तथा विष्णु सौ महिष देते हैं । तीन पात्रों को पूर्ण करने के लिए सोम गिरता हैं । सोम द्वारा इन्द्र वृत्रका नाश करने में समर्थ होते हैं । ।११। हे इन्द्र ! तुमने वृत्र द्वारा रोकी गई नदियोंके जल को छोड़ा जिससे वे बहने लगी । तुमने गन नदियों को नीचे मार्ग की ओर प्रवाहित कर जल की तरङ्गों को उन्मुक्त किया । फिर तुमने उसे वेगवान जल को समुद्र में मिलाया ।१२। हे इन्द्र ! तुम ऐसे सभी कार्यों के कर्त्ता ओजस्वी अजर बलके देने वाले, ऐश्वर्यवान् एवं वज्रधारी हो । हमारा अभिनय स्तोत्र तुम्हें हमारी रक्षा के निमित्त बढ़ाये ।१३। हे इन्द्र ! हमारे निमित्त पुष्टि, बल, अन्न और ऐश्वर्य धारण करो । हम ज्ञानी हैं, हमको सेवकों से युक्त करो । तुम स्तुति करने वाले पुत्रों, पौत्रों को प्राप्त कराओ । हे इन्द्र ! आगामी दिनों में हमारी रक्षा करना हम इस स्तुति को करते हुए इन्द्र से शन्न लाभ करें । हम तुन्द्रर पुत्र-पौत्र से युक्त हुए सौ वर्ष तक सुख भोग करें ।१४-१५। (३)

सूक्त १८

(ऋषि—भरद्वाजो बार्हस्पत्यः । देवता—इन्द्रः । छन्द—त्रिष्टुप्)

तमु ष्टुहि यो अभिभूत्योजा वन्वन्नवातः पुरुहूत इन्द्रः ।
अषालहमुग्रं सहमानमाभिर्गीर्भिर्वर्ध वृषभं चर्षणीनाम् ॥१
स युध्मः सत्वा खजकृत् समद्वा तुविम्रक्षो नदनुमाँ ऋजीषी ।
बृहद्रेणुश्च्यवनो मानुषीणामेकः कृष्टीनामभवत् सहावा ॥२
त्वं ह नु त्यददमायो दस्यूँरेकः कृष्टीरवनोरार्याय ।
अस्ति स्विन्नु वीर्यं तत् त इन्द्र न स्विदस्ति तदृतुथा वि वोचः ३
सदिद्धि ते तुविजातस्य मन्ये सहः सहिष्ठ तुरतस्तुरस्य ।
उग्रमुग्रस्य तवसस्तवीयो ऽरध्रस्य रध्रतुरो बभूव ॥४
तन्नः प्रत्नं सख्यमस्तु युष्मे इत्था वदद्भिर्वलमङ्गिरोभिः ।
हन्नच्युतच्युद् दस्मेषयन्तमृणोः पुरो वि दुरो अस्य विश्वाः ।५।४

हे भरद्वाज ! तुम तेजस्वी शत्रु नाशक बहुतों द्वारा बुलाये गये

इन्द्र की स्तुति करो । तुम इन स्तोत्रों से मनुष्य की कामनाओं को पूर्ण करने वाले इन्द्र को बढ़ाओं ।१। इन्द्र युद्ध में रत, सहानुभूति से युक्त बलवान्, दाता, उपकार करने वाले सोमपायी तथा मनुष्यों के रक्षक हैं ।२। हे इन्द्र ! कर्म करने वाले मनुष्यको वशमें करो । एक मात्र तुम्हीं ने यश कर्म करने वालों को पुत्रों और सेवकों से युक्त किया था । हे इन्द्र तुम में अब भी वह सामर्थ्य है या नहीं ? समय-समय पर अपना बल दिखाओ ।३। हे इन्द्र! तुम पराक्रमी हो । तुम बहुतये यज्ञोंमें प्रकट हुए हो । तुमने हमारे शत्रुओं को नष्ट किया है । तुम ओजस्वी, बली अजेय एवं शत्रुओ के हननकर्त्ता हो ।४। हे इन्द्र ! हमारी बहुत दिनों से चलीं आती मित्रता चिरस्थायी हो । तुमने स्तुति करने वाले अङ्गि-राओं में युद्धशक्ति दी, बल नामक दैत्य को मारा था और उसके नगरों के द्वारों को खोला था ।५। (४)

स हि धीभिर्हव्यो अस्त्युग्र ईशानकृन्महति वृत्रतूर्ये ।
स तोकसाता तनये स वज्री वितन्तसाय्यो अभवत् समत्सु ॥६
स मज्मना जनिम मानुषाणाममर्त्येन नाम्नाति प्र सर्स्रे ।
स द्युम्नेन स शवसोत राया स वीर्येण नृतमः समोकाः ॥७
स यो न मुहे न मिथू जनो भूत् सुमन्तुनामा चुमुरिं धुनिं च ।
वृणक् पिप्रुं शम्बरं शुष्णमिन्द्रः पुरां च्यौत्नाय शयथाय नू चित् ॥८
उदावता त्वक्षसा पन्यसा च वृत्रहत्याय रथमिन्द्र तिष्ठ ।
धिष्व वज्रं हस्त आ दक्षिणत्रा ऽभि प्र मन्द पुरुदत्र मायाः ॥९
अग्निर्न शुष्कं वनमिन्द्र हेती रक्षो नि धक्ष्यशनिर्न भीमा ।
गम्भीरय ऋष्वया यो रुरोजाध्वानयद् दुरिता दम्भयच्च ।१०।५

स्तोताओं को सामर्थ्यवान् बनाने वाले इन्द्र स्तुतियों द्वारा बुलाये जाते हैं । वे पुत्र प्राप्ति के लिए बुलाये जाते हैं । युद्धस्थल में वे वज्र-धारी इन्द्र नमस्कार करने योग्य हैं ।६। इन्द्र ने शत्रुओं को पराजित करने वाले बल से मनुष्यों की पराक्रमी बनाया है । इन्द्र यशस्वी तथा धन सामर्थ्य से युक्त एवं समान स्थान वाले हैं । जो इन्द्र यशस्वी तथा

धन सामर्थ्य वाले हैं, वे वृथा वस्तुओं को उत्पन्न ही करते । वे प्रसिद्ध नाम वाले इन्द्र शत्रु नगरों को नष्ट करने और शत्रुओंको हनन करने के लिए तुरन्त उद्यत होते हैं । हे इन्द्र ! तुमने राक्षसों को नष्ट किया ।७-८। हे इन्द्र ! तुम शत्रुओं का हनन करने वाले हो । तुम प्रशंसनीय बल वाले अपने रथ पर शत्रु नाश के लिए चढ़ते हो । तुम अपने दाहिने हाथ में वज्र धरते हो । हे इन्द्र ! तुम प्रचुर धन से युक्त हो । दुष्टो की माया को दूर करो ।९। हे इन्द्र ! जैसे अग्नि को जलाते हैं, वैसे ही तुम शत्रुओं को नष्ट करो तुम वज्रके समान भयङ्कर हो । तुम वज्र के समान भयङ्कर हो । तुम राक्षसों को जलाओ । इन्द्र ने वज्रसे शत्रुओं को चीर डाला । इन्द्र युद्ध में गर्जन करते हुए सभी सङ्कटों को दूर करते हैं ।१०।　　　　　　　　　　　　　　　　(५)

आ सहस्रं पथिभिरिन्द्र राया तुविद्युम्न तुविवाजेभिरर्वाक् ।
याहि सूनो सहसो यस्य नू चिददेव ईशे पुरुहूत योतोः ॥११
प्र तुविद्युम्नस्य स्थविरस्य घृष्वेर्दिवो ररप्शे महिमा पृथिव्याः ।
नास्य शत्रुर्न प्रतिमानमस्ति न प्रतिष्ठिः पुरुमायस्य सह्योः ॥१२
प्र तत् ते अद्या करणं कृतं भूत् कुत्सं यदायुमतिथिग्वमस्मै ।
पुरू सहस्रा नि शिशा अभि क्षामुत् तूर्वयाणं घृषता निनेथ ॥१३
अनु त्वाहिघ्ने अध देव देवा मदन् विश्वे कवितमं कवीनाम् ।
करो यत्र वरिवो बाधिताय दिवे जनाय तन्वे गृणानः ॥१४
अनु द्यावापृथिवी तत् त ओजोऽमर्त्या जिहत इन्द्र देवाः ।
कृष्वा कृत्नो अकृतं यत् ते अस्त्युक्थं नवीयो जनयस्व यज्ञैः ॥१५।६

हे इन्द्र ! तुम बहुतों द्वारा बुलाये गयेहो । कोईभी दुष्ट तुम्हें बल हीन नहीं बना सकता । तुम ऐश्वर्यसे युक्त होकर असंख्य वाहनों द्वारा हमारे सामने आओ ।११। अत्यन्त यश और धन वाले शत्रुहन्ता तथा प्रवृद्ध इन्द्र की महिमा आकाश और पृथिवी से भी बढ़ी हुई है । शत्रुओं को हराने वाले मेधावी इन्द्र अजातशत्रु हैं, उनका प्रतिद्वन्दी कोई भी नहीं है ।१२। हे इन्द्र तुमने शुष्ण, से 'कुत्स' की तथा शत्रुओं

से 'आयु' और दिवोदास की रक्षा की। तुमने शम्बर के पास से 'अतिथिग्वों की बहुत धन दिलाया। हे इन्द्र! तुमने वज्रसे 'शम्बर' का वध किया और पृथिवी पर रहने वाले शीघ्र चलने वाले 'दिवोदास' की सङ्कटों से रक्षा की।१३। हे ज्योतिर्मान इन्द्र! सभी स्तोता मेघ को नष्ट करने के लिए तुम्हारी स्तुति कर रहे हैं। तुम सभी विद्वानों में श्रेष्ठ हो। स्तुति करने वालों की स्तुति से प्रसंन होकर तुम दरिद्रता से दुःखी यजमानों और उनकी सतान को सुख करो।१४। हे इन्द्र तुम यज्ञादि कर्मों को अनुष्ठित करो और उसके पश्चात् यज्ञ में अभिनव स्तोत्र को प्रकट करो।१५ (६)

सूक्त १९

(ऋषि—भारद्वाजो बार्हस्पत्यः। देवता—इन्द्र। छन्द-त्रिष्टुप्)

महाँ इन्द्रो नृवदा चर्षणिप्रा उत द्विबर्हा अमिनः सहोभिः।
अस्मद्र्यग्वावृधे वीर्यायोरुः पृथुः सुकृतः कर्तृभिर्भूत् ॥१
इन्द्रमेव धिषणा सातये धाद् बृहन्तमृष्वमजरं युवानम्।
अपान शयसा शूशुवांसं सद्यश्चिद् यो वावृधे असामि ॥२
पृथू करस्रा बहुला गभस्ती अस्मद्र्यक् सं मिमीहि श्रवांसि।
यूथेव पश्वः पशुपा दमूना अस्माँ इन्द्राभ्या ववृत्स्वाजौ ॥३
त व इन्द्रं चतिनमस्य शाकैरिह नूनं वाजयन्तो हुवेम।
यथा चित् पूर्वे जरितार आसुरनेद्या अनवद्या अरिष्टाः ॥४
धृतव्रतो धनदाः सोमवृद्धः स हि वामस्य वसुनः पुरुक्षुः।
सं जग्मिरे पथ्या रायो अस्मिन् त्समुद्रे न सिन्धवो यादमानाः॥५।७

स्तुति करने वाले मनुष्यों की कामनाओं को पूर्ण करने वाले इन्द्र आवें। दोनों लोकोंरर अपना पराक्रम फैलानेवाले एवं शत्रुओंद्वारा अहिंसित इन्द्र प्रवृद्ध होतेहैं। वे प्रशंसनीय कर्मोंसे युक्त तथा यजमानोंके जानने वाले हैं।१। इन्द्र उत्पन्न होतेही बढ़तेहैं। हमारे स्तुति दानके लिए इन्द्र को आकर्षित करती हैं। इन्द्र अजर, महान्, युवा, गमनशील तथा शत्रुओं से न हारने वाले, बल से बढ़े हुए हैं।२। हे इन्द्र! अन्न देने के लिए

हमारे सामने अत्यन्त दानशील हाथों को लाओ । तुम शान्त चित्त वाले हो । जैसे पशु स्वामी अपने पशुओंको चलाता है, वैसे ही तुम रण-क्षैत्र में हमको चलाओ ।३। हम अन्नोंकी काममा वाले स्तोता इस यज्ञ में सहायक मरुदगण के साथ शत्रु संहारक इन्द्र की स्तुति करते हैं। हे इन्द्र तुम्हारे प्राचीन कालीन स्तुति करने वालों के समान हम पाप से रहित अहिंसित तथा अनिन्द्य हो ।४। जैसे बहती हुई नदियाँ समुद्र में गिरती हैं, वैसे ही स्तोताओं का अन्न इन्द्र की ओर बढ़ता है। वे इन्द्र धनों के स्वामी, कर्मवान तथा सोम रस से पुष्ट होने वाले हैं ।५। (७)

शविष्ठं न आ भर शूर शव ओजिष्ठमोजो अभिभूत उग्रम् ।
विश्वा द्युम्ना वृष्ण्या मानुषाणामस्मभ्यं दा हरिवो मादयध्यै।६
यस्ते मदः पृतनाषालमृध्र इन्द्र तं न आ भर शूशुवांसम् ।
येन तोकस्य तनयस्य सातौ मंसीमहि जिगीवांसस्त्वोताः ॥७
आ नो भर वृषणं शुष्ममिन्द्र धनस्पृतं शूशुवांसं सुदक्षम् ।
येन वंसाम पृतनासु शत्रून् तवोतिभिरुत जामींरजामीन् ॥८
आ ते शुष्मो वृषभ एतु पश्चादोत्तरादधरादा पुरस्तात् ।
आ विश्वतो अभि समेत्वर्वाङिन्द्र द्युम्न स्वर्वद्धेह्यस्मे ॥९
नृवत् त इन्द्र नृतमाभिरूती वंसीमहि वामं श्रोमतेभिः ।
ईक्षे हि वस्व ऊभयस्य राजन् धा रत्नं महि स्थूरं बृहन्तम् ॥१०
मरुत्वन्तं वृषभ वावृधानमकवारिं दिव्यं शासमिन्द्रम् ।
विश्वासाहमवसे नूतनायोग्रं सहोदामिह तं हुवेम ॥११
जनं वज्रिन् महि चिन्मन्यमानमेभ्यो नृभ्यो रन्धया येष्वस्मि ।
अधा हि त्वा पृथिव्यां शूसातौ हवामहे तनये गोष्वप्सु ॥१२
वयं त एभिः पुरुहूत सख्यैः शत्रोःशत्रोरुत्तर इत् स्याम ।
घ्नन्तो वृत्राण्युभयानि शूर राया मदेम बृहता त्वोताः ।१३।८

हे इन्द्र! हमको श्रेष्ठ बल प्रदानकरो । तुम हमको अत्यन्त तेज दो। तुम शत्रुओं के हराने वाले हो । हे अश्ववान् इन्द्र ! तुमको वीर्यवान्, तेज से युक्त तथा मनुष्यों के उपभोग ऐश्वर्य दो ।६। हे इन्द्र ! तुम

हमको शत्रुओंको वशमें करने वाला बल दो। हम तुम्हारे रक्षा-साधनों से विजय प्राप्त करें। पुत्र-पौत्र की प्राप्ति के लिए उसी रक्षा के लिए हम तुम्हारी स्तुति करें।७। हे इन्द्र ! हमको कामनाओंका पूरक सैन्य-शक्ति से युक्त धन दो। धनकी रक्षा करने वाला, बढ़ा हुआ और सुन्दर बल दो। हे इन्द्र ! तुम्हारे रक्षा-साधन से हम युद्ध स्थल में इस बल से ही शत्रुओं का संहार करें।८। हे इन्द्र ! तुम्हारा कामना-पूरक बल चारों दिशाओं से हमारी ओर आवे। यह प्रत्येक दिशा से हमारे पास आवे। तुम हमको हर प्रकार का श्रेष्ठ धन दो।६। हे इन्द्र ! तुम्हारे आश्रय में हम सेवकों युक्त सुनने योग्य यश वाले धनका उपभोग करते हैं। हे इन्द्र ! तुम दिव्य और पार्थिव धनोंके स्वामी हो। तुम हमको महान् धन दो।१०। अभिनव रक्षा के लिये हम इस यज्ञ में इन्द्र को बुलाते हैं, जो मरुद्गण के साथ अत्यन्त बलवान, तेजस्वी, अभीष्टवर्षी, समृद्ध विकराल एवं शासन करने वाले हैं।११। हे वज्रिन् ! हम जिन मनुष्यों में रहते हैं उन सबसे अपने को महान् समझने वाले को तुम अपने वश में करो। हम युद्ध कालमें तथा पशु पुत्र और जलकी प्राप्ति के लिये तुम्हें आहूत करते हैं।।१२। हे इन्द्र ! तुम बहुतों द्वारा बुलाये गये हो। हम इन स्तोत्र रूप मित्रता कार्य के द्वारा तुम्हारी सहाबतासे शत्रुओं को मारें और उनसे बलवान बनें। तुम पराक्रमी हो, हम तुम्हारे आश्रय में अत्यन्त धन-लाभ कर सुखी हो।१३। (८)

सूक्त २०

(ऋषि—भरद्वाजो बार्हस्पत्यः। देवता— इन्द्र। छन्द—विराट्)

द्यौर्न य इन्द्राभि भूमार्यस्तस्थौ रयिः शवसा पृत्सु जनान्।
तं नः सहस्रभरमुर्वरासां दद्धि सूनो सहसो वृत्रतुरम् ॥१
दिवो न तुभ्यमन्विन्द्र सत्रा ऽसुर्यं देवेभिर्धायि विश्वम्।
अहिं यद् वृत्रमपो वव्रिवांसं हन्नृजीषिन् विष्णुना सचानः ॥२
तूर्वन्नोजीयान् तवसस्तवीयान् कृतब्रह्मेन्द्रो वृद्धमहाः।
राजाभवन्मधुनः सोम्यस्य विश्वासां यत् पुरां दर्त्नुमावत् ॥३

शतैरपन्द्रन् पणय इन्द्रात्र दशोणये कवयेऽर्कसातौ ।
वधैः शुष्णस्याशुषस्य मायाः पित्वो नारिरेचीत् किं चन प्र ।।४
महो द्रुहो अप विश्वायु धायि वज्रस्य यत् पतने पादि शुष्णः ।
उरु ष सरथं सारथये करिन्द्रः कुत्साय सूर्यस्य सातौ ।५।६

हे इन्द्र ! जैसे सूर्य अपने प्रकाश से पृथिवी को भर देते हैं, वैसे ही तुम शत्रुओं पर छा जाने वाला पुत्र और ऐश्वर्य दो । वह पुत्र असंख्य धन वाला, उर्वरा भूमि का स्वामी तथा शत्रुओं का नाश करने वाला हो ।१। हे इन्द्र ! स्तुति करने वाले ने सूर्य के समान बल अपने स्तोत्र द्वारा तुमको भेंट किया था । हे सोमपायिन् ! तुमने विष्णुसे मिलकर जलों को रोकने वाला वृत्र मारा ।२। इन्द्र ने सभी पणियों को ध्वस्त करने वाले वज्र को पाया था,तब ने मधुर सोम-रसके प्राप्त करने वाले हुए थे । वे इन्द्र हिंसा करने वालों के हिंसक, पराक्रमी, अन्नदाता, अत्यन्त ओजस्वी तथा बढ़े हुए तेज से युक्त हैं ।३। हे इन्द्र ! युद्ध में बहुत धनदेने वाले तुम्हारे सहायक 'कुत्स' से डरकर सौ सेनाओं सहित पणि भाग गया । तुमने शुष्ण की माया को अस्त्रों से छिन्न-भिन्न कर उसके सम्पूर्ण अन्न को छीन लिया है ।४। वज्र की मार से गिरकर शुष्ण मर गया । उस समय उन द्रोही शुष्ण का सभी बल नष्ट होगया था । इन्द्र ने सूर्य की उपासना के लिये अपने सारथि रूप 'कुत्स' को रथ बढ़ाने को कहा ।५। (६)

प्र श्येनो न मदिरमंशुमस्मै शिरो दासस्य नमुचेर्मथायन् ।
प्रावन्नमीं साप्यं ससन्तं पृणग्राया समिषा सं स्वस्ति ।।६
वि बिप्रोरहिमायस्य दृलहाः पुरो वज्रिञ्छवसा न दर्दः ।
सुदामन् तद् रेक्णो अप्रमृष्यमृजिश्वने दात्रं दाशुषे दाः ।।७
स वेतसुं दशमायं दशोणिं तुतुजिमिन्द्रः स्वभिष्टिसुम्नः ।
आ तुग्रं शश्वदिभं द्योतनाय मातुर्न सीमुप सृजा इयध्यै ।।८
स ईं स्पृधो वनते अप्रतीतो बिभ्रद् वज्रं वृत्रहणं गभस्तौ ।
तिष्ठद्धरी अध्यस्तेव गर्ते वचोयुजा वहत इन्द्रमुष्वम् ।।९

सनेम तेऽवसा नव्य इन्द्र प्र पूरवः स्तवन्त एमा यज्ञैः ।
सप्त यत् पुरः शर्म शारदीर्दर्द्धन् दासीः पुरुकुत्साय शिक्षन् ॥१०
त्वं वृध इन्द्र पूर्व्यो भूर्वरिवस्यन्नुशने काव्याय ।
परा नववास्त्वमनुदेयं महे पित्रे ददाथ स्वं नपातम् ॥११
त्वं धुनिरिन्द्र धुनिमतीऋर्णोरपः सीरा न स्रवन्तीः ।
प्र यत् समुद्रमति शूर पर्षि पारया तुर्वशं यदुं स्वस्ति ॥१२
तव ह त्यदिन्द्र विश्वमाजौ सस्तो धुनीचुमुरी या ह सिष्वप् ।
दीदयदित् तुभ्यं सोमेभिःसुन्वन् दभीतिरिध्मभृतिः पक्थ्यर्कैः॥१३॥१०

इन्द्र ने जीवों की रक्षाके लिए 'नमुच' के मस्तक को चूर चूर कर दिया और 'सपि' के पुत्र 'निद्रित' नामी ऋषिकी रक्षा करते हुए उन्हें पशु धन तथा अन्नवान् बनाया। उस समय श्येन पक्षी उनको हृष्ट बनाने वाले सोमको लेकर आया ।६। हे वज्रिन् ! तुमने मायावी 'विप्र'के दृढ़ दुर्गों को तोड़ डाला । हे सुन्दर दान वाले ! तुमने हवि रूप अन्न प्रदान करने वाले ऋजिश्वा को धन दिया । सुन्दर सुख देने वाले इन्द्र ने अनेक असुरों को 'द्योतन' के पास सदा जानेके लिये ऐसेही वशमें किया जैसे माता के पास जानेके लिये पुत्र वश में रहते हैं ।७-८। शत्रुओंद्वारा न हारने वाले इन्द्र अपने हाथमें शत्रुओंको मारने वाले अस्त्रोंको धारण कर वृत्रादिका नाश करते हैं। जैसे वीर पुरुष रथ पर चढ़ता है वैसेही ये अपने घोड़ोंपर चढ़ते है । वे हमारी वाणीन पूजित हुए घोड़े इन्द्रको यहा लावें ।६। हे इन्द्र ! हम उपासकगण तुम्हारे आश्रयमें अभिनव धन की प्राप्ति के लिए उपासना करते हैं । स्तोतागण यज्ञों को करते हुए स्तुति करते हैं हे इन्द्र ! तुमसे शरदाशुरकी सात पुरियोंको वज्रसे चूर्ण कर दिया।१०। हे इन्द्र! धनको कामना करते हुये उशनाके निमित्त तुम कल्याणकारी हुये थे । तुमने नववास्त्व नामक राक्षसको मारा था और सामार्थ्यवान उशनाके सामने उसके देवपुत्रको उपस्थित किया था ।११। हे इन्द्र ! तुम शत्रुओं को कम्पायमान करतेहो । तुमने निरुद्ध जल को प्रवाहमान बनाया । हे वीर पुरुष!जब तूम समुद्र लाँघनेमें सफल होतेहो

तब समुद्रके पार रहने वाले 'तुर्वश' और 'यदु' को समुद्रके पार लगाते हो ।१२। हे इन्द्र ! युद्ध के यह सब कार्य तुम्हारे ही वंश के हैं । तुमने ही 'धुनी' और 'चुमुरी' नामक दो असुरों को मारा । हे इन्द्र ! हव्य परिवर्तन करने वाले सोमाभिषव करने वाले, समिधावान् राजर्षि 'दभीति ने हाथ से तुम्हें बढ़ाया ।१३। (१०)

सूक्त २१

(ऋषि—भरद्वाजो बार्हस्पत्यः। देवता—इन्द्रः । छन्द—त्रिष्टुप्)

इमा उ त्वा पुरुतमस्य कारोर्हव्यं वीर हव्या हवन्ते ।
धियो रथेष्ठामजरं नवीयो रयिर्विभूतिरीयते वचस्या ॥१
तमु स्तुष इन्द्रं यो विदानो गिर्वाहसं गीर्भिर्यज्ञवृद्धम् ।
यस्य दिवमति मह्ना पृथिव्याः पुरुमायस्य रिरिचे महित्वम् ॥२
स इत् तमोऽवयुनं ततन्वत् सूर्येण वयुनवच्चकार ।
कदा ते मर्ता अमृतस्य धामेयक्षन्तो न मिनन्ति स्वधावः ॥३
यस्ता चकार स कुह स्विदिन्द्रः कमा जनं चरति कासु विक्षु ।
कस्ते यज्ञो मनसे शं वराय को अर्क इन्द्र कतमः स होता ॥४
इदा हि ते वेविषतः पुराजाः प्रत्नास आसुः पुरुकृत् सखायः ।
ये मध्यमास उत नूतनास उतावमस्य पुरुहूत बोधि ।५।११

हे पराक्रमी इन्द्र ! बहुत कामना वाले भारद्वाजकी सुन्दर स्तुतियाँ तुम्हें बुलातीहैं । तुम रथवान् अजरएवं अभिनवरूप वाले हो।हविरन्न तुम्हारा अनुगमन करते हैं सर्व ज्ञाता स्तुतियों द्वारा प्राप्त,यज्ञ द्वारा बढ़ने वाले इन्द्रकी हम स्तुति करते हैं वे अत्यन्त मेधावी इन्द्र आकाश और पृथिवीकी महिमा सेअधिक महान्है । १-२ । इन्द्र ने ही वृत्त द्वारा फैलाये गए अन्धकार को सूर्य के तेज से नष्ट किया । हे पराक्रमी इन्द्र! तुम कभी भी नाशको प्राप्त नहीं होते । मनुष्य तुम्हारे स्थानकी सदा कामना करते हैं । वे मनुष्य सदा अहिंसक रहते हैं । ३ । जिन इन्द्र ने वृत्रादि राक्षसोंके हनन जैसे प्रसिद्ध कार्य किए हैं, वे इस समय कहाँ है?

किस देश में और किन उपासकों के मध्य में है ? हे इन्द्र ! तुम किस प्रकार के यज्ञ में सुखी होते हो ? तुम्हें वरण करने में कौन सा मन्त्र उपयुक्त है ? तुम्हारे वरण करने में समर्थ कौन है ? ।४। हे बहुकार्य वाले इन्द्र ! प्राचीन अङ्गिरा आदि ऋषि वर्तमान कालीन ऋषियों के समान साधक थे । मध्यकाल में भी तुम्हारे स्तोता हुए हैं। परन्तु हे इन्द्र ! तुम मुझ इस काल के साधक की स्तुति श्रवण करो ।५। (११)

तं पृच्छन्तोऽवरासः पराणि प्रत्ना त इन्द्र श्रुत्यानु येमुः ।
अर्चामसि वीर ब्रह्मवाहो यादेव विद्म तात् त्वा महान्तम् ॥६
अभि त्वा पाजो रक्षसो वि तस्थे महि जज्ञानमभि तत् सु तिष्ठ।
तव प्रत्नेन युज्येन सख्या वज्रेण धृष्णो अप ता नुदस्व ॥७
स तु श्रुधीन्द्र नूतनस्य ब्रह्मण्यतो वीर कारुधायः ।
त्वं ह्यापिः प्रदिवि पितृणां शश्वद् बभूथ सुहव एष्टौ ॥८
प्रोतये वरुणं मित्रमिन्द्रं मरुतः कृष्वावसे नो अद्य ।
प्र पूषणं विष्णुमग्निं पुरंधिं सवितारमोषधीः पर्वतांश्च ॥९
इम उ त्वा पुरुशाक प्रयज्यो जरितारो अभ्यर्चन्त्यर्कैः ।
श्रुधी हवमा हुवतो हुवानो न त्वावाँ अन्यो अमृत त्वदस्ति ॥१०
नू म आ वाचमुप याहि विद्वान् विश्वेभिः सूनो सहसो यजत्रैः ।
ये अग्निजिह्वा ऋतसाप आसुर्ये मनुं चक्रुरुपरं दसाय ॥११
स नो बोधि पुरएता सुगेषूत दुर्गेषु पथिकृद् विदानः ।
ये अश्रमास उरवो वहिष्ठास्तेभिर्न इन्द्राभि वक्षि वाजम्।१२।१२

हे इन्द्र ! इस काल में मनुष्य तुम्हारी पूजा करते हैं । तुम्हारे प्राचीन एवं श्रेष्ठ महान कर्मों की स्तुति का रूप वाणी में प्रवृद्ध करते हैं। हम तुम्हारे जिन कार्यों के जानने वाले हैं, उन्हीं से हम तुम्हारी स्तुति करते हैं ।६। हे इन्द्र ! राक्षसों का बल तुम्हारे सामने है । तुम भी उस बल कामना करो । हे शत्रुओं के पीड़क इन्द्र ! तुम अपने बल को वज्र से प्रेरित करो । तुम्हारा बल प्राचीन काल से ही योजना के योग्य तथा साधक रहा है ।७। हे इन्द्र तुम स्तुति करने वालों के

पालक हो । तुम हम स्तोताओं की प्रार्थना को शीघ्र श्रवण करो । वर्तमान कालीन स्तोता अभिनव स्तोत्र की इच्छा करते हैं । हे इन्द्र ! तुम सुन्दर आह्वान वाले होकर प्राचीन अङ्गिराओं के मित्र हुए थे । अब हमारी स्तुति भी श्रवण करो ।८। हे भरद्वाज हमारी अभीष्ट पूर्ति एवं रक्षा के निमित्त वरुण, मित्र इन्द्र, मरुत्, पूषा, विष्णु, अग्नि, सविता वनस्पतियों के देवता और पर्वतों की स्तुति करो ।९। हे अत्यन्त पराक्रमी इन्द्र ! यह स्तोता उपासना के योग्य स्तोत्रों से तुम्हारी स्तुति करते हैं । हे अविनाशी! तुम मेरी स्तुति को श्रवण करो क्योंकि तुम्हारे समान अन्य कोई देवता नही है ।१०। हे सर्वज्ञ इन्द्र! तुम सब देवताओं सहित मेरे स्तुति योग्य स्तोत्रके सामने आओ जो देव अग्निकी जिह्वा रूप हैं, जो यज्ञमें हव्य सेवन करते हैं, जिन्होंने शत्रुओं का नाश करने के लिए राजर्षि मनुको सर्वोपरि बनाया, तुम उन्हीं के साथ यहाँ आओ ।११। हे इन्द्र ! तुम मेधावी तथा मार्ग नियत करने वालेहो । तुम सुख-पूर्वक जाने योग्य मार्गमें एक दुर्गम मार्गमें भी हमारे अग्रणी बनो । तुम अपने महान् एवं श्रम रहित घोड़ों द्वारा हमारे लिये अन्न लेकर आओ ।१२। (१२)

सूक्त २२

(ऋषि–भरद्वाजो बार्हस्पत्यः । देवता–इन्द्रः । छन्द–त्रिष्टुप्)

य एक इद्धव्यश्चर्षणीनामिन्द्रं तं गीर्भिरभ्यर्च आभिः ।
यः पत्यते वृषभो वृष्ण्यावान् त्सत्यः सत्वा पुरुमायः सहस्वान्॥१
तमु नः पूर्वे पितरो नवग्वाः सप्त विप्रासो अभि वाजयन्तः ।
नक्षद्दाभं ततुरिं पर्वतेष्ठामद्रोघवाचं मतिभिः शविष्ठम् ॥२
तमीमह इन्द्रमस्य रायः पुरुवीरस्य नृवतः पुरुक्षोः ।
यो अस्कृधोयुरजरः स्वर्वान् तमा भर हरिवो मादयध्यै ॥३
तन्नो वि वोचो यदि ते पुरा चिज्जरितार आनशुः सुम्नमिन्द्र ।
कस्ते भागः किं वयो दुध्र खिद्वः पुरुहूत पुरूवसोऽसुरघ्नः ॥४

तं पृच्छन्ती वज्रहस्तं रथेष्ठामिन्द्रं वेपी वक्वरी यस्य नू गीः।
तुविग्राभं तुविकूर्मि रभोदां गातुमिषे नक्षते तुम्रमच्छ ।५।१३

मनुष्यों पर विपत्ति पड़नेपर एकमात्र इन्द्र आह्वान करनेके योग्य हैं, वे स्तुति करने वाले के पास आते। जो कामनाओं के वर्षक पराक्रमी बहुत विद्वान् सत्यवक्ता एवं शत्रुओं को पीड़ित करने वालेहैं, हम उन इन्द्र की स्तुति करते हैं।१। नौ महीने के यज्ञानुष्ठान के करने वाले प्राचीन हमारे अङ्गिरा आदि पूर्वज सात ऋषियों ने इन्द्र को पराक्रमी और प्रवृद्धमान् बनातेहुए उसकी स्तुतिकी थी। वे इन्द्र शत्रुओं के हनन कर्ता, गमनशील एवं सभीपर शासन करने वालेहैं। हम बहुतसे पुत्रों पौत्रों परिजनों सेवकों और पशुओं के साथ सुखदायक धनकी इन्द्र से याचना करते हैं। हे अश्वोंके स्वामी इन्द्र ! तुम हमको सुखी करने के लिए वह ऐश्वर्यलेकर यहाँ आओ।२-३। हे इन्द्र! जिस सुखको प्राचीन स्तोताओं ने प्राप्त किया था, उसी सुखको हमें दो। शत्रुओं के विजेता बहुतों द्वारा बुलाये गये पराक्रमी ऐश्वर्यशाली इन्द्र ! तुम दुष्ट राक्षसों का संहार करने में समर्थ हो ! तुम्हारे निमित्त यज्ञ में कौन सा हव्य-भाग प्राप्त हुआ है ? ।४। यज्ञादि कर्मों से युक्त तथा गुणगाथा पूर्वक स्तुति करने वाले यमराज वज्रधारी और रथारूढ़ इन्द्र की पूजा करते हैं। वे इन्द्र बहुतों को आश्रय देते हैं। वे बहुकर्मा एवं बल प्रदान करने वाले हैं। उनका स्तोता सुख प्राप्त करता एवं शत्रु के सामने वीरता पूर्वक डट जाता है ।५। (१३)

अया ह त्यं मायया वावृधानं मनोजुवा स्वतवः पर्वतेन।
अच्युता चिद् वीलिता स्वोजो रुजो वि दृलहा धृषता विरप्शिन्६
तं वो धिया नव्यस्या शविष्ठं प्रत्नं प्रत्नवत् परितंसयध्यै।
स नो वक्षदनिमानः सुवह्मेन्द्रो विश्वायति दुर्गहाणि ।।७
आ जनाय द्रुह्वणे पार्थिवानि दिव्यानि दीपयोऽन्तरिक्षा।
तपा वृषन् विश्वतः शोचिषा तान् ब्रह्मद्विषे शोचय क्षामपश्च ।।८
भुवो जनस्य दिव्यस्य राजा पार्थिवस्य जगतस्त्वेषसंदृक्।
धिष्व वज्रं दक्षिण इन्द्र हस्ते बिश्वा अजुर्य दयसे वि मायाः।।९

आ सयतमिन्द्र णः स्वस्ति शत्रुतूर्याय बृहतीममृध्राम् ।
यया दासान्यार्याणि वृत्रा करो बज्रिन् सुतुका नाहुषाणि ।।१०
स नो नियुद्भिः पुरुहूत वेधो विश्ववाराभिरा गहि प्रयज्यो ।
न या अदेवो वरते न देव आभिर्याहि तूयमा भद्र्यद्रिक् ।११।१४

हे इन्द्र ! तुम अपने बल से बलवान हो । तुमने मन के वेग के समान जाने वाले और असंख्यों गाँठों वाले वज्रसे उस माया द्वारा बढ़े हुए वृत्र को मार डाला । हे सुन्दर तेज वाले इन्द्र ! तुमने असुरों की सुन्दर सुदृढ़ पुरियों को ध्वस्त किया है ।६। हे इन्द्र ! हम प्राचीन कालीन ऋषियों के समान ही अभिनव स्तोत्रों द्वारा तुम्हें बढ़ाते हैं । तुम पुरातन एवं अत्यन्त पराक्रमी हो । वे सुन्दर रूप वाले इन्द्र हमारे रक्षक हों ।८। हे इन्द्र ! तुम सज्जनों से बैर करने वाले दुष्टों के लिये आकाश पृथिवी और अन्तरिक्ष को तीक्ष्ण तेज से भर देते हो । तुम अभीष्टों की वर्षा करने वाले हो, अपने तेस से सर्वत्र व्याप्त होकर उन दुष्टों को भस्मसात् करो ।८। हे अत्यन्त तेजस्वी दिखाई पड़ने वाले इन्द्र ! तुम दिव्य और पार्थिव ऐश्वर्य के स्वामी हो तुम अत्यन्त पूजनीय हो । अपने दाहिने हाथ में वज्र ग्रहण कर राक्षसों की माया को छिन्न-भिन्न करते हो ।९। हे इन्द्र ! तुम हमको महान माया अहिंसित और सुख देने वाला ऐश्वर्यदो, जिससे शत्रुओंका सामर्थ्य बढ़ने न पावें हे वज्रिन् ! जिस कर्म साधन से तुमने अकर्मण्यों को कर्मों में लगाया, उसी साधन से मनुष्यों के शत्रुओं को मारे जाने योग्य बनाते हो ।१०। हे इन्द्र ! तुम अत्यन्त पूजनीय एवं बहुतों के द्वारा बुलाये गयेहो ! तुम सभी के द्वारा कामना किये जाने वाले घोड़ों के पास आओ । जिन घोड़ों की गति को देवता या राक्षस कोई भी नही रोक सकता । उन घोड़ों के साथ शीघ्र ही हमारे सामने पधारो ।११।　　　　(१४)

सूक्त २३

(ऋषि—भरद्वाजो बार्हस्पत्यः । देवता—इन्द्रः । छन्द—त्रिष्टुप्)

सुत इत् त्वं निमिश्ल इन्द्र सोमे स्तोमे ब्रह्मणि शस्यमान उक्थे ।

यद् वा युक्ताभ्यां मघवन् हरिभ्यां बिभ्रद् वज्रं बाह्वोरिन्द्र यासि ॥१
यद् वा दिवि पार्ये सुष्विमिन्द्र वृत्रहत्येऽवसि शूरसातौ ।
यद् वा दक्षस्य बिभ्युषो अबिभ्यदरन्धयः शर्धत इन्द्र दस्यून् ॥२
पाता सुतमिन्द्रो अस्तु सोमं प्रणेनीरुग्रो जरितारमूती ।
कर्ता वीराय सुष्वय उ लोकं दाता वसु स्तुवते कीरये चित् ॥३
गन्तेयान्ति सवना हरिभ्यां बभ्रिर्वज्रं पपिः सोमं ददिर्गाः ।
कर्ता वीरं नर्यं सर्ववीरं श्रोता हवं गृणतः स्तोमवाहाः ॥४
अस्मै वयं यद् वावान तद् विविष्म इन्द्राय यो नः प्रदिवो अपस्कः ।
सुते सोमे स्तुमसि शंसदुक्थेन्द्राय ब्रह्म वर्धनं यथासत् ।५।१५

हे इन्द्र ! सोम के सुसिद्ध होने पर और महान् स्तोत्र के उच्चारित किये जाने पर तथा शास्त्र सम्मत विधि द्वारा आहूत होने पर तुम अपने रथ में घोड़ों को जोतते हो । हे ऐश्वर्यशालिन् ! तुम अपने दो घोड़ों से युक्त रथ पर दोनों हाथों से वज्र लेकर आते हो ।१। हे इन्द्र ! तुम रणक्षेत्र में स्तुति वाले यजमान के साथी होकर उसकी रक्षा करते हो और भय रहित होकर धर्मवान तथा भय ग्रस्त यजमान के कार्य में विघ्न उपस्थित करने वाले राक्षसों को पराजित करते हो ।२। इन्द्र सोम रसको पीते हैं । वे स्तुति करने वालेको सुगम मार्ग प्राप्त कराते हैं । वे सोमाभिषव करने वाले को सुन्दर निवास स्थान देते हैं । वे स्तोता को धन देते हैं ।२। वे इन्द्र अपने दोनों घोड़ों सहित तीनों सवनों में जाते हैं । वे वज्र को धारण करने वाले हैं । वे सुसिद्ध सोम की पीते हैं । वे गौओं का दान करने वालेको पुत्र देते और स्तोत्र करने वाले के स्तोत्र को सुनते हैं ।४। जो प्राचीन इन्द्र हमारे रक्षक कार्यों को करते हैं, उन्हीं इन्द्र के इच्छित स्तोत्र को हम उच्चारण करते हुए साधक उनको प्रवृद्ध करने के लिए हवियाँ देते हैं ।५। (१५)

ब्रह्माणि हि चकृषे वर्धनानि तावत् त इन्द्र मतिभिर्विविष्मः ।
सुते सोमे सुतपाः शंतमानि राण्ड्रया क्रियास्म वक्षणानि यज्ञैः ॥६

स नो बोधि पुरोडाशं रराणः पिबा तु सोमं गोऋजीकमिन्द्र ।
एदं बर्हिर्यजमानस्य सीदोरुं कृधि त्वायत उ लोकम् ॥७

स मन्दस्वा ह्यनु जोषमुग्र प्र त्वा यज्ञास इमे अश्नुवन्तु ।
प्रेमे हवासः पुरुहूतमस्मे आ त्वेयं धीरवस इन्द्र यम्याः ॥८

तं वः सखायः सं यथा सुतेषु सोमेभिरीं पृणता भोजमिन्द्रम् ।
कुवित् तस्मा असति नो भराय न सुष्विमिन्द्रोऽवसे मृधाति ॥९

एवेदिन्द्रः सुते अस्तावि सोमे भरद्वाजेषु क्षयदिन्मघोनः ।
असद् यथा जरित्र उत सूरिरिन्द्रो रायो विश्ववारस्य दाता ।
।१०।१८

हे इन्द्र ! जिस उद्देश्य से, तुमने स्तोत्रोंको बढ़ाया है, उसी उद्देश्य से वैसेही स्तोत्रों का उच्चारण हम तुम्हारे लिए करते हैं। हे सोमपायी इन्द्र ! तुम्हारे लिए सोम छनकर तैयार होने पर सुन्दर सुख देने वाले हविर्युक्त स्तोत्रों को उच्चारित करते हैं ।६। हे इन्द्र ! तुम प्रसन्न होते हुए हमारे पुरोडाश को ग्रहण करो । दही आदि मिश्रित सोम का पान करो । यजमानके कुश पर विराजित होओ । फिर जो यजमान तुम्हारी कामना करता है उसके स्थानको बढ़ाओ ।७। हे इन्द्र तुम अपनी इच्छानुसार हृष्टि को प्रसन्न होओ । यह सोम तुम्हें प्राप्त हो । हमारे स्तोत्र तुम्हारे समक्ष पहुँचे । यह स्तुति हमारे रक्षा के लिए तुम्हें प्रेरित करे । ।८। हे स्तुति करने वाले ! सोम सिद्ध होने पर धनदानी इन्द्र को परिपूर्ण करो । यह सोम बहुत परिमाण में इनको अर्पित करो । वह इन्द्र हमको पुष्ट करें और हमारी सन्तुष्टि में बाधक न हों ।९। सोम छनने पर हविरन्नयुक्त यजमान के स्वामी इन्द्र स्तुति करने वाले के लिए श्रेष्ठ मार्ग दिखाने वाले तथा वरणीय धनोंके देने वाले हैं, यह जानकर भरद्वाज ने स्तुति की हैं ।१०। (१८)

सूक्त २४ (तीसरा अनुवाक)

(ऋषि—भरद्वाजो बार्हस्पत्य । देवता—इन्द्रः । छन्द—त्रिष्टुप्)

वृषा मद इन्द्रे श्लोक उक्था सचा सोमेषु सुतपा ऋजीषी ।
अर्चत्र्यो मघवा नृभ्य उक्थैर्द्युक्षो राजा गिराभक्षितोतिः ॥१
ततुरिर्वीरो नर्यो विचेताः श्रोता हवं गृणत उर्व्यूतिः ।
वसुः शंसो नरां कारुधाया वाजी स्तुतो विदथे दाति वाजम् ॥२
अक्षो न चक्र्योः शूर बृहन् प्र ते मह्ना रिरिचे रोदस्योः ।
वृक्षस्य नु ते पुरुहूत वया व्यूतयो रुरुहुरिन्द्र पूर्वीः ॥३
शचीवतस्ते पुरुशाक शाका गवामिव स्रुतयः संचरणीः ।
वत्सानां न तन्तयस्त इन्द्र दामन्वन्तो अदामानः सुदामन् ॥४
अन्यदद्य कर्वरमन्यदु श्वो ऽसच्च सन्मुहुराचक्रिरिन्द्रः । HSJ:1:218
मित्रो नो अत्र वरुणश्च पूषा ऽर्यो वशस्य पर्येतास्ति ।५।१७

सोमयाग में इन्द्र का सोमजनित हर्ष यजमान, की इच्छाओं को पूर्ण करें । वे इन्द्र स्तोता की स्तुति से पूजे जाते हैं तथा वे स्वर्ग के स्वामी इन्द्र रक्षा करते हैं ।१। शत्रुओं की हिंसा करने वाले, बुद्धिमान पराक्रमी इन्द्र हमारे स्तोताओं के रक्षक घर देने वाले प्रशंसित और अन्न प्रदान करने वाले हैं ।२। हे इन्द्र ! पहियों को धुरी के समान तुम्हारी महिमा आकाश पृथिवीको स्थिर करती है,तुम बहुतों द्वारा बुलाये गये हो । तुम्हारे रक्षण-साधन वृक्षों को शाखाओंके समान बढ़ते हैं ।३। हे इन्द्र ! मेधावी हो । तुम्हारे कर्म गौओंके मार्ग के समान विस्तृत हैं । हे सुन्दर कर्म वाले इन्द्र ! तुम्हारी शक्ति बछड़ों के रस्सों के समान बैरियों को बांधती है ।४। इन्द्र उत्तरोत्तर अद्भुत कार्य करते हैं । वे सत्यासत्य कार्यों को बराबर देखते हैं । इन्द्र मित्र वरुण, पूषा और सवितादेव इस यज्ञ में हमारी कामनायें पूर्ण करें ।५। (१७)

वि त्वदापो न पर्वतस्य पृष्ठादुक्थेभिरिन्द्रानयन्त यज्ञैः ।
तं त्वाभिः सुष्टुतिभिर्वाजयन्त आजिं न जग्मुर्गिर्वाहो अश्वाः ॥६
न यं जरन्ति शरदो न मासा न द्याव इन्द्रमवकर्शयन्ति ।

वृद्धस्य चिद् वर्धतामस्य तनूः स्तोमेभिरुक्थैश्च शस्यमाना ॥७
न वीलवे नमते न स्थिराय न शर्धते दस्युजूताय स्तवान् ।
अज्रा इन्द्रस्य गिरयश्चिदृष्वा गम्भीरे चिद् भवति गाधमस्मै ॥८
गम्भीरेण न उरुणामत्रिन् प्रेषो यन्धि सुतपावन् वाजान् ।
स्था ऊ षु ऊर्ध्व ऊती अरिषण्यन्नक्तोर्व्युष्टौ परितक्म्यायाम् ॥९
सचस्व नायमवसे अभीक इतो वा तमिन्द्र पाहि रिषः
अमा चैनमरण्ये पाहि रिषो मदेम शतहिमाः सुवीराः ।१०।१८

हे इन्द्र ! स्तोत्र और हव्य द्वारा स्तोतागण तुमसे अभीष्ट पाते हैं, जैसे पर्वत के ऊँचे भाग के जल प्राप्त होता है। हे इन्द्र ! तुम स्तुतियों द्वारा पूजनीय हो। जैसे घोड़े वेग रणक्षेत्र में जाते हैं, वैसे भारद्वाज आदि अन्नाभिलाषी तुम्हारे पास जाते हैं ।६। जिस इन्द्र को वर्ष और महीने बूढ़ा नहीं बना सकते,तथा जिसे दुर्बल नहीं कर सकते उस सशक्त इन्द्र का शरीर हमारे स्तोत्रों से पूजित होकर आगे बढ़े ।७। हम इन्द्र की स्तुति के प्रभाव से दुष्टों के चंगुल में नहीं फँस पाते। वे इन्द्र के लिए बड़े-बड़े पर्वतभी तुच्छ हैं और अगाध स्थान भी उनके लिए नगण्य है। हे पराक्रमी एवं सोमपायी इन्द्र !तुम उदार हृदय वाले हो हमको अन्न। और बल दो। तुम हमारी रक्षा के लिए दिन में तथा रात में भी तैयार रहो ।८-९। हे इन्द्र ! तुम रणक्षेत्र में स्तोता की रक्षा के लिए उस पर कृपा करो। पास से या दूर से, जहाँ भी हो, वहीं से उनकी रक्षा करो। घर या जङ्गल से उसे सर्वत्र शत्रुओं से बचाओ। हम सुन्दर पुत्रादि से युक्त होकर सौ वर्ष तक सुख पूर्वक जीवन यापन करें ।१०। (१८)

सूक्त २५

(ऋषि–भरद्वाजो बार्हस्पत्यः। देवता–इन्द्रः। छन्द–त्रिष्टुप्)

या त ऊतिरवमा या परमा या मध्यमेन्द्र शुष्मिन्नस्ति ।
ताभिरू षु वृत्रहत्येऽवीर्न एभिश्च वाजैर्महान् न उग्र ॥१
आभिः स्पृधो मिथतीररिषण्यन्नमित्रस्य व्यथया मन्युमिन्द्र ।

आभिर्विश्वा अभियुजो विषूचीरार्याय विशोऽव तारीर्दासी:॥२
इन्द्र जामय उत येऽजामयो ऽर्वाचीनासो वनुषो युयुज्रे ।
त्वमेषां विथुरा शवांसि जहि वृष्ण्यानि कृणुही पराचः ॥३
शूरो वा शूरं वनते शरीरैस्तनूरुचा तरुषि यत् कृण्वैते ।
तोके वा गोषु तनये यदप्सु वि क्रन्दसी उर्वरासु ब्रवैते ॥४
नहि त्वा शूरो न तुरो न धृष्णुर्न त्वा योधो मन्यमानो युयोध ।
इन्द्र नकिष्ट्वा प्रत्यस्त्येषां विश्वा जातान्यभ्यसि तानि ।५।१६

हे इन्द्र ! तुम रणक्षेत्र में उत्तम, मध्यम तथा लघु राक्षसों से हमारी भले प्रकार रक्षा करो। हे इन्द्र ! तुम महान् हो। हमको उपभोग्य अन्य से युक्त करो।१। हे इन्द्र ! तुम हमारी स्तुतियों द्वारा शत्रु सेना को मारने वाली हमारी सेनाओं की रक्षा करते हुए शत्रु के आक्रमण को निष्फल करो। यज्ञादि कार्य करने वाले मनुष्यों के कर्मों में विघ्न डालने वालों को नष्ट करो।२। हे इन्द्र ! पास या दूर से जो शत्रु हमारे सामने आकर हिंसा करना चाहते हैं, उन शत्रुओं को अपने बल से नष्ट करो। इनके पराक्रम को नष्ट करो, इन्हें भगा दो।३। हे इन्द्र ! तुम्हारा कृपापात्र पुरुष वीर शत्रुओं को नष्ट करने में समर्थ होता है। ये दोनों पक्ष वाले, सन्तान, गाय, जल और उपजाऊ पृथिवी के लिए संग्राम करते हैं।४। हे इन्द्र ! तुम्हारे साथ युद्ध कर सकने की सामर्थ्य किसी में नहीं हैं, चाहे वह कैसा ही शत्रुओं का सामना करने वाला विजय, प्राप्त करने वाला योद्धा क्यों न हो। हे इन्द्र ! इनमें तुम्हारा प्रतिद्वन्द्वी कोई नहीं है, तुम इनमें सर्वश्रेष्ठ हो।५। (१६)

स पत्यत उभयोर्नृम्णयोर्यदी वेधसः समिथे हवन्ते ।
वृत्रे वा महो नृवति क्षये वा व्यचस्वन्ता यदि वितन्तसैते ॥६
अध स्मा ते चर्षणयो यदेजानिन्द्र त्रातोत भवा वरूता ।
अस्माकासो ये नृतमासो अर्य इन्द्र सूरयो दधिरे पुरो नः ॥७
अनु ते दायि मह इन्द्रियाय सत्रा ते विश्वमनु वृत्रहत्ये ।
अनु क्षत्रमनु सहो यजत्रेन्द्र देवेभिरनु ते नृषह्ये ॥८

एवा नः स्पृधः समतिस्वन्द्र रारन्धि मिथतीरदेवीः ।
विद्याम वस्तोरवसा गृणन्तो भरद्वाजा उत त इन्द्र नूनम्॥६॥२०

जो व्यक्ति शत्रुओं को रोकने को अथवा दासों से युक्त श्रेष्ठ घरके निमित्त परस्पर लड़ते हैं, उन दोनों में वही व्यक्ति धन पाता है, जिसके यज्ञ में ऋत्विग्गण इन्द्र के लिए यज्ञ करते हैं ।६। हे इन्द्र ! तुम्हारे स्तोता जब काँपने लगें तभी तुम उनकी रक्षा करो । हे इन्द्र ! हमारे जो श्रेष्ठ व्यक्ति तुम्हें प्राप्त करने वाले हों तुम उन्हें दुःख से बचाओ । हे इन्द्र ! जिन स्तुति करने वालों ने हमको पुरोभाग में स्थापित किया, तुम अपनी रक्षा करने वाले बनो ।७। हे इन्द्र ! तुम महानहो । शत्रुओं को मारने के लिए सभी शक्ति तुममें केन्द्रित हुई है । हे इन्द्र देवताओं तुम्हें शत्रुओं के हराने वाला बल दिया है ।८। हे इन्द्र ! इस प्रकार स्तुति की जाने पर तुम युद्ध से शत्रुओं का वध करने के लिए हमको उत्साहित करो । हिंसा करने वाली राक्षसी सेनाको तुम हमारे निमित्त वशीभूत करो । हे इन्द्र ! हम तुम्हारे स्तोता भरद्वाज अन्न युक्त गृह प्राप्त करें ।९। (२०)

सूक्त २६

(ऋषि–भरद्वाजो बार्हस्पत्यः । देवता–इन्द्रः । छन्द–त्रिष्टुप्)

श्रुधी न इन्द्र ह्वयामसि त्वा महो वाजस्य सातौ वावृषाणाः
स यद् विशोऽयन्त शूरसाता उग्रं नोऽवः पार्ये अहन् दाः ॥१
त्वां वाजी हवते वाजिनेयो महो वाजस्य गध्यस्य सातौ ।
त्वां वृत्रेष्विन्द्र सत्पतिं तरुत्रं त्वां चष्टे मुष्टिहा गोषु युध्यन्२
त्वं कविं चोदयोऽर्कसातौ त्वं कुत्साय शुष्णं दाशुषे वर्क् ।
त्वं शिरो अमर्मणः पराहन्नतिथिग्वाय शंस्यं करिष्यन् ॥३
त्वं रथं प्र भरो योधमृष्वमावो युध्यन्तं वृषभं दशद्युम् ।
त्वं तुग्रं वेतसवे सचाहन् त्वं तुजिं गृणन्तमिन्द्र तूतोः ॥४
त्वं तदुक्थमिन्द्र बर्हणा कः प्र यच्छता सहस्रा शूर दर्षि ।
अव गिरेर्दासं शम्बरं हन् प्रावो दिवोदासं चित्राभिरूती।५।२१

हे इन्द्र ! अन्न लाभ के लिए हम स्तुति करने वाले तुम्हें सोम-रस से सींचते हुए तुम्हारा आह्वान करते हैं । तुम अपने आह्वानको सुनो। जब वीरगण युद्ध के लिए जायँ, तब उनकी भले प्रकार रक्षा करना ।१। हे इन्द्र ! महान अन्न की प्राप्ति के लिए अन्नवान होकर भरद्वाज तुम्हारी स्तुति करते हैं। हे इन्द्र ! तुम सज्जनोंके रक्षक और दुष्टोंके मारने वालेहो । भरद्वाज तुम्हारा आह्वान करते हैं । वे मुष्टिका द्वारा ही शत्रुओं का नाश कर देते हैं । जब वे गौओं के लिए संग्राम कराते हैं, तब तुम्हारे भरोसे रहते हैं ।२। हे इन्द्र ! अन्न प्राप्ति के लिए, तुम 'भार्गव ऋषि' की प्रेरणा दो । हविदाता 'कुत्स' के निमित्त तुमने 'शुष्णासुर' को मारा था । तुमने "अथितिग्व" को सुख देने के लिए "शम्बरासुर" का सिर काट डाला था, वह अपने को अमर समझता था ।३। हे इन्द्र ! तुमने 'वृषभ' नामक राजा को युद्ध साधक रथ दिया जब वे दस दिनों तक शत्रुओं से युद्ध करते रहे तब तुमने उनकी रक्षा की थी । 'वेतसाके सहायक होकर 'तुग्रासुर' का वध किया था । तुमने स्तुति करने वाले 'तुजि' राजा को समृद्ध किया था ।४। हे इन्द्र ! तुम शत्रु संहारक हो, तुमने प्रशंसनीय कार्यों का सम्पादन किया है । हे वीर इन्द्र ! तुमने सौ-सौ और हजार 'शम्बर' की सेनाओं को चीर डाला । तुमने यज्ञादि के हिंसक 'शम्बरासुर' का हनन किया और तुमने 'दिवोदास' की अद्भुत रक्षा की ।५। (२१)

त्वं श्रद्धाभिर्मन्दसानः सोमैर्दभीतये चुमुरिमिन्द्र सिष्वप् ।
त्वं रजिं पिठीनसे दशस्यन् षष्टिं सहस्रा शच्या सचाहन् ॥ ६
अहं चन तत् सूरिभिरानश्यां तव ज्याय इन्द्र सुम्नमोजः ।
त्वया यत् स्तवन्ते सधवीर वीरास्त्रिवरूथेन नहुषा शविष्ठ ॥७
वयं ते अस्यामिन्द्र द्युम्नहूतौ सखायः स्याम महिन प्रेष्ठाः ।
प्रातर्दनिः क्षत्रश्रीरस्तु श्रेष्ठो घने वृत्राणां सनये धनानाम् ।८।२२

हे इन्द्र ! श्रद्धापूर्वक किये गये अनुष्ठान कर्मों द्वारा सोम रस से मुदित होकर तुमने 'दभीति' राजा के निमित्त 'चुमुरि' का संहार किया

है इन्द्र तुमने 'पिठीनस' को 'रजि' नामक कन्या दी थी । तुमने अपनी बुद्धि से साठ सहस्र वीरों को एक समय में ही नष्ट किया था । ।६। हे वीरों के साथी इन्द्र ! तुम तीन लोकों के रक्षक और शत्रुओं के विजेता हो । स्तुति करने वाले तुम्हारे द्वारा दिये गये सुख और बलकी याचना करते हैं । हे इन्द्र ! हम भरद्वाज तुम्हारे द्वारा दिये गये श्रेष्ठ सुख और बल को अपने स्तुति करने वालों के साथ पावें ।७। हे इन्द्र ! हम तुम्हारे मित्र रूप स्तुति करने वाले हैं । धन लाभ के लिए किये गये इन स्तोत्रों से हम तुम्हारे प्रीतिपात्र हों । 'प्रतर्दन' के पुत्र 'क्षत्रश्री' शत्रुओं का हनन कर तथा धन प्राप्त कर सबसे अधिक ऐश्वर्यवान् बनें ।८। (२२)

सूक्त २७

(ऋषि—भरद्वाजो बार्हस्पत्यः । देवता-इन्द्रः । छन्द—त्रिष्टुप्)

किमस्य मदे किम्वस्य पीताविन्द्रः किमस्य सख्ये चकार ।
रणा वा ये निषदि किं ते अस्य पुरा विविद्रे किमु नूतयासः ।।१
सदस्य मदे सद्वस्य पीताविन्द्रः सदस्य सख्ये चकार ।
रणा वा ये निषदि सत् ते अस्य पुरा विविद्रे सदु नूतनासः ।।२
नहि नु ते महिमनः समस्य न मघवन् मघवत्वस्य विद्म ।
न राधसोराधसो नूतनस्येन्द्र नकिर्ददृश इन्द्रियं ते ।।३
एतत् त्यत् त इन्द्रियमचेति येनावधीर्वरशिखस्य शेषः ।
वज्रस्य यत् ते निहतस्य शुष्मात् स्वनाच्चिदिन्द्र परमो ददार।४
वधीदिन्द्रो वरशिखस्य शेषो ऽभ्यावर्तिने चायमानाय शिक्षन् ।
वृचीवतो यद्धरियूपीयायां हन् पूर्वे अर्धे भियसापरो दर्त ।५।२३

सोम से पुष्ट होकर इन्द्र ने क्या किया ? सोम पान करने और सोमरस से मैत्री करके उन्होंने क्या किया ? प्राचीन और नवीन स्तोताओं ने तुमसे क्या पाया ? ।१। सोम पान से पुष्ट होकर इन्द्रने सुन्दर कर्मों को किया । सोम-पानके पश्चात् उन्होंने श्रेष्ठ कार्य किया । सोमसे

मैत्री होनेपर शुभ कार्य किया। हे इन्द्र ! प्राचीन और नवीन स्तोताओं ने तुमसे श्रेष्ठ कर्मों को प्राप्त किया था।२। हे ऐश्वर्य-सम्पन्न इन्द्र ! तुम्हारे समान अन्य किसी की महिमा का हम सबको ज्ञान नहीं। तुम्हारे समान वैभव और धन को भी हम नहीं जानते। हे इन्द्र ! तुम्हारे जितनी सामर्थ्य कोई भी प्रदर्शित नहीं कर सकता।३। हे इन्द्र! तुमने जिस पराक्रम से 'वरशिख' नामक राक्षस के पुत्र को मारा था, तुम्हारे उस पराक्रम को क्या हम नही जानते ? हे इन्द्र ! बल पूर्वक उद्यत तुम्हारे वज्र के घोर शब्द से ही बलवान् 'वरशिख' के पुत्र विदीर्ण हो गये।४। इन्द्र ने राजा 'चायमान' के पात्र 'अभ्यवर्ती' को इच्छित धन प्रदान करते हुए 'वरशिख' के वंशज 'वृचीवान' के पुत्रों को इन्द्रने मार डाला। 'वरशिख' के पुत्र मारे गये थे।५। (२३)

त्रिंशच्छतं वर्मिण इन्द्र साकं यव्यावत्यां पुरुहूत श्रवस्या।
वृचीवन्तः शरवे पत्यमानाः पात्रा भिन्दाना न्यर्थान्यायन् ॥६
यस्य गावावरुषा सूयवस्यू अन्तरू षु चरतो रेरिहाणा।
स सृञ्जयाय तुर्वशं परादाद् वृचीवतो दैववाताय शिक्षन् ॥७
द्वयाँ अग्ने रथिनो विंशतिं गा वधूमतो मघवा मह्यं सम्राट्।
अभ्यावर्ती चायमानो ददाति दूणाशेयं दक्षिणा पार्थवानाम् ।८।२४

हे इन्द्र ! तुम बहुत मनुष्यों द्वारा आदृत हो। तुम्हें युद्ध में पराजित कर अन्न यश प्राप्त करनेकी आशा वाले यज्ञ पात्रोंको तोड़नेवाले तथा कवच धारण करने वाले 'वरशिख' के एक सौ तीस पुत्र आक्रमण करते हुए एक साथ ही नाश को प्राप्त हुए।६। जिनके अश्व आकाश-पृथिवी के बीच चलते हैं वे इन्द्र 'सृञ्जय' राजा के आगे 'तुर्वश' राजा को समर्पित करतेहैं। उन्होंने देवावाहक वंशीय राजा अभ्यवर्तीके निकट 'वरशिख' के पुत्रों को वश में कर लिया था।७। हे अग्ने ! अत्यन्त दान करने वाले, राजसूय यज्ञकर्त्ता 'चायमान' के पुत्र 'अभ्यवर्ती' ने हमें दासियों सहित रथ और बीस गौएँ प्रदान की। वृथु वंशीय अभ्यवर्ती की इस दक्षिणा का कोई विनाश नहीं कर सकता।८। (२४)

सूक्त २८

(ऋषि—भरद्वाजो बार्हस्पत्यः । देवता—भावः इन्द्रः । छन्द—
त्रिष्टुप्, जगती, अनुष्टुप्)

आ गावो अग्मन्नुत भद्रमक्रन् त्सीदन्तु गोष्ठे रणयन्त्वस्मे ।
प्रजावतीः पुरुरूपा इह स्युरिन्द्राय पूर्वीरुषसो दुहानाः ।।१
इन्द्रो यज्वने पृणते च शिक्षत्युपेद् ददाति न स्वं मुषायति ।
भूयोभूयो रयिमिदस्य वर्धयन्नभिन्ने खिल्ये नि दधाति देवयुम्।।२
न ता नशन्ति न दभाति तस्करो नासामामित्रो व्यथिरा दधर्षति।
देवाँश्च याभिर्यजते ददाति च ज्योगित् ताभिः सचते गोपतिः
सह ।।३
न ता अर्वा रेणुककाटो अश्नुते न संस्कृतत्रमुप यन्ति ता अभि ।
उरुगायमभयं तस्य ता अनु गावो मर्तस्य वि चरन्ति यज्वनः।।४
गावो भगो गाव इन्द्रो मे अच्छान् गावः सोमस्य प्रथमस्य भक्षः।
इमा या गावः स जनास इन्द्र इच्छामीद्धृदा मनसा चिदिन्द्रम्५
यूयं गावो मेदयथा कृशं चिदश्रीरं चित् कृणुथा सुप्रतीकम् ।
भद्रं गृहं कृणुथ भद्रवाचो बृहद् वो वय उच्यते सभासु ।।६
प्रजावतीः सूयवसं रिशन्तीः शुद्धा अपः सुप्रपाणे पिबन्तीः ।
मा वः स्तेन ईशत माघशंसः परि वो हेती रुद्रस्य वृज्याः ।।७
उपेदमुपपर्चनमासु गोषूप पृच्यताम् ।
उप ऋषभस्य रेतस्युपेन्द्र तव वीर्ये ।८।२५

गौएँ हमारे गृह में आकर हमारा मङ्गल करें । वे हमारे गोष्ठ मे प्रवेश करती हुई प्रसन्न हों । इस गोष्ठ मे विभिन्न रङ्ग की गौएँ सन्तानवती होकर इन्द्र के लिए उषाकाल में दूध दें । हे इन्द्र ! तुम यज्ञकर्त्ता और स्तोताको आशा किया हुआ धन देते हो । तुम उनको सदा धन देते और उनसे अपने धन को कभी नही लेते हो । वे इन्द्र लगातार धन-वृद्धि करते हैं और अपनी कामना करने वालों को शत्रुओ द्वारा न मार सकने योग्य स्थान में आश्रय देते हैं ।१-२। हमारी गौएं नष्ट न हों । उन्हें चोर न चुरावें शत्रुओं के हथियार उन पर न गिरें ।

गौओं के स्वामी जिन गौओं को इन्द्रके निमित्त देते हैं,उन गौओं सहित वे चिरकाल तक सुखी रहें।३। यज्ञ के लिए अश्व उन गौओं को न पा सकें। यज्ञ करने वाले यजमान को गौयें स्वाधीनता से घूमती रहें।४। गौयें हमारे लिए धन रूप रूप हो। इन्द्र हमको गौयें दे। गौयें हवियों मे प्रमुख सोम रूप भोजन दें, गौयें ही इन्द्र-रूप होती हैं, जिन्हें श्रद्धा सहित हम चाहते हैं।५। हे गौओं ! हमको पुष्ट करो ! तुम हमारे कृश और रोगी शरीर को सुन्दर बनाओ। तुम कल्याणमय शब्द करने वाली हो, हमारे घर को कल्याणकारी बनाओ। हे गौओं ! यज्ञ मण्डप में तुम्हारा महान अन्न ही यश प्राप्त करता है।६। हे गौओ ! तुम संतानवती होओ, सुन्दर घास खाओ और सुख प्राप्त तालाब आदि का स्वच्छ जल पीओ। तुम्हारा स्वामी चोर न हो। हिंसक तुम्हारा शासन न करे। परमात्मा काल रूप अस्त्र तुमसे दूर ही रहे।७। हे इन्द्र ! तुम्हारे बलके लिए गौओं की पुष्टि स्वीकार हो और गौओं में गर्भ धारण वाले बैलों का बल स्वीकार हो।८।   (५)

॥ षष्ठोऽध्यायः समाप्तः ॥

सूक्त २९

(ऋषि-भरद्वाजो बार्हस्पत्यः। देवता-इन्द्रः। छंद-त्रिष्टुप्)

इन्द्रं वो नरः सख्याय सेपुर्महो यन्तः सुमतये चकानाः।
महो हि दाता वज्रहस्तो अस्ति महामु रण्वमवसे यजध्वम् ॥१
आ यस्मिन् हस्ते नर्या मिमिक्षुरा रथे हिरण्यये रथेष्ठाः।
आ रश्मयो गभस्त्योः स्थूरयोराध्वन्नश्वासो वृषणो युजानाः।।२
श्रिये ते पादा दुव आ मिमिक्षुर्धृष्णुर्वज्री शवसा दक्षिणावान्।
वसानो अत्क सुरभिं दृशे कं स्वर्ण नृतविषिरो बभूथ ॥३
स सोम आमिश्लतमः सुतो भूद् यस्मिन् पक्तिः पच्यते सन्ति धानाः।
इन्द्रं नरः स्तुवन्तो ब्रह्मकारा उक्था शंसन्तो देववाततमाः ॥४
न ते अन्तः शवसो धाय्यस्य वि तु बाबधे रोदसी महित्वा।

आ ता सूरिः पृणति तूतुजानो यूथेवाप्सु समीजमान ऊती ॥५
एवेदिन्द्रः सुहव ऋष्वो अस्तूती अनूती हिरिशिप्रः सत्वा ।
एवा हि जातो असमात्योजाः पुरू च वृत्रा हनति नि दस्यून् ६।१

हे मनुष्यो ! तुम्हारे ऋत्विक्गण मैत्री भाव से इन्द्र की सेवा करते हैं । वे श्रेष्ठ स्तोत्रों का उच्चारण करते हैं । उनकी बुद्धि सुन्दर तथा उदार है, क्योंकि हाथमें वज्र धारण करने वाले इन्द्र महान् धन देते हैं इसलिए रक्षा के निमित्त उन महान् इन्द्र का पूजन करो ।१। जिस इन्द्र के द्वारा मनुष्योंका हित करने वाला धन एकत्र होताहै, जो इन्द्र रथपर आरूढ़ होते हैं, जिनके हाथोंमें रस्सियाँ नियमित रहती हैं, जिन्हें सेवन समर्थ अश्व रथ में जुड़कर वहन करते हैं,उन इन्द्र की हम स्तुति करते हैं ।२। हे इन्द्र ऐश्वर्य प्राप्ति के लिए भरद्वाज तुम्हारे चरणों में अपनी सेवा भेंट करते हैं । तुम अपने पराक्रम से शत्रुओंको हराते हो । हे सब में प्रमुख इन्द्र ! तुम सबके दर्शन के लिए सुन्दर और सदा चलने योग्य रूप धारण करके सूर्य के समान घूमते हो ।३। अभिषुत होने पर सोम को भले प्रकार मिश्रित किया है, उसके तैयार होने पर पकाने योग्य पुरोडाशका पाक किया जाता है । भुने हुए जौ हव्यके लिए तैयार होते हैं । हवि रूप अन्नके तैयार करने वाले ऋत्विग्गण स्तोत्रों से इन्द्र की स्तुति करते हैं । वे स्तोत्र उच्चारण करते हुए इन्द्र का सामीप्य प्राप्त करते हैं ।४। हे इन्द्र ! तुम्हारे बलका पार नहीं पाया जाता । आकाश और पृथिवी उस महान् बल से डर जाती हैं । जैसे गौओं का पालने वाला जलसे गौओं को तृप्त करता है वैसेही स्तुति करने वाली तृप्ति-दायक हवियों द्वारा द्वारा हम विधिवत् यज्ञ करते हुए तुम्हें तृप्त करते हैं । वे हरी नासिका वाले महान् इन्द्र इस प्रकार मख में आहूत किये जा सकते हैं । इन्द्र स्वयं पधारें तो भी स्तुति करने वालों को धन प्रदान करते हैं । इस प्रकार महान् पराक्रम वाले इन्द्र प्रकट होकर अनेकों वृत्र जैसे राक्षसों और शत्रूओं का संहार कर डालते हैं ।५-६। (१)

सूक्त ३०

(ऋषि–भरद्वाजो बार्हस्पत्यः । देवता–इन्द्र । छंद–त्रिष्टुप्)

भूय इद् वावृधे वीर्याय एको अजुर्यो दयते वसूनि ।
प्र रिरिचे दिव इन्द्रः पृथिव्या अर्धमिदस्य प्रति रोदसी उभे ॥१

अधा मन्ये बृहदसुर्यमयस्य यानि दाधार नकिरा मिनाति ।
दिवे दिवे सूर्यो दर्शतो भूद् वि सद्मान्युर्विया सुक्रतुर्धात् ॥२

अद्या चिन्नू चित् तदपो नदीनां यदाभ्यो अरदो गातुमिन्द्र ।
नि पर्वता अद्मसदो न सेदुस्त्वया हलहानि सुक्रतो रजांसि ॥३

सत्यमित् तन्न त्वावाँ अन्यो अस्तीन्द्र देवो स मर्त्यो ज्यायान् ॥
अहन्नहिं परिशयानमर्णो ऽवासृजो अपो अच्छा समुद्रम् ॥४

त्वमपो वि दुरो विषूचीरिन्द्र हलहमरुजः पर्वतस्य ।
राजाभवो जगतश्चर्षणीनां साकं सूर्यं जनयन् द्यामुपासम् ।५।२

वृत्र आदि राक्षसों का हनन कार्य करनेके निमित्त इन्द्र पुनः उत्तेजित हुए हैं । वे श्रेष्ठ एवं अजर इन्द्र स्तुति करने वालों को धन दे । इन्द्र आकाश पृथिवी का अतिक्रमण करते हैं । इन्द्रका अर्द्ध भाग संपूर्ण आकाश पृथिवी के बराबर है ।१। अब हम इन्द्र की शक्ति की स्तुति करते हैं । वह शक्ति असुरों को दग्ध करनेमें समर्थ है । इन्द्र जिन कर्मों के धारण करने वाले हैं उन्हें रोकनेमें कोईभी समर्थ नही हैं । वे नित्य प्रति वृत्रद्वारा ढकेहुए सूर्य को दर्शन करने योग्य बनाते हैं । इन श्रेष्ठकर्मा इन्द्र ने ही लोकों का विस्तृत किया है ।२। हे इन्द्र ! पूर्व के समान आज तुम्हारा नदियों को प्रवाहमान रखने वाला कार्यजारी हैं । नदियों के प्रवाहित होने के लिए तुमने मार्ग निर्मित्त किया है । भोजनके लिए बैठे हुए मनुष्यके समान पर्वतभी तुम्हारी आज्ञासे स्थित होकर बैठेहैं । हे श्रेष्ठकर्मा इन्द्र ! सभा लोकोंको तुमने ही स्थिर किया है ।३। हे इन्द्र

अन्य कोई देवता तुम्हारे समान नहीं है, यह नितांत सत्य है। तुम्हारे समान कोई मनुष्य भी नहीं है। तुमसे बढ़कर कोई देवता या मनुष्य नहीं है,यह भी नितांत सत्यही है। जल-राशिको ढककर शयन करनेवाले वृत्रका तुमने वध किया था जल-राशिको समद्रमें गिरने के लिए छोड़ा था।४। हे इन्द्र ! वृत्रद्वारा ढके हुए जल को सब ओर बहने के लिए तुमने छोड़ा था। तुमने मेघ के बंधनों को काट डाला। सूर्य और उषा को एक समय में ही प्रकाशित करने वाले, तुम अखिल विश्वके स्वामी होओ।५। (२)

सूक्त ३१

(ऋषि–सुहोत्रः । देवता–इन्द्रः । छंद–त्रिष्टुप् शक्वरी)

अभूरेको रयिपते रयीणामा हस्तयोरधिया इन्द्र कृष्टीः ।
वि तोके अप्सु तनये च सूरे ऽवोचन्त चर्षणो विवाचः ॥१
त्वद् भियेन्द्र पार्थिवानि विश्वा ऽच्युता चिच्च्यावयन्ते रजांसि ।
द्यावाक्षामा पर्वतासो वनानि विश्वं दृलहं भयते अज्मन्ना ते ॥२
त्वं कुत्सेनाभि शुष्णमिन्द्राऽशुषं युध्य कुयवं गविष्टौ ।
दश प्रपित्वे अध सूर्यस्य सुषायश्चक्रमविवे रपांसि ॥३
ऽवं शतान्यव शम्बरस्य पुरो अघन्थाप्रतीनि दस्योः ।
अशिक्षो यत्र शच्या शचीवो दिवोदासाय सुन्वते सुतक्रे
भरद्वाजाय गृणते वसूनि ॥४
स सत्यसत्वन् महते रणाय रथमा तिष्ठ तुविनृम्ण भीमम् ।
याहि प्रपथिन्नवसोप भद्रिक् प्र च श्रुत श्रावय चर्षणिभ्यः ।५।३

हे वैभव के प्रदानकर्त्ता इन्द्र ! तुम ही धनोंके मुख्य स्वामीहो तुम अपने भुजबल से प्रजाओं के धारण करने वाले हो। मनुष्यघण शत्रु के जीतने वाले पुत्र-पौत्र एवं वृष्टि उद्देश्यसे तुम्हारी विभिन स्तुति करते

हैं ।१। हे इंद्र ! तुम्हारे डरसे अंतरिक्ष में उत्पंन नजल गिरने योग्य होनेपर भी मेघ द्वारा गिराये जाते हैं । हे इंद्र ! आकाश, पृथिवी,पर्वत वृक्ष तथा सभी स्थावर जङ्गम जीव तुम्हारे आगमनसे भयभीत होते हैं हे इंद्र ! 'कुत्स' की सहायता के लिए तूमने शुष्ण' से युद्ध किया था। युद्ध में तुमने 'कुयव' को मारा था । तुमने संग्राममें सूर्यके रथके पहिये का हरण किया उस समय सूर्य का रथ एक ही पहिए का रह गया । पापी राक्षसों का तुमने वध किया था ।२-३। ! तुमने शम्बर नामक राक्षस के सौ सुरों को ध्वस्त किया था । हे मेधावी इंद्र ! तुमने सोम अभिषुत करने वाले दिवोदास को तथा स्तुति करने वाले भरद्वाज को धन दिया था ।४। हे अजेय वीरों वाले एवं अत्यंत धन वाले इंद्र ! भीषण युद्धके लिए अपने विकराल रथपर चढ़ो। हे श्रेष्ठ मार्गगामी इंद्र तुम अपने रक्षा साधनों सहित हमारे सामने आओ । हमको सब मनुष्यों में प्रसिद्ध करो ।५।　　　　　　　　　　　　　　　　(३)

सूक्त ३२

(ऋषि—सुहोत्रः । देवता—इंद्रः । छंद—त्रिष्टुप्)

अपूर्व्या पुरुतमान्यस्मै महे वीराय तवसे तुराय ।
विरप्शिने वज्रिणे शंतमानि वचांस्यासा स्थविराय तक्षम् ॥१
स मातरा सूर्येणा कवीनामवासयद् रुजदद्रिं गृणानः ।
स्वाधीभिर्ऋक्वभिर्वावशान उदुस्त्रियाणामसृजन्निदानम् ।
स वह्निभिर्ऋक्वभिर्गोषु शश्वन् मितज्ञुभिः पुरुकृत्वा जिगाय ।
पुरः पुरोहा सखिभिः सखीयन् दृलहा रुरोज कविभिः कविः सन् ३
स नीव्याभिर्जरितारमच्छा महो वाजेभिर्महाद्भिश्च शुष्मैः ।
पुरुवीराभिर्वृषभ क्षितीनामा गिर्वणः सुविताय प्र याहि ।।४
स सर्गेण शवसा तक्तो अत्यैरप इन्द्रो दक्षिणतस्तुराषाट् ।
इत्था सृजाना अनपावृदर्थं दिवेदिवे विविषुरप्रमृष्यम् ।५।४

महान् शत्रुहन्ता, वेगवान् स्तुत्य वज्रधारी एवं बढ़े हुए इंद्र के निमित्त हमने अपने मुखल सविस्तृत सुखप्रद एवं अपूर्व स्तोत्रोंका उच्चा-

रण किया है ।१। मेधावी अङ्गिराओं के लिये इंद्र ने स्वर्ग और पृथवी की सूर्यके प्रकाशसे प्रकाशितकिया और उन अङ्गराओं द्वारा स्तुतहोकर पर्वतो को चूर कर डाला । स्तुति करने वाले अंगिराओं के द्वारा बार-म्बार याचना करने पर इंद्र ने गौओं को बंधन से छुड़ा दिया । उस बहुकर्मा इंद्र ने यज्ञ करने वाले अंगिराओं से मिलकर शत्रुओं को हराया तथा राक्षस-नगरियोंको ध्वस्त किया ।२-३। स्तुति द्वार, उपास्य एवं अभीष्टों के पूर्ण करने वाले इंद्र ! तुम महान् अन्न,बल और बहुत बछड़े वाली युवती वड़वा गौ सहित अपने स्तोताओं को सुखी करनेके लिये उसके सामने पधारो ।४। दुष्टों को वशीभूत करने वाले इंद्र सदा अपने बल से गमनशील तेज के द्वारा सूर्य के दक्षिणायन होने पर जल को छोड़ते हैं इस प्रकार जल राशि उस सुशांत समुन्द्र में नित्य प्रति गिरती है,जिससे वह फिर नहीं लौटती ।५।   (४)

सूक्त ३३

(ऋषि–शुनहोत्रः । देवता–इंद्रः । छंद–त्रिष्टुप्)

य ओजिष्ठ इन्द्र तं सु नो दा मदो वृषन् त्स्वभिष्टिर्दास्वान् ।
सौवस्व्यं यो वनवत् स्वश्वो वृत्रा समत्सु सासहदमित्रान् ।।१
त्वां हीन्द्रावसे विवाचो हवन्ते चर्षणयः शूरसातौ ।
त्वं विप्रेभिर्वि पणीरशायस्त्वोत इत् सनिता वाजमर्वा ।
त्वं ताँ इन्द्रोभयाँ अमित्रान् दासा वृत्राण्यार्या च शूर ।
वधीर्वनेव सुधितेभिरत्कैरा पृत्सु दर्षि नृणां नृतम ।।३
स त्वं न इन्द्राकवाभिरूती सखा विश्वायुरविता वृधे भूः ।
स्वर्षाता यद्ध्वयामसि त्वा युध्यन्तो नेमधिता पृत्सु शूर ।।४
नूनं न इन्द्रापराय च स्या भवा मृलीक उत नो अभिष्टौ ।
इत्था गृणन्तो महिनस्य शर्मन् दिवि ष्याम पार्ये गोषतमाः ।५।५

हे कामनाओं की वर्षा करने वाले इंद्र हमको सुंदर स्तुति करने वाला हव्यदाता एक पुत्र दो । वह श्रेष्ठ घोड़े पर चढ़कर युद्धमें

सुंदर घोड़ों वाले विरुद्धाचारी शत्रुओं को पराजित करे।१। हे इंद्र स्तुति रूप वाणी वाले मनुष्य युद्ध में रक्षा के निमित्त तुम्हें बुलाते हैं तुमने अङ्गिराओ के साथ पणियोंको माराथा, तुम्हारा उपासक तुम्हारा आश्रय प्राप्त करता हुआ अन्न पाता है।२। हे वीर इन्द्र ! तुम दस्यु ओर आर्य दोनों प्रकार के शत्रुओं को दण्ड देते हो। जैसे काठ के काट वाला कुल्हाड़ी से वृक्षोंको काटता है, वैसे ही युद्ध क्षेत्रमें तुम भले प्रकार प्रयुक्त हथियारों से शत्रुओं को काटते हो।३। हे इन्द्र ! तुम सब ओर जाने वाले हो। तुम अपने उत्तम रक्षा साधकों से हमारे ऐश्वर्य के बढ़ाने वाले सखा रूपहोओ। अपने पुरुषों सहित संग्राम करने वाले हम धन प्राप्ति के लिए तुम्हें बुलाते हैं।४। हे इन्द्र ! तुम इस समय तथा अन्य समयों में हमारे होओ। हमारी अवस्था के अनुसार हमको सुख दो। इस प्रकार स्तोता गौओं के इच्छुक होकर तुम्हारे उज्ज्वल मुख में रहें। है इन्द्र ! तुम महान् हो।।। (५)

सूक्त ३४

(ऋषि—शुनहोत्रः । देवता—इन्द्र । छन्द—त्रिष्टुप्)

सं च त्वे जग्मुर्गिर इन्द्र पूर्वीर्वि च त्वद् यन्ति यिश्वो मनीषाः।
पुरा नून च स्तुतस्य ऋषीणाँ पस्पृध्र इन्द्रे अध्युक्थार्का ॥१
पुरुहूतो यः पुरुगूर्त ऋभ्वां एकः पुरुप्रशस्तो अस्ति यज्ञैः।
रथो न महे जवसे युजानो ऽस्माभिरिन्द्रो अनुमाद्यो भूत् ॥२
न यं हिसन्ति धीतयो न वाणीरिन्द्रं नक्षन्तीदभि वर्धयन्तीः।
यदि स्तोतारः शतं यत् सहस्रं गृणन्ति गिवणसं शं तदस्मै ॥३
अस्मा एतद् दिव्यर्चेव मासा मिमिक्ष इन्द्रे न्ययामि सोमः।
जन न धन्वन्नभि सं यदापः सत्रा वावृधुर्हवनानि यज्ञैः ॥४
अस्मा एतन्मह्याङ्गुषमस्मा इन्द्राय स्तोत्रं मतिभिरवाचि।
असद् यथा महति वृत्रतूर्य इन्द्रो विश्वायुरविता वृधश्च ।५।६

हे इन्द्र! तुममें अगणित स्तोत्र मिलते हैं। तुमसे स्तुति करने वालों

की प्रशंसा काफी होती है । पूर्व समयमें तथा अब भी ऋषियोंमें स्तोत्र साधनों और मंत्रादि युक्त इन्द्र के पूजन में परस्पर स्पर्धा होती है ।१। हम सदा इन्द्र को प्रसंन करते हैं । वे बहुतों के द्वारा बुलाये गए, महान् अद्वितीय एवं यजमानों द्वारा भले प्रकार पूजित हैं । हम रथ के समान इन्द्र के प्रति प्रीतियुक्त होकर लाभ के लिए सदा उनकी स्तुति करें ।२। सम्पन्नता का विधान करने वाले स्तोत्र इन्द्रके सामने जाय । कर्म और स्तुतियाँ इन्द्रको बाध्य नहीं करती । सौ हजार स्तुति करने वाले स्तुत्य इन्द्र की स्तुति करते हुए उनकी स्तुति करते हैं ।३। इस यज्ञ दिवस में स्तोत्र के समान पूजा सहित इन्द्र के लिए मिश्रित सोमरस उपस्थित हैं। जैसे मरुभूमि के लिए गमन करने वाला जल प्राणियों का पालन करता है, वैसे ही हवियोंके साथ,अर्पित स्तोत्र इन्द्रकी वृद्धि करते हैं ।४। सर्वत्र गमनशील इन्द्र भीषण युद्ध में हमारे रक्षक और समृद्धि के करने वाले हों । इसलिए स्तुति करने वालों के स्तोत्र आग्रह सहित इन्द्र के निमित्त उच्चारित होते हैं ।५।
(६)

सूक्त ३५

(ऋषि-नरः । देवता—इन्द्रः । छन्द—त्रिष्टुप्)

कदा भुवन् रथक्षयाणि ब्रह्म कदा स्तोत्रे सहस्रपोष्यं दाः ।
कदा स्तोमं वासयोऽस्य राया कदा धियः करसि वाजरत्नाः ॥१
कर्हि स्विन् तदिन्द्र यन्नृन् वीरैर्वीरान् नीलयासे जयाजीन् ।
त्रिधातु गा अधि जयासि गोष्विन्द्र द्युम्नं स्वर्वद् धेह्यस्मे ॥२
कर्हि स्वित् तदिन्द्र यज्जरित्रे विश्वप्सु ब्रह्म कृणवः शविष्ठ ।
कदा धियो न नियुतो युवासे कदा गोमघा हवनानि गच्छाः ॥३
स गोमघा जरित्रे अश्वश्चन्द्रा वाजश्रवसो अधि धेहि पृक्षः ।
पीपिहीषः सुदुघामिन्द्र धेनुं भरद्वाजेषु सुरुचो रुरुच्याः ॥४
तमा नूनं वृजनमन्यथा चिच्छूरो यच्छक्र वि दुरो गृणीषे ।
मा निररं शुक्रदुघस्य धेनोराङ्गिरसान् ब्रह्मणा विप्र जिन्व ।५।७

हे इन्द्र ! तुम रथारूढ़ हो । तुम्हारे स्तोत्र कब पहुँचेगें ? मुझ स्तोता

को तुम सहस्र पुरुषोंयुक्त गौएँ कब प्रदान करोगे? मुझ स्तुति करनेवाले स्तोता को धन से कब पुरस्कृत करोगे? तुम हमारे यज्ञादि कर्मोंको अन्न से कब सुशोभित करोगे ?। हे इन्द्र ! तुम हमारे पुरुषों से शत्रुओं के पुरुषों को और हमारे पुत्रोंसे शत्रुओं के पुत्रोंको कब मिलाओगे ? रण-क्षेत्र में तुम हमको कब विजय लाभ कराओगे ? तुम गमनशील शत्रुओं से दूध, दही और घृतादि धारण करने वाली गौओं को कब जीतोगे ? हे इन्द्र! हमको धन-प्राप्ति कब कराओगे ? ।१-२। हे इन्द्र! स्तुति करने वाले को तुम कब विविध प्रकार के अन्न दोगे ? तुम कब अपने यज्ञ में स्तोत्र को सुसंगत करोगे ? तुम स्तुति करने वालों को कब गौ प्रदान करने के योग्य बनाओगे ? हे इन्द्र ! तुम गौ प्रदान करने वाला, अश्वों द्वारा प्रसंन करने वाला और बल से प्रसिद्ध अन्न हम भरद्वाज वंशीय स्तोताओं को प्रदान करो । तुम अन्नों को और सरलता से दुहते योग्य गौओं को पुष्ट करो । वे गौवे जिससे सुन्दर कांति वाली हों, तुम वैसी ही कृपा करो । तुम अत्यन्त पराक्रमी और शत्रु का संहार करने वाले हो । हम स्तोता इस प्रकार की स्तुति करते हैं। हे इन्द्र ! तुम श्रेष्ठ पदार्थों के देने वाले हो, हम तुम्हारे स्तोत्र का उच्चारण करने में पीछे नहीं हटते । हे इन्द्र ! तुम अङ्गिराओं को अन्न द्वारा प्रसंन करो ।४-५।
(७)

सूक्त ३६

(ऋषि - नरः। देवता—इन्द्रः। छन्द—त्रिष्टुप्)

सत्रा मदासस्तव विश्वजन्याः सत्रा रायोऽध ये पार्थिवासः ।
सत्रा वाजानामभवो विभक्ता यद् देवेषु धारयथा असुर्यम् ॥१
अनु प्र येजे जन ओजो अस्य सत्रा दधिरे अनु वीर्याय ।
स्यूमगृभे दुधयेऽर्वते च क्रतुं वृञ्जन्त्यपि वृत्रहत्ये ॥२
तं सध्रीचीरूतयो वृष्ण्यानि पौंस्यानि नियुतः सश्चुरिन्द्रम् ।
समुद्रं न सिन्धव उक्थशुष्मा उरुव्यचसं गिर आ विशन्ति ॥३
स रायस्खामुप सृजा गृणानः पुरुश्चन्द्रस्य त्वमिन्द्र वस्वः ।

पतिर्वभूथासमो जनानामेको विश्वस्य भुवनस्य राजा ॥४
स तु श्रुधि श्रुत्या यो दुवोयुर्द्यौर्न भूमाभि रायो अर्यः ।
असो यथा नः शवसा चकानो युगेयुगे वयसा चेकितानः ।५।८

हे इन्द्र ! तुम्हारा सोम पीनेसे उत्पन्न हुआ आह्लाद हमारे लिए कल्याणकारी होता है । तीनों लोकों में स्थित तुम्हारा धन अवश्य ही सबका मंगल करने वाला हैं । हे इन्द्र ! तुम सत्य ही अन्न प्रदान करने वाले हो । तुम देवताओं से अधिक बल धारण करने वालेहो ।१। वीरत्व लाभ के निमित्त यजमान इन्द्र को पुरोभाग में धारण करते हुए इन्द्र के बलकी विशेष प्रकार पूजा करते हैं । वे शत्रुओं के दलों के रोकने वाले तथा उनका हनन करने वाले और उन पर आक्रमण करने वाले इन्द्र वृत्र को मारेंगे, इसलिए यजमान उनकी सेवा करते हैं ।२। मरुद्गण सुसंगत होकर इन्द्र की सेवा करते हैं और वीर्य बल एवं रथ में जुड़ने वाले उनके घोड़े भी इन्द्र की सेवा करते हैं । जैसे नदियाँ समुद्र ने प्रवेश करती हैं जैसे उपाषशा रूप एवं बल से युक्त स्तुतियाँ इन्द्र से मिलती हैं ।३। हे इन्द्र स्तुति की जाने पर तुम बहुतों को अन्न प्रदान करने और गृह दिलाने वाले अन्नको प्रवाहित करो । तुम सब प्राणियों के मुख्य स्वामी तथा सभी उत्पन्न जीवों के एक-मात्र ईश्वर हो ।४। हे इन्द्र ! तुम सुनने योग्य स्तोत्रों को सुनो । हमारी सेना की कामना करते हुए सूर्य के समान शत्रुओं के धन के जेता बनो । हे इन्द्र ! तुम हर समयमें स्तुत होकर और हव्य रूप अन्न से प्रकाशमान होकर पहले के समान ही हमारे पास रहो ।५। (८)

सूक्त ३७

(ऋषि–भरद्वाजो बार्हस्पत्यः । देवता–इन्द्रः । छन्द–त्रिष्टुप्)

अर्वाग्रथं विश्ववारं त उग्रेन्द्र युक्तासो हरयो वहन्तु ।
कीरिश्चिद्धि त्वा हवते स्वर्वानृधीमहि सधमादस्ते अद्य ॥१
प्र द्रोणे हरयः कर्माग्मन् पुनानास ऋज्यन्तो अभूवन् ।

इन्द्रो नो अस्य पूर्व्यः पपीयाद् द्युक्षो मदस्य सोम्यस्य राजा ॥२
आसस्राणासः शवसानमच्छेन्द्रं सुचक्रे रथ्यासो अश्वाः ।
अभि श्रव ऋज्यन्तो वहयुर्नू चिन्नु वायोरमृतं वि दस्येत् ॥३
वरिष्ठो अस्य दक्षिणामियर्तीन्द्रो मघोनां तुविकूर्मितमः ।
यया वज्रिवः परियास्यंहो मघा च धृष्णो दयसे वि सूरीन् ॥४
इन्द्रो वाजस्य स्थविरस्य दातेन्द्रो गीर्भिर्वर्धतां वृद्धमहाः ।
इन्द्रो वृत्रं हनिष्ठो अस्तु सत्वा ऽऽता सूरिः वृणति तूतुजानः ।५।६

हे इन्द्र ! तुम्हारे रथमें योजित अश्व हमारे सामने आवें । भरद्वाज तुम्हें आहूत करते हैं । हम तुम्हारे साथ पुष्ट होते हुए वृद्धिको प्राप्त हों ।१। हमारे यज्ञ में सोमरस प्रवाहित होता है । वह कलश में जाता है । हर्षदायक सोम के स्वामी इस सोम को पीवें ।२। रथ में योजित अश्व बलशाली इन्द्र को हमारे सामने लावें । सोम रूप हवि को वायु नष्ट न करें । इसके गुणहीन होनेसे पूर्व ही इन्द्र उसका पान करें ।३। हविर्मान् यजमानको बलवान इन्द्र धनदेते हैं । हे वज्रिन् ! तुम पापको नष्ट करो तुम्हारे दानसे हमें धन और पुत्र प्राप्तहों ।४। इन्द्र श्रेष्ठ अन्न और बल दें, वे हमारी स्तुतियों से प्रवृद्ध हों । शत्रुहन्ता इन्द्र शत्रुओं को मारें और हमें सभी धन दें ।५। (६)

सूक्त ३८

(ऋषि–भरद्वाजो बार्हस्पत्यः । देवता—इन्द्रः । छन्द—त्रिष्टुप्)

अपादित उदु नश्चित्रतमो महीं भर्षद् द्युमतीमिन्द्रहूतिम् ।
पन्यसीं धीतिं दैव्यस्य यामञ्जनस्य रातिं वनते सुदानुः ॥१
दुराच्चिदा वसतो अस्य कर्णा घोषादिन्द्रस्य तन्यति ब्रुवाणः ।
एयमेनं देवहूतिर्ववृत्यान्मद्र्यगिन्द्रमियमृच्यमाना ॥२
तं वो धिया परमया पुराजामजरमिन्द्रमभ्यनूष्यर्कैः ।
ब्रह्मा च गिरो दधिरे समस्मिन् महाँश्च स्तोमो अधि वर्धदिन्द्रे ३
वर्धाद् यं यज्ञ उत सोम इन्द्रं वर्धाद् ब्रह्म गिर उक्था च मन्म ।
वर्धाहैनमुषसो यामन्नक्तोर्वर्धान् मासाः शरदो द्याव इन्द्रम् ॥४

एवा अज्ञानं सहसे असामि वावृधानं राधसे च श्रुताय ।
महामुग्रमवसे विप्र नूनमा विवासेम वृत्रतूर्येषु ।५।१०

अद्‌भुत इन्द्र सोमपान करें। वे हमारे आह्वानको सुनें। यजमान के यज्ञ में इन्द्र स्तुति और हव्य ग्रहण करें। इन्द्र के दोनों कान स्तोत्र सुनने को दूरसे भी आते हैं उस समय स्तोता उच्च स्वरसे स्तुति करते हैं। हमारी स्तुतियाँ इन्द्र को हमारे सामने लावें ।१-२। हे इन्द्र ! तुम प्राचीन और अक्षुण्ण हो। हम तुम्हारी स्तुति करतेहैं। स्तोत्र और हव्य इन्द्र में ही लीन होते हैं। स्तोत्र वृद्धि को प्राप्त होता है ।३। यज्ञ और सोमरस जिन इन्द्रको बढ़ाते,हैं हव्य स्तुति और पूजन जिन इन्द्रको प्रवृद्ध करते हैं, जिन्हें दिन और रात को गति बढ़ती है और जिन्हें मास,दिन और सम्वत्सर बढ़ाते हैं, हे इन्द्र ! ऐसे तुम अत्यन्त बलवान् हो, हम आज धन, यश, पक्ष और शत्रु हनन कर्म के लिए तुम्हारी सेवा करतेहैं ।४-५।

(१०)

सूक्त ३९

(ऋषि—भरद्वाजो बार्हस्पत्यः देवता—इन्द्रः । छन्द—त्रिष्टुप्)

मन्द्रस्य कवेर्दिव्यस्य वह्नेर्विप्रमन्मनो वचनस्य मध्वः ।
अपा नस्तस्य सचनस्य देवेषो युवस्व गृणते गोअग्राः ॥१
अयमुशानः पर्यद्रिमुस्रा ऋतधीतिभिर्ऋतयुग्युजानः ।
रुजदरुग्णं वि वलस्य सानुं पणींर्वचोभिरभि योधदिन्द्रः ।२
अयं द्योतयदद्युतो व्यक्तून् दोषा वस्तोः शरद इन्दुरिन्द्र ।
इमं केतुमदधुर्नू चिदह्नां शुचिजन्मन उषसश्चकार ॥३
अयं रोचयदरुचो रुचानो ऽयं वासयद् व्यृतेन पूर्वीः ।
अयमीयनऋतयुग्भिरश्वैः स्वर्विदा नाभिना चर्षणिप्राः ॥४
नू गृणानो गृणते प्रत्न राजन्निषः पिन्व वसुदेयाय पूर्वीः ।
अप ओषधीरविषा वनानि गा अर्वतो नॄन् ऋचसे रिरीहि ।५।११

हे इन्द्र ! हमारे यहाँ सोमपान करो वह सोम फल देने वाले हर्ष

प्रदायक और दिव्य हैं । इन्द्र हमें श्रेष्ठ अन्न दें ।१। अङ्गिराओं को साथले इन्द्रने पर्वतमें छिपी गौओंके उद्धारके लिए पणियों को पराजित किया ।६। हे इन्द्र ! उस सोम ने रात्रि, दिवस और वर्ष सबको तेज दिया । देवताओं ने इसी सोम दिवस के रूप में स्थापित किया । सोमने अपने तेज उषाओं को प्रकाशित किया ।२-३। सूर्यात्मक इन्द्रने अन्धकार युक्त लोकों को प्रकाशित किया और अपनी दीप्ति में उषाओं को भी तेजोमयी बनाया । यह इन्द्र मनुष्यों को अभीष्ट फल प्रदान करते हैं ।४। हे इन्द्र ! तुम स्तोताको अपरिमित धन प्रदान करो जल,औषधि, अश्व, गौ और मनुष्यादि दो ।५। (११)

सूक्त ४०

(ऋषि–भरद्वाजो बार्हस्पत्यः । देवता–इन्द्रः । छन्द–त्रिष्टुप्)

इन्द्र पिब तुभ्यं सुतो मदायाऽव स्य हरी वि मुचा सखाया ।
उत प्र गाय गण आ निषद्याऽथा यज्ञाय गृणते वयो धाः ॥१
अस्य पिब यस्य जज्ञान इन्द्र मदाय क्रत्वे अपिबो विरप्शिन् ।
तमु ते गावो नर आपो अद्रिरिन्दु समह्यन् पीतये समस्मै ॥२
समिद्धे अग्नौ सुत इन्द्र सोम आ त्वा वहन्तु हरयो वहिष्ठाः ।
त्वायता मनसा जोहवीमीन्द्रा याहि सुविताय महे नः ॥३
आ याहि शश्वदुशता ययाथेन्द्र महा मनसा सोमपेयम् ।
उप ब्रह्माणि शृणव इमा नो ऽधा ते यज्ञस्तन्वे वयो धात् ॥४
यदिन्द्र दिवि पार्ये यदृधग्यद् वा स्वे सदने यत्र वासि ।
अतो नो यज्ञमवसे नियुत्वान् त्सजाषाः पाहि गिर्वणो मरुद्भिः ।
।५।१२

हे इन्द्र ! तुम्हारे हर्षके लिए जो सोम निष्पन्न हुआ है उसे पीओ। अपने अश्वोंको रथ में योजित करो और यज्ञ के पास स्तोताओं के मध्य विराजो । हमारी स्तुतियों के साथी होकर स्तोता को अन्न प्रदान करो ।१। हे इन्द्र ! तुमने उत्पन्न होते ही जैसे सोम पान किया, वैसे ही अब भी करो । गौयें, ऋत्विज अभिषवण प्रस्तर आदि सब तुम्हारे

लिए एकत्र हुए हैं ।२। हे इन्द्र ! अग्नि प्रदीप्त हुए है, सोमका अभिषव हुआ । तुम्हारे अश्व तुम्हें यहाँ लावें । हम तुम्हारा मन से आह्वान करते हैं। तुम हमें समृद्ध करने को आगमन करो ।३। हे इन्द्र ! सोमरस के लिए तुम अनेक बार आये हो । इस समय सोमपान के लिए यज्ञ में आगमन करो और हमारी स्तुति सुनो । यजमान इस सोम को तुम्हारी पुष्टि के निमित्त अर्पित करते हैं । हे इन्द्र तुम जहाँ कहीं हो, वहीं से मरुद्गणके सहित आओ और हमारे यज्ञका पालन करो।४-५।

(१२)

सूक्त ४१

(ऋषि–भरद्वाजो बार्हस्पत्यः । देवता–इन्द्रः । छंद–त्रिष्टुप्)

अहेयमान उप याहि यज्ञं तुभ्यं पवन्त इन्दवः सुतासः ।
गावो न वज्रिन्त्स्वमोको अच्छेन्द्रा गहि प्रथमो यज्ञियानाम्॥१
या ते काकुत् सुकृता या वरिष्ठा यया शश्वत् पिबसि मध्वऊर्मिम्।
तया पाहि प्र ते अध्वर्युरस्थात् सं ते वज्रो वर्ततामिन्द्र गव्युः॥२
एष द्रप्सो वृषभो विश्वरूप इन्द्राय वृष्णे समकारि सोमः ।
एतं पिब हरिवः स्थातरुग्र यस्येशिषे प्रदिवि यस्ते अन्नम् ॥३
सुतः सोमो असुतादिन्द्र वस्यानयं श्रेयाञ्चिकितुषे रणाय ।
एतं तितिर्व उप याहि यज्ञं तेन विश्वास्तविषीरा पृणस्व ॥४
ह्वयामसि त्वेन्द्र याह्यर्वाङरं ते सोमस्तन्वे भवाति ।
शतक्रतो मादयस्वा सुतेषु प्रास्माँ अव पृतनासु प्र विक्षु ।५।१३

हे इन्द्र ! तुम हमारे यज्ञमें आगमन करो । अभिषुत सोम तुम्हारे लिये रखा है । हे वज्रिन् ! गौयें जैसे गोष्ठ में जाती हैं, वैसे ही सोम कलश में जाता है । यज्ञीय देवताओं में प्रमुख इन्द्र ! तुम यहाँ आओ ।१। हे इन्द्र ! तुम जिस जिह्वा से सोमरस का सदा पान करते हो, उसी से हमारे सोमरस को पीओ । सोम वाला ऋत्विज तुम्हारे सम्मुख उपस्थित है । हे इन्द्र ! तुम्हारा वज्र शत्रुओं को मारे ।२। इन्द्र के लिये यह अभीष्टवर्षक सोम अभिषुत हुआ है । हे इन्द्र ! तुमने जिस

सोमरस पर शासन किया, जिसे तुम अन्नरूप मानते हो, उसी सोमरस का पान करो ।३। हे इन्द्र ! निष्पन्न सोम अशोधित सोम से अत्यन्त श्रेष्ठ है। तुम्हें वह हर्ष प्रदान करता है। यज्ञ के समान रूप इस सोम के पास आगमन करो और अपने शरीर के सब अवयवों की वृद्धि करो ।४। हे इन्द्र! हम तुम्हें आहूत करते हैं। हम तुम्हारे समक्ष आगमन करो, यह सोम तुम्हारे देह के लिए पर्याप्त हो। तुम इसके द्वारा आनन्द प्राप्त करते हुए हम सबकी रक्षा करो ।५। (१३)

सूक्त ४२

(ऋषि—सरद्वाजो बार्हस्पत्यः। देवता—इन्द्रः। छंद—बृहती, अनुष्टुप्)

प्रयस्मै पिपीषते विश्वानि विदुषे भर।
अरङ्गमाय जग्मये ऽपश्चाद्दघ्वने नरे ॥१
ऐमेनं प्रत्येनन सोमेभिः सोमपातमम्।
अमत्रेभिर्ऋजीषिणमिन्द्रं सुतेभिरिन्दुभिः ॥२
यदी सुतेभिरिन्दुभिः सोमेभिः प्रतिभूषथ।
वेदा विश्वस्य मेधिरो धृषत् तंतमिदेषते ॥३
अस्माअस्माइदन्धसो ऽध्वर्यो प्र भरा सुतम्।
कुवित् समस्य जेन्यस्य शर्धतो ऽभिशस्तेरवस्परत् ॥४।१४

हे ऋत्विजो ! इन्द्र के लिए सोम रस अर्पित करो। वे यज्ञ के स्वामी सर्वगंता और सबके जानने वाले हैं। सर्वप्रथम गमनशील हैं ।१। हे ऋत्विजो ! तुम सोमरस के सहित सोमपायी इन्द्र के समक्ष उपस्थित होओ। निष्पन्न सोमरस से परिपूर्ण पात्र के सहित आओ ।२। हे ऋत्विजो तुम तेजोमय और निष्पंन सोमरस के सहित इन्द्र की सेवा पूर्ण करते हुए, शत्रु को मारते हैं ।३। हे ऋत्विजो ! इन्द्र को अभिषुत सोमरस अर्पित करो। वे इन्द्र हमारे सभी दुर्धन शत्रुओं से क्रोधसे हमें बचावें ।४। (१०)

सूक्त ४३

(ऋषि—भरद्वाजो बार्हस्पत्यः। देवता—इन्द्रः। छंद—उष्णिक्)

यस्य त्यच्छम्बरं मदे दिवोदासाय रन्धयः ।
अयं स सोम इन्द्र ते सुतः पिब ॥१
यस्य तीव्रसुतं मदं मध्यमन्तं च रक्षते ।
अयं स सोम इन्द्र ते सुतः पिब ॥२
यस्य गा अन्तरश्मनो मदे दृलहा अवासृजः ।
अयं स सोम इन्द्र ते सुतः पिब ॥३
यस्य मन्दानो अन्धसो माघोनं दधिषे शवः ।
अयं स सोम इन्द्र ते सुतः पिब ।४।१५

हे इन्द्र ! तुमने जिस सोमरस से पीने की कामना से दिवोदास के लिये शम्बर को पराभूत किया, वही सोम तुम्हारे लिए निपीड़ित हुआ है, तुम उसी का पान करो । हे इन्द्र ? जब सोमरस यज्ञके तीनों सवनों में अभिषुत होता है तब तुम इसे ग्रहण करते हो, यह सोम तुम्हारे निमित्त ही संस्कृत हुआ है, इसका पान करो ।१- । हे इन्द्र ! यह वही सोम अभिषुत हुआ है जिसे पाकर तुमने पर्वत में छिपी हुई गौओं को मुक्त किया था । तुम इसका पान करो ।३। हे इन्द्र ! तुम जिस सोमरूप अन्न के रस को पीकर आनन्दित हो, असाधारण शक्ति से युक्त हो जाते हो, वही सोम तुम्हारे नितित्त निष्पीड़ित हुआ है । तुम उसका पान करो ।४।　　(१५)

सूक्त ४४ [चौथा अनुवाक]

(ऋषि—बार्हस्पत्यः । देवता—इन्द्रः । छंद—अनुष्टुप्, विराट् त्रिष्टुप्)

यो रयिवो रयिंतमो यो द्युम्नैर्द्युम्नवत्तमः ।
सोमः सुतः स इन्द्र तेऽस्ति स्वधापते मदः ॥१
यः शग्मस्तुविशग्म ते रायो दामा मतीनाम् ।
सोमः सुतः स इन्द्र तेऽस्ति स्वधापते मदः ॥२
येन वृद्धो न शवसा तुरो न स्वाभिरूतिभिः ।
सोमः सुतः स इन्द्र तेऽस्ति स्वधापते मदः ॥३

त्यमु वो अप्रहणं गृणीषे शवसस्पतिम् ।
इन्द्रं विश्वासाहं नरं मंहिष्ठं विश्वचर्षणिम् ॥४
यं वर्धयन्तीद् गिरः पतिं तुरस्य राधसः ।
तमिन्न्वस्य रोदसी देवी शुष्मं सपर्यतः ।५।१६

हे इन्द्र ! तुम ऐश्वर्यवान् और सोम रक्षक हो । जो सोम अत्यन्त ऐश्वर्यवान् और तेज से यशस्वी है वही इस समय अभिषुत हुआ है । वह तुम्हें और हर्ष प्रदान करता है ।१। हे इन्द्र ! तुम अत्यन्त बल बर्द्धक सोमकी रक्षा करने वाले हो । जो सोम स्तोताओं को वैभवशाली बनाता है वह सोम अभिषुत होकर तुम्हें हर्ष प्रदान करता है ।२। हे इन्द्र ! तुम सोम रूप अन्न की रक्षा करने वाले हो । तुम जिस सोम को पीकर बल धारण करते और मरुद्गण को साथ लेकर शत्रुओं को मारते हो वही सोम अभिषुत होकर तुम्हें हर्ष प्रदान करता है ।३। हे यजमानों ! जो इन्द्र उपासकों पर कृपा करने वाले, बल के अधिपति ससारके जीतने वाले यज्ञादि कर्मोंके स्वामी श्रेष्ठदाता और सबके रखवाले हैं, उन्हीं इन्द्रकी हम स्तुति करते हैं ।४। हमारो स्तुतियोंसे इन्द्र का शत्रु के धन को हर लेने वाला बल बढ़ता है । उस बल की सेवा द्युलोक और पृथिवी करती है ।५। (१६)

तद् व उक्थस्य बर्हणेन्द्रायोपस्तृणीषणि ।
विपो न यस्योतयो वि यद् रोहन्ति सक्षितः ॥६
अविदद् दक्षं मित्रो नवीयान् पपानो देवेभ्यो वस्यो अचैत् ।
ससवान् त्स्तौलाभिर्धौतरीभिरुरुष्या पायुरभवत् सखिभ्यः ॥७
ऋतस्य पथि वेधा अपायि श्रिये मनांसि देवासो अक्रन् ।
दधानो नाम महो बचोभि र्वपुर्दृशये वेन्यो व्यावः ॥८
द्युमत्तमं दक्षं धेह्यस्मे सेधा जनानां पूर्वीपरातीः ।
वर्षीयो वयः कृणुहि शचीभिर्धनस्य सातावस्माँ आविड्ढि ॥९
इन्द्र तुभ्यमिन्मघवन्नभूम वयं दात्रे हरिवो मा वि वेनः ।

नकिरापिर्ददृशे मर्त्यत्रा किमङ्ग रध्रचोदन त्वाहुः ।१०।१७

हे स्तोताओ ! इन्द्र के निमित्त अपने स्तोत्र को प्रवृद्ध करो,क्योंकि इन्द्र तुम्हारे रक्षक हैं ।६। यज्ञादि कर्मोंमें कुशल लजमानों की बातोंको इन्द्र भले प्रकार जानने हैं, वे सोम के पीने वाले इन्द्र स्तोताओं को उत्कृष्ट धन देते हैं । अपने प्रवृद्ध अश्वों के सहित आकर इन्द्र स्तोताओं के रक्षक होते हैं ।७। जो सोम यज्ञकर्मा में पिया जाता है,उसी सोमको ऋत्विग्गण इन्द्रको आकृष्ट करनेके लिए प्रस्तुत करते हैं । वही विस्तीर्ण देह वाले शत्रु पराभवकारी इन्द्र हमारी स्तुति के कारण हमारे अभिमुखहो ।८। हे इन्द्र ! तुम हमें तेज और बल दो । अपने शत्रुओंको दूर भगाओ । तुम हमें प्रचुर अन्न प्रदान करो, धन का उपभोग करने के लिए हमारे देह की रक्षा करो ।९। हे इन्द्र हम तुम्हें हवि प्रदान करते हैं । तुम हमारे विरुद्ध मत होना । हम तुमसे किसी को अपना मित्र नहीं समझते । यदि तुम्हारी ऐसी महिमा नहीं होती तो तुम धनदाता क्यों कहे जाते ? ।१०। (१७)

मा जस्वने वृषभ नो ररीथा मा ते रेवतः सख्ये रिषाम ।
पूर्वीष्ट इन्द्र निष्षिधो जनेषु जह्यसुष्वीन् प्र वृहावृणतः ॥११
उदभ्राणीव स्तनयन्नियतीन्द्रो राधांस्यश्व्यानि गव्या ।
त्वमसि प्रदिवः कारुधाया मा त्वादामान आ दमन् मघोनः॥१२
अध्वर्यो वीर प्र महे सुतानामिन्द्राय भर स ह्यस्य राजा ।
यः पूर्व्याभिरुत नूतनाभिर्गीर्भिर्वावृध गृणतामृषीणाम् ॥१३
अस्य मदे पुरु वर्पांसि विद्वानिन्द्रो वृत्राण्यप्रती जघान ।
तमु प्र होषि मधुमन्तमस्मै सोमं वीराय शिप्रिणे पिबध्यै ॥१४
पाता सुतमिन्द्रो अस्तु सोमं हन्ता वृत्रं वज्रेण मन्दसानः ।
गन्ता यज्ञं परावतश्चिदच्छा वसुर्धीनामविता कारुधायाः ।१५।१८

हे इन्द्र! तुम कामनाओंके वर्षकहो तुम हमें हिंसक राक्षसों आधीन मत करना । तुम धनवान् हो । हम तुम्हारी मित्रता में रहकर दुःख न पावें । तुम्हारे कर्ममें शत्रुगण अनेक विघ्न उपस्थित करतेहैं जो सोमा-

भिषव कर्म नहीं करते, अथवा जो तुम्हें हवि नहीं देते, तुम उन्हें नष्ट कर डालो ।११। जैसे गर्जनशील पर्जन्य मेघ के उत्पत्तिकर्त्ता है, वैसे ही इन्द्र स्तोताओं के देने के लिये अश्व और गायें उत्पंन करने वाले हैं। हे इन्द्र ! तुम स्तोताओं के रक्षक हो। धनवान् व्यक्ति तुम्हारे हव्यादि-प्रदान कर्मों में न लगकर कहीं मिथ्याचरण न करने लगें ।१२। हे ऋत्विजो ! तुम उन्हीं महान्कर्मा इन्द्र के लिए सोम सिद्ध करो क्योंकि वह सोम के अधिपति है। यह इन्द्र स्तोताओं के प्राचीन तथा अभिनव स्तोत्रों द्वारा वृद्धि को प्राप्ति होते हैं ।१३। ज्ञानवान् इन्द्र ने सोमपान द्वारा हर्षित होकर विपरीत आचरण करनेवाले अनेक शत्रुओं का वध किया है ।१४। इन्द्र इस तिष्पीड़ित सोम को पीकर हर्षित हों और वज्र द्वारा वृत्र को मारें। वे इन्द्र स्तुतियों के रक्षक, यजमान के पालक और गृह-प्रदाता है। वे हमारे यज्ञ में दूर देश से भी आगमन करें ।१५। (१८)

इदं त्यत् पात्रमिन्द्रयानमिन्द्रस्य प्रियममृतमपायि ।
मत्सद् यथा सौमनसाय देवं व्यस्मद् द्वेषो सुयवद् व्यहः ॥१६
एना मन्दानो जहि शूर शत्रू ञ्जामिमजामिं मघवन्नमित्रान् ।
अभिषेणाँ अभ्यादेदिशानान् पराच इन्द्र प्र मृणा जही च ॥१७
आसु ष्मा णो मघवन्निन्द्र पृत्स्वस्मभ्यं महि वरिवः सुगं कः ।
अपां तोकस्य तनयस्य जेष इन्द्र सूरीन् कृणुहि स्मा नो अर्धम्॥१८
आ त्वा हरयो वृषणो युजाना वृषरथासो वृषरश्मयोऽत्याः ।
अस्मत्राञ्चो वृषणो वज्रवाहो वृष्णे मदाय सुयुजो वहन्तु ॥१९
आ ते वृषन् वृषणो द्रोणमस्थुर्घृतप्रुषो नोर्मयो मदन्तः ।
इन्द्र प्र तुभ्यं वृषभिः सुतानां वृष्णे भरन्ति वृषभाय सोमम्२०।१९

इन्द्र के पान योग्य और प्रिय सोम को इन्द्र इस प्रकार पीवें कि हर्षित होकर हमारे अनुकूल हों और हमसे पाप को और शत्रु को दूर भगावें ।१६। हे इन्द्र ! तुम पराक्रमीहो। सोम-पान द्वारा हर्षित होकर हमसे विरोध करने वाले दुष्टों को नष्ट कर डालो। तुम हमारे सामने

आये हुए शत्रुओं को पीछे लौटाओ ।१७। हे इन्द्र ! इस सम्पूर्ण युद्ध में हमें अपरिमितधन प्राप्त कराओ । तुम हमें विजय प्राप्तिमें समर्थ करो। पुत्र पौत्रादि तथा जल-वृष्टि द्वारा समर्थ करो ।१८। हे इन्द्र ! तुम्हारे अश्व कामनाओंके पूर्ण करने वाले, रथके वहन करने वाले, वृष्टिकारक, वेगवान् नित्य युवा और वज्र के वहन करने वाले हैं । वे तुम्हें सोम-पानार्थ हमारे यज्ञ में ले आवें ।१९। हे इन्द्र ! तुम कामनाओं की वर्षा करने वाले हो । तुम्हारे अश्व समुद्र की तरङ्गों के उल्लासित होते, रथ में योजित हैं । ऋत्विग्गण तुम्हारे लिए अभिषुत सोम रस अर्पित करते हैं ।२०। (१९)

वृषासि दिवो वृषभः पृथिव्या वृषा सिन्धूनां वृषभः स्तियानाम् ।
वृष्णे न इन्दुर्वृषभ पीपाय स्वादू रसो मधुपेयो वराय ॥२१
अयं देवः सहसा जायमान इन्द्रेण युजा पणिमस्तभायत् ।
अयं स्वस्य पितुरायुधानीन्दुरमुष्णादशिवस्य मायाः ॥२२
अयमकृणोदुषसः सुपत्नीरयं सूर्ये अदधाज्ज्योतिरन्तः ।
अयं त्रिधातु दिवि रोचनेषु त्रितेषु विन्ददमृतं निगूलहम् ॥२३
अयं द्यावापृथिवी वि ष्कमायदयं रथमयुनक् सप्तरश्मिम् ।
अयं गोषु शच्या पक्वमन्तः सोमो दाधार दशयन्त्रमुत्सम् ।२४।२०

हे इन्द्र ! तुम नदियों को जलसे पूर्ण करने वाले और प्राणियों के अभीष्ट को सिद्ध करने वाले हो । यह मधु के समान मधुर सोमरस तुम्हारे लिए प्रस्तुत हैं ।२१। इन्द्र के साथ जल लेकर इस तेजस्वी सोम ने पणिका बल पूर्वक प्रतिरोध किया था । इस सोम ने गौओं के हरणकर्त्ता असुरों के आयुधों और माया को कष्ट कर दिया था ।२२। सोम ने ही सूर्यको तेजस्वी बनाया । इसी ने सूर्य मंडल को ज्योतिर्मान् किया । इसी ने तीनों लोकों में स्थित स्वर्ग से तीन प्रकार के अमृतोंको पाया ।२३। सोमने ही आकाश पृथ्वी को अपने स्थान पर दिखाया और सात-रश्मि वाले रथ को जीता, इसी ने गौओंमें अनेक धारों वाले दुग्ध प्रस्रवण कर्म को स्थापित किया ।२४। (२०)

सूक्त ४५

(ऋषि—बार्हस्पत्यः । देवता—इन्द्रः बृबुस्तक्षा । छंद—गायत्री,
अतिनिचृत, पादनिचृत अनुष्टुप्)

य आनयत् पुरावतः सुनीती तुर्वशं यदुम। इन्द्रः स नो युवासखा१
अविप्रे चिद् वयो दधदनाशुना चिदर्वता । इन्द्रो जेता हितं धनम्२
महीरस्य प्रणीतयः पूर्वीरुत प्रशस्तयः । नास्य क्षीयन्त ऊतयः।।३
सखायो ब्रह्मवाहसे ऽर्चत प्र च गायत । स हि नः प्रमतिर्मही ।।४
त्वमेकस्य वृत्रहन्नविता द्वयोरसि । उतेदृशे यथा वयम् ।५।२१

जों तुर्वंश और यदु को दूर देश से लाये थे, वे इन्द्र हमारे मित्र हों ।१। जो हैन्द्र का स्तोता नहीं है, वह भी इन्द्र से अन्न पाता है । वे अश्वारूढ़ होकर शत्रुओं की सम्पत्ति को जीत लेते हैं ।२। इंद्र की स्तुतियाँ विविध प्रकार की हैं । उनका रक्षा का वचन कभी असत्य नहीं होता ।३। हे मित्रों ! इन इंद्र की स्तुति करों, उन्हीं का पूजन करो । वहीं हमें श्रेष्ठ धन प्रदान करने वाले हैं ।४। हे वृत्रहंता इंद्र ! तुम स्तोताओं की रक्षा करते हो । तुम ही हमारी रक्षा करो ।५। (२१)

नयसीद्वति द्विषः कृणोष्युक्थशंसिनः । नृभिः सुवीर उच्यसे ।।६
ब्रह्माणं ब्रह्मवाहसं गीर्भिः सखायमृग्मियम् । गां न दोहसे हुवे।।७
यस्य विश्वानि हस्तयोरूचुर्वसूनि नि द्विता । वीरस्य पृतनाषहः८
वि दृलहानि चिददृिवो जनानां शचीपते। वृह माया अनाननत९
तमु त्वा सत्य सोमपा इन्द्र वाजानां पते । अहूमहि श्रवस्यवः । ।१०।२२

हे इन्द्र ! बैरियों को दूरकर, स्तोताओंको समृद्ध करो । तुम सुन्दर अपत्य प्रदाता हो । इसलिए तुम्हारी स्तुति की जाती है ।६। धेनु के समान अपने अभीष्टों को दुहने के निमित्त में इन्द्र का आह्वान करता हूँ ।७। शत्रुओं के हराने वाले इन्द्र के हाथों में दिव्य और पार्थिव सम्पत्ति है—यह ऋषिगण कहा करते हैं ।८। हे वज्रन्! तुम शत्रु नगरों के ध्वंसक हो और उनकी माया के भी नाशक हो ।९। हे सोमपायी,

हे इन्द्र ! हम अन्न की कामना करते हुए तुम्हारा आह्वान करते हैं ।१०।   (२२)

तमु त्वा यः पुरासिथ यो वा नूनं हिते थने । हव्यः स श्रुधी हवम् ।।११

धीभिरर्वद्भिरर्वतो वाजां इन्द्र श्रवाय्यान् ।
त्वया जेष्म हितं धनम् ।।१२
अमूरु वीर गिर्वणो महाँ इन्द्र धने हिते । भरे वितन्तसाय्यः।।१३
या त ऊतिरमित्रहन् मक्षूजवस्तमासति ।
तया नो हिनुही रथम् ।।१४
स रथेन रथीतमो ऽस्माकेनाभियुग्वना ।
जेषि जिष्णो हितं धनम् ।।१५।२३

हे इन्द्र ! तुम जैसे प्राचीन काल में आह्वान योग्य थे,वैसे ही अब भी शत्रुओं के धनकी प्राप्ति के लिये आहूत किये जाते हो । तुम हमारे आह्वान को सुनो ।११। हे इन्द्र ! तुम हमारी स्तुति से प्रसंन होओ । हम तुम्हारे अनुकूल होने पर शत्रु धनके जीतने वाले हों ।१२। हे इन्द्र! तुमने शत्रुओं के धनकी प्राप्ति के लिए शत्रुओंपर विजय पाई है ।१३। हे इन्द्र ! तुम अत्यन्त वेग वाले हो । तुम शत्रु को जीतनेके लिए इसी वेग से रथ को चलाओ ।१४। हे इन्द्र ! तुम अपने शत्रु-जेता रथ के द्वारा शत्रुओं की सम्पत्ति पर विजय प्राप्त करो ।१५।   (२३)

य एक इत् तमु ष्टुहि कृष्टीनां विचर्षणिः । पतिर्जज्ञे वृषक्रतुः।।१६
यो गृणतामिदासियाऽऽपिरूती शिवः सखा ।
स त्वं न इन्द्र मृलय ।।१७
धिष्व वज्रं गभस्त्यो रक्षोहत्याय वज्रिवः ।
सासहीष्ठा अभि स्पृधः ।।१८
प्रत्नं रयीणां युजं सखायं कीरिचोदनम् । ब्रह्मवाहस्तमं हुवे ।।१९
स हि विश्वानि पार्थिवाँ एको वसूनि पत्यते ।
गिर्वणस्तमो अध्रिगुः ।।२०।२४

जो इन्द्र ! मनुष्यों के स्वामी होकर प्रकट हुए हैं और जो सबके देखने वाले हैं, उनका स्तवन करो ।१६। हे इन्द्र ! तुम सुखदाता और रक्षक मित्र हो । तुमने हमारी स्तुति से तिप्तता की थी । अब भी हमें सुख देने वाले होओ ।१७। हे वज्रिन् ! तुम असुरों के निमित्त वज्र धारण करते हों और प्रतिस्पर्द्धियों को हराते हो ।१८। जो इन्द्र धनदाता, मित्र, आह्वान योग्य और स्तोताओं को उत्साह देने वाले हैं, मैं उन इन्द्र को आहूत करता हूँ ।१९। जो इन्द्र की स्तुति वन्दना करने योग्य हैं, वे सब पार्थिव धनों के अधीश्वर हैं ।२०। (२४)

स नो नियुद्भिरा पृण कामं वाजेभिरश्विभिः ।
गोमद्भिर्गोपते धृषत् ॥२१
तद् वो गाय सुते सचा पुरुहूताय सत्वने। शं यद् गवे न शाकिने२२
न घा वसुर्नि यमते दानंवाजस्य गोमतः। युत सीगुप थवद्गिरः२३
कुवित्सस्य प्र हि व्रजं गोमन्तं दस्युहा गमत् ।
शचीभिरव नो वरत् ॥२४
इमा उ त्वा शतक्रतो ऽभि प्र णोनुर्वुगिरः । इन्द्र वत्सं न मातरः
।२५।८५

हे गौओं के स्वामी ! तुम हमारी कामनाओं को असंख्य गौ, अश्व आदि से पूर्ण करो ।२१। हे स्तोताओं ! गौ के लिये तृण जैसे सुख देता है, वैसे ही सोम के संस्कृत होने पर इन्द्र की स्तुति भी सुख देने वाली होती है । तुम शत्रु विजेता इन्द्र का यश गाओ ।२३। इन्द्र जब स्तुतियों को सुनते हैं, तब गौओं सहित अन्न देने में नहीं रुकते ।२३। कुत्रित्स के असंख्य गौओं वाले गोष्ठ में जब इन्द्र पहुँचे तब उन्होंने अपनी बुद्धि से ही गौओं को प्रकट कर दिया ।२४। हे इन्द्र ! गौएँ जैसे अपने बछड़ोंकी ओर को बारम्बार जाती हैं,वैसे ही यह स्तुतियाँ भी बारम्बार तुम्हारी ओर गमन करती हैं ।२५। (२५)

दूणाशं सख्यं तव गौरसि वीर गव्यते। अश्वो अश्वायते भव।।२६
स मन्दस्वा ह्यन्धसो राधसे तन्वा महे। न स्तोता निदे करः।।२७
इमा उ त्वा सुतेसुते नक्षन्ते गिर्वणो गिरः। वत्संगावो न धेनवः२८
पुरूतमं पुरूणां स्तोतृणां विवाचि। वाजेभिर्वाजयताम् ।।२९
अस्माकमिन्द्र भूतु ते स्तोमो वाहिष्ठो अन्तमः।
अस्मान् राये महे हिनु ।।३०
अधि बृबुः पणीनां वर्षिष्ठे मूर्धन्नस्थात्। उरुः कक्षो न गाङ्ग्यः३१
यस्य वायोरिव द्रवद् भद्रा रातिः सहस्रिणी। सद्यो दानाय मंहते३२
तत् सु नो विश्वे अर्य आ सदा गृणन्ति कारवः।
बृबुं सहस्रदातमं सूरिं सहस्रसातमम् ।३३।२६

हे इन्द्र! तुम्हारा बन्धुत्व नष्टनहीं होता। तुम गौ,अश्व की कामना वालों को इच्छित देते हो।२६। हे इन्द्र! तुम सोम रस द्वारा अपने को तृप्त करो। अपने उपासकको निन्दाकारी दुष्टके आधीन मत करना।२७। हे इन्द्र! पयस्विनी गौयें जैसे बछड़ों के पास जाती है वैसे ही सोमाभिषव होने पर हमारे स्तोत्र तुम्हारी ओर गमन करते हैं।२८। स्तोताओं के असंख्य स्तोत्र तुम्हें शत्रुओं का नाश करने वाला बल प्रदान करें।२९। हे इन्द्र! हमारे स्तोत्र तुम्हारी ओर गमन करें। तुम हमारी ओर अपने महान् धन को प्रेरित करो।३०। बृबु ने गङ्गा के उच्च कगारों के समान, पाणियों के मध्य स्थान पर अधिष्ठान किया।३१। मैं धन चाहता हूँ बृबु ने मुझे एक महान् गौ तुरन्त प्रदान की थी।३२। सहस्र गौओं का दान करने वाले बृबुकी स्तुति करते हुए हम सदा उसकी प्रशंसा किया करते हैं।३३। (२६)

सूक्त ४६

(ऋषि-शंयुर्बार्हस्पत्यः। देवता—इन्द्रः। छन्द-प्रगाथः)

त्वामिद्धि हवामहे साता वाजस्य कारवः।
त्वां वृत्रेष्विन्द्र सत्पतिं नरस्त्वां काष्ठास्वर्वतः ।।१

स त्वं नश्चित्र वज्रहस्त धृष्णुया महः स्तवानो अद्रिवः ।
गामश्वं रथ्यमिन्द्र सं किर सत्रा वाजं न जिग्युषे ॥२
यः सत्राहा विचर्षणिरिन्द्रं तं हूमहे वयम् ।
सहस्रमुष्क तुविनृम्ण सत्पते भवा समत्सु नो वृधे ॥३
बाधसे जनन् वृषभेव मन्युना घृषौ मीलह ऋचीषम ।
अस्माकं बोध्यविता महाधने तनूष्वप्सु सूर्ये ॥४
इन्द्र ज्येष्ठं न आ भरं ओजिष्ठं पपुरि श्रवः ।
येनेमे चित्र वज्रहस्त रोदसी ओभे सुशिप्र प्राः ॥५॥२७

हम स्तोता तुम्हें अन्न के निमित्त आहूत करते हैं । तुम साधु-धन की रक्षा करने वाले हो । शत्रु को जीतने वाले को तुम प्रचुर धन प्राप्त कराते हो, वैसे ही हमारी स्तुति से प्रसन्न होकर हमें गौ और रथ-वाहक अश्व दो, क्योंकि तुम शत्रुओं को नष्ट करने में समर्थ हो ।१-२। शत्रुहन्ता इन्द्र का हम आह्वान करते हैं । हे इन्द्र ! संग्राम भूमि में हमें समृद्ध करो ।३। हे इन्द्र ! तुम ऋचा में कहे अनुसार रूप वाले हो । तुम घोर संग्राम में शत्रुओं पर वृषभ के समान आक्रमण करो और हमारे रक्षक होओ । हम सन्तान सहित बहुत समयतक सूर्य-दर्शन करते हैं ।४। हे इन्द्र ! तुम स्वर्ग और पृथिवी के पोषक हो । तुम हमारे पास अत्यन्त बल बढ़ाने वाला श्रेष्ठ धन लाओ ।५। (२७)

त्वामुग्रमवसे चर्षणीसहं राजन् देवेषु हूमहे ।
विश्वा सु नो विथुरा पिब्दना वसो ऽमित्रान् त्सुषहान् कृधि ॥६
यदिन्द्र नाहुषीष्वाँ ओजो नृम्णं च कृष्टिषु ।
यद् वा पञ्च क्षितीनां द्युम्नमा भर सत्रा विश्वानि पौंस्या ॥७
यद् वा तृक्षौ मघवन् द्रुह्यावा जने यत् पूरौ कच्च वृष्ण्यम् ।
अस्मभ्य तद् रिरीहि सं नृषाह्ये ऽमित्रान् पृत्सु तुर्वणे ॥८
इन्द्र त्रिधातु शरण त्रिवरूथं स्वस्तिमत् ।
छर्दिर्यच्छ मघवद्भ्यश्च मह्यं च यावया दिद्युमेभ्यः ॥९
ये गव्यता मनसा शत्रुमादभुरभिप्रघ्नन्ति धृष्णुया ।

अध स्म नो मघवन्निन्द्र गिर्वणस्तनूपा अन्तमो भव ।१०।२८

हे इन्द्र ! शत्रु से रक्षा के लिए तुम्हें आहूत करते हैं। तुम सबसे बली और शत्रु जेता हो। सब राक्षसो को हमसे दूर कर विजय प्राप्त कराओ ।६। हे इन्द्र ! जो बल और धन तथा अन्न मनुष्यों में विद्यमान हैं. वह हमें प्राप्त कराओ ।७। हे इन्द्र ! युद्ध में हम शत्रुओं पर विजय पावें। तुम तक्षु द्राह्य और पुरु का समस्त बल हमें दो ।८। हे इन्द्र ! हविदाता यजमानों और मुझे शीत, ताप, वर्षा से सुरक्षित रखने वाला घर दो और शत्रुओं के सब हिंसक आयुधों को मुझसे दूर रखो ।६। हे इन्द्र ! जिन्होंने गौयें छीनने के लिए हम पर शत्रु के समान आक्रमण किया उनसे रक्षा करने को आओ ।१०। (२८)

अध स्मा नो वृधे भवेन्द्र नायमवा युधि ।
यदन्तरिक्षे पतयन्ति पर्णिनो दिद्यवस्तिग्ममूर्धानः ॥११
यत्र शूरासस्तन्वो वितन्वते प्रिया शर्म पितृणाम ।
अध स्मा यच्छ तन्वे तने च छर्दिरचित्तं यावय द्वेषः ॥१२
यदिन्द्र सर्गे अर्वतश्चोदयासे महाधने ।
असमने अध्वनि वृजिने पथि श्येनाँ इव श्रवस्यतः ॥१३
सिन्धूँरिव प्रवण आशुया यतो यदि क्लोशमनु ष्वणि ।
आ ये वयो न वर्वृतत्यामिषि गृभीता बाह्वोर्गवि ।१४।२९

हे इन्द्र ! धन दो। शत्रु के आक्रमण करने पर उनके बाणों को हमारे वीर रोकते है, तुम उनकी रणक्षेत्र में रक्षा करना ।११। शत्रु के आक्रमण के कारण जब लोग अपने पैतृक स्थानों को छोड़कर भागते हैं, उस समय तुम हमें और हमारी सन्तान की रक्षार्थ कवच प्रदान करना और शत्रुओं को भगाना ।१२। जब महायुद्ध हों तब हमारे अश्वादि को श्येन के समान क्षेत्र में ले आना ।१३। अश्व भय से हिनहिनाते हैं, फिर भी वे नदियों के समान संग्राम भूमिमें गौओं की प्राप्ति के लिए बारम्बार दौड़ते हैं ।१४। (२९)

सूक्त ४७

(ऋषि—गर्गः । देवता—सोमः, इन्द्रः, रथः, दानस्तुतिः, दुन्दुभिः ।
छन्द—त्रिष्टुप्, अनुष्टुप्, बृहती, गायत्री, जगती)

स्वादुष्किलायं मधुमाँ उतायं तीव्रः किलायं रसवाँ उतायम् ।
उतो न्वस्य पपिवांसमिन्द्रं न कश्चन सहत आहवेषु ॥१
अयं स्वादुरिह मदिष्ठ आस यस्येन्द्रो वृत्रहत्ये ममाद ।
पुरूणि यश्च्यौत्ना शम्बरस्य वि नवतिं नव च देह्यो हन् ॥२
अयं मे पीत उदियर्ति वाचमयं मनीषामुशतीमजीगः ।
अयं षलुर्वीरमिमीत धीरो न याभ्यो भुवनं कच्चनारे ॥३
अयं स यो वरिमाणं पृथिव्या वर्ष्माणं दिवो अकृणोदयं सः ।
अयं पीयूषं तिसृषु प्रवत्सु सोमो दाधारोर्वन्तरिक्षम् ॥४
अयं विदच्चित्रदृशीकमर्णः शुक्रसद्मनामुषसामनीके ।
अयं महान् महता स्कम्भनेनोद् द्यामस्तभ्नाद् वृषभो मरुत्वान् ।
।५।३०

यह सोम सुमधुर और रसयुक्त है । इन्द्र इसे पीतेहैं । उसके सामने रणक्षेत्र में कोई नहीं टिकता ।१। इस यज्ञ में पीने के पश्चात् सोम ने शक्ति प्रदान की और वृत्र नाशके लिए बल दिया । शम्बर के निन्यानवे नगरों को भी नष्ट किया ।२। यह सोमरस मेरे वाक्य को स्फूर्तिमय बनाता है,यह इच्छित बुद्धि देता है । इसी सोमने स्वर्ग, पृथिवी, दिवस, रात्रि, जल और औषधि की रचना की हैं ।३। इसी सोम ने पृथिवी को विस्तृत और स्वर्ग को दृढ़ किया है । इसी ने औषधि, जल और गौ में रस उत्पन्न किया । इसी ने अन्तरिक्ष को धारण किया है उषा के पूर्व यही सूर्य की ज्योति को प्रकट करता और मरुद्गण के स्वर्ग-लोक को धारण करता है ।४-५।   (३०)

धृषत् पिब कलशे सोममिन्द्र वृत्रहा शूर समरे वसूनाम् ।
माध्यंदिने सवन आ वृषस्व रयिस्थानो रयिमस्मासु धेहि ॥६
इन्द्र प्र णः पुरएतेव पश्य प्र नो नय प्रतरं वस्यो अच्छ ।

भवा सुपारो अतिपारयो नो भवा सुनीतिरुत वामनीतिः ।।७
उरुं नो लोकमनु नेषि विद्वान् त्स्वर्वज्ज्योतिरभयं स्वस्ति ।
ऋष्वा त इन्द्र स्थविरस्य बाहू उप स्थेयाम शरणा बृहन्ता ।।८
वरिष्ठे न इन्द्र वन्धुरे धा वहिष्ठयोः शतावन्नश्वयोरा ।
इषमा वक्षीषां वर्षिष्ठां मा नस्तारीन्मघवन् रायो अर्यः ।।६
इन्द्र मूल मह्यं जीवातुमिच्छ चोदय धियमयसीं न धाराम् ।
यत् किं चाहं त्वायुरिद वदामि तज्जुषस्व कृधि मा देववन्तम् ।

हे इन्द्र ! धन के लिए आरम्भ किए युद्ध में तुम शत्रुओं को मारो इस कलश में रखे सोम रस का पान करो । हे घन के पात्र रूप इन्द्र ! हमें धन प्रदान करो ।६। हे इन्द्र ! तुम मार्ग-रक्षक के समान आगे बढ़ कर हमको देखना और धन लेकर आना । तुम शत्रु से हमारी रक्षा करो और हमें इच्छित धन में प्रतिष्ठित करो ।७। हे इन्द्र ! तुम ज्ञानी हो । हमें विस्तीर्ण लोक में बाधाओं से निकाल कर ले जाओ । हम तुम्हारी भुजाओं पर रक्षा के निमित्त आश्रित हैं ।८। हे इन्द्र ! तुम अपने विस्तृत रथ पर हमें चढ़ाओ तुम हमारे लिए श्रेष्ठ अन्न प्राप्त कराओ । अन्न कोई धनी धन में हमसे बढ़ सके ।६। हे इन्द्र ! मेरा मङ्गल करो । मेरी आयु वृद्धि के लिए प्रसन्न होओ । मेरी प्रार्थना को ग्रहण करो । सब देवता मेरे रक्षक हो ।१०।   (३१)

त्रातारमिन्द्रमवितारमिन्द्रं हवेहवे सुहवं शूरमिन्द्रम् ।
ह्वयामि शक्रं पुरहूतमिन्द्रं स्वस्ति नो मघवा धात्विन्द्रः ।।११
इन्द्रं सुत्रामा स्ववाँ अवोभिः सुमृलीको भवतु विश्ववेदाः ।
बाधतां द्वेषो अभयं कृणोतु सुवीर्यस्य पतयः स्याम ।।१२
तस्य वयं सुमतौ यज्ञियस्याऽपि भद्रे सौमनसे स्याम ।
स सुत्रामा स्ववाँ इन्द्रो अस्मे आराच्चिद् द्वेषः सनुतर्युयोतु ।।१३
अव त्वे इन्द्र प्रवतो नोर्मिर्गिरो ब्रह्माणि नियुतो धवन्ते ।
उरू न राधः सवना पुरूण्यपो गा वज्रिन् युवसे समिन्दून् ।।१४
क ईं स्तवत् कः पृणात् को यजाते यदुग्रमिन्मघवा विश्वहावेत् ।
पादाविव प्रहरन्नन्यमन्यं कृणोति पूर्वमपरं शचीभिः ।१५।३२

इन्द्र शत्रुओं से रक्षा करने और अभीष्ट पूर्ण करने वाले हैं। सब कर्मों में समर्थ उन्हीं इन्द्र का यज्ञों में आह्वान करता हूँ वे इन्द्र मेरी वृद्धि करें ।११। ऐश्वर्यवान् इन्द्र अपने रक्षा साधनों से हमारा कल्याण करते हैं, वह हमारे शत्रुओंको मारकर हमारा भय दूर करते हैं। उनके प्रसन्न होने पर हम अत्यन्त बलवान बनें ।१२। उन इन्द्र के हम कृपा-पात्र हों। हमारे रक्षक हमारे बैरियों को दूर ले जाँय ।१३। हे इन्द्र ! नीचे की ओर जाने वाले जल के समान तुम्हारी ओर स्तुतियाँ और सोम गमन करते हैं। तुम जल दूध और सोम रस को भले प्रकार मिश्रित करते हो ।१४। कौन मनुष्य इन्द्र की स्तुति करने में समर्थ है ? इन्द्र अपनी शक्ति को स्वयं जानते हैं। जैसे मार्ग गामी पुरुष के गमन काल में पैर आगे पीछे होते हैं, वैसे ही इन्द्र अपने बुद्धि-बल से स्तोता को आगे पीछे रहने वाला करते हैं ।१५। (३२)

शृण्वे वीर उग्रमुग्रं दमायन्नन्यमतिनेनीयमानः ।
एधमानद्विलुभयस्य राजा चोष्कूयते विश इन्द्रो मनुष्यान् ॥१६
परा पूर्वेषां सख्या वृणक्ति वितर्तुराणो अपरेभिरेति ।
अनानुभूतीरवधून्वानः पूर्वीरिन्द्रः शरदस्तर्तरीति ॥१७
रूपंरूप प्रतिरूपो वभूव तदस्य रूप प्रतिचक्षणाय ।
इन्द्रो मायाभिः पुरुरूप ईयते युक्ता ह्यस्य हरयः शता दश ॥१८
युजानो हरिता रथे भूरि त्वष्टेह राजति ।
को विश्वाहा द्विषतः पक्ष आसत उतासीनेषु सूरिषु ॥१९
अगव्यूति क्षेत्रमागन्म देवा उर्वी सती भूमिरंहूरणाभूत् ।
बृहस्पते प्र चिकित्सा गविष्टावित्था सतेजरित्र इन्द्र पन्थाम्॥२०।३३

इन्द्र शत्रु का दमन करते और स्तोता के स्थान को परिवर्धित करते हैं वे अपने पराक्रम के लिए प्रसिद्ध हैं। वे ऐश्वर्यवान् इन्द्र रक्षाके निमित्त अपने उपासकों को बारम्बार आश्वस्त करते हैं ।१६। इन्द्र अपनी उपासना न करने वालों को त्याग कर अपने उपासकों के पास रहते हैं ।१७। इन्द्र के तीस रूप पृथक् पृथक् होते हैं। वे अनेक रूप धारण

कर यजमानों के पास जाते हैं। इन इन्द्र के रथ में सहस्र अश्व योजित होते हैं। १८। अपने रथ में अश्वों को योजित कर इन्द्र तीनों लोकों में प्रकट होते हैं। प्रदिदिन कौन-सा स्तोता अन्य स्तोताओं के मध्य आकर उनकी रक्षा करता है ? ।१९। हे देवताओं ! हम गौओं से हीन देशमें आ पहुँचे हैं। विस्तीर्ण पृथिवी दस्युओं को भी आश्रय प्रदान करती है। हे वृहस्पते ! तुम हमें गौओं की खोज में प्रेरित करो। हे इन्द्र ! अपने मार्ग से हटे हुए उपासक को श्रेष्ठ मार्ग पर लाओ ।२०। (३३)

दिवेदिवे सदृशीरन्यमर्धं कृष्णा असेधदप सद्मनो जाः ।
अहन् दासा वृषभो वस्नयन्तोदव्रजे वर्चिनं शम्बरं च ॥२१
प्रस्तोक इन्नु राधसस्त इन्द्र दश कोशयीर्दश वाजिनोऽदात् ।
दिवोदासादतिथिग्वस्य राधः शाम्बरं वसु प्रत्यग्रभीष्म ॥२२
दशाश्वान् दश कोशान् दश वस्त्राधिभोजना ।
दशो हिरण्यपिण्डान् दिवोदासानिषम् ॥२३
दश रथान् प्रष्टिमतः शतं गा अथर्वभ्यः अश्वथः पायवेऽदात्॥२४
महि राधो विश्वजन्यं दधानान् भरद्वाजान् त्साञ्जयो अभ्ययष्ट ।
।२५।३४

सूर्यात्मक इन्द्र दिन में प्रकाश कर, अन्धकार को नष्ट करते हैं। इन्द्र ने शम्बर और वर्ची नामक दस्युओं को मारा था ।२१। हे इन्द्र ! तुम्हारे स्तोताओं को प्रस्तोकने दस स्वर्ग कोश और दस अश्व दिये थे। अतिथिग्व ने शम्बरके जिस धनको जीता था, वही धन हमने दिवोदास से प्राप्त किया है ।२२। दिवोदास से मैंने दस स्वर्ग कोश, दस अश्व, अस्त्र और अभीष्ट अन्न सहित सोने के दस पिंड प्राप्त किये हैं। २३। वायु के लिए मेरे भ्राता अश्वत्थने अश्वों सहित दस रथ तथा अथर्वाओं को एक सौ गौयें दीं ।२४। सबके हित के लिए भरद्वाज के पुत्र ने सब धन ग्रहण किये और सृञ्जय पुत्र ने उनका पूजन किया ।२५। (३४)

वनस्पते वीड्वङ्गो हि भूया अस्मत्सखा प्रतरण सुवीरः ।

गोभिः सन्नद्धो असि वीलयस्वाऽऽस्थाता ते जयतु जेत्वानि ॥२६
दिवस्पृथिव्याः पर्योज उद्भृतं वनस्पतिभ्यः पर्याभृतं सहः ।
अपामोज्मानं परि गोभिरावृतमिन्द्रस्य वज्रं हविषा रथं यज२७
इन्द्रस्य वज्रो मरुतामनीकं मित्रस्य गर्भो वरुणस्य नाभिः ।
सेमां नो हव्यदातिं जुषाणो देव रथ प्रति हव्या गृभाय ॥२८
उप श्वासय पृथिवीमुत द्यां पुरुत्रा ते मनुतां विष्ठितं जगत् ।
स दुन्दुभे सजूरिन्द्रेण देवैर्दूराद् दवीयो अप सेध शत्रून् ॥२९
आ क्रन्दय बलमोजो न आ धा निः ष्टनिहि दुरिता बाधमानः ।
अप प्रोथ दुन्दुभे दुच्छुना इत इन्द्रस्य मुष्टिरसि वीलयस्व ॥३०
आमूरज प्रत्यावर्तयेमाः केतुमद् दुन्दुभिर्वावदीति ।
समश्वपर्णाश्चरन्ति नो नरो ऽस्माकमिन्द्र रथिनो जयन्तु ।३१।३५

हे रथ ! तुम्हारे अवयव दृढ़ हों । तुम हमारी रक्षा करने वाले मित्र होओ । तुम पर चढ़ने वाला वीर रणक्षेत्रों में विजय पाने वाला हो ।२६। हे ऋत्विजो ! तुम रथ के लिए हव्य दो, यह रथ दिव्य और पार्थिव सारों से निर्मित्त हुआ है । यह जलके समान वेग वाला वज्र के समान दृढ़ है ।२७। हे दिव्य रथ ! हमारे यज्ञ में प्रसन्नता-पूर्वक हवि ग्रहण करो । तुम मरुद्गण के आगे चलने वाले, मित्र के गर्भ रूप,वरुण के नाभि रूप और इन्द्र के वज्र के समान हो ।२८। हे दुन्दुभे ! तुम अपने शब्द से आकाश पृथिवी को गुंजित करो । तुम इन्द्र और अन्य सब देव देवताओं की अनुगामिनी होकर हमारे शत्रुओंको दूर कर दो ।२९। हे दुन्दुभे ! हमें थल प्रदान करो । हमारे शत्रुओं को रुलाओ, तुम्हारे घोर शब्द से शत्रु काँप उठें । हमारा अनिष्ट कर हर्षित होने वालोंको भगादो । तुम इन्द्रकी मुष्टिकाके समान होकर हमें दृढ़ बनाओ ।३०। हे इन्द्र ! सब गौओं को हमें प्राप्त कराओ । यह दुन्दुभि घोषणा रूप उच्च स्वर करती है । हमारे वीर अश्वों पर सवार हैं । रे इन्द्र ! हमारे रथ और सैनिक युद्ध को जीतें ।३१। (३५)

॥ सप्तमोऽध्यायः समाप्तः ॥

सूक्त ४८

(ऋषि—शयुर्बार्हस्पत्यः । देवता—अग्निः मरुतः मरुतो लिङ्गोक्ता वा पूषा पृश्निर्द्यावाभूमी । छन्द—बृहती, त्रिष्टुप्, अनुष्टुबादीनि)

यज्ञायज्ञा वो अग्नये गिरागिरा च दक्षसे ।
प्रप्र वयममृतं जातवेदसं प्रियं मित्रं न शंसिषम् ॥१
ऊर्जो नपातं स हिनायमस्मयुर्दाशेम हव्यदातये ।
भुवद् वाजेष्ववविता भुवद् वृध उत त्राता तनूनाम् ॥२
वृषा ह्यग्ने अजरो महान् विभास्यर्चिषा ।
अजस्रेण शोचिषा शोशुचच्छुचे सुदीतिभिः सु दीदिहि ॥३
महो देवान् यजसि यक्ष्यानुषक् तव क्रत्वोत दंसना ।
अर्वाचः सीं कृणुह्यग्नेऽवसे रास्व वाजोत वंस्व ॥४
यमापो अद्रयो वना गर्भमृतस्य पिप्रति ।
सहसा यो मथितो जायते नृभिः पृथिव्या अधि सानवि ।५।१

हे स्तोताओ ! अग्नि की बारम्बार स्तुति करो, वे सर्वद्रष्टा, मित्रके समान अनुकूल और अविनाशीहैं ।१। हम हव्यवाहक अग्निको हवि देते हैं । वे रणक्षेत्र में हमारी रक्षा करें, हमारे पुत्रों की रक्षा करें और हमारी समृद्धि करें ।२। हे अग्ने! तुम अभीष्ट दायक महान एवं तेजस्वी हो । तुम अपने प्रकाशसे हमें प्रकाशित करो ।३। हे अग्ने! तुम देवताओं के लिए यज्ञ करने वाले हो । अतः हमारे यज्ञ में भी देवताओं को हवि दो अपनी बुद्धि और कर्म के द्वारा हमारे रक्षक देवताओं को यहाँ लाओ । तुम हमें अन्न दो और हमारे हव्यका भक्षण करो ।४। हे अग्ने! तुम यज्ञ के गर्भ रूप हो । तुम्हें सोम में जल मिश्रित करने वाले अभिषवण प्रस्तर और अरणि से पुष्ट करते हैं । ऋत्विजों द्वारा तुम्हारा मन्थन होता है तब तुम पृथिवी के अत्यन्त श्रेष्ठ स्थान यज्ञ में उत्पन्न होते हो ।५। (१)

आ यः पप्रौ भानुना रोदसी उभे धूमेन धावते दिवि ।
तिरस्तमो ददृश ऊर्म्यास्वा श्यावास्वरुषो वृषा श्यावा अरुषो वृषा ॥६

बृहद्भिरग्ने अर्चिभिः शुक्रेण देव शोचिषा ।
भरद्वाजे समिधानो यविष्ठ्य रेवन्नः शुक्र दीदिहि द्यु मत्
पावक दीदिहि ॥७
विश्वासां गृहपतिर्विशामसि त्वमग्ने मानुषीणाम् ।
शत पूर्भिर्यविष्ठ पाह्य हसः समेद्धारं शत हिमाः
स्तोतृभ्यो ये च ददति ॥८
त्वं नश्चित्र ऊत्या वसो राधांसि चोदय ।
अस्य रायस्त्वमग्ने रथीरसि विदा गाधं तुचे तु नः ॥९
पर्षि तोकं तनयं पर्तृ भिष्ट्वमदब्धेरप्रयुत्वभिः ।
अग्ने हेलांसि दैव्या युयोधि नो ऽदेवानि ह्वरांसि च ।१०।२

जो अग्नि अपने तेज से स्वर्ग और पृथिवी को परिपूर्ण करते हैं जो धुँए के साथ अन्तरिक्ष में उठते हैं, वे अग्नि रात्रि के अन्धकार को दूर करते हैं । वही तेजस्वी अग्नि कामनाओं वर्षा करने वाले हैं ।६। हे अग्ने! तुम हमारे भ्राता भारद्वाज द्वारा प्रदीप्त होकर हमें धनदो ।७। हे अग्ने ! तुम गृह स्वामी हो, मैं तुम्हें सौ हेमन्त ऋतुओं तक प्रदीप्त करूँगा । तुम पापसे मेरी रक्षा करो और अपने स्तोता, अन्न देने वाले यजमान की भी रक्षा करो ।८। हे अग्ने ! तुम हमारे प्रति धन प्रेरित करो और हमारे पुत्रादि को यशस्वी बनाओ ।९। हे अग्ने ! हमारे पुत्र पौत्रादि का पालन करो । हमारे प्रति देवताओं को जो क्रोध हो अथवा मनुष्यों को रोष हो, उसे दूर करो ।१०। (२)

आ सखायः सबर्दु घां धेनुमजध्वमुप नव्यसा वचः ।
सृजध्वमनपस्फुराम् ॥११
या शर्धाय मारुताय स्वभानवे श्रवोऽमृत्य धुक्षत ।
या मृलीके मरुतां तुराणां या सुम्नैरेवयावरी ॥१२
भरद्वाजायाव धुक्षत द्विता ।
धेनुं च विश्वदोहसमिषं च विश्वभोजसम् ॥१३
तं व इन्द्रं न सुक्रतुं वरुणमिव मायिनम् ।

अर्यमणं न मन्द्रं सृप्रभोजसं विष्णुं न स्तुष आदिशे ॥१४
त्वेषं शर्धो न मारुतं तुविष्वण्यनर्वाणं पूषणं सं यथा शता ।
सं सहस्रा कारिषच्चर्षणिभ्य आँ आविर्गूलहा वसू करत्
सुवेदा नो वसू करत् ॥१५
आ मा पूषन्नुप द्रव शंसिषं नु ते अपिकर्ण आघृणे ।
अघा अर्यो अरातयः ।१६।३

हे बन्धुओ ! अपने स्तोत्र के सहित पयस्विनी गौ के पास आगमन करो । फिर उसे इस प्रकार छुड़ाओं जिससे उसकी हानि न हो ।११। जो धेनु मरुद्गण की रक्षा के लिए दुग्ध रूप अन्न देती है जो स्वाधीन तेज वाली और वृष्टि के जलों के साथ सुखकी वर्षा करती हुई अन्तरिक्ष में विचरण करती हैं, उसी गौ के पास जाओ ।१२। हे मरुद्गण ! भरद्वाज को पयश्विनी गौ और यथेष्ट अन्न के साथ मङ्गल प्रदान करो ।१३। हे मरुद्गण ! इन्द्र के कर्मों का तुम अनुष्ठान करते हो, वरुण के समान स्तुत्य हो, विष्णु के समान धनदाता होने से तुम्हारी धन के लिए स्तुति करता हूँ ।१४। मरुद्गण हमें असंख्यधव प्राप्त करावें ।१५। हे पूषन् ! मेरे पास आगमन करो । शत्रुओं को व्यथित करो, मैं भी तुम्हारा यश गान करता हूँ ।१६।   (३)

मा काकम्बीरमुद् वृहो वनस्पतिमशस्तीर्वि हि नीनशः ।
मोत सूरो अह एवा चन ग्रीवा आदधते वेः ॥१७
हृतेरिव तेऽवृकमस्तु सख्यम् । अच्छिद्रस्य दधन्वतः सुपूर्णस्य
दधन्वतः ॥१८
परो हि मर्त्यैरसि समोदेवैरुत श्रिया ।
अभि ख्यः पूषन् पृतनासु नस्त्वमवा नूनं यथा पुरा ॥१९
वामी वामस्य धूतयः प्रणीतिरस्तु सूनृता ।
देवस्य वा मरुतो मर्त्यस्य वे जानस्य प्रयज्यवः ॥२०
सद्यश्चिद् यस्य चर्कृतिः परि द्यां देवो नैति सूर्यः ।
त्वेषं शवो दधिरे नाम यज्ञियं मरुतो वृत्रहं शवो
ज्येष्ठं वृत्रहं शवः ॥२१

सकृद्ध द्यौरजायत सकृद् भूमिरजायत ।
पृश्न्या दुग्धं सकृत् पयस्तदन्यो नानु जायते ॥२२॥४

हे पूषन् ! वनस्पति का नाश मत करना । मेरे निंदकों को मारो । मेरे शत्रु मुझे व्याघ्र के समान न बाँध सकें ।१७। हे पूषन् ! तुम्हारी मित्रता सदा बनी रहे ।१८। हे पूषन् ! तुम धन में सब देवताओं के समान हो,युद्धमें हम पर अनुग्रह दृष्टि रखना । पहिले जैसे तुमने हमारी रक्षा की थी वैसे ही अब भी रक्षा करो ।१९। हे मरुद्गण ! तुम्हारी जो वाणी यजमानों को इच्छित धन प्रदान करती है, वही वाणी हमारा पथ प्रदर्शन करे ।२०। सूर्य के समान ही मरुद्गणके सब कार्य अन्तरिक्ष में व्याप्त होते हैं । वे मरुद्गण पूजनीय और शत्रु हननकारी बलधारण करते हैं ।२१। स्वर्ग और पृथ्वी एक बार ही उत्पन्न हुए, मरुद्गण की माता गौ से एक बार ही दूध दुहा गया । उस समय अन्य कुछ उत्पन्न नहीं हुआ ।२२। (४)

सूक्त ४९

(ऋषि–ऋजिश्वा: । देवता—विश्वेदेवा: । छन्द–त्रिष्टुप्, शक्वरी)

स्तुषे जनं सुव्रतं नव्यसीभिर्गीर्भिर्मित्रावरुणा सुम्नयन्ता ।
त आ गमन्तु त इह श्रुवन्तु सुक्षत्रासो वरुणो मित्रो अग्निः ॥१
विशोविश ईड्यमध्वरेष्वदृप्तक्रतुमरतिं युवत्योः ।
दिवः शिशुं सहसः सूनुमग्निं यज्ञस्य केतुमरुषं यजध्यै ॥२
अरुषस्य दुहितरा विरूपे स्तृभिरन्या पिपिशे सूरो अन्या ।
मिथस्तुरा विचरन्ती पावके मन्म श्रुतं नक्षत ऋच्यमाने ॥३
प्र वायुमच्छा बृहती मनीषा बृहद्रयिं विश्ववारं रथप्राम् ।
द्युतद्यामा नियुतः पत्यमानः कविः कविमियक्षसि प्रयज्यो ॥४

स मे वपुश्छदयदश्विनोर्यो रथो विरुक्मान् मनसा युजानः ।
येन नरा नासत्येषयध्यै वर्तिर्याथस्तनयाय त्मने च ।५।५

मैं अभिनव स्तोत्र द्वारा मित्रावरुण की स्तुति करता हूँ । वे इस यज्ञ में हमारे आह्वान को सुनें ।१। अग्नि प्रत्येक यज्ञ में पूजनीय हैं, वे निरहङ्कार, स्वर्ग-पृथिवी के स्वामी, यज्ञ के ध्वज रूप हैं,उन अग्नि का यजन करने की यजमान को प्रेरणा करता हूँ ।२। सूर्य की दो कन्यायें दिन और रात्रि है । इनमें से एक सूर्य के द्वारा प्रकाशित और दूसरी नक्षत्रों द्वारा दमकती है, यह दोनों हमारी स्तुति को सुनें ।३। हमारी स्तुतियाँ वायु देवता के समक्ष गमन करें । हे अश्वों के स्वामी मरुतो ! तुम स्तोता को धन द्वारा बढ़ाओ ।४। मन के द्वारा योजित अश्विद्वय का रथ मेरे देह की रक्षा करे । हे अश्विद्वय ! तुम उस पर चढ़कर स्तोता का अभीष्ट पूर्ण करने को आओ ।५। (५)

पर्जन्यवाता वृषभा पृथिव्याः पुरीषाणि जिन्वतमप्यानि ।
सत्यश्रुतः कवयो यस्य गीर्भिर्जगतः स्थातर्जगदा कृणुध्वम् ।।६
पावीरवी कन्या चित्रायुः सरस्वती वीरपत्नी धियं धात् ।
ग्नाभिरच्छिद्रं शरणं सजोषा दुराधर्षं गृणते शर्म यंसत् ।।७
पथस्पथः परिपतिं वचस्या कामेन कृतो अभ्यानलर्कम् ।
स नो रासच्छुरुधश्चन्द्राग्रा धियंधियं सीषधाति प्र पूषा ।।८
प्रथमभाजं यशसं वयोधां सुपाणिं देवं सुगभस्तिमृभ्वम् ।
होता यक्षद् यजतं पस्त्यानामग्निस्त्वष्टारं सुहवं विभावा ।।९
भुवनस्य पितरं गीर्भिरामी रुद्रं दिवा वर्धया रुद्रमक्तौ ।
बृहन्तमृष्वमजरं सुषुम्नमृधग्घुवेम कविनेषितासः ।१०।६

हे पर्जन्य और वायो ! तुम अन्तरिक्ष से जल प्रेरित करो । हे मरुद्गण ! जिस पर तुम प्रसन्न होते हो उसके सभी मनुष्य समृद्ध होते हैं ।६। विचित्र गमन वाली देवी सरस्वती हमारे यज्ञानुष्ठान का निर्वाह

करें । वे प्रसन्न होकर देवाङ्गनाओं सहित स्तोता को श्रेष्ठ घर और कल्याण दें ।७। हे स्तोता ! पूषा-देव के समक्ष जाओ वे हमें सुवर्ण शृङ्ग वाली गौयें दे और सब कार्यों को सम्पन्न करें ।८। जो त्वष्टादेव प्रसिद्ध अन्नदाता, सुन्दर हाथ वाले; महान् और आह्वानीय हैं, अग्निदेव उन्हीं त्वष्टा का यज्ञ करें ।९। हे स्तोता ! अपने श्रेष्ठ स्तोत्रों से रुद्र को प्रसन्न करो । उन्हें दिन में और रातमें भी प्रवृद्ध करो ।१०।

(६)

आ युवानः कवयो यज्ञियासो मरुतो गन्त गृणतो वरस्याम् ।
अचित्रं चिद्धि जिन्वथा वृधन्त इत्था नक्षन्तो नरो अङ्गिरस्वत् ११
प्र वीराय प्र तवसे तुरायाऽजा यूथेव पशुरक्षिरस्तम् ।
स पिस्पृशति तन्वि श्रुतस्य स्तृभिर्न नाकं वचनस्य विपः ॥१२
यो रजांसि विममे पार्थिवानि त्रिश्चिद् विष्णुर्मनवे बाधिताय ।
तस्य ते शर्मन्नुपदद्यमाने राया मदेम तन्वा तना च ॥१३
तन्नोऽहिर्बुध्न्यो अद्भिरर्कैस्तत् पर्वतस्तत् सविता चनो धात् ।
तदोषधीभिरभि रातिषाचो भगः पुरंधिर्जिन्वतु प्र राये ॥१४
नू नो रयिं रथ्यं चर्षणिप्रां पुरुवीरं मह ऋतस्य गोपाम् ।
क्षयं दाताजरं येन जनान् त्स्पृधो अदेवीरभि च क्रमाम
विश आदेवीरभ्यश्नवाम ।१५।७

हे मरुद्गण! जहाँ यजमान यज्ञ करता है,वहाँ आगमन करो । तुम वृष्टि जलों से वनों की वृद्धि करो ।११। गौओंके झुण्ड को जैसे ग्वारिया शीघ्र चलाता है वैसे ही मरुद्गण की ओर अपने स्तोत्र को भेजो । जैसे अन्तरिक्ष नक्षत्रों द्वारा शोभित है, वैसे ही मरुद्गण स्तोता की स्तुति से अपने देह को सुशोभित करते हैं ।१२। जिन विष्णु ने त्रिपाद पराक्रमसे लोकों को नाप लिया था, वह हमारे द्वारा दिए घरमें आकर निवास करें और हम धन आदि से युक्त हों ।१३। हमारे स्तोत्रों से स्तुत अहिर्बुध्न पर्वत और सविता हमें जल और अन्न प्रदान करें । विश्वेदेवा और भगदेवता भी अन्न-धन दें ।१४। हे विश्वेदेवा ! तुम हमें रथ, अनु-

चर, पुत्रादि तथा घर और अन्न दो जिससे हम शत्रुओं को हरावें और देवोपासकों को आश्रय दें ।१५। (७)

सूक्त ५० [पाँचवाँ अनुवाक]

(ऋषि–ऋजिश्वाः । देवता—विश्वेदेवाः । छन्द–त्रिष्टुप्)

हुवे वो देवीमदितिं नमोभिर्मृलीकाय वरुण मित्रमग्निम् ।
अभिक्षादामर्यमण सुशेवं त्रातृन् देवान् त्सवितारं भगं च ॥१
सुज्योतिषः सूर्य दक्षपितृननागास्त्वे सुमहो वीहि देव न् ।
द्विजन्मानो य ऋतसापः सत्याः स्ववन्तो यजता अग्निजिह्वाः२
उत द्यावापृथिवी क्षत्रमुरु बृहद् रोदसी शरणं सुषुम्ने ।
महस्करथो वरिवो यथा नो ऽस्मे क्षयाय धिषणे अनेहः ।३
आ नो रुद्रस्य सूनवो नमन्तामद्या हूतासो वसवोऽधृष्टाः ।
यदीमर्भे महति वा हितासो बाधे मरुतो अह्वाम देवान् ॥४
मिम्यक्ष येषु रोदसी नु देवी सिषक्ति पूषा अभ्यर्धयज्वा ।
श्रुत्वा हवं मरुतो यद्ध याथ भूमा रेजन्ते अध्वनि प्रविक्ते ।५।८

हे देवताओ ! अदिति, वरुण, मित्र, अग्नि, अर्यमा, सविता, भग तथा देवताओं का आह्वान करते हैं ।१। हे सूर्य ! तेजस्वी देवताओं को हमारे अनुकूल बनाओ । स्वर्ग और पृथ्वी पर उत्पन्न देवता यज्ञ के प्रीति करने वाले धनों और अग्निरूप जिह्वा वाले हैं ।२। हे द्यावा-पृथ्वी ! हमें बल और धन दो । हम ऐश्वर्यवान हों । हमारे घरसे पाप को दूर कर दो ।३। रुद्र पुत्र मरुद्गण ! हमारे आह्वान पर आवें । वे विपत्ति में हमारे सहायक हों ।४। हे मरुद्गण ! आकाश-पृथ्वी तुमसे संश्लिष्ट हैं, स्तोताओं को समृद्धि देने वाले पूषा तुम्हारी सेवा करते है । तुम जब हमारे आह्वान पर आते हो, तब समस्त प्राणी कम्पित होते हैं ।५। (८)

अभि त्य वीरं गिर्वणसमर्चेन्द्रं ब्रह्मणा जरितर्नवेन ।
श्रवदिद्धवमुप च स्तवानो रासद् वाजाँ उप महो गृणानः ।६

ओमानमापो मानुषीरमृक्तं धात तोकाय तनयाय शं योः ।
यूयं हि ष्ठा भिजोष मातृतमा विश्वस्य स्थातुर्जगतो जनित्रीः ॥७
आ नो देवः सविता त्रायमाणो हिरण्यपाणिर्यजतो जगम्यात् ।
यो दत्रवाँ उषसो न प्रतीकं व्यूर्णुते दाशुषे वार्याणि ॥८
उत त्वं सूनो सहसो नो अद्या देवाँ अस्मिन्नध्वरे ववृत्याः ।
स्यामहं ते सदमिद् रातौ तव स्यामग्नेऽवसा सुवीरः ॥९
उत त्या मे हवमा जग्म्यात नासत्या धीभिर्युवमङ्ग विप्रा ।
अत्रिं न महस्तमसोऽमुमुक्तं तूर्वतं नरा दुरितादभीके ।१०।९

हे स्तोता ! इन्द्र की स्तुति करो । वे इन्द्र हमारे आह्वान को सुनकर हमें अन्न दें ।६। हे जलो ! तुम मनुष्योका मंगल करने वाले हो । तुम हमारे पुत्र-पौत्रों की रक्षा करने वाला अन्न दो । तुम श्रेष्ठ उपचारक और देहधारियों को उत्पन्न करने वाले हो ।७। जो सविता यजमान को काम्य धन देते हैं वे हिरण्यपाणि हमारे यहा पधारें ।८। हे अग्ने ! देवताओं को हमारे यज्ञ में लाओ । मैं तुम्हारी अनुकूलता को सदा जानूँ और तुम्हारे द्वारा रक्षित श्रेष्ठ पुत्र-पौत्रादि से सम्पन्न होऊँ ।९। हे अश्विद्वय ! तुम मेरे स्तोत्रों के पास आओ । तुमने जैसे अत्रि को अन्धकार से मुक्त किया वैसे ही हमें दुःख से मुक्त करो ।१०। (९)

ते नो रायो द्युमतो वाजवतो दातारो भूत नृवतः पुरुक्षोः ।
दशस्यन्तो दिव्याः पार्थिवासो गोजाता अप्या मृलता च देवाः ११
ते नो रुद्रः सरस्वती सजोषा मीलहुष्मन्तो विष्णुर्मृलन्तु वायुः ।
ऋभुक्षा वाजो दैव्यो विधाता पर्जन्यावाता पिप्यतामिषं नः॥१२
उत स्य देवः सविता भगो नोऽपां नपादवतु दानु पप्रिः ।
त्वष्टा देवेभिर्जनिभिः सजोषा द्यौर्देवेभिः पृथिवी समुद्रैः ॥१३
उत नोहिर्बुध्न्यः शृणोत्वज एकपात् पृथिवी समुद्रः ।
विश्वेदेवा ऋतावृधो हुवानाः स्तुता मन्त्राः कविशस्ता अवन्तु१४
एवा नपातो मम तस्य धीभिर्भरद्वाजा अभ्यर्चन्त्यर्कैः ।
ग्ना हुतासो वसवोऽधृष्टा विश्वे स्तुतासो भूता यजत्राः ।१५।१०

हे देवगण ! हमें पुत्रादि से युक्त धन दो । आदित्य, वसु, रुद्र, मरुद्गण हमारी कामना पूर्ण कर सुखी करें ।११। रुद्र, सरस्वती, विष्णु वायु, ऋभुक्षा, श्येन और विधाता मंगल करें । पर्जन्य और वायु हमारे अन्नकी वृद्धि करें ।१२। दानशील अग्नि हमारे रक्षक हों । समान रूप से सम्पन्न हुए त्वष्टादेव,स्वर्गलोक और समुद्रों सहित पृथ्वी हमारीरक्षा करें ।१३। आज, एकपाद्, अहिर्बुध्न, पृथिवी और समुद्र हमारी स्तुति सुनें । यज्ञ कर्म को सम्पन्न करने वाले और स्तुत्य विश्वेदेवा हमारी रक्षा करें ।१४। भरद्वाज वंशज ऋषि देवताओं की स्तुति करते हैं । देवताओ ! तुम अजेय, गृहदाता हो । तुम देव पत्नियों सहित पूजे जाते हो ।१५।　　　　(१०)

सूक्त ५१

(ऋजिश्वाः । देवता–विश्वेदेवाः । छन्द–त्रिष्टुप् उष्णिक्,
अनुष्टुप्)

उदु त्यच्चक्षुर्महि मित्रयोराँ एति प्रियं वरुणयोरदब्धम् ।
ऋतस्य शुचि दर्शतमनीकं रुक्मो न दिव उदिता व्यद्यौत् ।।१
वेद यस्त्रीणि विदथान्येषां देवानां जन्म सनुतरा च विप्रः ।
ऋजु मर्तेषु वृजिना च पश्यन्नभि चष्टे सूरो अर्य एवान् ।।२
स्तुष उ वो मह ऋतस्य गोपानदितिं मित्रं वरुणं सुजातान् ।
अर्यमणं भगमदब्धधीतीनच्छा वोचे सधन्यः पावकान् ।।३
रिशादसः सत्पतीरदब्धान् महो राज्ञः सुवसनस्य दातॄन् ।
यूनः सुक्षत्रान् क्षयतो दिवो नॄनादित्यान् याम्यदितिं दुवोयु ।।४
द्यौष्पितः पृथिवि मातरध्रुगग्ने भ्रातर्वसवो मृलता नः ।
विश्व आदित्या अदिते सजोषा अस्मभ्यं शर्म बहुलं वि यन्त५।११

सूर्य की प्रसिद्ध और मित्रावरुण की प्रिय ज्योति अन्तरिक्ष के अलंकार के समान सुशोभित है ।१। जो सूर्य तीनों लोकों के ज्ञाता, ज्ञानी और देवताओंके प्राकट्यके जानने वाले हैं वे सूर्य मनुष्योंके सत्यासत्यके

देखने वाले और उपासकों के अभीष्टोंको पूर्ण करने वाले हैं ।२। अदिति मित्र, वरुण, अर्यमा और भगकी मैं स्तुति करता हूँ । उनके कार्य संसार को पवित्र करने वाले हैं ।३। हे अदिति पुत्रो ! तुम सज्जनों के पालक और दुर्जनों का त्याग करने वाले हो । तुम घर देने वाले और ऐश्वर्य-वान् हो । मैं अदिति की शरणमें जाता हूँ ।४। हे वसुगण ! स्वर्ग, पृथ्वी और अग्निके सहित तुम हमारा मंगल करो । हेअदिति ओर आदित्यो! तुम हमारा कल्याण करो ।५। (११)

मा नो वृकाय वृक्ये समस्मा अघायते रीरधता यजत्राः ।
यूयं हि ष्ठा रथ्यो नस्तनूनां यूयं दक्षस्य वचसो बभूव ॥६
मा व एनो अन्यकृतं भुजेम मा तत् कर्म वसवो यच्चयध्वे ।
विश्वस्य हि क्षयथ विश्वदेवाः स्वयं रिपुस्तन्वं रीरिषीष्ट ॥७
नम इदुग्रं नम आ विवासे नमो दाधार पृथिवीमुत द्याम् ।
नमो देवेभ्यो नम ईश एषां कृतं चिदेनो नमसा विवासे ॥८
ऋतस्य वो रथ्यः पूतदक्षानृतस्य हस्त्यसदो अदब्धान् ।
ताँ आ नमोभिरुरुचक्षसो नॄन् विश्वान्य आ नमे महो यजत्राः।९
ते हि श्रेष्ठवर्चसस्त उ नस्तिरो विश्वानि दुरिता नयन्ति ।
सुक्षत्रासो वरुणो मित्रो अग्निर्ऋतधीतयो वक्मराजसत्याः१०।१२

हे देवगण ! तुम हमें वृक-वृकी को मत सौंपना । तुम हमारे देह, बल और वाणी के प्रेरक हों ।६। हे देवताओ ! हम किसी के पाप से दुःख न भोगें । हे वसुगण ! तुम्हारी असहमति वाले अनुष्ठान को हम न करें । हे विश्वेदेवा ! शत्रु की देह नष्ट हो जाय ।७। स्वर्ग और पृथ्वी को नमस्कार ने धारणकर रखा है । देवगण भी नमस्कार के वश में हैं । अतः मैं अपने पापों का प्रायश्चित करनेके अभिप्राय से नमस्कार करता हूँ ।८। हे देवगण ! मैं नमस्कार पूर्वक झुक रहा हूँ । तुम यज्ञ के नेता, बलों, यज्ञगृह में वास करने वाले और महिमा से सम्पन्न हो ।९। वे तेजस्वी हैं, वे हमारे पापों को दूर करें । वरुण, मित्र और अग्नि सत्य कर्म वालों के पक्ष में रहते हैं ।१०। (१२)

ते न इन्द्रः पृथिवी क्षाम वर्धन् पूषा भगो अदितिः पञ्च जनाः ।
सुशर्माणः स्ववसः सुनीथा भवन्तु नः सुत्रात्रासः सुगोपाः ॥११
न सद्मानं दिव्यं नंशि देवा भारद्वाजः सुमतिं याति होता ।
आसानेभिर्यजमानो मियेधैर्देवानां जन्म वसूयुर्ववन्द ॥१२
अप त्यं वृजिनं रिपुं स्तेनमग्ने दुराध्यम् ।
दविष्ठमस्य सत्पते कृधी सुगम् ॥१३
ग्रावाणः सोम नो हि कं सखित्वनाय वावशुः
जही न्यत्रिणं पणिं वृको हि षः ॥१४
यूयं हि ष्ठा सुदानव इन्द्रज्येष्ठा अभिद्यवः ।
कर्ता नो अध्वन्ना सुगं गोपा अमा ॥१५
अपि पन्थामगन्महि स्वस्तिगामनेहसम् ।
येन विश्वाः परि द्विषो वृणक्ति विन्दते वसु ।१६।१३

इन्द्र, पृथिवी, पूषा, भग, अदिति और पञ्चजन हमारे गृह की वृद्धि करें । वे अन्नदाता, सुखदाता और आश्रय दाता होकर रक्षा करें ।११। यह भरद्वाज शीघ्र ही सुन्दर घर पावें । हवि देने वाले ऋषि यजमानों सहित धन की कामदा से देवताओं की स्तुति करते हैं ।१२। हे अग्ने तुम कुटिल शत्रुओं को भगाओ और हमारा मंगल करो ।१३। हे सोम तुम पणि को मारो । यह अभिषव करने वाले तुम्हारी मित्रता की कामना करते हैं ।१ । हे इन्द्र देवताओं ! तुम दाता और तेजस्वी हो । तुम मार्गों में हमारी रक्षा करो ।१५। जिस सरल मार्ग पर चलने से शत्रु की पराजय और हमको धन लाभ होगा, उसी पर हम आ गये हैं ।१६।
(१३)

सूक्त ५२

(ऋषि—ऋजिश्वाः । देवता—विश्वेदेवाः । छन्द—त्रिष्टुप्, जगती, गायत्री)

न तद् दिवा न पृथिव्यानु मन्ये न यज्ञेन नोत शमीभिराभिः ।
उब्जन्तु तं सुभ्वः पर्वतासो नि हीयतामतियाजस्य यष्टा ॥१

अति वा यो मरुतो मन्यते नो ब्रह्म वा यः क्रितमाणं निनित्सात्।
तपूंषि तस्मै वृजिनानि सन्तु ब्रह्मद्विषमभि तं शोचतु द्यौः ॥२
किमङ्ग त्वा ब्रह्मणः सोम गोपां किमङ्ग त्वाहुरभिशस्तिपां नः ।
किमङ्ग नः पश्यसि निद्यमानान् ब्रह्मद्विषे तपुषिं हतिमस्य ॥३
अवन्तु मामुषसो जायमाना अवन्तु मा सिन्धवः पिन्वमानाः ।
अवन्तु मा पर्वतासो ध्रुवासो ऽवन्तु मा पितरो देवहूतौ ॥४
विश्वदानीं सुमनसः स्याम पश्येम नु सूर्यमुच्चरन्तम् ।
तथा करद् वसुपतिर्वसूनां देवाँ ओहानोऽवसागमिष्ठः ।५।१४

मैं इसे देवताओं के योग्य नहीं समझता । यह मेरे द्वारा किये जाते यज्ञ की या अन्य यज्ञों की भी तुलना न कर सकेगा । अतः सभी महान् पर्वत उस अतियाज को दुःख दें और उनके ऋत्विज भी दीन हो जाँय ।१। हे मरुद्गण ! जो व्यक्ति हमारे स्तोत्र की निन्दा करे उनका अनिष्ट हो और स्वर्ग उस ब्राह्मण द्वेषी कोजलावे ।२। हे सोम ! तुम मंत्र रक्षक क्यों कहे जाते हों ? तुम्हें निन्दासे बचाने वाला क्यों कहा जाता है ? हमारे निन्दित होने पर तुम निरपेक्ष क्यों देखते रहते हो ? तुम अपने व्यथित करने वाले आयुध को ब्राह्मणों से द्वेष करने वाले पर चलाओ ।३। उषायें नदियाँ, अचल पर्वत और देव-याग में उपस्थित देवता और पितर सब मेरे रक्षक हों ।४। हम सदा सूर्योदय को देखें । देवताओं के लिए हव्य वहन करने वाले अग्नि हमें इस योग्य करें ।५।
(१४)

इन्द्रो नेदिष्ठमवसागमिष्ठः सरस्वती सिन्धुभिः पिन्वमाना ।
पर्जन्यो न ओषधीभिर्मयोभुरग्निः सुशंसः सुहवः पितेव ।।६
विश्वे देवास आ गत शृणुता म इमं हवम् । एदं बर्हिर्नि षीदत।।७
यो वो देवा घृतस्नुना हव्येन प्रतिभूषति । तं विश्व उप गच्छथ८
उप नः सूनवो गिरः शृण्वन्त्वमृतस्य ये । सुमृडीका भवन्तु नः।।९
विश्वे देवा ऋतावृध ऋतुभिर्हवनश्रुतः। जुषन्तां युज्यं पयः१०।१५
सरस्वती नदी रक्षार्थ हमारी ओर आवें । औषधियों सहित पर्जन्य हमें

सुख दें। अग्नि और आह्वानीय हों।६। विश्वेदेवा ! मेरे आह्वान को श्रवण करते हुए इन कुशाओं पर विराजमान होओ।७। हे देवगण ! जो घृतयुक्त हव्य द्वारा तुम्हें आहुति देता हैं, उसके पास आओ।८। अविनाशी विश्वेदेवा हमारी स्तुति सुनकर हमारा कल्याण करें।९। यज्ञ की वृद्धि करने वाले विश्वेदेवा अपने-अपने भाग के अनुसार दुग्ध ग्रहण करें।१०। (१५)

स्तोत्रमिन्द्रो मरुद्गणस्त्वष्टृमान् मित्रो अर्यमा।
इमा हव्या जुषन्त नः ॥११
इम नो अग्ने अध्वरं होतर्वयुनशो यज। चिकित्वान् दैव्यं जनम्१२
विश्वे देवाः शृणुतेमं हवं मे ये अन्तरिक्षे य उप द्यवि ष्ठ।
ये अग्निजिह्वा उतवा यजत्रा आसद्यास्मिन् बर्हिषि मादयध्वम्१३
विश्वे देवा मम शृण्वन्तु यज्ञिया उभे रोदसी अपां नपाच्च मन्म।
मा वो वचांसि परिचक्ष्याणि वोचंसुम्नेष्विद् वो अन्तमा मदेम१४
ये के च ज्मा महिनो अहिमाया दिवो जज्ञिरे अपां सधस्थे।
ते अस्मभ्यमिषये विश्वमायुः क्षप उस्रा वरिवस्यन्तु देवाः ॥१५
अग्नीपर्जन्याववतं धियं मेऽस्मिन् हवे सुहवा सुष्टुतिं नः।
इलामन्यो जनयद् गर्भमन्यः प्रजावतीरिष आ धत्तमस्मे ॥१६
स्तीर्णे बर्हिषि समिधाने अग्नौ सूक्तेन महा नमसा वि ासे।
अस्मिन् नो अद्य विदथे यजत्रा विश्वे देवा हविषि मादयध्वम्
।१७।१६

मरुद्गण के साथ इन्द्र, त्वष्टा के साथ मित्र और अर्यमा तुम्हारी हव्य-युक्त स्तुतियोंको स्वीकार करें।११। हे अग्नि ! देवताओं में जो प्रमुख हैं, उनके निमित्त यज्ञ करो।१२। हे विश्वेदेवा तुम पृथिवी,स्वर्ग या अन्तरिक्ष में जहाँ भी हो,वहीं से हमारा आह्वान श्रवण करो। तुम सब कुशों पर बैठकर सोमपीकर प्रसंन होओ।१३। हे विश्वेदेवा ! स्वर्ग पृथ्वी और जलके पौत्र अग्नि हमारी स्तुति सुनें। तुम जिस स्तोत्र से सहमत न हो, उसे हम न कहें। हम तुम्हारे आत्मीय होकर सुख पावें

।१४। तीनों लोकोंमे प्रकट होने वाले देवगण हमको और हमारे पुत्रादि को अन्न प्रदान करें ।१५। हे अग्नि और पर्जन्य ! हमारे यज्ञ रक्षक होओ । हमारी स्तुति सुनो । तुममें से एक अनदाता और दूसरे संतान दाता हो । अत: हमें अन्न और संतान दो ।१६। हे विश्वेदेवो ! अग्नि के दीप्त होने और कुश पर हमारे हव्य और नमस्कारों से तृप्त होओ ।१७। (१६)

सूक्त ५३

(ऋषि–भरद्वाजो बार्हस्पत्यः । देवता–पूषा । छंद–गायत्री, अनुष्टुप्)

वयमु त्वा पथस्पते रथं न वाजसातये । धिये पूषन्नयुज्महि ॥१
अभि नो नर्यं वसु वीरं प्रयतदक्षिणम् । वामं गृहपतिं नय ॥२
अदित्सन्तं चिदाघृणे पूषन् दानाय चोदय ।
पणेश्चिद् वि म्रदा मनः ॥३
वि पथो वाजसातये चिनुहि वि मृधो जहि ।
साधन्तामुग्र नो धियः ॥४
परि तृन्धि पणीनामारया हृदया कवे । अथेमस्मभ्यं रन्धय५·१७

हे पूषन् ! हम तुम्हें कर्म के लिए और अन्न के लिए रथ के समान अपने सामने करते हैं ।१। हे पूषन् ! मनुष्यों का हितैषी, दानी एक गृहस्थ हमारे यहाँ भेजो ।२। हे पूषन्! लोभको दानशील बनाकर उसके हृदय की कठोरता मिटाओ ।३। हे पूषन् ! अन्न लाभ के लिए मार्गोंको सरल करो । चोर आदि को नष्ट करो, यज्ञों को सम्पंन करो ।४। हे पूषन् ! पणियों के हृदयों को चीर कर हमारे वशमें कर दो ।५। (१७)

वि पूषन्नारया तुद पणेरिच्छ हृदि प्रियम्। अथेमस्मभ्यं रन्धय।६
आ रिख किकिरा कृणु पणीना हृदया कवे । अथेमस्मभ्यं रन्धय७
यां पूषन् ब्रह्मचोदनीमारां बिभर्ष्याघृणेः।
तया समस्य हृदयमा रिख किकिरा कृणु ॥८
या ते अष्ट्रा गोओपशाऽऽघृणे पशुसाधनी। तस्यास्ते सुम्नमीमहे९

उत नो गोषणिं धियमश्वसां वाजसामुत । नृवत् कृणुहि वीतये ।१०।१८

हे पूषन् ! पणियों के हृदयों को विदीर्ण करो । उनके हृदय में सदभाव जाग्रत कर मेरे आधीन कर दो ।६। हे पूषन् ! दस्युओं के हृदयकी कठोरता कम करते हुए उन्हें हमारे अधीन करो ।७। हे पूषन्! अन्न प्रेरक प्रमोद धारण कर उसके कृपणों के हृदयों की कठोरता न्यून करो ।८। हे पूषन् ! तुम अपने जिन अस्त्र से पशुओं को हैंकते हो,उसी अन्न से हम अपने हित की याचना करते हैं ।९। हे पूषन् हमारे यज्ञादि कर्म के लिये गौ, अश्व, भृत्य और अन्न प्राप्त कराओ ।१०। (१८)

सूक्त ५४

(ऋषि-भरद्वाजो बार्हस्पत्यः । देवता—पूषा । छन्द—गायत्री)

सं पूषन् विदुषा नय यो अञ्जसानुशासति । य एवेदमिति ब्रवत्१
समु पूष्णा गमेमहि यो गृहाँ अभिशासति । इम एवेति च ब्रवत्२
पूष्णश्चक्रं न रिष्यति न कोशोऽव पद्यते। मो अस्य व्तथते पविः३
यो अस्मै हविषाविधन्न तं पूषापि मृष्यते । प्रथमो बिन्दते वसु४
पूषा गा अन्वेतु नः पूषा रक्षत्वर्वतः । पूषा वाजं सनोतु नः५।१९

हे पूषन् ! जो हमें मार्ग दिखावे और हमारे अपहृत धन को प्राप्त करावे ऐसे पुरुष से हमारी भेंट कराओ ।१। खोये हुऐ पशुओं का गोष्ठ बनाने वाले पुरुष से पूषा हमें मिलावे ।२। पूषा का चक्रयह नही होता उसकी धार कभी भी भीतरी नहीं होती ।३। जो यजमान पूषा को हवि देता है, पूषा उनका किंचित भी ननिष्ट नहीं करते,वह पुरुष उनसे धन प्राप्त करता है ।४। पूषा हमारी गौओं और अश्वों की रक्षा करें और हमें अन्न प्रदान करें ।५। (१९)

पूषन्ननु प्र गा इहि यजमानस्य सुन्वतः । अस्माकं स्तुवतामुत।।६
माकिर्नेशन्माकीं रिषन्माकीं सं शारि केवटे ।
अथारिष्टाभिरा गहि ।।७
मृण्वन्तं पूषणं वयमिर्यनमनष्टवेदसम् । ईशानं राय ईमहे ।।८

पूषन् तव व्रते वयं न रिष्येम कदाचन । स्तोतारस्त इह स्मसि ९
परि पूषा परस्ताद्धस्तं दधातु दक्षिणम् पुनर्नो नष्टमाजतु ।१०।२०

हे पूषन् ! यजमानकी गौओं और स्तोत्रमयी स्तुतियोंका अनुसरण करो ।६। हे पूषन् ! हमारा गौ-धन बिनष्ट न हो । यह गर्त में न गिरे । हम उन्हें अहिंसित रखते हुए सायङ्काल इन्हीं के साथ लौटें ।७। पूषा हमारी स्तुतियाँ को सुनकर हमारी दरिद्रता को दूर करते हैं । हम उनसे धन माँगते हैं ।८। हे पूषन् ! यज्ञ के अवसर पर हम हिंसित हो । हम तुम्हारी स्तुति करते हुए पूर्ववत् सुरक्षित रहें ।६। पूषा हमारे गौ-धन को कुमार्ग से बचावें । वे हमारे अपहृत गौ-धन को लौटा लावें ।१०। (२०)

सूक्त ५५

(ऋषि—भरद्वाजो बार्हस्पत्यः । देवता—पूषा । छन्द—गायत्री)

एहि वां विमुचो नपादाघृणे स सचावहै । रथीर्ऋतस्य नो भव१
रथीतमं कपर्दिनमीशानं राधसो महः । रायः सखायमीमहे ।।२
रायो धारास्याघृणे वसो राशिरजाश्व । धीवतोधीवतः सखा।।३
पूषणं न्वजाश्वमुप स्तोषाम वाजिनम् । स्वसुर्यो जार उच्यते ।।४
मातुर्दिधिषुमब्रवं स्वसुर्जारः शृणोतु नः । भ्रातेन्द्रस्य सखा मम५
आजासः पूषणं रथे निशृम्भास्ते जनश्रियम् । देवं वहन्तु बिभ्रतः ।६।२१

हे पूषन् ! तुम्हारा स्तोता मेरे पास आवे, हम दोनों मिलकर तुम्हें अपने यज्ञ का नेता बनावें ।१। हम महारथी पूषा से धन की याचना करते हैं ।२। हे छाग वाहिन् ! तुम धन के प्रवाहरूप हो और स्तोताके मित्र हो ।३। हम उन्हीं पूषा की स्तुति करते, जिन्हें लोग ऊषा का स्वामी कहते हैं ।४। रात्रि माता के स्वामी पूषा की हम स्तुति करते हैं । वे उषापति सूर्य इन्द्र के भ्राता और हमारे मित्र हों ।५। रथ में याजित छाग पूषा के रथ का वहन करते हैं, वे उन्हें यहाँ लावें ।६। (२१)

सूक्त ५६

(ऋषि–भरद्वाजो बार्हस्पत्यः । देवता–पूषा । छन्द–गायत्री, अनुष्टुप्)
य एनमादिदेशति नरम्भादिति पूषणम् । न तेन देव आदिशे ॥१
उत घा स रथीततः संख्या सत्पतिर्युजा । इन्द्रो वृत्राणि जिघ्नते२
उतादः परुषे गवि सूरश्चक्रं हिरण्ययम् । न्यैरयद् रथीतमः ॥३
यदद्य त्वा पुरुष्टुत ब्रवाम दस्र मन्तुमः। तत् सु नो मन्म साधय४
इमं च नोगवेषण सातये सीषधो गणम्। आरात् यूषन्नसि श्रुतः५
आ ते स्वस्तिमीमह आरेअघामुपावसुम् ।
अद्या च सर्वतातये श्वश्च सर्वतातये ।६।२२

घृतयुक्त अन्न के सहित पूषा की जो स्तुति करता है, उसे अन्य देवताओं की स्तुति करने की आवश्यकता नहीं होती ।१। महारथी इन्द्र अपने मित्र पूषा की सहायता से बैरियों को मारते हैं ।२। सूर्य के हिरण्यमय रथ के चक्र को पूषा ठीक चलाते हैं ।३। पूषन् ! हम जिस धन के लिए तुम्हारी स्तुति करते हैं, वह हमें दो ।४। हे पूषन् ! आज और कल के अनुष्ठानों में हम उसी रक्षा की कामना करते हैं, जो पाप से दूर और कल्याण के नितांत समीप हैं ।५-६। (२२)

सूक्त ५७

(ऋषि–भरद्वाजो बार्हस्पत्यः । देवता–इन्द्रापूषणौः । छंद–गायत्री)
इन्द्रा नु पूषणा वयं सख्याय स्वस्तये । हुवेम वाजसातये ॥१
सोममन्य उपासदत् पातवे चम्वोः सुतम् । करम्भमन्य इच्छति२
अजा अन्यस्य वह्नयो हरी अन्यस्य सभृता ।
ताभ्यां वृत्राणि जिघ्नते ॥३
यदिन्द्रो अनयद् रितो महीरपो वृषन्तमः । तत्र पूषाभवत् सचा४
तां पूष्णः सुमतिं वयं वृक्षस्य प्र वयामिव । इन्द्रस्य चा रभामहे५
उत् पूषणं युवामहे शूँऽभीरिव सारथिः। मह्या इन्द्रं स्वस्तये६।२३

हे इन्द्र और पूषन् ! हम अपनी मंगल कामना करते हुए तुम्हारी मित्रता चाहते और अन्न लाभ के लिऐ आहूत करते हैं ।१। तुम में से

इन्द्र सोम पीने क लिए और पूषा सत्तू युक्त अन्न के लिए जाते हैं ।२।
इनमें पूषा के वाहन छाग ओर इन्द्रके वाहन अश्व हैं । इन्द्र अपने उन्हीं
अश्वों पर जाकर वृत्र का हनन करते हैं । जब इन्द्र महावृष्टि करते हैं
तो पूषा सहायता देते हैं ।३-४। पूषा और इन्द्र की कृपा पूर्ण रक्षा पर
हम उसी प्रकार आश्रित हैं, जैसे सुदृढ़ वृक्ष की शाखा पर रह सकते हैं
।५। सारथि जैसे लगाम को खींचता है, वैसे ही हम भी अपने मंगल के
लिए पूषा और इन्द्रको अपनी ओर आकर्षित करते हैं ।६। (२३)

सूक्त ५८

(ऋषि–भरद्वाजो बार्हस्पत्यः । देवता–पूषा । छन्द–त्रिष्टुप्, जगती)

शुक्रं ते अन्यद् यजतं ते अन्यद् विषुरूपे अहनी द्यौरिवासि ।
विश्वा हि माया अवसि स्वधावो भद्रा ते पूषन्निह रातिरस्तु॥१
अजाश्वः पशुपा वाजपस्त्यो धियंजिन्वो भुवने विश्वे अर्पितः ।
अष्ट्राँ पूषा शिथिरामुद्ररीवृजत् संचक्षाणो भुवना देव ईयते ॥२
यास्ते पूषन्नावो अन्तः समुद्रे हिरण्ययीरन्तरिक्षे चरन्ति ।
ताभिर्यासि दूत्यां सूर्यस्य कामेन कृत श्रव इच्छमानः ॥३
पूषा सुबन्धुर्दिव आ पृथिव्या इलस्पतिर्मघवा दस्मवर्चाः ।
यं देवासो अददुः सूर्यायै कामेन कृतं तवसं स्वञ्चम् ।४।२४

हे पूषन् ! अुम उज्ज्वल वर्ण वाले हो और रात्रि केवल यज्ञ योग्य
है । इस प्रकार दिन और रात्रि दोनों ही विपरीत रूप वाले हैं । हे
पूषन् ! तुम सूर्य के समान प्रकाशित हो क्योंकि तुम दाता और ज्ञानी
हो । तुम्हारा कल्याण को वहन करते वाला दान प्रकट हो ।१। जिन
पूषा का वाहन छाग है, जो पशुओं का पालन करने वाले हैं और जो
स्तोताओं को प्रीति प्रदान करते हैं, तथा सभी लोगों के ऊपर स्थापित
हैं, वही पूषा सूर्य रूप से सब प्राणियों को प्रकाशित करते हुए अंतरिक्ष
में गमन करते हैं ।२। हे पूषन् ! तुम्हारी सभी नौकायें अंतरिक्ष में
चलती हैं, उनके द्वारा तुम दूत कार्य करते हुए हवि-कामना करते हो ।
स्तोता तुम्हें हव्यदान द्वारा प्रसंन करते हैं । पृथिवी और स्वर्गके श्रेष्ठ

बन्धु पूषा अन्नों के स्वामी हैं। वे ऐश्वर्यशाली और सुन्दर गमन वाले हैं ।४। (२४)

सूक्त ५९

(ऋषि—भरद्वाजो बार्हस्पत्यः। देवता—इन्द्राग्नी। छंद—बृहती, अनुष्टुप्,)

प्र नु वोचा सुतेषु वा वीर्या वानि चक्रथुः ।
हतासो वां पितरो देवशत्रव इन्द्राग्नी जीवथो युवम् ॥१
बलित्था महिमा वामिन्द्राग्नी पनिष्ठ आ ।
समानो वां जनिता भ्रातरा युवं यमाविहेहमातरा ॥२
ओकिवांसा सुते सचाँ अश्वा सप्ती इवादने ।
इन्द्रा न्वग्नी अवसेह वज्रिणा वयं देवा हवामहे ॥३
य इन्द्राग्नी सुतेषु वां स्तवत् तेष्वृतावृधा ।
जोषवाकं वदतः पज्रहोषिणा न देवा भसथश्चन ॥४
इन्द्राग्नी को अस्य वां देवौ मर्तश्चिकेतति ।
विषूचो अश्वान् युयुजान ईयत एकः समान आ रथे ॥५।२५

हे इन्द्राग्ने ! सोमाभिषव होने पर हम तुम्हारे बल का वर्णन करते हैं। देवताओं से द्वेष करने वाले रक्षसों को तुमने मार डाला, तुम अविनाशी हो ।१। हे इन्द्राग्ने ! तुम्हारे सभी कर्म यथार्थ और विस्तृत हैं, तुम्हारे एक ही पिता हैं ।२। इन्द्राग्ने ! अश्व जैसे तृणोंकी ओर जाते हैं, वैसे ही तुम सोमाभिषव की ओर गमन करते हो। हम तुम्हें अपनी रक्षा के लिए इस यज्ञ में आहूत करते हैं ।३। हे इन्द्राग्ने ! जो सोमाभिषव के पश्चात् कुत्सित रूप से तुम्हारी स्तुति करते हैं, तुम उनका सोम नहीं ।४। हे इन्द्रागने ! जब तुम दोनों एक रथ पर आरूढ़ होकर गमन करते हो, तब कौन तुम्हारे इस कार्य को जान सकेगा ? ।५। (२५)

इन्द्राग्नी अपादियं पूर्वागात् पद्वतीभ्यः ।
हित्वी शिरो जिह्वया वावदच्चरत् त्रिंशत् पदा न्यक्रमीत्६

इन्द्राग्नी आ हि तन्वते नरो धन्वानि बाह्वोः ।
मा नो अस्मिन् महाधने परा वर्क्तं गविष्टिषु ॥७
इन्द्राग्नी तपन्ति माऽघा अर्यो अरातयः ।
अप द्वेषांस्या कृतं युयुतं सूर्यादधि ॥८
इन्द्राग्नी युवोरपि वसु दिव्यानि पार्थिवा ।
आ न इह प्र यच्छतं रयिं विश्वयुपोषसम् ॥९
इन्द्राग्नी उक्थवाहसा स्तोमेभिर्हवनश्रुता ।
विश्वाभिर्गीर्भिरा गतमस्य सोमस्य पीतये ।१०।२६

हे इन्द्राग्ने ! बिना पाँव की यह उषा प्राणियों के शीर्ष स्थान को उत्तेजित कर उनकी जिह्वा से उच्च वाणी प्रकट करती हुई वर्तती है। ।६। हे इन्द्राग्ने ! वीर पुरुष अपने धनुष को फैलाते हैं। तुम गौओं की खोज वाले कार्य में हमें मत त्याग देना ।७। हे इन्द्राग्ने ! जो शत्रु हमें व्यथित करते हैं उन्हें दूर करो और उन्हें सूर्य-दर्शन भी मत होने दो।८। हे इन्द्राग्ने ! तुम दिव्य और पार्थिव, सब धनों के स्वामी हो, अतः हमें समस्त धन प्रदान करो ।९। हे इन्द्राग्ने ! हमारे सोमपान के लिए आओ क्योंकि तुम स्तुति युक्त आह्वान के सुनने वाले हो ।१०। (२६)

सूक्त ६०

(ऋषि—भरद्वाजो बार्हस्पत्यः । देवता—इन्द्राग्नी । छंद—त्रिष्टुप् बृहती, अनुष्टुप्, गायत्री)

श्नथद् वृत्रमुत सनोति वाजमिन्द्रा यो अग्नी सहुरी सपर्यात् ।
इरज्यन्ता वसव्यस्य भूरेः सहस्तमा सहसा वाजयन्ता ॥१
ता योधिष्टमभि गा इन्द्र नूनमपः स्वरुषसो अग्न ऊळहाः ।
दिशः स्वरुषस इन्द्र चित्रा अपो गा अग्ने युवसे नियुत्वान् ॥२
आ वृत्रहणा वृत्रहभिः शुष्मैरिन्द्र यातं नमोभिरग्ने अर्वाक् ।
युवं राधोभिरकवेभिरिन्द्राऽग्ने अस्मे भवतमुत्तमेभिः ॥३
ता हुवे ययोरिदं पप्ने विश्वं पुरा कृतम् । इन्द्राग्नी न मर्धतः ॥४

उग्रा विघनिना मृध इन्द्राग्नी हवामहे । ता नो मृलात ईदृशे
।५।२७

अन्न की कामना करते हुए जो महान् ऐश्वर्यके स्वामी और शत्रु-हन्ता इन्द्राग्नि की उपासना करते हैं वे अन्न पाते और शत्रुओं को मारते हैं ।१। हे इन्द्राग्ने ! तुमने सूर्य और उषा के लिए युद्ध किया। हे इन्द्र ! तुमने दिशा, गौ, उषा, सूर्य और जलको जगत् के साथ जोड़ा। हे अग्ने तुमने भी यही कार्य किये हैं ।२। हे इन्द्राग्ने ! शत्रु का हनन करने वाले बल के सहित आगमन करो। तुम श्रेष्ठ धन सहित प्रकट होओ। जो इन्द्राग्नि अपने स्तोता को नहीं मारते और जिनके वीर कर्म प्रशंसित है, मैं उन्हीं इन्द्राग्नि को आहूत करता हूँ ।३-४। हम इन्द्राग्नि को आहूत करते हैं वे हमें युद्ध में सफल करें ।५। (२७)

हतो वृत्राण्यार्या हतो दासानि सत्पती । हतो विश्वा अप द्विषः६
इन्द्राग्नी युवामिमे ऽभि स्तोमा अनूषत । पिबतं शंभुवा सुतम्।७
या वां सन्ति पुरुस्पृहो नियुतो दाशुषे नरा ।
इन्द्राग्नी ताभिरा गतम् ।।८
ताभिरा गच्छतं नरोतेदं सवन सुतम् । इन्द्राग्नी सोमपीतये ।।९
तमीलिष्व यो अर्चिषा वना विश्वा परिष्वजत् ।
कृष्णा कृणोति जिह्वया ।१०।२८

वे इन्द्राग्नि सज्जनोंकी रक्षा और दुर्जनोंके उपद्रवको नष्ट करतेहैं, उन्होंने सब वैरियों को मारा है ।६। हे इन्द्राग्नि ! यह स्तोता तुम्हारी स्तुति करते हैं, तुम निष्पन्न सोम का पान करो ।७। हे इन्द्राग्ने ! हव्य दाता के लिए उत्पन्न अश्वों पर आरूढ़ होकर आगमन करो ।८। हे इन्द्राग्ने ! तुम सोमपान के लिए हमारे सवन में आगमन करो ।९। हे स्तोता ! जो अग्नि अपनी शिखा से जङ्गलों को ढक लेती है, तुम उसी अग्नि का स्तवन करो ।१०। (२८)

य इद्ध अविवासति सुम्नमिन्द्रस्य मर्त्यः । द्युम्नाय सुतरा अपः११
ता नो वाजवतीरिष आशून् पिपृतमर्वतः। इन्द्रमग्निं च वोलहवे१२

उभा वामिन्द्राग्नी आहुवध्या उभा राधसः सह मादयध्यै ।
उभा दातारविषां रयीणामुभा वाजस्य सातये हुवे वाम् ॥१३
आ नो गव्येभिरश्व्यैर्वसव्यैरुप गच्छतम् ।
सखायौ देवौ सख्याय शंभुवेन्द्राग्नी ता हवामहे ॥१४
इन्द्राग्नीशृणुतं हवं यजमानस्य सुन्वतः ।
वीतं हव्यान्या गतं पिबतं सोम्यं मधु ।१५।२९

जो अनुष्ठाता इन्द्र के लिए अग्नि में हवि डालते हैं, इन्द्र उनके लिए जल-वृष्टि करते हैं ।११। हे इन्द्राग्ने ! हम बलकारी अन्न प्रदान करो । द्रुत वेग वाला अश्व भी दो ।१२। हे इन्द्राग्ने ! मैं तुम दोनों को यज्ञ द्वारा और हव्य द्वारा आहूत करता हूँ,तुम अन्नदाता हो, अन्नलाभ के लिए तुम्हारा आह्वान करता हूँ ।१३। हे इन्द्राग्ने ! तुम गौ, अश्व और अपरिमित सम्पत्ति के सहित हमारे अभिमुख होओ । हम तुम्हें बुलाते हैं ।१४। हे इन्द्राग्ने ! सोम वाले यजमान की स्तुति सुनकर हव्य की इच्छा करते हुए सोमपान करो ।१५। (२९)

सूक्त ६१

(ऋषि—भरद्वाजो बार्हस्पत्यः । देवता—सरस्वती । छंद–जगती, गायत्री, त्रिष्टुप्)

इयमददाद् रभसमृणच्युतं दिवोदासं वध्र्यश्वाय दाशुषे ।
या शश्वन्तमाचखादावसं पणिं ता ते दात्राणि तविषा सरस्वति १
इयं शुष्मेभिर्बिसखा इवारुजत् सानु गिरीणां तविषेभिरूर्मिभिः ।
पारावतघ्नीमवसे सुवृक्तिभिः सरस्वतीमा विवासेम धीतिभिः ।२
सरस्वति देवनिदो नि बर्हय प्रजां विश्वस्य बृसयस्य मायिनः ।
उत क्षितिभ्योऽवनीरविन्दो विषमेभ्यो अस्रवो वाजिनीवति ॥३
प्र णो देवी सरस्वती वाजेभिर्वाजिनीवती । धीनामवित्र्यवतु ॥४
यस्त्वा देवि सरस्वत्युपब्रूते धने हिते । इन्द्रं न वृत्रतूर्ये ।५।३०

सरस्वती ने हविदाता वध्र्यश्व को दिवोदास नामक पुत्र प्रदान किया। उन्होंने अदानशील पणिका शोधन किया। हे सरस्वती, तुम्हारे दान-विस्तृत हैं।१। यह सरस्वती पर्वत के तटों को अपनी लहरों से तोड़ती हैं। हम उन्हीं की सेवा करते हैं।२। हे सरस्वती ! तुमने देव निन्दकों और त्वष्टा के पुत्र को मारा और मनुष्यों को भूमि देकर जल वृष्टि की।३। अन्नवती सरस्वती रक्षा करने वाली हैं,वे हमें भले प्रकार तृप्त करें।४। इन्द्र के समान तुम्हारी भी जो स्तुति करता है, वही पुरुष धन प्राप्ति वाले संग्राम में जाता है। तुम उसकी रक्षक होओ।५। (३०)

त्वं देवि सरस्वत्यवा वाजेषु वाजिनि। रदा पूषेव नः सनिम् ॥६
उत स्या नः सरस्वती घोरा हिरण्यवर्तनिः।
वृत्रघ्नी वष्टि सुष्टुतिम् ॥७
यस्या अनन्तो अह्नुतस्त्वेषश्चरिष्णुरर्णवः। अमश्चरति रोरुवत् ८
सा नो विश्वा अति द्विषः स्वसॄरन्या ऋतावरी।
अतन्नहेव सूर्यः ॥९
उत नः प्रिया प्रियासु सप्तस्वसा सुजुष्टा। सरस्वती स्तोम्या भूत् ॥१०।३१

हे सरस्वती ! तुम युद्ध में रक्षा करो। पूषा के समान में धन दो।६। शत्रु का नाश करने वाली, रथारूढ़ा सरस्वती हमारे श्रेष्ठ स्तोत्र की रक्षा करें।७। इन सरस्वती का रथ वेगवान् जल-शब्द करता हुआ जाता है।८। सूर्य जैसे दिन को लाते हैं वैसे ही सरस्वती विजय लेकर अपनी अन्य भगिनियों सहित आती हैं।९। सरस्वतीकी प्राचीन ऋषियों ने सेवा की थी, वह हमारी स्तुति के योग्य हों।१०। (३१)

आपप्रुषी पार्थिवान्युरु रजो अन्तरिक्षम्। सरस्वती निदस्पातु ११
त्रिषधस्था सप्तधातुः पञ्च जाता वर्धयन्ती। वाजेवाजे हव्या भूत् ।१२।
प्र या महिम्ना महिनासु चेकिते द्युम्नेभिरन्या अपसामपस्तमा।

रथ इव बृहती विभ्वने कृतोपस्तुत्या चिकितुषा सरस्वती ॥१३
सरस्वत्यभि नो नेषि वस्यो माप स्फरीः पयसा मा न आ धक् ।
जुषस्व नः सख्या वेश्या च मा त्वत् क्षेत्राण्यरणानि गन्म।१४।३२

जिन सरस्वती ने स्वर्ग पृथिवी को तेज से पूर्ण किया है, वे हमें निन्दकों से बचावें ।११। सप्त नदियों वाली सरस्वती संग्राम में आह्वान् करने योग्य होती हैं ।१२। यशवती, नदियों में श्रेष्ठ, गुणवती सरस्वती विद्वान् स्तोता की स्तुति के योग्य हैं। १३। हे सरस्वती ! हमें महान् धन दो । कर्म हीन या पीड़ित मत करो । हमारा बन्धुत्व स्वीकार करो । हम निकृष्ट स्थान को प्राप्त न हो ।१४। (३२)

॥ चतुर्थो ऽष्टकः समाप्तः ॥

॥ अष्टमोऽध्यायः समाप्तः ॥

पंचम अष्टक

(प्रथम अध्याय)

सूक्त ६२ (छठा अनुवाक)

(ऋषि—भरद्वाजो बार्हस्पत्यः । देवता—अश्विनौ । छन्द—त्रिष्टुप्)

स्तुषे नरा दिवो अस्य प्रसन्ता ऽश्विना ह्वे जरमाणो अर्कैः ।
या सद्य उस्रा व्युषि ज्मो अन्तान् युयूषतः पर्युरू वरांभिः ॥१
ता यज्ञमा शुचिभिश्चक्रमाणा रथस्य भानुं रुरुचू रजोसिः ।
पुरू वरांस्यमिता मिमाना ऽपो धन्वान्यति याथो अज्रान् ॥२
ता ह त्यद् वर्तिर्यदरध्रमुग्रेत्था धिय ऊहथुः शश्वदश्वैः ।
मनोजवेभिरिषिरैः शयध्यै परि व्यथिर्दाशुषो मर्त्यस्य ॥३
ता नव्यसो जरमाणस्य मन्मोप भूषतो युयुजानसप्ती ।
शुभं पृक्षमिषमूर्जं वहन्ता होता यक्षत् प्रत्नो अध्रुग्युवाना ॥४
ता वल्गू दस्रा पुरुशाकतमा प्रत्ना नव्यसावचसा विवासे ।
या शंसते स्तुवते शंभविष्ठा बभूवतुर्गृणते चित्रराती ।५।१

शत्रुओं के हराने वाले अश्विद्वय रात्रि का अन्धकार मिटाते हैं। में उन्हें स्तुत करता हुआ, बलवान् हूँ ।१। यज्ञ में गमन करने वाले अश्विद्वय अपने तीजों को निर्मित्त करते हुए अपने अश्वों को मरुभूमिसे पार ले जाते हैं ।२। हे अश्विद्वय ! तुम मन के समान वेग वाले अश्वों से द्वारा स्तोताओं को स्वर्ग की प्राप्ति कराओ । हविदाता यजमानकी हिंसा करने वाले को घोर निद्रामें निमग्न करो ।३। वे अश्विद्वय स्तोता की सुन्दर स्तुतियों के पास आगमन करें। द्वेषशून्य प्राचीन अग्नि उनका यजन करें ।४। जो स्तुति करने वालों की सुख देते हुए विविध

प्रकार का धन देते है,उन्हीं अश्विनीकुमारों की में स्तुति करता हूँ ।५।

(१)

ता भुज्युं विभिरद्भ्यः समुद्रात् तुग्रस्य सुनुमूहथू रजोभिः ।
अरेणुभिर्योजनोभिर्भुजन्ता पतत्रिभिरर्णसो निरुपस्थात् ॥६
वि जयुषा रथ्या यातमद्रिं श्रुतं हवं वृषणा वध्रिमत्याः ।
दशस्यन्ता शयवे पिप्यथुर्गामिति च्यवाना सुमतिं भुरण्यू ॥७
यद् रोदसी प्रदिवो अस्ति भूमा हेलो देवानमुत मर्त्यत्रा ।
तदादित्या वसवो रुद्रियासो रक्षोयुजे तपुरघं दधात ॥८
य ईं राजानावृतुथा विदधद् रजसो मित्रो वरुणश्चिकेतत् ।
गम्भीराय रक्षसे हेतिमस्य द्रोघाय चिद् वचसे आनवाय ॥९
अन्तरैश्चक्रैस्तनयाय वर्तिर्द्युमता यातं नृवता रथेन ।
सनुत्येन त्यजसा मर्त्यस्य वनुष्यतामपि शीर्षा ववृक्तम् ॥१०
आ परमाभिरुत मध्यमाभिर्नियुद्भिर्यातमवमाभिरर्वाक् ।
दृलहस्य चिद् गोमतो वि व्रजस्य दुरोवर्तं गृणते चित्रराती ११।२

हे अश्विद्वय ! तुमने ही भृज्यु को रथ युक्त अश्वों द्वारा समुद्र से निकाला ।६। हे अश्विद्वय ! रथ के मार्ग में अड़े हुए पर्वत को तोड़ो। तुम पुत्र कों कामना वालों का आह्वान सुनो। स्तोता की वंध्या को को पयस्विनी बनाओ ।७। द्यावापृथिवी, कादित्यगण, वसुगण, मरुद्गण और अश्विनीकुमारों के उपासकों के प्रति देवताओं को जो भीषण क्रोध हो उस क्रोध को राक्षस-हनन के कार्य में प्रयुक्त करो ।८। लो यजमान भुवनपति अश्विनीकुमारों की उपासना करता है उसे मित्रावरण जानते हैं, वह यजमान वीर राक्षसों पर आयुध चलाने में समर्थ होता है ।९। हे अश्विगीकुमारो ! तुम सारथी-युक्त रथ पर आरूढ़ होकर अपत्य प्रदान के लिए आओ और अपने क्रोध से मनुष्यों के लिए विघ्न उपस्थित करने वालोंका सिर काटो ।१०। हे अश्विनीकुमारो ! तुम हमारे अभिमुख होओ। सम्पंन गोष्ठ का उद्घाटन करो। मुझे दिव्य धन दो। मैं तुम्हारी स्तुति करता हूँ ।११।

(२)

सूक्त ६३

(ऋषि–भारद्वाजो बार्हस्पत्यः । देवता– अश्विनौ । छंद–विराट्, एकपदा त्रिष्टुप्,)

क्व त्या वल्गू पुरुहूताद्य दूतो न स्तोमोऽविदन्नमस्वान् ।
आ यो अर्वाङ् नासत्या ववर्त प्रेष्ठा ह्यसथो अस्य मन्मन् ॥१
अरं मे गन्तं हवनायास्मै गृणाना यथा पिबाथो अन्धः ।
परि ह त्यद् वर्तिर्याथो रिषो न यत् परो नान्तरस्तुतुर्यात् ॥२
अकारि वामन्धसो वरीमन्नस्तारि बर्हिः सुप्रायणतमम् ।
उत्तानहस्तो युवयुर्ववन्दा ऽऽवां नक्षन्तो अद्रय आञ्जन् ॥३
ऊर्ध्वो वामग्निरध्वरेष्वस्थात् प्र रातिरेति जूर्णिनी घृताची ।
प्र होता गूर्तमना उराणो ऽयुक्त यो नासत्या हवीमन् ॥४
अधि श्रिये दुहिता सूर्यस्य रथं तस्थौ पुरुभुजा शतोतिम् ।
प्र मायाभिर्मायिना भूतमत्र नरा नृतू जनिमन् यज्ञियानाम् ।५।३

जहाँ अश्विद्वय निवास करें, वहा हवियुक्त पंद्रहवाँ स्तोत्र उन्हें दूत की तरह प्राप्त करे । इसी स्तोमने अश्विद्वय को मेरी ओर किया। हे अश्विनीकुमारो ! तुम स्तुति से प्रसंन होते हो ।१। हे अश्विनी-कुमारो ! हमारे आह्वानके प्रति आओ । सोमपान कर हमारे घरकी शत्रु से रक्षा करो । शत्रु हमारे घर को दूर या पास से भी नष्ट कर न कर सके ।२। हे अश्विद्वय ! अभिषुत सोम तुम्हारे लिए है । कुश बिछाये गये हैं मैं स्तोता स्तुति कर रहा हूँ ।३। हे अश्विद्वय ! तुम्हारे यज्ञके निमित्त अग्नि ऊँचे उठते हैं । जो स्तोता तुम्हारा स्तोत्र करता हैं वह अनेक कर्म करने में समर्थ होता है ।४। अश्विद्वय ! सुर्य पुत्री ने तुम्हारे रथ को सुशोभित किया था । तुम देवताओं की प्रजा के नेतृत्व करने वाले होओ ।५। (३)

युवं श्रीभिर्दर्शताभिराभिः शुभे पुष्टिमूहथुः सूर्यायाः ।
प्र वां वयो वपुषेऽनु पप्तन् नक्षद् वाणी सुष्टुता धिष्ण्या वाम्॥६

आ वां वयोऽस्वासो वहिष्ठा अभि प्रयो नासत्या वहन्तु ।
प्र वां रथो मनोजवा असर्जीषः वृक्षः इषिधो अनु पूर्त्रीः ॥७
पुरु हि वां पुरुभुजा देष्णं धेनुं न इषं पिन्वतमसक्राम् ।
स्तुतश्च वां माध्वी सुष्टुतिश्च रसाश्च ये वामन रातिमग्मन् ।८
उत म ऋज्रे पुरयस्य रघ्वी सुमीलहे शतपेरुके च पक्वा
शाण्डो दाद्धिरणिनः स्मद्दिष्टीन् दश वशासो अभिषाच ऋष्वान्९
सं वां शता नासत्या सहस्रा ऽश्वानां पुरुपन्था गिरे दात् ।
भरद्वाजाय वीर नू गिरे दाद्धता रक्षांसि पुरुदंससा स्युः ॥१०
आ वां सुम्ने वरिमन्त्सूरिभिः ष्याम् ११।४

हे अश्विद्वय ! तुम सूर्या की शोभा के लिए पुष्ट होओ । तुम्हारे अश्व की शोभाके लिए अनुगमन करते हैं । तुम्हें स्तुतियाँ व्याप्त करें ।६। हे अश्विद्वय ! वहनशील तुम्हारे अश्व तुम्हें अंन की ओर लावें, तुम्हारा रथ अंन के निमित्त प्रेरित हुआ है ।७। हे अश्विद्वय ! तुम अपरिमित धन वाले हो । हमें स्थिरमना गौ और अंन दो । तुम्हारे निमित्त स्तोता-स्तोत्र और तुम्हारे लिए सोमरस भी उपस्थित है ।८। मेरे पास शीघ्र गमिनी वो बढ़ गौयें, समीढ़ की सौ गौयें, पेरुक के पके हुए अंन हैं । शांड राजा ने अश्विद्वय के स्तोताओंको सुंदर दस रथ प्रदान किये और शत्रु का नाश करने वाले वीर पुरुष भी दिये ।९। हे अश्विद्वय ! तुम्हारे स्तोता को पुरुषपन्या राजा ने शत संख्यक अश्व दिये । हे अश्विद्वय ! भरद्वाज को भी शीघ्र दो ओंर राक्षसों को नष्ट करो ।१०। हे अश्विनीकुमारो ! मैं विद्वानों सहित श्रेष्ठ मङ्गलमय धन से सुशोभित होऊं ।११। (४)

सूक्त ६४

(ऋषि—भरद्वाजो बार्हस्पत्यः । देवता—उषाः । छंद–त्रिष्टुप्)

उदु श्रिय उषसो रोचमाना अस्थुरपां नोर्मयो रुशन्तः ।
कृणोति विश्वा सुपथा सुगान्यभूदु वस्वी दक्षिणा मघोनी ॥१

भद्रा ददृक्ष उर्विया वि भास्युत् पे शोचिर्भानवो द्यामपप्तन् ।
आविर्वक्षः कृणुषे शुम्भमानोषो देवि रोचमाना महोभिः ॥२
वहन्ति सीमरुणासो रुशन्तो गावः सुभगामुर्विया प्रथानाम् ।
अपेजते शूरो अस्तेव शत्रून् बाधते तमो मजिरो न वोलहा ॥३
सुगोत ते सुपथा पर्वतेष्ववाते अपस्तरसि स्वभानो ।
सा न आ वह पृथुयामन्नृष्वे रयिं दिवो दुहितरिषयध्यै ॥४
सा वह योक्षभिरवातोवो वरं वहसि जोषमनु ।
त्व दिवो दुहितर्या ह देवी पूर्वहूतौ मंहना दर्शता भूः ॥५
उत् ते वयश्चिद् वसतेरपप्तन् नरश्च ये पितुभाजो व्युष्टौ ।
अमा सते वहसि भूरि वाममुषो देवि दाशुषे मर्त्याय ।६।५

उज्ज्वल वर्ण वाली उषायें जल तरङ्गों के समान उठती है वह उषा सब स्थानों को सरलता से जाने योग्य बनाती है । यह उषा धन ऐश्वर्य वाली हैं ।१। हे उषे ! तुम मंगलमयी दिखाई देती हो,तुम्हारी रश्मियाँ सुशोभित हो रही हैं । तुम सुन्दर शोभामयी होकर प्रकाश प्रदान कर रही हो ।२। रश्मियाँ ऊषा को वहन करती है शत्रुओं को दूर करती है ।३। हे उषे ! तुम स्वयं प्रकाशित हो । पर्वत और वायु-शून्य प्रदेशभी तुम्हारे लिए सुगम मार्ग है । तुम हमें काम्य धन प्रदान करो ।४। हे उषे ! तुम अश्वों पर धन वहन करती हो । तुम पूजनीय हो । मुझे धन प्रदान करो ।५। हे उषे ! चिड़ियाँ तुम्हारे प्रकट होने पर घोंसला छोड़ती हैं, उसी समय अन्नोपार्जन करने वाले उठते हैं, तुम हविदाता को धन प्रदान करती हो ।६। (५)

सूक्त ६५

(ऋषि–भरद्वाजो बार्हस्पत्यः । देवता–उषाः । छन्द–त्रिष्टुप्,)

एषा स्या नो दुहिता दिवोजाः क्षितिरुच्छन्ती मानुषीरजीगः ।
या भानुना रुशता राम्यास्वज्ञायि तिरस्तमसश्चिदक्तून् । १

वि तद् ययूरुणयुग्भिरश्वैश्चित्रं भान्त्युषसश्चन्द्ररथाः ।
अग्रं यज्ञस्य बृहतो नयन्तीर्वि ता बाधन्ते तम ऊर्म्यायाः ॥२
श्रवो वाजमिषमूर्जं वहन्तीर्नि दाशुष उषसो मर्त्याय ।
मघोनीर्वीरवत् पत्यमाना अवो धात विधते रत्नमद्य ॥३
इदा हि वो विधते रत्नमस्तीदा वीराय दाशुष उषासः ।
इदा विप्राय जरते यदुक्था नि ष्म मावते वहथा पुरा चित् ॥४
इदा हि त उषो अद्रिसानो गोत्रा गवामङ्गिरसो गृणन्ति ।
व्यर्केण बिभिदुर्ब्रह्मणा च सत्या नृणामभवद् देवहूतिः ॥५
उच्छा दिवो दुहितः प्रत्नवन्नो भरद्वाजवद् विधते मघोनि ।
सुवीरं रयिं गृणते रिरीह्युरुगायमधि धेहि श्रवो नः ।६।६

दीप्तिमयी रश्मियों से युक्त हुई उषा अन्धकार को मिटाती और प्राणियों को प्रकाश देती है ।१। महान् यज्ञ की सम्पादिका उषा अपने लाल अश्वों से गमन करती हुई शोभा पाती है । यह रात्रि के अंधकार को मिटा देती है ।२। हे उषाओ ! तुम हविदाता को बल, यश, अन्न, और रस प्रदान करती हो । तुम धनवती और श्रेष्ठ गमन वाली हो । तुम हम सेवकोंको पुत्रादि युक्त अन्न धन प्रदान करो ।३-४। हे उशाओ! अङ्गिराओं ने तुम्हारी कृपा से गौओं को खोला और स्तुति द्वारा अंधकार मिटाया । उनकी स्तुति सत्यफल वाली हुई ।५। हे उषे ! अंधकार नष्ट फल करो । भरद्वाज के समान मुझ स्तोता को भी धन और अन्न दो ।६। (६)

सूक्त ६६

(ऋषि–भरद्वाजो बार्हस्पत्यः । देवता–मरुतः । छंद–त्रिष्टुप् पंक्तिः ।)

वपुर्नु तच्चिकितुषे चिदस्तु समानं नाम धेनु पत्यमानम् ।
मर्तेष्वन्यद् दोहसे पीपाय सकृच्छुक्रं दुदुहे पृश्निरूधः ॥१
ये अग्नयो न शोशुचन्निधाना द्विर्यत् त्रिर्मरुतो वावृधन्त ।
अरेणवो हिरण्ययास एषां साकं नृम्णैः पौंस्येभिश्च भूवन् ॥२
रुद्रस्य ये मीळहुषः सन्ति पुत्रा यांश्चो नु दाधृविर्भरध्यै ।

विदे हि माता महो मही षा सेत् पृश्निः सुभ्वे गर्भमाधात् ॥३
न य ईषन्ते जनुषोऽया न्वऽन्तः सन्तोऽवद्यानि पुनानाः ।
निर्यद् दुह्रे शुचयोऽनु जोषमनु श्रिया तन्वमुक्षमाणाः ॥४
मक्षू न येषु दोहसे चिदया आ नाम धृष्णु मारुतं दधानाः ।
न ये स्तौना अयासो मह्ना नू चित् सुदानुरव यासदुग्रान् ।५।७

मरुद्गण के समान स्थिर प्रीति करने वाला, विद्वान्, स्तोता के समीप आविर्भूत हो । वह अंतरिक्ष में जल क्षरित करता हुआ पृथिवी में दोहन के लिएं प्रवृद्ध होता है ।१। जो अग्निके समान तेजस्वी,इच्छानुसार वृद्धि को प्राप्त और सुवर्णालङ्कारों से युक्त हैं, वे मरुद्गण धन-बल सहित आविर्भूत हैं ।२। जिन रुद्र पुत्र मरुतों को धारण करने में अंतरिक्ष समर्थ है उनकी माता महिमामयी हैं वे मनुष्य की उत्पत्ति के लिए जल धारण करती हैं ।३। जो यान पर न जाकर स्तोताओं के अंतः करण में निवास करते हुए पापोंको नाश करते हैं, जो जल दोहन करते और अपने तेज से भूमि को आकर्षित करते हैं, जिनके निमित्त स्तोता मरुदात्मक स्तोत्र करके इच्छित फल पाते हैं,महिमामय और गमनशील हैं, उन मरुद्गण को दानी यजमान क्रोध रहित करता है ।४-५।   (७)

त इदुग्राः शवसा धृष्णुषेणा उभे युजन्त रोदसी सुमेके ।
अध स्मैषु रोदसी स्वशोचिरामवत्सु तस्थौ न रोकः ॥६
अनेनो वो मरुतो यामो अस्त्वनश्वश्चिद् यमजत्यरथीः ।
अनवसो अनभीशू रजस्तूर्वि रोदसी पथ्या याति साधन् ॥७
नास्य वर्ता न तरुता न्वस्ति मरुतो यमवथ वाजसातौ ।
तोके वा गोषु तनये यमप्सु स व्रजं दर्ता पार्ये अध द्योः ॥८
प्र चित्रमर्कं गृणते तुराय मारुताय स्वतवसे भरध्वम् ।
ये सहांसि सहसा सहन्ते रेजते अग्ने पृथिवी मखेभ्यः ॥९
त्विषीमन्तो अध्वरस्येव दिद्युत् तृषुच्यवसो जुह्वो नाग्नेः ।
अर्चत्रयो धुनयो न वीरा भ्राजज्जन्मानो मरुतो अधृष्टाः ॥१०

त वृधन्तं मारुतं भ्राजदृष्टिं रुद्रस्य सुनुं हवसा विवासे ।
दिव: शर्धाय सुचयो मनीषा गिरयो नाप उग्रा अस्पृध्रन् ।११।८

वे मरुद्गण पराक्रमी हैं । द्यावापृथिवी के रथ के साथ वर्षक सेनाओं की योजित करते हैं । यह अन्य किसी को दीप्तिसे यशस्वी नहीं है ।६। हे मरुद्गण ! तुम्हारा रथ पाप शून्य है । उसे स्तोता चलाता है, वह अश्व रहित सारथी-रहित और भोजन-रहित होता हुआ भी जल प्रेरक और इच्छित देने वाला होकर स्वर्ग, पृथिवी और अंतरिक्ष में जाता है ।७। हे मरुद्गण ! रणक्षेत्र में तुम जिसे बचाते हो, उसकी कोई हिंसा नहीं कर सकता । तुम जिसके पुत्रादि सहित रक्षक हो, वह शत्रुओं की गौओं को बाँट लेता है ।८। हे अग्ने ! शत्रुओंके बलका तिरस्कार करने वाले जिन मरुद्गण से पृथ्वी भी काँपती है उन्हीं मरुतों के लिए हवि-रत्न प्रस्तुत करो ।९। यज्ञ के समान तेजस्वी मरुद्गण अग्नि शिखा के समान दीप्ति वाले शत्रुओं को कंपाने वाले और तेजस्वी हैं ।१०। मैं उन्हीं रुद्रपुत्र मरुतों की स्तुति करता हूँ । वही स्तुतियाँ उग्र होकर मरुद्गण के बल से समानता करने वाली होती हैं ।११। (८)

सूक्त ६७

(ऋषि—भरद्वाजो बार्हस्पत्यः । देवता—मित्रावरुणौ । छंद—त्रिष्टुप्)

विश्वेषां वा सतां ज्येष्ठतमा गीर्भिर्मित्रावरुणा वावृधध्यै ।
सं या रश्मेव यमतुर्यमिष्ठा द्वा जनाँ असमा बाहुभिः स्वैः ।।१
इयं मद् वां प्र स्तृणीते मनीषोप प्रिया नमसा बर्हिरच्छ ।
यन्तं नो मित्रावरुणावधृष्टं छर्दियद् वां वरूथ्यं सुदानू ।।२
आ यातं मित्रावरुणा सुशस्त्युप प्रिया नमसा हूयमाना ।
सं यावप्नःस्थो अपसेव जनाञ्छ्रुधीयतश्चिद् यतथो महित्वा ।।३

अश्वा न या वाजिना पूतबन्धू ऋता यद् गर्भमदितिर्भरध्यै ।
प्र या महि महान्ता जायमाना घोरा मर्ताय रिपवे नि दीधः ।।४
विश्वे यद् वां मंहना मन्दमानाः क्षत्रं देवासो अदधुः सजोषाः ।
परि यद् भूथो रोदसी चिदुर्वी सन्ति स्पशो अदब्धासो अमूराः।५।६

हे मित्रावरुणो ! तुम सर्वश्रेष्ठ को से स्तुतियों मैं बढ़ाता हूँ तुम अपनी भुजाओं से मनुष्यों को संयत करते हो ।१। हे मित्रावरुणो ! हमारी यह स्तुति तुम्हें बढ़ाती है तुम हमें शीत आदि से बचाने वाला घर दो ।२। हे मित्रावरुण ! हमारे आह्वान के प्रति आओ । जैसे कर्म में लगा व्यक्ति अन्न चाहने वालों को पुष्ट करता है, वैसे ही तुम भी वे हिंसकों की हिंसा करने वाले और जन्म से महान् हुए ।४। सभी देवताओं ने तुम्हारा यश-कीर्तन कर बल धारण किया तुम आकाश पृथ्वी को परिभूत करने वाले और अहिंसित हो ।५। (६)

ता हि क्षत्रं धारयेथे अनु द्यून् दृंहेथे सानुमुपमादिव द्योः ।
दृलहो नक्षत्र उत विश्वदेवो भूमिमातान् द्या धासिनायोः ।।६
ता विग्रं धैथे जठरं पृणध्या आ यत् सद्म सभृतयः पृणन्ति ।
न मृष्यन्ते युवतयोऽवाता वि यत् पयो विश्वजिन्वा भरन्ते ।।७
ता जिह्वया सदमेदं सुमेधा आ यद् वां सत्यो अरतिर्ऋते भूत् ।
तद् वां महित्वं घृतान्नावस्तु युवं दाशुषे वि चयिष्टमंहः ।।८
प्र यद् वां मित्रावरुणा स्पूर्धन् प्रिया धाम युवधिता मिनन्ति ।
न ये देवास ओहसा न मर्ता अयज्ञसाचो अप्यो न पुत्राः ।।९
वि यद् वाचं कीस्तासो भरन्ते शंसन्ति के चिन्निविदो मनानाः ।
आद् वां ब्रवाम सत्यान्युक्था नकिर्देवेभिर्यतथो महित्वा ।।१०
अवोरित्था वां छर्दिषो अभिष्टौ युवोर्मित्रावरुणावस्कृधोयु ।
अनु यद् गावः स्फुरानृजिप्यं धृष्णुं यद् रणे वृषणं युनजन्।११।१०

तुम अंतरिक्षस्थ प्रदेश को दृढ़ता से धारण करते हो, तुम्हारे द्वारा ही मेघ अंतरिक्ष और विश्वेदेवा हवि से तृप्त होकर पृथ्वी और स्वर्ग

में व्यक्त होते हैं । तुम प्राज्ञ सोम को उदर पूर्ति के लिए धारण करते हो । जब ऋत्विज गृह-यज्ञ को सम्पन्न करते हैं और तुम जल भेजते हो तब नदियों में धूल नहीं भरती ।६-७। मेधाजीवन वाणी द्वारा तुमसे जल की याचना करते हैं जैसे तुम्हारा उपासक यज्ञ में माया से विरक्त होता है, वैसे ही तुम्हारी महिमा है । तुम हविदाता के पापको मिटाओ ।८। हे मित्रावरुण ! जो द्वेषी व्यक्ति तुम्हारे कर्म में बाधक होते हैं, जो व्यक्ति स्तोत्र शून्य हैं, उन्हें नष्ट कर डालो ।९। जब विद्वान् पुरुष स्तुति करते हैं,तब तुम महिमा वाले होकर अन्य देवताओं के साथ मत जाना ।१०। मित्रावरुण ! जब स्तुतियाँ की जाती हैं और सोम को उपस्थित किया जाता है, तब गृहदान के लिए तुम आते हो और घर प्राप्त होता है ।११। (१०)

सूक्त ६८

(ऋषि–भरद्वाजो बार्हस्पत्यः। देवता–इन्द्रावरुणौ । छंद–त्रिष्टुप्, जगती)

श्रुष्टी वां यज्ञ उद्यतः सजोषा मनुष्वद् वृक्तबर्हिषो यजध्यै ।
आ य इन्द्रावरुणाविषे अद्य महे सुम्नाय मह आववर्तत् ॥१
ता हि श्रेष्ठा देवताता तुजा शूराणां शविष्ठा ता हि भूतम् ।
मघोनां मंहिष्ठा तुविशुष्म ऋतेन वृत्रतुरा सर्वसेना ॥२
ता गृणीहि नमस्येभिः शूषैः सुम्नेभिरिन्द्रावरुणा चकाना ।
वज्रेणान्यः शवसा हन्ति वृत्रं सिषक्त्यन्यो वृजनेषु विप्रः ॥३
ग्नाश्च यन्नरश्च वावृधन्त विश्वे देवासो नरां स्वगूर्ताः ।
प्रैभ्य इन्द्रावरुणा महित्वा द्यौश्च पृथिवि भूतमुर्वी ॥४
स इत् सुदानुः स्ववाँ ऋतावेन्द्रा यो वां वरुण दाशति त्मन् ।
इषा स द्विषस्तरेद् दास्वान् वंसद् रयिं रयिवतश्च जनान् ।५।११

हे इन्द्र और वरुण ! यजमान के सुखके निमित्त जो अनुष्ठान किया जाता है, वही अनुष्ठान आज तुम्हारे लिए किया जा रहा है ।१। हे इन्द्र

और वरुण! तुम यज्ञमें धनदाता और श्रेष्ठहो । वीरोंमें अधिक बलशाली दाताओं में श्रेष्ठ शत्रु हिंसक और सब सेनाओं और ऐश्वर्यों से सम्पन्न हो ।२। हे स्तोता ! इन्द्र और वरुण की स्तुति करो । उनमें से इन्द्र वृत्र-हन्ता हैं और वरुण प्रजा की रक्षा करने के लिए बलवान होते हैं ।३। हे इन्द्र और वरुण ! जब स्तोता तुम्हें बढ़ाते हैं तब तुम अत्यन्त महिमा वाले होकर उनके स्वामी बनते हो । हे विस्तीर्ण स्वर्ग और पृथिवी ! तुम भी इनके स्वामी होओ ।४। हे इन्द्र और वरुण ! तुम्हें हवि देने वाला दानी, धनी और यज्ञ-कर्म वाला होता है । वह शत्रु से रक्षित रहता हुआ धन और सम्पत्तियुक्त पुत्र पाता है ।५। (११)

यं युवं दाश्वध्वराय देवा रयिं धत्थो वसुमन्तं पुरुक्षुम् ।
अस्मे स इन्द्रावरुणावपि ष्यात् प्र यो भनाक्ति वनुषापशस्तीः॥६
उत नः सुत्रात्रो देवगोपाः सूरिभ्य इन्द्रावरुणा रयिः ष्यात् ।
येषां शुष्मः पृतनासु साह्वान् प्र सद्यो द्युम्ना तिरते ततुरिः ॥७
नू न इन्द्रावरुणा गृणाना पृङ्क्तं रयिं सौश्रवसाय देवा ।
इत्था गृणन्तो महिनस्य शर्धोऽपो न नावा दुरिता तरेम ॥८
प्र सम्राजे बृहते मन्म नु प्रियमर्च देवाय वरुणाय सप्रथः ।
अयँ य उर्वी महिना महिव्रतः क्रत्वा विभात्यजरो न शोचिषा॥९
इन्द्रावरुणा सुतपाविमं सुतं सोमं पिबतं मद्यं धृतव्रता ।
युवो रथो अध्वरं देववीतये प्रति स्वसरमुप याति पीतये ॥१०
इन्द्रावरुणा मधुमत्तमस्य वृष्णः सोमस्य वृषणा वृषेथाम् ।
इदं वामन्धः परिषिक्तमस्मेआसद्यास्मिन् बर्हिषि मादयेथाम्११।२

हे इन्द्र और वरुण ! तुम हविदाता को जो धन देते हो, वही शत्रु द्वारा फैलाये गये अपयश को दूर करने वाला धन हमें दो ।६। हे इन्द्र और वरुण ! हम तुम्हारे स्तोता हैं । तुम्हारा जो धन देवताओं द्वारा रक्षित है, वही हमें मिले । हमारा बल शत्रुओं को पराभूत करने वाला और उनका तिरस्कार करने वाला हो ।७। हे इन्द्र और वरुण ! हमें श्रेष्ठ अन्न के लिए धन दो । तुम महान् हो । हम तुम्हारे बल की

प्रशंसा करते हैं । हम नौका द्वारा तरने के समान ही पापों से तरें ।८। जो वरुण महान् कर्म वाले महिमामय, तेजस्वी ओर जरा-रहित है तथा जो द्यावापृथिवी को व्याप्त करते हैं उन्हीं वरुण के लिए विस्तृत स्तुति करो ।६। हे इन्द्र और वरुण ! तुम सोमपायी हो अतः इस हर्षकारी सोमका पान करो । हे व्रतधारी, मित्रावरुण देवताओंको पीनेके निमित्त सोम तुम्हारी रथयात्रा की ओर गमनशील है ।१०। हे इन्द्र ओर वरुण! तुम इस श्रेष्ठ सोम का पान करो। तुम्हारे लिए यह सोम पात्र में उंडेला गया है । अतः इस यज्ञ में बैठकर सोमपान द्वारा हर्षित होओ ।११। (१२)

सूक्त ६९

(ऋषि—भरद्वाजो वार्हस्पत्यः । देवता—इन्द्राविष्णु । छन्द—त्रिष्टुप्)

सं वां कर्मणा समिषा हिनोमीन्द्राविष्णू अपसस्पारे अस्य ।
जुषेथां यज्ञ द्रविणं च धत्तमरिष्टैर्नः पथिभिः पारयन्ता ॥१
या विश्वसां जनितारा मतीनामिंद्राविष्णू कलशा सोमधाना ।
प्र वां गिरः शस्यमाना अवन्तु प्र स्तोमासो गीयमानासो अर्कैः॥२
इन्द्राविष्णूमदपती मदानामा सोमं यातं द्रविणो दधाना ।
सं वामञ्जन्वक्तुभिर्मतीनां सं स्तोमासः शस्यमानास उक्थैः॥३
आ वामश्वासो अभिमातिषाह इन्द्राविष्णू सधमादो वहन्तु ।
जुषेथां विश्वा हवना मतीनामुप ब्रह्माणि शृणुतं गिरो मे ॥४
इन्द्राविष्णू तत् पनयाय्यं वां सोमस्य मद उरु चक्रमाथे ।
अकृणुतमन्तरिक्षं वरीयोऽप्रथत जीवसे नो रजांसि ॥५
इन्द्राविष्णू हविषा वावृधानाऽग्राद्वाना नमसा रातहव्या ।
घृतासुती द्रविणं धत्तमस्मे समुद्रः स्थः कलशः सोमधानः ॥६
इन्द्राविष्णू पिबतं मध्वो अस्य सोमस्य दस्रा जठरं पृणेथाम् ।
आ वामन्धांसि मदिराण्यग्मन्नुप ब्रह्माणि शृणुतं हवं मे ॥७

उभा जिग्यथुर्न परा जयेथे न परा जिग्ये कतरश्चनैनोः ।
इन्द्रश्च विष्णो यदपस्पृधेथां त्रेधा सहस्रं वि तदैरयेथाम् ।८।१३

हे इन्द्र और विष्णु ! मैं यह स्तोत्र और हव्य तुम्हारी ओर प्रेरित करता हूं । इसके पश्चात् तुम यज्ञ का सेवन करो । तुम हमें उपद्रव रहित मार्ग से ले जाते हो, अतः हमें धन प्रदान करो ।१। हे इन्द्र और विष्णो ! तुम स्तुतियों के कारण रूप हो । तुम्हें स्तुतियाँ प्राप्त हों । स्तोताओं गाने योग्य स्तोत्रभी तुम्हें प्राप्त हों ।२। हे इन्द्र और विष्णो! तुम सोमोंके स्वामी हो । तुम धन-दान करते हुए सोमोंके सामने आओ। स्तोत्र, उक्थों के सहित तुम्हें बढ़ावें ।३। हे इन्द्र और विष्णो ! हिंसकों के हराने वाले अश्व तुम्हें वहन करें । तुम स्तुतियों का सेवन करते हुए मेरे निवेदन पर ध्यान दो ।४। हे इन्द्र और विष्णो ! सोम का हर्ष उत्पन्न होने पर तुम प्रदक्षिणा करते हो । तुमने अन्तरिक्ष का विस्तार किया है । हमारे जीवन के लिए लोकों को प्रसिद्ध किया है ।५। हे इन्द्र और विष्णो ! तुम सोम से प्रवृद्ध होते हो । यजमान तुम्हें नमस्कारयुक्त हव्य देतेहैं । अतः तुम हमें धन प्रदानकरो । तुम कलशके और समुद्र के समान पूर्ण हो ।६। हे इन्द्र और विष्णो ! तुम सोमपान से अपना उदर भरो । तुम्हारे पास हर्षकारी सोम गमन करो । तुम मेरी स्तुति सुनो ।७। हे इन्द्र और विष्णो ! तुम अजेय हो, तुम में से कभी कोई पराजित नहीं हुआ । तुमने जिस पदार्थ के लिए राक्षसों से स्पर्धा की, वह अपमानित होते हुए भी तुम्हें प्राप्त हो गया ।८। (३)

॥ ऋग्वेद द्वितीय खण्ड समाप्त ॥

अ. भा. ओंकार परिवार की स्थापना

—×—

ॐ परमात्मा का सर्वश्रेष्ठ व स्वाभाविक नाम है। इसे मन्त्र शिरोमणि मन्त्र सम्राट, मन्त्र राज, बीजमन्त्र और मन्त्रों का सेतु आदि उपाधियों से विभूषित किया जाता है। इसे श्रेष्ठतम् महानतम और पवित्रतम् मन्त्र की संज्ञा भी दी जाती है। सारे विश्व में इसकी तुलना का कोई मन्त्र नहीं है। ॐ सभी मन्त्रों को अपनी शक्ति से प्रभावित करता है। सभी मन्त्रों की शक्ति ओंकार की ही शक्ति है। यह शक्ति और सिद्धिदाता हैं। भौतिक व आत्मिक उत्थान के लिए कोई भी दूसरी श्रेष्ठ व सरल साधना नहीं है।

सभी ऋषिमुनि ॐ की शक्ति और साधना से ही अपना आत्मिक उत्थान करते रहे हैं। परन्तु आज आश्चर्य है कि ॐ का अन्य मन्त्रों की तरह व्यापक प्रचार नहीं है। इस कमी का अनुभव करते हुए अ० भा० ओंकार परिवार की स्थापना की गई है। आप भी अपने यहां इसका एक प्रचार केन्द्र स्थापित करें। शाखा स्थापना का सारा साहित्य निःशुल्क रूप से प्रधान कार्यालय, बरेली से मँगवा लें, आपको केवल इतना करना है कि स्वयं ओंकारोपासना आरम्भ करके ४ अन्य मित्रों व सम्बधिन्यों को प्रेरित करें और सभी संकल्प पत्र व शाखा स्थापना का प्रार्थना पत्र प्रधान कार्यालय को भिजवा दें। इस वर्ष २७००० साधकों द्वारा ९०० करोड़ मन्त्रों के जप का महापुरश्चरण पूर्ण किया जाना है। आशा है ओंकार को जन-जन का मन्त्र बनाने के इस श्रेष्ठतम् आध्यात्मिक महायज्ञ में सम्मिलित होकर महान् पुण्य के भागी बनेंगे।

विनीत :

चमनलाल गौतम

संस्कृति संस्थान

ख्वाजाकुतुब, वेदनगर, बरेली–२४३००३ (उ. प्र.)

एक मौन व्यक्तित्व का मौन समर्पण

डा० चमनलाल गौतम-एक व्यक्ति का नहीं वरन् ऐसे विशाल धार्मिक संस्थान का नाम है जो सतत् २४ वर्षों से ऋषि प्रणीत आर्ष साहित्य के शोध, प्रकाशन और व्यापक साहित्य प्रचार का कार्य देश विदेश में करता रहा है। यह उनकी तप साधना का ही परिणाम है कि किसी भी आर्थिक सहयोग के बिना वेद, उपनिषद्, दर्शन, स्मृतियाँ, पुराण व मन्त्र-तन्त्र आदि साधनात्मक साहित्य की ३०० से अधिक पुस्तकों को प्रकाशित करके घर-घर में पहुँचाने की पवित्रतम साधना कर रहे हैं। मन्त्र-तन्त्र, योग, वेदान्त व अन्य धार्मिक विषयों पर १५० खोज पूर्ण ग्रन्थों का लेखन, सम्पादन एक ऐसा अविस्मरणीय व असाधारण कार्य है जिस पर उनके अथक श्रम, गम्भीर अध्ययन तप, प्रतिभा और मौलिक सूझ-बूझ की स्पष्ट छाप दिखाई देती हैं। स्वस्थ साहित्य की रचना और प्रचार का उनकी जीवन योजना का यह पहला चरण पूरा हुआ।

पिछले २४ वर्षों से लगातार चल रही आध्यात्मिक साधना के महा-पुञ्चरण का दूसरा चरण भी समाप्त हो रहा है। तीसरे चरण आध्यात्मिक साधनाओं और अनुभूतियों के विश्वव्यापी विस्तार का शुभारम्भ अ० भा० ओंकार परिवार की स्थापना के साथ वसन्तपञ्चमी की परम पवित्र वेला के साथ हो गया है। अतः उनका शेष जीवन तीसरे चरण की सफलता, ओंकार परिवार की शाखाओं के व्यापक विस्तार के माध्यम से करोड़ों व्यक्तियों को ओंकार साधना में प्रविष्ट करके उच्च आध्यात्मिक भूमिका में प्रशस्त करना, ओंकार अथवा उच्च आध्यात्मिक साहित्य की रचना व प्रचार-प्रसार को समर्पित है।

–पं० सत्य भक्त शर्मा

—★—